



जगत्गुरु रविदास जी महाराज

Hindi Book- Shri Ravi Das Ji.

	Name Of Book	Page No
1.	Amritvani and jeevanchrit	1-206
2.	Nitnem Amrit Vani.	207-291
3.	Pawan Amrit vani	292-388

जगद्गुरु रविदास अमृतवाणी
(स्टीक)
एवं संक्षिप्त जीवन



निशान साहिब
रविदासीया कोम

टीकाकार एवं लेखक :
संत सुरिन्दर दास बाबा
(देव सज्जखण्ड बल्ला, जालन्धर)

जगद्गुरु रविदास अमृत वाणी
(स्टीक)
एवं संक्षिप्त जीवन



निशान साहिब
रविदासीया कौम

प्रकाशक :
श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट
वाराणसी (यू० पी०)
हैडु ऑफिस - डेरा श्री 108 संत सरवण दास जी
सच्चखण्ड बल्लां, जालन्धर (पंजाब)

जगद्गुरु रविदास अमृत वाणी
(स्टीक)
एवं संक्षिप्त जीवन

प्रकाशक :

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट
वाराणसी (यू० पी०)
हैडु ऑफिस - डेरा श्री 108 संत सरवण दास जी
सच्चखण्ड बल्लां, जालन्धर (पंजाब)

© सभी अधिकार प्रकाशाधीन हैं।

टीकाकार:

संत सुरिन्दर दास बावा
(डेरा सच्चखण्ड बल्लां, जालन्धर)

हिन्दी अनुवाद:

श्रीमती सरबजीत कौर, श्रीमती नीलम

प्रथम हिन्दी संस्करण, संख्या : 5000

छापक : रवि प्रकाश प्रिंटिंग प्रैस,
मोहल्ला सुन्दर नगर, जालन्धर।
फोन : 0181-2611697

(मूल्य : 80 रु०)



» प्रकाश दिवस :
माघ सुदी पंद्रास 1433 विक्रमी
सम्बत् सन् 1377 ई० ।

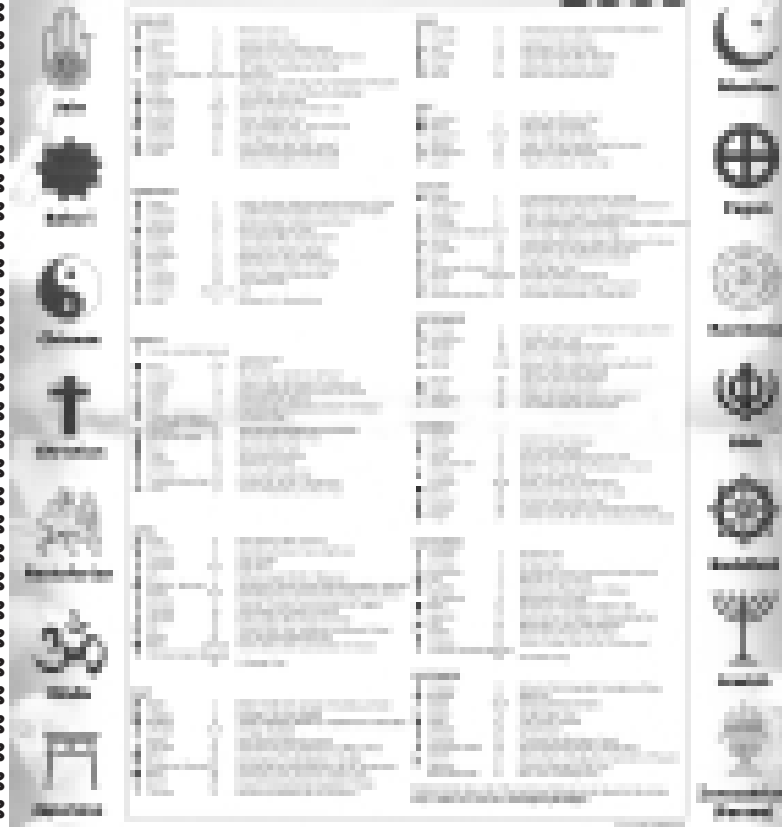
» जन्म स्थान :
ग्रामः सीर गोवर्धनपुर, वाराणसी (यू० पी०)

» माता-पिता जी के नाम :
पिता जी- पूजनीय संतोख दास जी
माता जी- पूजनीय कलसी देवी जी

» दादा-दादी जी के नाम :
दादा जी- पूजनीय कालू राम जी ।
दादी जी- पूजनीय लखपती जी ।

» सुपत्नी एवं सपुत्र का नाम :
सुपत्नी पूजनीय श्रीमती लोना देवी जी ।
सपुत्र पूजनीय श्रीमान विजय दास जी ।

» ब्रह्मलीन :
आषाढ़ की संक्रांति 1584
विक्रमी सम्बत् (1528 ई०) बनारस में ।



TRADE MARKS REGISTRY



REGISTRATION CERTIFICATE

Trade Marks Act 1994 of Great

Britain and Northern Ireland

The mark shown below has been registered under No. 2318217 as of the date 09 December 2002.



The mark has been registered in respect of:

Class 35:

Advertising services, provided via the Internet, television and radio; business management, and office functions; public relations services.

Class 41:

Providing educational training, entertainment and cultural activities.

Class 42:

Providing industrial analysis and research services; design and development of computer hardware and software, which includes installation, maintenance and repair of computer software and design, drawing commissioned writing for the compilation of web sites; creating, maintaining and hosting web sites services.

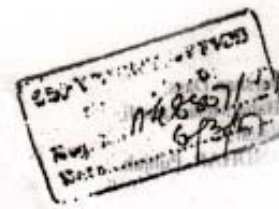
In the name of Sri Gurm Ravidass International Organization for Human Rights

The mark on this certificate was filed in colour and is reproduced here in colour. It has been scanned as accurately as our equipment allows but you should refer to the application form, which is available for public inspection, and any colour standard provided by the applicant to determine the exact colour(s).

Signed this day at my direction

ALISON BRIMELOW, REGISTRAR
DATE 14 November 2003

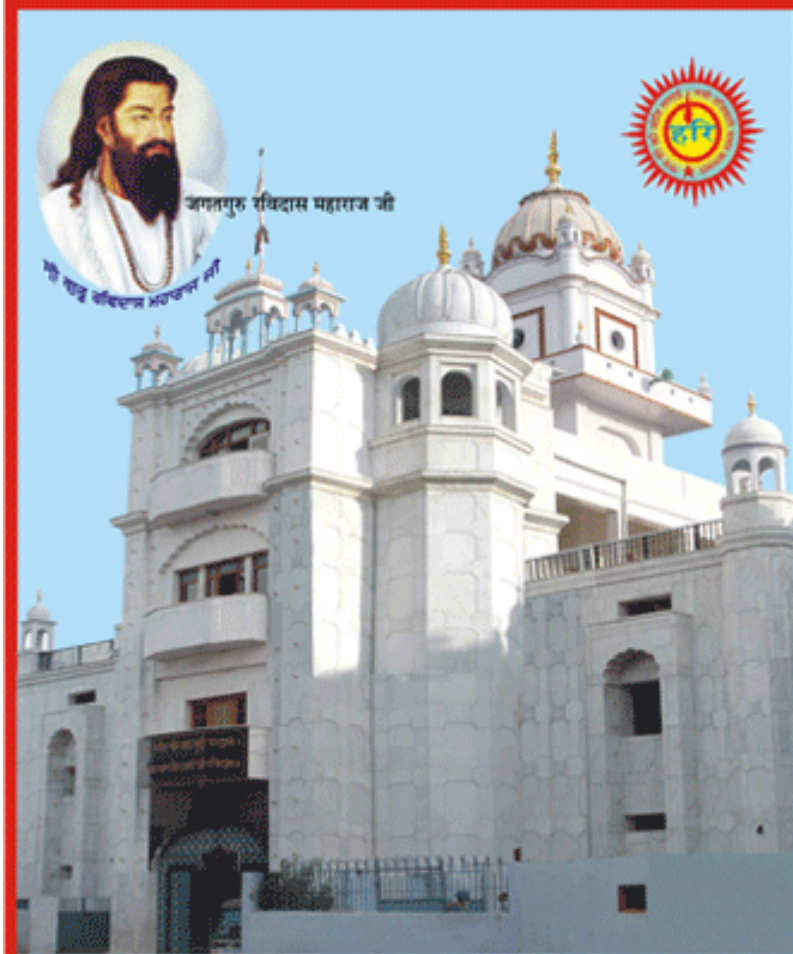
THE COPYRIGHT ACT, 1957. (REPRESENTATION)



Copyright Office
New Delhi



जगद्गुरु रविदास जी महाराज



Shri Guru Ravidass Janam Sthan Mandir (U.P.)
 Managed by : Shri Guru Ravidass Janam Sthan Public Charitable Trust
 H.O. : Dera Sachkhand Ballan, Jalandhar (Pb.)



ब्रह्मदेव बाबा विष्णु दास जी



ब्रह्मदेव बलराम दास जी



ब्रह्मदेव बलराम दास जी



ब्रह्मदेव बलराम दास जी



ब्रह्मदेव बलराम दास जी



तपोस्थान श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज
डेरा सच्चखण्ड बल्लां, जालन्धर।



पाँच बल्लां में ऐतिहासिक तपोस्थान, जिस जगह में संत बाबा पियल दास जी
और श्री 108 संत सरवण दास जी ने धार तपस्या की।



श्री गुरु रविदास सत्संग भवन, डेरा सच्चखण्ड बल्लां (जलन्धर) के दर्शन-दीदार।



संत सरवण दास चैरिटेबल नेत्र अस्पताल, डेरा सच्चखण्ड बल्लां (जालन्धर)



श्री गुरु रविदास मन्दिर, हदियाबाद, फगवाड़ा के दर्शन-दीदार।



संत सरवण दास मॉडल स्कूल, हदियाबाद, फगवाड़ा



संत सरवण दास चैरीटेबल अस्पताल, अड्डा कठार।



श्री गुरु रविदास मंदिर काव्रज, पूना (महाराष्ट्र)



श्री गुरु रविदास मंदिर सिरसगढ़, अम्बाला (हरियाणा)



भारत के पूर्व राष्ट्रपति महाजिहम श्री के.आर. नायडुजी " श्री गुरु रविदास गेट " का रिमोट कंट्रोल द्वारा उद्घाटन करते हुए। साथ में श्री 108 संत सुन्दर दास जी, माननीय काशीराम जी (संस्थापक बसवा), डा. मुरजधान जी (तत्कालीन राज्यपाल, उ०प्र०), माननीय कल्याण सिंह जी, (तत्कालीन मुख्यमंत्री, उ०प्र०)।



भारत के पूर्व राष्ट्रपति महाजिहम श्री के.आर. नायडुजी को श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर का स्वर्ण मंडित मॉडल सौंपे भेंट करते हुए श्री 108 संत निरंजन दास जी बहागज घेपामेन श्री गुरु रविदास जन्म अस्थान चधिक धेरिटेकाल दुन्द (रिक) सौ गेवधेनपु बारापसी एवं गरी नारीन डेरा सधखंड बाब, जालन्धर, पंजाब। साथ में दुन्दी साहिबान तथा संत रामा रंद जी, संत सुन्दर दास जी, बाबू काशी राम जी (बसवा संस्थापक), डा. मुरजधान जी (तत्कालीन राज्यपाल, उ०प्र०), श्री कल्याण सिंह जी (तत्कालीन मुख्यमंत्री, उ०प्र०)।



श्रद्धालुओं के निवास के लिए बनाया गया भवन तथा
श्री गुरु रविदास लंगर हाल, सीर गोवर्धनपुर वाराणसी



तपोस्थान बाबा पिप्पल दास जी अतः जन्म स्थान
सतगुरु सरवण दास जी गाँव गिल्ल पट्टी, बठिण्डा



ब्रह्मचरि
सतगुरु बाबा पिप्पल दास जी



ब्रह्मचरि
सतगुरु सरवण दास जी



ब्रह्मचरि
सतगुरु हरी दास जी



ब्रह्मचरि
सतगुरु केशव दास जी



सतगुरु निरंजन दास जी
संन्यास नाम गुरु गुरुदास दास



कौम के महान् शहीद
संत रामा नंद जी

समर्पण

रविदासीया कौम के महान् शहीद,
जगद्गुरु रविदास जी के मिशन के केन्द्रबिन्दु,
रविदासीया कौम के अमूल्य रत्न,
महान विद्वान, कौम के महान् शहीद
श्रीमान् 108 संत रामानंद जी
जिन्होंने पूरे विश्व में जाकर जगद्गुरु रविदास महाराज
जी के मिशन का प्रचार एवं प्रसार किया। रविदासीया
समाज को, विश्व स्तर पर, एक प्लेट फार्म हरि के
निशान के नीचे एकत्रित करते हुए, श्री गुरु रविदास
मंदिर वियाना (आस्ट्रिया) में शहादत का जाम पी
गए। दास उन्हें यह पावन पुस्तक “जगद्गुरु रविदास
अमृति वाणी स्टीक एवं संक्षिप्त जीवन” समर्पण करते
हुए, उनके चरणों में श्रद्धा सुमन अर्पित करता है।

आशीर्वाद

तू जानत मै किछु नहीं भव खंडन राम ॥
सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥

(पन्ना ८५८)

धन्य धन्य जगद् गुरु रविदास जी के मिशन को जन-जन तक पहुँचाने वाले
डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां (जालन्धर), के महापुरुष ब्रह्मलीन संत
बाबा पिप्पल दास जी महाराज, ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन श्री 108 संत सरवण दास जी
महाराज, ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन श्री 108 संत हरी दास जी महाराज, ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन
श्री 108 संत गरीब दास जी महाराज ऐसे तत्त्ववेत्ता संत हुए हैं, जिन्होंने प्रभु भक्ति,
त्याग और परोपकार वाला जीवन व्यतीत किया।

उनके पद चिन्हों पर चलते हुए, श्री 108 संत निरंजन दास जी (अध्यक्ष श्री
गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट वाराणसी एवं वर्तमान् गद्दी नशीन डेरा
संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां, जालन्धर (पंजाब)), मानवता की भलाई के
साथ-साथ, श्री गुरु रविदास जी की अमृत वाणी को, जन-जन तक पहुँचा रहे हैं।

सतगुरु हरी दास जी महाराज, सतगुरु गरीब दास जी महाराज, वर्तमान् गद्दी
नशीन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज और श्री 108 संत रामानंद जी के
आशीर्वाद से, शिक्षा प्राप्त करने और गुरुबाणी का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त
हुआ है।

जामि गुरु होय वलि गियान अरु धियान अनन परि ॥

जामि गुरु होय वलि शबदु साखी सु सचह घरि ॥

हस्तलिखित पुस्तक ‘जगद्गुरु रविदास अमृतवाणी (स्टीक) और संक्षिप्त
जीवन’ श्री 108 संत निरंजन दास जी के आशीर्वाद से ही, संगत की सेवा हित, भेंट
करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ है।

गुरु चरणों का दास:

- संत सुरिन्दर दास बाबा

डेरा संत सरवण दास जी, सच्च खण्ड बल्लां (जालन्धर)

भूमिका

जगद्गुरु रविदास महाराज जी को भक्ति का सिरमौर (शिरोमणि) समझते हुए, सतगुरु कबीर साहिब जी फरमाते हैं :

साधन में रविदास संत है, सुपच ऋषि सो मानिया ।

हिंदू तुरक दुई दीन बने है, कछु नहीं पहिचानिया ।

अर्थात् संतजनों में महान् संत गुरु रविदास जी हैं जिन्हें दुनिया एक महान् संत ऋषि मानती है। तात्कालिक समय के हिन्दू व मुस्लिम दोनों ही उनके समक्ष नतमस्तक हुए और उन्होंने गुरु रविदास जी को प्रभु समझ कर जाना ।

रविदास चमारु उसतति करे

हरि कीरति निमख इक गायि ॥

पतित जाति उतमु भइया

चारि वरन पए पगि आयि ॥

सतगुरु राम दास जी फरमाते हैं कि गुरु रविदास जी ने एक ओंकार परमात्मा की ऐसी भक्ति, आराधना एवं उपमा की, कि वह परमात्मा का ही रूप हो गए। नीच समझे जाने वाली जाति में जन्म लेकर भी, उनकी भक्ति और आध्यत्मिकता के कारण, चारों-वर्णों के लोग उनके चरणों में नतमस्तक हुए।

सतगुरु अर्जुन देव महाराज जी, आप जी की उपमा करते हुए फरमाते हैं:-

ऊच ते ऊच नामदेउ समदरसी

रविदास ठाकुर बणि आई ॥ (पृष्ठ 1207)

अर्थात् उच्च से उच्च समदृष्टि वाले सतगुरु नामदेव जी हुए हैं और सतगुरु रविदास जी आप इस संसार में प्रभु बनकर आए। जगद्गुरु रविदास महाराज जी के मानवता के प्रति उपकार को, अपनी वाणी द्वारा, संत पीपा जी, इस प्रकार उच्चारण करते हैं:-

जे कलि रैदास कबीर न होते, लोक वेद अरु कलिजुग

मिलि कर भगति रसातल देते ।

अर्थात् यदि सतगुरु रविदास जी और सतगुरु कबीर जी यथासमय अवतरित न होते, तो तत्कालीन उच्च वर्ग, वेद और कल्युगी विचारधारा ने, भक्ति को, पाताल में, दफन कर देना था।

जगद्गुरु रविदास जी अपनी वाणी में उच्चारण करते हैं :

मेरी जाति कुट बांडला ढोर ढोवंता

नितहि बनारसी आस पासा ॥

अब बिप्र परधानु तिहि करहि डंडउति

तेरे नाम सरणायि रविदासु दासा ॥

अर्थात् मेरा जन्म उन लोगों में हुआ, जो बनारस के आस-पास, प्रतिदिन मृत पशुओं को ढोते हैं। परन्तु मैंने प्रभु के नाम की शरण ली और आज बिप्रों के प्रधान लोग, मुझे दंडवत् नमस्कार करते हैं। आप जी अपनी वाणी में फरमाते हैं:-

जुगादी जुगों से आवे रे पण्डित,

गियानी चेतन हंस पुकारा ॥

चार वरण वेद से प्रगट,

आदि सूरज वंश हमारा ॥

कहि रविदास एक ही स्वामी,

बाजी रचावणहारा ॥

अर्थात् हे पण्डित, हमरा अस्तित्व युगों-युगांतरों से है, हमें ज्ञानी चेतन हंस कहकर पुकारा जाता है। वेदों की रचना तो बाद में हुई है, जिसमें वर्ण-विभाजन कर भेदभाव फैलाया गया है। परन्तु हमारा अस्तित्व तो आदि से है, जिसका प्रताप सूर्य की भांति उज्ज्वल रहा। हमारा स्वामी एक ही परमात्मा है, जो सारे संसार का सृष्टिकर्ता है।

गुरु रविदास जी ने दुनिया में जन्म लेकर, मानवता पर उपकार किया। ऐसे कार्य किए जो उस समय तो क्या, आज भी असंभव हैं जैसे कि गंगा जी का खुद प्रकट हो कर, दमड़ी स्वीकार करना, आप जी के प्रति, श्रद्धा प्रकट करना है। जिस के संबंध में बाबा संत भगवान नारायण जी ऐसे उच्चारण करते हैं:

हिंदू तुरक जग महि घनै हरि भगतन कै अधीन ॥

नारायण नीच जाति रविदास जी गंगा दमड़ी लीन ॥

जब गुरु रविदास जी की अमृतवाणी का सच, अपने आप लोगों की जिह्वा पर चढ़ कर बोला, तो साधारण जनता तो क्या, अनेकों राजा, महाराजा भी आप की शरण में आए जैसे कि राजा नागर मल्ल (हरदेव सिंह), राणा वीर बघेल सिंह, सिकंदर लोधी, महाराणा संग्राम सिंह (राणा सांगा), राजा चन्द्र प्रताप, राजा अलावदी बादशाह, बिजलीखान, राणा रतन सिंह, महाराणा कुंभा जी, महाराणी झाली बाई, महान् संत मीरा बाई जी, बीबी कर्मा बाई जी, बीबी भानमती जी, महान् संत गोरख नाथ जी इत्यादि प्रमुख हैं।

मानवता के मसीहा डॉ० भीम राव अम्बेडकर साहिब जी ने भारतीय संविधान की रचना, गुरु जी के पावन शब्द 'बेगमपुरा सहर को नाउ' के आधार पर की। उसी प्रकार यू. एन. ओ. ने टोरांटो (कैनेडा) में ऐलान किया कि संसार में सभी नागरिक अधिकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुसार दिये जाएंगे और संसार की व्यवस्था श्री गुरु रविदास जी के पावन शब्द "बेगमपुरा सहर को नाउ" के आधार पर होगी। जिस से पता चलता है कि आज भी श्री गुरु रविदास जी की वाणी, संसार के लिए कितनी आवश्यक और कल्याणमयी है। आज तक गुरु रविदास जी के जीवन और वाणी से प्रभावित होकर, अनेकों ही लेखकों ने पुस्तकें लिखी हैं। हस्तलिखित पुस्तक 'जगतगुरु रविदास अमृत बाणी (स्टीक) और संक्षेप जीवन' भी इसी संदर्भ में छोटा सा पुरुषार्थ है, जिसे चार भागों में बांटा गया है।

1. श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित दर्ज 40 शब्द एवं एक श्लोक व्याख्या सहित सम्मिलित किये गये हैं और भिन्न भिन्न युनिवर्सिटियों में पड़ी हुई हस्तलिखितों के साथ-साथ धार्मिक पुस्तकों में उपलब्ध शब्दों की, सरलार्थ सहित व्याख्या, की गई है।

2. गुरु रविदास जी द्वारा रचित श्लोक, पैंती अक्खरी, हफ्तावार, पंदरातिथी, बारहमास, लावें आदि।

3. गुरु रविदास महाराज जी द्वारा रचित 230 दोहे।

4. श्री गुरु रविदास जी के जीवन से सम्बन्धित लगभग वे सभी कथाएँ, सम्मिलित की गई हैं, जो भिन्न-भिन्न धार्मिक पुस्तकों में सम्मिलित हैं।

दास आशा करता है कि संगत इस पुरुषार्थ से भरपूर लाभ उठाएगी।

प्रेरणा स्रोत

जब भी किसी जीव को कोई सफलता प्राप्त होती है, तो स्वाभाविक ही उसे अत्यंत प्रसन्नता अनुभव होती है। परन्तु उस सफलता के पीछे, कोई न कोई प्रेरणा स्रोत अवश्य होता है। प्रेरणा स्रोत के बिना सफलता सदैव ही, अधूरी होती है। हस्तलिखित पुस्तक "जगत् गुरु रविदास अमृत वाणी और संक्षिप्त जीवन" को संगत के पुरुषार्थ हित भेंट करते हुए, दास को अत्यन्त प्रसन्नता अनुभव हो रही है, परन्तु इस प्रसन्नता का राज मेरे प्रेरणा स्रोत और मार्गदर्शक महान विद्वान, कीर्तन के धनी और सेवा के पुंज श्री 108 संत रामानंद जी, जिन्हें ब्रह्मलीन श्री 108 संत गरीब दास जी महाराज और वर्तमान गद्दी नशीन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज जी की संगत में, संसार के कोने-कोने में जाकर, गुरु जी के पावन मिशन का प्रचार करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आप जी ने हर क्षेत्र में, मेरे बचपन से लेकर आज तक, मेरा मार्ग दर्शन किया। शिक्षा प्राप्ति के बाद, आप जी ने मेरी, श्री गुरु रविदास जी की पावन वाणी से सम्बन्धित आध्यात्मिक उलझनों के रहस्य को समझने में, बहुत बड़ी भूमिका अदा की और श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की प्रकाशमयी वाणी का अध्ययन, अपनी देख-रेख में करवाया।

जगत् गुरु रविदास जी की अमृतमयी एवं परमार्थी वाणी के अर्थ करना, एक अत्यन्त कठिन कार्य है, परन्तु श्री 108 संत रामानंद जी ने, हस्तलिखित पुस्तक लिखने के लिए प्रेरणा दी। उन्होंने इस पूर्ण रचना व लिखत को खुद पढ़कर, उस में आवश्यकतानुसार संशोधन कर, इस को वर्तमान रूप प्रदान किया। इस पुस्तक के पंजाबी भाषा में दो संस्करण, पहला 2005 में 5000 किताबें और दूसरा संस्करण 2009 में 5000 प्रतियां छपवाई गई हैं। महापुरुषों के आशीर्वाद व प्रेरणा का हार्दिक धन्यवाद करता हुआ दास, कुछ सेवादारों का, जिक्र करना भी अपना कर्तव्य समझता है, जिन्होंने दास को पूर्ण सहयोग दिया। इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद श्रीमती सरबजीत कौर और श्रीमती नीलम ने किया। इसके साथ ही श्री बलवीर मन्मण, श्री विजय कुमार 'हजारा' और समूह स्टाफ साप्ताहिक 'बेगमपुरा शहर' ने बहुत सहयोग दिया।

इस पुस्तक में कुछ कमियां अवश्य रह गई होंगी, दास उस के लिए क्षमा का याचक है।

— संत सुरिन्दर दास बाबा

डेरा संत सरवण दास जी, सच्च खण्ड बल्लान

डेरा 108 संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां

यह पवित्र धरती महान् तपस्वी, परोपकारी, दीर्घदर्शी, तत्त्ववेत्ता, ब्रह्मज्ञानी, नाम वाणी के रसिया और दुखियों के हमदर्द महापुरुषों का स्थान है। आज तक निम्नलिखित महापुरुषों ने इस दरबार के गद्दी नशीन होकर सेवा की :

श्री 108 संत बाबा पिप्पल दास जी ज्योति-ज्योत समाए - 1928

श्री 108 संत सरवण दास जी ज्योति-ज्योत समाए - 11 जून 1972

श्री 108 संत हरी दास जी ज्योति-ज्योत समाए - 6 फरवरी 1982

श्री 108 संत गरीब दास जी ज्योति-ज्योत समाए - 23 जुलाई 1994

श्री 108 संत निरंजन दास जी वर्तमान् गद्दी नशीन

बाबा पिप्पल दास जी

बाबा पिप्पल दास जी महाराज, का जन्म गाँव गिल्ल पट्टी, ज़िला बठिंडा में हुआ। आप बचपन से ही बहुत परमार्थी स्वभाव के थे। गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए आप अपने पूजनीय गुरुदेव बाबा मोहन दास जी, के शुभ उपदेशों को अपने जीवन में ग्रहण करते हुए परमात्मा के सिमरन में मग्न रहते थे। आप जी की अर्धांगिनी बीबी शोभावंती जी भी बहुत ही पवित्र विचारों वाली स्त्री थी। समयानुसार, आप के गृह में एक पुत्र का जन्म हुआ, जो आगे चल कर संत सरवण दास जी के नाम से प्रसिद्ध हो गए। स्वामी सरवण दास जी बाल्यावस्था में ही थे, जब उनके माता जी परलोक सिधार गए। इसी दौरान ही बाबा पिप्पल दास जी ने अपनी परमार्थी यात्रा प्रारंभ की और गाँव बल्लां, ज़िला जालन्धर में आकर रहने लगे। जहाँ पर पहला डेरा स्थित है, वहाँ रहते हुए बाबा पिप्पल दास जी ने संगत् को सेवा, सिमरन और सत्संग से जोड़ा। आप की शरण में रह कर, कई जिज्ञासुओं ने आध्यात्मिक विद्या का अध्ययन किया। बाबा जी ने अपने सुपुत्र को, श्री 108 संत करतानंद जी, जो एक महान् विद्वान थे, की संगत में, शिक्षा प्राप्ति के लिए भेजा और उन्हें नाम की अमूल्य बख्शिशा स्वामी हरनाम दास जी से प्राप्त हुई। बाबा पिप्पल दास जी विक्रमी संवत् 1985 (सन् 1928) 26 सितंबर दिन गुरुवार पूर्व नक्षत्र और सुबह के समय, अपनी जीवन यात्रा संपूर्ण करते हुए ज्योति-ज्योत समा गए। बाबा जी का अंगीठा साहिब (अंतिम संस्कार का स्थान) गाँव बल्लां के पूर्व की ओर सुशोभित है। प्रत्येक वर्ष पहला नवरात्रा बाबा पिपल दास जी की याद में मनाया जाता है और निशान साहिब चढ़ाए जाते हैं।

श्री 108 संत सरवण दास जी

बाबा पिप्पल दास जी के बाद डेरे की सारा कार्यभार श्री 108 संत सरवण दास जी ने संभाला। आप संगत को बहुत प्यार करते थे। आप जी का आगमन 15 फरवरी 1895 ई. को, सम्माननीय बाबा पिप्पल दास जी और माता शोभावंती जी के पावन गृह गाँव गिल्लपत्ती, ज़िला बठिण्डा में हुआ। संगत की संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ने लगी। नाम की दवा से, जहाँ आप संगत की जन्म-जन्मांतरों की बीमारी का उपचार करते, वहीं उन्होंने आर्युर्वेदिक जड़ी-बूटियों द्वारा स्थूल शरीर के इलाज का प्रबन्ध किया। इसके साथ-साथ, गुरु जी ने बच्चों की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया। महाराज जी खुद बच्चों की क्लास डेरे में लगाते और पढ़ाई के साथ साथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का अध्ययन भी करवाते। बाबा पिपल दास जी के समय दौरान ही, आप संगत की सेवा में से समय निकाल कर, एकांत वास में साधना के लिए चले जाते थे। जहाँ बैठकर स्वामी सरवण दास जी भक्ति-साधना करते थे, उसी स्थान पर उनका यादगारी मंदिर, डेरा सच्चखण्ड बल्लां में सुशोभित है। डेरे की यह एक कनाल ज़मीन गाँव बल्लां के निवासी सरदार हज़ारा सिंह ने दान की थी। गर्मी एवं बरसात से बचाव के लिए इस स्थान पर कच्ची ईंटों की एक कुटिया बनाई गई थी। कुटिया के सामने एक थड़ा था, जहाँ बैठकर संत सरवण दास जी संगत को प्रवचन सुनाया करते थे। इस थड़े का निशान, आज भी मंदिर के सामने विद्यमान है। बाबा पिप्पल दास जी की कृपा से संत हरी दास जी संत सरवण दास जी, के सम्पर्क में आए और स्वामी सरवण दास जी ने संत हरी दास जी को, संगत की सेवा में जोड़ा। कुछ समय बाद, संत गरीब दास जी और संत निरंजन दास जी ने भी, अपना जीवन गुरु चरणों में समर्पित कर दिया और संत सरवण दास जी द्वारा लगाई गई सेवा, कुशल ढंग से निभाने लगे।

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान काशी में मंदिर का निर्माण

दुनिया भर में श्री गुरु रविदास जी के जन्म स्थान पर, कोई ऐतिहासिक मंदिर नहीं था। स्वामी सरवण दास जी, स्वामी हरी दास जी और स्वामी गरीब दास जी ने विचार कर, काशी में गुरु रविदास जी के जन्म स्थान पर, मंदिर के निर्माण की योजना बनाई। संत सरवण दास जी ने, श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर का नींव पत्थर 14 जून 1965 (आषाढ़ की सक्रांति) के दिन श्री 108 संत हरी दास जी के कर-कमलों से रखवाया। इसके पश्चात् मंदिर के निर्माण का कार्य, संत हरी दास जी ने, संत गरीब

दास जी के साथ, संगत भेज कर करवाया। वर्तमान रूप में, कलश के बगैर इस मंदिर के निर्माण का कार्य तो संत सरवण दास जी के जीवन काल में ही प्रारंभ हो चुका था, परन्तु मंदिर की तैयारी का कार्य, गुरु जी के बाद श्री 108 संत हरी दास जी और महाराज श्री 108 संत गरीब दास जी ने करवाया। स्वर्ण कलश 1994 में, श्री 108 संत गरीब दास जी ने संगत के सहयोग से चढ़ाया। इस मंदिर में जगद्गुरु रविदास महाराज और स्वामी सरवण दास जी की मूर्ति की स्थापना एक विशाल संत सम्मेलन करवाकर 22 फरवरी 1974 में की गई। इस मंदिर का प्रबन्ध, श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट चला रहा है।

इस मंदिर के निर्माण के साथ साथ स्वामी सरवण दास जी ने श्री गुरु रविदास साधू संप्रदाय सोसाईटी पंजाब, गाँवों की श्री गुरु रविदास सभाएं और शिक्षा केन्द्रों को सहयोग देकर, माज के कल्याण के कार्यों में, महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

श्री 108 संत सरवण दास जी और उनके साथी महापुरुषों, के कठोर परिश्रम के कारण यह डेरा सारे संसार में, परमार्थ का एक विशाल केन्द्र बन गया है। दुनिया भर के श्रद्धालुओं की नज़रें, इस स्थान की ओर आकर्षित हुईं।

सतगुरु जी के चरणों में से, सभी की मनोकामना पूर्ण होने लगीं। प्रतिदिन आश्रम में, संगत की चहल-पहल लगी रहती थी।

परमात्मा की आज्ञा के अनुसार, 11 जून 1972 का वह दिन आ गया, जिस दिन सतगुरु स्वामी सरवण दास जी महाराज

सूरज किरण मिली जल का जल हुआ राम ॥

जोति जोत रली संपूर्ण थीआ राम ॥

के महा वाक्य के अनुसार, अपनी जीवन यात्रा संपूर्ण करते हुए, परमात्मा में विलीन हो गए। संगत आप जी की कुर्बानी सदा याद रखेगी।

श्री 108 संत हरी दास जी

सतगुरु स्वामी सरवण दास जी के बाद, श्री 108 संत हरी दास जी महाराज संत समाज द्वारा डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लों के संचालक नियुक्त किये गए। गुरु जी के सहायक के रूप में, श्री 108 संत गरीब दास जी और श्री 108 संत निरंजन दास जी की सेवा लगाई गई। महाराज हरी दास जी के पिता का नाम श्री हुकम चंद और माता का नाम श्रीमती ताबी जी था। स्वामी हरी दास जी का जन्म

स्थान गाँव गड़ा, जालन्धर है।

स्वामी सरवण दास जी की याद में (सच्चखण्ड) मंदिर का निर्माण

श्री 108 संत हरी दास महाराज जी ने, पूजनीय गुरुदेव श्री गुरु सरवण दास जी की याद में मंदिर के निर्माण का कार्य, 10 अगस्त 1972 को शुरु किया। मंदिर के निर्माण का कार्य बड़े हर्षोल्लास के साथ शुरु किया गया, जिसमें देश और विदेश की संगत ने बहुत उत्साह से सेवा की। मंदिर का उद्घाटन, 11 जून 1974 को संत सरवण दास जी के बरसी समारोह के दिन किया गया और संत सरवण दास जी की मूर्ति मंदिर में सुशोभित की गई। यह मंदिर उस स्थान पर बनाया गया है, जहाँ स्वामी सरवण दास जी की कुटिया थी। मंदिर के निर्माण के बाद, यह कुटिया 'डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लों' के नाम से प्रसिद्ध हुई। कई बार मौसम की खराबी के कारण कीर्तन समागम में परेशानी हो जाती थी, इस परेशानी को दूर करने और संगत की सुविधा के लिए, स्वामी हरी दास जी ने एक सत्संग हाल का निर्माण करवाया, जिसका नींव पत्थर तिथि 31 अक्टूबर 1976 को रखा गया। यह सत्संग हाल 'संत हरि दास सत्संग हाल' के नाम से जाना जाता है। स्वामी हरी दास जी ने बच्चों की शिक्षा पर जोर देते हुए, बाल विवाह का पूर्ण विरोध किया। गुरु जी ने नशीली वस्तुओं के सेवन की मनाही करते हुए संगत को गुरबाणी और सत्संग से जोड़ा। आप जी ने डेरे के लिए और जमीन खरीदी। आप के जीवन काल के दौरान, डेरे की सेवाएं निरंतर चलती रहीं। आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियों द्वारा लोगों के उपचार का कार्य श्री 108 संत गरीब दास जी करते थे। परमात्मा की आज्ञा के अनुसार लगभग 100 वर्ष की आयु व्यतीत करते हुए, संत हरी दास जी 6 फरवरी 1982 को अखण्ड ज्योत में विलीन हो गये।

श्री 108 संत गरीब दास जी

संत हरी दास जी के पश्चात्, महाराज गरीब दास जी डेरे के गद्दी नशीन हुए। आप जी का आगमन 1925 ई० को सम्मानीय श्री नानक चंद और माता श्रीमती हर कौर के घर में हुआ। गाँव जलभैयां, जिला जालन्धर आप जी का जन्म स्थान है। आप जी के सहायक के रूप में, श्री 108 संत निरंजन दास जी को नियुक्त किया।

संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल का निर्माण

संत गरीब दास जी, दुखियों के दर्द को पहले ही बहुत अच्छी तरह से

अनुभव करते थे, इस लिए आप जी ने, सबसे पहला महान कार्य, सतगुरु जी के नाम पर, दुखियों की सेवा के लिए, अस्पताल के निर्माण का किया, जिसका शुभारंभ, 22 अक्टूबर 1982 को गाँव ढेपुर-कूपुर, जिला जालन्धर में किया गया। इस अतिव्यय वाले कार्य को आप जी ने सतगुरु सरवण दास जी के भरोसे पर आरंभ किया। जब भी कोई व्यक्ति यह शंका प्रकट करता कि अस्पताल का कार्य कैसे चलेगा? तो गुरु जी उसे कहते कि यह कार्य तो, संत सरवण दास जी का है और मुझे पूर्ण विश्वास है, यह कार्य संत सरवण दास जी की कृपा से, सदैव ऊँचाईयों को छूएगा। गुरु जी के मुखारविंद से निकले हुए यह वचन अटल सिद्ध हुए। इस अस्पताल का नाम, 'संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल' रखा गया। इसका प्रबन्ध अब तक 'संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल ट्रस्ट' चला रहा है, जिसके संचालक सदैव ही डेरा सच्च खण्ड बल्लां के संचालक होंगे। इस अस्पताल में, अनुभवी डाक्टरों की सेवाएं और आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं।

साप्ताहिक बेगमपुरा शहर पत्रिका

साप्ताहिक बेगमपुरा शहर पत्रिका, जिस द्वारा समाज की बहुत सेवा हो रही है, सतगुरु स्वामी गरीब दास जी की, समाज को एक महान् देन है। आप इस पत्रिका के संस्थापक थे।

श्री गुरु रविदास आई. टी. आई. कॉलेज फगवाड़ा में, 'संत सरवण दास मैमोरियल टीचिंग ब्लॉक' का नींव पत्थर रखा गया। हाल कमरे के निर्माण के कार्य की सेवा भी डेरे द्वारा निभाई गई। गुरु जी ने डेरे में संगत के रहने का प्रबन्ध करने के लिए, एक विशाल बिल्डिंग के निर्माण की शुरुआत की, जो गुरु जी की कृपा से संपूर्ण हुई। इस बिल्डिंग में चार बड़े हाल और 26 कमरे बाथरूम सहित, यात्रियों की सुविधा के लिए बनाए गये। डेरे में पानी की सप्लाई के लिए एक ट्यूबवैल और पानी की टंकी का, प्रबन्ध किया गया। संगत की सुविधा और समागम के लिए आप ने और ज़मीन खरीदी जिसकी बहुत आवश्यकता थी। जालन्धर पठानकोट मार्ग से डेरे को जाने वाले मार्ग, जिसका नाम 'संत सरवण दास मार्ग' है, पर सतगुरु स्वामी सरवण दास जी की याद में, अति सुन्दर गेट का निर्माण किया गया। इस गेट के निर्माण में, गाँव बल्लां और इस गाँव के विदेश में रह रहे श्रद्धालुओं ने योगदान दिया और इसका उद्घाटन इंग्लैंड, अमेरिका और कैंनेडा से आई हुई संगत और संत महापुरुषों की

उपस्थिति में, 11 जून 1994 को किया गया।
बर्मिंघम (यू. के.) गुरु घर का नींवपत्थर और उद्घाटन संत गरीब दास जी के कर-कमलों द्वारा किया गया। बुल्वरहैप्टन, स्टर्ड कैंट, साऊथैप्टन और विदेशों के अन्य कई शहरों में गुरु-घरों का नींव पत्थर और उद्घाटन का कार्य, आप जी के कर-कमलों द्वारा हुआ। महाराज गरीब दास जी 1985 से लेकर 1994 तक छः बार इंग्लैंड, तीन बार अमेरिका और एक बार कैंनेडा गये। आपने विदेश जाकर वहां रह रही संगत को अपने दर्शन और नाम सिमरन का आशीर्वाद देकर उनके जीवन में खुशियाँ भर दी।
जुलाई 1994 को बनारस में एक बहुत बड़ा समागम किया गया। जिसमें देश विदेश से बड़ी संख्या में संगत शामिल हुई। श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर में, यह इस प्रकार का पहला समागम था, जिसको संगत सदैव याद रखेगी। सतगुरु स्वामी गरीब दास महाराज इंग्लैंड की संगत को विदा कर 23 जुलाई 1994 को, सदा के लिए बेगमपुरा शहर में निवास कर गये।

गुरु साहिबान की समाधियां

सतगुरु बाबा पिप्पल दास महाराज जी -

अंगीठा - गाँव बल्लां से पूर्व की ओर।

समाधि - डेरे में गुंबद वाला कमरा यहाँ बाबा जी की मूर्ति सुशोभित है।

सतगुरु संत सरवण दास महाराज जी -

अंगीठा और समाधि-महाराज पिप्पल दास जी की समाधि के साथ।

सतगुरु संत हरी दास महाराज जी -

अंगीठा और समाधि- संत सरवण दास जी की समाधि के पश्चिम की ओर।

सतगुरु संत गरीब दास महाराज जी -

अंगीठा - श्री गुरु रविदास सत्संग भवन के पूर्व की ओर।

समाधि - महाराज हरी दास जी की समाधि के दक्षिण की ओर।

श्री 108 संत निरंजन दास जी (वर्तमान् गद्दी नशीन)

ब्रह्मलीन संत गरीब दास जी के बाद, श्री 108 संत निरंजन दास जी, गद्दीनशीन हुए। आप जी के पिता का नाम श्री साधू राम जी और माता का नाम श्रीमती रुक्मणी जी था। आप का जन्म गाँव रामदासपुर, जिला जालन्धर में 6 जनवरी 1942

के दिन हुआ। आप जी के माता पिता, बाबा पिप्पल दास जी महाराज तथा सतगुरु स्वामी सरवण दास जी महाराज के श्रद्धालु थे। उन्हें जब भी घरेलू कार्यों से फुर्सत मिलती, तो सीधे गुरु जी के डेरे में पहुँच जाते, संतों के वचन सुनते, वे उनकी सेवा करते। वे अपने प्रिय सपुत्र निरंजन दास को भी संतों के दर्शन के लिए अपने साथ ले आते थे। संत सरवण दास जी नन्हें बच्चे को देखकर बहुत प्रसन्न होते और उन्हें अपने पास बुलाकर मीठी मीठी बातें करते। एक बार सतगुरु स्वामी सरवण दास महाराज जी ने, आप जी के पिता से पूछा कि बालक का नाम क्या है, तो श्री साधू राम ने कहा कि महाराज जी इस का नाम निरंजन रखा है, परन्तु यह काम में बहुत सुस्त है। गुरु जी ने कहा कि आज से हम इसका नाम हवाईगर रखते हैं, हमें दिखाई दे रहा है कि यह बालक सुस्त नहीं, बल्कि हवा से भी तेज़ होगा। श्री साधू राम जी ने सत वचन कहकर गुरु जी को प्रणाम किया और बालक को संतों के सपुर्द कर अपने नगर वापिस लौट गए। जब संत सरवण दास जी इन्हें (संत निरंजन दास जी को) किसी कार्य हेतु बुलाते तो हवाईगर के नाम से ही सम्बोधित करते थे। वे जहाँ भी होते थे, दौड़कर संत सरवण दास जी के चरणों में पहुँचकर पूछते कि क्या आदेश है महाराज जी? संत बहुत प्रसन्न हो जाते थे।

डेरे में सेवा करते हुए, हवाईगर, अब बचपन से जवानी में आ चुके थे। जिस कार्य का भी गुरु जी ने आदेश दिया कि हवाईगर यह कार्य करना है, वे सदैव यही उत्तर देते थे कि महाराज जी यह कार्य तो पूरा कर दिया है। संत सरवण दास जी इनकी सेवाओं से बहुत प्रसन्न होते थे और कहते कि आपके माता पिता तो आपको सुस्त कहते थे, तो तुमने यह कार्य कैसे पूरा कर दिया? तो हवाईगर जी ने उत्तर दिया कि महाराज जी जैसे आप करवाते हो, करता हूँ, तब संत सरवण दास जी यह वचन सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुए और कहने लगे, अब हमने तुम्हारा नाम हवाईगर से, संत निरंजन दास रख दिया है। आप जी ने बचपन से लेकर गद्दीनशीन होने तक, डेरे में महान् सेवायें निभाईं। वे प्रतिदिन नगरों में जाकर संगत के लिए दूध लाया करते थे। लंगर और डेरे की सारी व्यवस्था वे खुद देखते थे।

आप जी ने महान् कार्य किए। डेरा सच्चखण्ड बल्लां में गुरु साहिबान द्वारा लगाई गई सेवा निभाते हुए डेरे के निर्माण, अस्पतालों के निर्माण, श्री गुरु रविदास जन्मोत्स्थान में संगत की सुविधा के लिए, अन्य निर्माण कार्य, बेगमपुरा शहर पत्रिका

तथा अन्य सामाजिक कल्याण के कार्यों में आप जी का पूर्ण रूप से ध्यान है। आप जी 23 जुलाई 1994 को संत गरीब दास महाराज जी के ब्रह्मलीन होने के उपरांत डेरा सच्चखण्ड बल्लां के संचालक बने तथा संत रामानंद जी के सहयोग से, आप जी ने महान् कार्य किए। श्री गुरु रविदास जन्मोत्स्थान मन्दिर में, आप जी ने 31 स्वर्ण कलश सुशोभित किए, संगत की सुविधा हेतु चार मंज़िला इमारत का निर्माण करवाया तथा वहाँ और ज़मीन खरीदी। आप जी के प्रतिनिधित्व में, यूरोप की संगत द्वारा स्वर्ण पालकी भेंट की गई और श्री गुरु रविदास जन्मोत्स्थान मन्दिर को, स्वर्ण मंडित करने का कार्य आरंभ किया गया है। श्री गुरु रविदास मन्दिर और संत सरवण दास मॉडल स्कूल हदियाबाद फगवाड़ा, श्री गुरु रविदास मन्दिर पुणे, श्री गुरु रविदास मन्दिर सिरसगढ़, कर्मस्थली बाबा पिप्पल दास जी एवं जन्म स्थली सतगुरु स्वामी सरवण दास जी गिल्लपत्ती बठिंडा का निर्माण करवाया गया। डेरे में, श्री गुरु रविदास सत्संग भवन और संत सरवण दास चैरिटेबल आँखों के अस्पताल, का निर्माण करवाया गया।

डेरे और डेरे से जुड़ी हुई संस्थाओं के संचालन के लिए, प्रतिदिन के कार्यों से संत निरंजन दास जी की छत्रछाया में, संत रामानंद जी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। संत सुरिन्दर दास जी डेरे और डेरे द्वारा चल रही संस्थाओं में योगदान देने के अलावा ढेपुर-कूपुर में संगत को गुरु साहिब के मिशन के साथ जोड़ रहे हैं। बडाला माही में संत गुरबचन दास जी संगत की सेवा निभा रहे हैं। बीबी भजनों, जो महाराज जी के भोजन और गुरु साहिबान के लंगर में, अपनी निष्काम सेवा द्वारा योगदान दे रही है।

डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां की ओर से जो सेवाएं चल रही हैं उन में समस्त संगत का, अपार प्रेम झलक रहा है। इस पक्ष को देखते हुए, सारी गुरु प्रेमी संगत धन्यवाद की पात्र है।

कौम के महान शहीद

ब्रह्मलीन श्री 108 संत रामानन्द महाराज जी

खुशहाल संसार में कुछ ऐसे अजीम शख्स पैदा होते हैं, जो अपने परोपकारी कार्यों से, चिर स्थायी दुनिया तक अपना नाम रौशन कर जाते हैं, परन्तु संतजन समस्त मानवता के लिए, प्रकाश स्रोत बन जाते हैं। सीमायों की सीमित रेखाएं, रंग, नस्ल, मज़हब की व्यर्थ कहानिया, उनके लिए निरर्थक होती हैं। संतजन पीपल की छाया की भांति होते हैं, जो पापों रूपी गर्मी की तपिश झेलती मानवता को, पश्चिम की ठंडी व शीतल वायु का सुख प्रदान करते हैं।

1910-15 के मध्य, संत रामानन्द जी के पिता, श्रीमान महिंगा राम जी व उनके पूर्वज गाँव बल्लां को छोड़कर गांव अलावलपुर, ज़िला जालन्धर में जा बसे। वे डेरा सच्चखण्ड बल्लां के श्रद्धालु थे। जब किसी इतिहास का सृजन करना हो, तो प्रकृति बहुत से नवीन विधियों का सृजन करती है। कुछ ऐसा ही हुआ, इस परिवार के जीवन में। गृहस्थी जीवन बिता रहे श्रीमान् महिंगा राम जी तथा बीबी जीत कौर जी, ने कभी सोचा भी नहीं था कि उनके घर एक ऐसा बालक जन्म लेगा, जो समस्त दलित समुदाय को, मोतियों की भांति, एकता की माला में पिरोकर, संपूर्ण विश्व में, श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज डेरा सच्चखण्ड बल्लां, जैसे साधना स्थल को चार-चाँद लगाने में, महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा, जिस पर आने वाली पीढ़ियां नाज़ करेगी। आज डेरा सच्चखण्ड बल्लां, सतगुरु स्वामी निरंजन दास महाराज जी और संत रामानन्द महाराज जी के असीम परिश्रम के कारण ही, मानवता, विशेषतः दलितों का मक्का माना जाता है। समय के गद्दीनशीन महापुरुषों की कदम चाल को नापना तथा उनके पदचिह्नों पर चलना, वर्तमान् गद्दीनशीन महापुरुषों का उद्देश्य रहा है।

श्री 108 संत रामानन्द महाराज जी का जन्म 2 फरवरी 1952 को, पिता श्रीमान् महिंगा राम जी के गृह में, माता श्रीमती जीत कौर जी की पावन कोख से हुआ। आप बचपन से ही साधु स्वभाव रखते थे। आप जी का मनमोहक रूप, गली-मोहल्ले के लोगों को मंत्रमुग्ध कर देता था। बी०ए० तक की शिक्षा आप जी ने दोआबा कॉलेज से प्राप्त की। जिस समय आप पढ़ाई के लिए जाया करते थे तो अकसर गुम-सुम रहा करते थे। आप बचपन से ही साधु-संगत के पुजारी थे, अतः वह रंग तो चढ़ना ही था जो प्रवाण होकर (बढ़-फूल कर) और गहरा होता गया। घर के अन्य सदस्यों

ने ज़ोरदार विरोध करना शुरू कर दिया कि रामानन्द को साधुओं की संगत से, रोका जाए। घर में सामान्यता साधु संगत की बातें होती रहतीं। संत रामानन्द जी घर के घरेलू कार्य करते हुए भी हर समय परमात्मा का नाम सिमरन करते रहते। अंततः संत रामानन्द जी को श्री 108 संत हरी दास जी महाराज सच्चखण्ड बल्लां वाले महापुरुषों के चरणों में सौंप दिया गया। आप जी को संत हरी दास जी महाराज द्वारा नाम का आशीर्वाद दिया गया। संत रामानन्द जी 1973 से बाबा पिप्पल दास जी महाराज की याद में, बल्लां गाँव में बने सुन्दर मन्दिर में रहकर प्रभु-सिमरन करते। संत रामानन्द जी ब्रह्मलीन संत हरी दास जी महाराज के समय व महाराज गरीब दास जी के समय में, दिन के समय डेरे में रहकर संगत की सेवा करते और रोज़ाना शब्द कीर्तन तथा कथा करते।

यहां वर्णनीय है कि संत रामानन्द जी को, गुरु ज्ञान सतगुरु हरी दास जी से प्राप्त हुआ और सतगुरु गरीब दास जी ने उन्हें भेष धारण करवाया। उनके साथ ही, संत रामानन्द जी को अलग-अलग देशों में श्री गुरु रविदास मिशन के प्रचार व प्रसार हेतु जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसके बाद डेरा सच्चखण्ड बल्लां के वर्तमान् गद्दीनशीन श्री 108 संत निरंजन दास महाराज जी के निर्देशन में विदेशों में जाकर, श्री 108 संत रामानन्द जी ने, अनेक गुरु घरों का निर्माण करवाया तथा विदेशी संगत को, श्री गुरु रविदास महाराज जी की विचारधारा के साथ जोड़ा। आप संगत की आँखों के तारे थे। आप जी की रसना से, वाणी के मीठे बोल श्रवण कर, संगत मंत्र मुग्ध हो जाती थी।

आप एक कुशल प्रशासक थे, जिन्होंने डेरे के प्रबन्ध को अत्यंत कुशल ढंग से चलाया। विश्व भर में, संत सम्मेलनों में श्री गुरु रविदास महाराज जी की वाणी का प्रचार व प्रसार करने के साथ-साथ, आप डेरा सच्चखण्ड बल्लां द्वारा मानव कल्याण हेतु चलाई जा रही, भिन्न-भिन्न परियोजनाओं के कार्यों को चलाने के लिए, बढ़चढ़ कर भाग लेते थे। डेरा सच्चखण्ड बल्लां द्वारा प्रकाशित किए जा रहे 'बेगमपुरा शहर' के संपादक के रूप में, आप जी ने प्रशंसनीय सेवायें निभाई, जिस के लिए आप जी को भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया। यह पहली बार था कि आप जी ने यू०के० के संसदीय सदन में, श्री गुरु रविदास महाराज जी से संबंधित भाषण पढ़कर एक नए इतिहास का निर्माण किया। आप वाणी के महान् ज्ञाता थे और अत्यंत सरल उदाहरणों द्वारा गुरुवाणी के जटिल अर्थों की व्याख्या करने में माहिर थे। आप

जब संगीतमय कीर्तन करते थे, तो पंडाल में बैठी संगत, पूर्णतः मंत्र मुग्ध हो जाती थी।

डेरा बल्लां द्वारा चलाए जा रहे संस्थानों की इमारतों के निर्माण में संत रामानन्द जी का अति विशेष योगदान रहा है। जब श्री गुरु रविदास जन्मस्थान मन्दिर, सीर गोवर्धनपुर वाराणसी, संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल अड्डा कठार, श्री गुरु रविदास सत्संग भवन बल्लां, श्री गुरु रविदास मन्दिर और संत सरवण दास मॉडल स्कूल हदियाबाद फगवाड़ा, संत सरवण दास आई अस्पताल बल्लां, श्री गुरु रविदास मन्दिर सिरसगढ़ हरियाणा, बाबा पिप्पल दास महाराज जी की कर्मस्थली और संत सरवण दास महाराज जी की जन्म स्थली गिल्ल पट्टी बठिण्डा, श्री गुरु रविदास मन्दिर कात्रज पुणे की नई बन रही इमारतों का कार्य चल रहा था, तो संत रामानन्द जी स्वयं मेहनतकशों की भांति कार्य में कूद पड़ते थे। संगत द्वारा विश्राम के लिए निवेदन करने के बावजूद, घंटों कार्य करते रहते और सभी साधारण व विशेष लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत बन जाते थे।

संत रामानन्द जी एक परिश्रमी, दृढ़निश्चयी योद्धा थे, जो मिशनरी कार्यों को संपूर्ण करने के लिए, दिन रात एक करते हुए न तो थकावट महसूस करते थे और न ही उकताहट। आप अकसर कहा करते थे ‘जो समय महाराज जी की सेवा में लग जाए वही अच्छा है, क्या पता फिर समय मिले न मिले।’

श्री गुरु रविदास महाराज जी के मिशन का प्रचार व प्रसार करने के लिए गए श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज वर्तमान् गद्दीनशीन डेरा सच्चखण्ड बल्लां और गुरु घर के वजीर कीर्तन के धनी, महान् विद्वान, नाम के रसिया, महान् वैद्य श्री गुरु रविदास मिशन के केन्द्रबिन्दु, संत समाज के अमूल्य रत्न, श्री 108 संत रामानन्द जी, मृत्यु के समय भी श्री गुरु रविदास महाराज जी का नाम उच्चारण करते रहे, जैसे कह रहे हों कि वे अभी मिशन के प्रचार व प्रसार के लिए बहुत कुछ करना चाहते हैं। परन्तु भविष्य को यह मंजूर नहीं हुआ और आप दिनांक 25 मई प्रातः काल इस नश्वर संसार को अलविदा कहते हुए ब्रह्मलीन हो गए।

संत रामानन्द जी महाराज, अपना पूरा जीवन शहादत का जाम पीते हुए ब्रह्मलीन होने तक गुरु रविदास नाम लेवा संगत को, जगत् गुरु रविदास महाराज जी का पावन उपदेश “सतिसंगति मिलि रहीयै माधऊ, जैसे मधुप मखीरा॥” देते हुए विश्व स्तर पर एकत्रित होने का उपदेश दे गए।

वियाना में घटित दुर्भाग्यपूर्ण घटना में, संत रामानन्द जी हम से शारीरिक रूप से बिछुड़ अवश्य गए हैं, परन्तु उनकी सोच सदैव हमारा मार्गदर्शन करती रहेगी।

सारे समाज को संत रामानन्द जी की, कौम के लिए शहादत से प्रेरणा लेते हुए रविदासीया धर्म के नाम के नीचे ‘हरि’ के निशान साहिब तले विश्व स्तर पर अपनी अलग पहचान बनानी चाहिए।

अंगीठा साहिब और समाधि :

श्री 108 संत रामानन्द जी महाराज का पावन अंगीठा साहिब और समाधि श्री 108 संत गरीब दास जी के अंगीठा साहिब के पश्चिम की ओर उपस्थित है।

❖❖❖

डेरा सच्च खण्ड बल्लां द्वारा चलाए जा रहे प्रोजैक्ट

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर, सीर गोवर्धनपुर वाराणसी : श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर, सीर गोवर्धनपुर, वाराणसी के निर्माण का कार्य, संत सरवण दास जी महाराज डेरा सच्च खण्ड बल्लां द्वारा करवाया गया। संत सरवण दास जी की आज्ञा के अनुसार, इस मंदिर का नींव पत्थर 14 जून 1965 ई० (आषाढ़ की संक्रांति) के दिन संत हरी दास जी के कर-कमलों द्वारा रखा गया। मंदिर के निर्माण की ज़िम्मेदारी संत गरीब दास जी महाराज को सौंपी गई, जो उन्होंने बाखूबी निभाई। इस मंदिर में 22 फरवरी 1974 ई० को एक महान् संत सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें श्री गुरु रविदास सम्प्रदाय के अनेकों महापुरुष पधारे। इसी दिन, मन्दिर में, जगद्गुरु रविदास महाराज जी की पावन मूर्ति तथा स्वामी सरवण दास महाराज जी की पावन मूर्ति स्थापित की गई। इस सात मंजिले मंदिर के ऊपरी बड़े गुंबद और सात फुट सोने के कलश का उद्घाटन, तिथि 7 अप्रैल 1994 को बाबू कांशी राम जी (राष्ट्रीय प्रधान बसपा) के कर-कमलों द्वारा किया गया।

मंदिर में हर समय लंगर की व्यवस्था है। यात्रियों के ठहरने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया है। बनारस शहर में, तीर्थस्थानों के दर्शनों के लिए, एक मिन्नी बस का प्रबन्ध किया गया है। दुनिया भर के श्रद्धालु, जिज्ञासु, खोजकर्ता और सैलानी, इस मंदिर की यात्रा करने के लिए आते हैं। मंदिर का प्रबन्ध श्री गुरु रविदास जन्म स्थान चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.) द्वारा किया जाता है। श्री 108 संत सरवण दास चैरिटेबल ट्रस्ट

यू. के., के योगदान से, लंका चौराहा वाराणसी में श्री गुरु रविदास गेट का निर्माण भी करवाया गया, जिसका उद्घाटन, तत्कालीन राष्ट्रपति माननीय कोर्चिल रमन नारायणन जी के कर-कमलों द्वारा, 16 जुलाई 1998 को किया गया। गेट के उद्घाटन के बाद राष्ट्रपति जी श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर में पुष्पांजलि अर्पित करने के लिए गये। यहां श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट के चेयरमैन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज, ट्रस्ट के बाकी मैबरों और उपस्थित लोगों द्वारा, राष्ट्रपति जी का हार्दिक स्वागत किया गया। मंदिर में पुष्पांजलि अर्पित करने के बाद, उन्होंने मंदिर के निर्माण, इतिहास और प्रबन्ध के बारे में चर्चा की।

रिवायती शानोशौकत के साथ हर साल श्री गुरु रविदास जी का आगमन पर्व, ट्रस्ट की देख-रेख में, श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर में मनाया जाता है। इस पावन पर्व के अवसर पर विभिन्न राज्यों से और विदेशों से संगत आती है। ट्रस्ट द्वारा सन् 2000, 2001, 2002, 16 फरवरी 2003, 6 फरवरी 2004, 2006, 2007, 2008 और 2009 को श्री गुरु रविदास पर्व पर, पंजाब से हजारों श्रद्धालुओं को गुरुधाम के दर्शनों के लिए रेलवे विभाग, भारत सरकार के सहयोग द्वारा जालन्धर से वाराणसी तक स्पेशल 'बेगमपुरा एक्सप्रेस' की सुविधा प्रदान की गई, जो निरंतर जारी रहेगी।

625 वें गुरु रविदास जयंती पर्व के अवसर पर, मंदिर की आगे वाली दीवार के ऊपर, ट्रस्ट के पुरुषार्थ द्वारा करीब 25 लाख रुपये की लागत से मार्बल लगाया गया और मंदिर के सभी छोटे-बड़े गुंबदों पर 31 स्वर्ण कलश सुशोभित किये गये, जिनका उद्घाटन, भिन्न-भिन्न राज्यों से आए हुए महापुरुषों द्वारा, किया गया।

विशाल इमारत का निर्माण:

आश्रम में संगत की सुविधा के लिए एक विशाल इमारत का निर्माण किया गया है। इसमें बेसमेंट (6500 वर्ग फुट) के साथ-साथ, चार मंजिलें तैयार की गई। इस सारी बिल्डिंग में 44 कमरे हैं। इस विशाल बिल्डिंग का उद्घाटन, जगद्गुरु रविदास महाराज के 629वें आगमन पर्व पर 13 फरवरी 2006 को, संत निरंजन दास जी के कर-कमलों द्वारा किया गया। बाहर वाले प्लॉट में संगत की सुविधा के लिए एक बड़ी शैड (140 X 40 वर्ग) की तैयारी पूरी हो चुकी है।

स्वर्ण पालकी भेंट:- श्री गुरु रविदास नामलेवा यूरोप निवासी संगत की

ओर से 23 फरवरी 2008 ई. को, श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर बनारस के लिए स्वर्ण पालकी भेंट की गई, जो 16 फरवरी को जालन्धर से बनारस एक शोभा यात्रा के रूप में पहुंची।

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.) द्वारा विशाल लंगर हाल का निर्माण:

श्री गुरु रविदास महाराज जी की विचारधारा और वाणी के प्रचार के कारण, डेरा सच्च खण्ड बल्लां विश्वविख्यात है। यह आश्रम सेवा, सत्संग और सिमरन के माध्यम से 'बेगमपुरा संकल्प' और 'जो हम सहरी सो मीत हमारा' की अवस्था की प्राप्ति के लिए प्रेरणा स्रोत है। श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर सीर गोवर्धनपुर का निर्माण कर यहां गुरु जी की पावन याद में एक शानदार स्मृति चिन्ह स्थापित किया गया है वहीं यह स्थान श्री गुरु रविदास जी के प्रेमियों के लिए, एवं आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिए, एक पवित्र तीर्थ स्थान बनकर साकार हुआ है। यह डेरा सतगुरु रविदास जी की विचारधारा का संदेश, देश-विदेश और जन-जन (प्रत्येक प्राणी) तक पहुंचाने के लिए, प्रयत्नशील है। इस तीर्थ स्थान की सेवाओं का अधिक प्रचार होने के फलस्वरूप संगत का आवागमन बहुत बढ़ गया है। गुरु जी के पावन जन्म दिवस पर लाखों की संख्या में, श्रद्धालु आने लगे हैं। वैसे भी भिन्न-भिन्न राज्यों से इस गुरु धाम के दर्शनों के लिए, रेलगाड़ी, मोटर-कारों, ट्रकों और ट्राली इत्यादि में श्रद्धालु निरंतर आते रहते हैं। इस तेजी से बढ़ रही संगत के लिए अलग लंगर हाल की आवश्यकता महसूस (अनुभव) की गई। इस लिए यात्रियों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए, 100 फुट लम्बे और 65 फुट चौड़े लंगर हाल का नींव पत्थर 18 नवम्बर, 1998 को रखा गया। संत निरंजन दास जी की आज्ञा के अनुसार संत सुरिन्द्र दास जी (कठार) की देख-रेख में नींव खोदने का कार्य प्रारम्भ किया गया, अंतः 1999 तक लंगर हाल की सुन्दर इमारत का निर्माण पूरा हो गया, यह प्लॉट संत गरीब दास जी ने खरीदा था। करीब 55 लाख रुपए की लागत से बनाए गए इस लंगर हाल का उद्घाटन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज गद्दी नशीन डेरा सच्च खण्ड बल्लां और अध्यक्ष श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.) के कर-कमलों द्वारा तिथि 8 फरवरी 2000 को सुबह 11 बजकर 30 मिनट पर, श्री गुरु रविदास जयंती पर्व के अवसर पर लाखों श्रद्धालुओं और संत समाज की उपस्थिति में किया गया।

तिथि 28 मार्च, 2001 की श्री गुरु रविदास चैरिटेबल ट्रस्ट की मीटिंग में श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर, सीर गोवर्धनपुर वाराणसी में संगत की निरंतर बढ़ रही संख्या और संगत की सुविधा को ध्यान में रखते हुए मंदिर कम्प्लैक्स में बनाए गए, विशाल लंगर हाल की दूसरी मंजिल के निर्माण का फैसला लिया गया। इस लंगर हाल के निर्माण का कार्य, मई 2001 में शुरू किया गया, जिसमें सेवा करने के लिये पंजाब से बड़ी संख्या में सेवादार मंदिर पहुँचे। जिला जालन्धर के गाँव डींगरियां, दोलीके, सुन्दर नगर, आबादपुरा, मन्नणा, जण्डुसिंघा, शेखे, लिदड़ा, जिला अमृतसर और जिला गुरदासपुर से भी सेवादार गए। इस विशाल हाल के निर्माण का कार्य तिथि 22 मई 2001 से 30 मई 2001 तक दिन रात चलता रहा। सारी गुरु प्रेमी संगत ने बहुत श्रद्धा-सत्कार एवं बहादुरी के साथ काम किया। पंजाब से आए सेवादारों को सेवा करते देखकर बनारस के निवासी बहुत हैरान होते और कहते “ ये पंजाबी सेवादार किस मिट्टी के बने हुए हैं, जो दिन रात इतनी कठिन सेवा करते हैं और थकते नहीं” ऐसा लगता था कि इतना बड़ा कार्य बहुत लंबे समय में पूरा होगा परन्तु सतगुरु जी की ऐसी कृपा हुई कि सिर्फ 10 दिन में ही हाल कमरे पर लैंटर डाल दिया गया। लंगर हाल की दूसरी मंजिल का निर्माण, संत रामानंद जी की देख-रेख में हुआ। लंगर हाल की दूसरी मंजिल का उद्घाटन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज द्वारा 26 फरवरी 2002 को किया गया। आज श्रद्धालु इस विशाल हाल की दोनों मंजिलों की सुविधा का आनन्द प्राप्त कर रहे हैं।

यह विशेष वर्णनीय है कि लंगर हाल की पहली मंजिल का कुल व्यय श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज, डेरा सच्च खण्ड बल्लां द्वारा किया गया। लंगर हाल की दूसरी मंजिल के निर्माण के कार्य में, बुल्वरहैप्टन की संगत द्वारा, 8 लाख और बर्मिंघम की संगत द्वारा 14 लाख रुपए, का योगदान दिया गया।

संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल कूपुर -ढेपुर (कठार)

डेरा संत सरवण दास जी सच्चखण्ड बल्लां जालन्धर, संत सरवण दास जी से लेकर वर्तमान गद्दी नशीन श्री 108 संत निरंजन दास जी की देख रेख में समाज सेवा, जन-कल्याण, दुखियों और गरीबों की सेवा में जुटा हुआ है, जिनमें से संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल कठार, की सेवाएं, एक मील पत्थर के रूप में जानी जाती हैं। अस्पताल का नींव पत्थर ब्रह्मलीन श्री 108 संत गरीब दास जी के कर-

कमलों द्वारा 22 अक्तूबर 1982 को रखा गया। इस महान् कार्य के लिए, सेठ बेली राम जी, बीबी पूरो जी, बीबी भजनो जी, सेठ राजमल्ल जी और कूपुर की पंचायत की ओर से, जमीन दान की गई। इस हस्पताल का उद्घाटन, 1 जनवरी 1984 को किया गया। यहां लाखों रोगी नाममात्र व्यय पर बढ़िया सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं। 200 बैड वाले इस विशाल अस्पताल में सर्जरी, गाईनी, आंखों, दांतों, E.N.T., हड्डियों और बच्चों के विभाग द्वारा भिन्न-भिन्न बीमारियों का सस्ता एवं बढ़िया इलाज किया जा रहा है। इस हस्पताल में हड्डियों के आप्रेशन के लिए, आप्रेशन थिएटर करीब 20 लाख की लागत से तैयार किया गया है। इस पवित्र कार्य के लिए, अनुभवी डॉक्टरों और स्टाफ मैबरों के द्वारा मानवता की सेवा के लिए अमूल्य योगदान दिया जा रहा है। इस अस्पताल में हर महीने लगभग 6000 लोगों का ओ.पी.डी, इलाज किया जाता है। इसके अलावा इनडोर वार्ड में बहुत अच्छी सुविधाएं हैं और बहुत ही कम किराए (100 रुपए प्रतिदिन) पर कमरा दिया जाता है। अस्पताल में, हर महीने लगभग 200 जनरल सर्जरी, के आप्रेशन किये जाते हैं। इस के इलावा नई तकनीक लैप्रोस्कोपिक सर्जरी, आंखों की सर्जरी, E.N.T. दांतों और औरथोपैडिक सर्जरी भी शुरू की गई है। अक्स-रे और स्कैनिंग का भी प्रबन्ध है। जो लोग महंगा इलाज नहीं करवा सकते, वे इस अस्पताल की सेवाओं का लाभ उठाते हैं। इसके साथ-साथ अब मध्यम वर्ग के लोग भी अस्पताल में हो रहे बढ़िया इलाज को देखते हुए, बड़ी संख्या में आने लगे हैं।

समाज को अच्छी सेवा देने के लिए, इस अस्पताल में लगभग 75,00,000/ रुपए की लागत से, एक नया ब्लाक तैयार किया गया है। जिसमें अमरजेन्सी विभाग, आई.सी.यू. जर्नल विभाग और 10 प्राइवेट कमरे और दूसरी मंजिल के 10 प्राइवेट कमरे और 2 वार्डों के निर्माण का कार्य संपूर्ण किया गया। जिससे अस्पताल का क्षेत्र और विशाल हो गया है। इस बिल्डिंग का उद्घाटन श्री 108 संत निरंजन दास जी के पावन कर-कमलों द्वारा हजारों श्रद्धालुओं की उपस्थिति में तिथि 7 फरवरी 2003 को किया गया। यह सभी सेवाएं, श्री 108 संत निरंजन दास जी की देख-रेख में देश और विदेश की संगत के सहयोग से, निभाई जा रही हैं। इस अस्पताल का प्रबन्ध संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल ट्रस्ट द्वारा चलाया जाता है। श्री 108 संत निरंजन दास जी इस ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं।

संत सरवण दास मैमोरियल आई अस्पताल

आंखें शरीर का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग है, इनकी सुरक्षा भी बहुत आवश्यक है। आंखों के रोगियों के इलाज के लिए, यह अस्पताल डेरा सच्च खण्ड बल्लां के पास से गुजरती नहर के किनारे स्थित है। इसकी सेवा महान् सेवादार श्री स्वर्ण दास जी बंगड़, बीबी रेशम कौर बंगड़ और उनके परिवार गांव बल्ल UK ने एक करोड़, एक हजार, एक सौ ग्यारह रूपए दान के रूप में की। इस अस्पताल का नींव पत्थर, श्री 108 संत निरंजन दास जी के कर-कमलों द्वारा, तिथि 10 नवम्बर 2004, दिन बुधवार को, संत समाज और संगत की उपस्थिति में रखा गया। यह बात वर्णनीय है कि यह महान् परिवार 1977 से लेकर प्रत्येक वर्ष ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन संत सरवण दास जी की पवित्र याद में आंखों का मुफ्त कैम्प लगवा रहा है। इस परिवार ने श्री गुरु रविदास सत्संग भवन के लिए अढाई एकड़ जमीन और एक लाख रूपए दान के रूप में दिये हैं। इस अस्पताल के लिए गुरु घर के कई प्रेमियों ने तन, मन और धन के साथ सेवा की। इस अस्पताल में 2 मंजिलों पर 28000 स्कवेयर फुट तक लैंटर पड़ चुका है। इस अस्पताल में, आंखों की जांच एवं आप्रेशन के लिए, आधुनिक मशीनों की व्यवस्था की जाएगी।

संत सरवण दास मॉडल स्कूल (संत सरवण दास नगर) फगवाड़ा

अज्ञानता अपने आप में ही एक बहुत बड़ा अभिशाप है। इस अभिशाप से मुक्त होकर, मानव जीवन के विकास के द्वार स्वतः ही खुल जाते हैं। अज्ञानता के कारण मनुष्य का विकास नहीं होता। साहिबे कमाल श्री गुरु रविदास महाराज जी इस बात की पुष्टि अपनी बाणी में करते हैं:

माधउ अबिदिआ हित कीन बिबेक दीप मलीन ॥

सतगुरु स्वामी सरवण दास जी से लेकर, डेरा सच्च खण्ड बल्लां के समय-समय हुए गद्दी नशीन महापुरुषों ने इस विचारधारा का अनुसरण करते हुए, समाज के लोगों को, न केवल शिक्षा ग्रहण करने की प्रेरणा दी बल्कि शिक्षक संस्थाएं शुरू करने के लिए अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। इसी क्रम में तिथि 16 अप्रैल, 2002 को संत सरवण दास नगर, फगवाड़ा में श्री गुरु रविदास मंदिर कम्प्लैक्स स्थित 'संत सरवण दास मॉडल स्कूल' का नींव पत्थर रख कर, संत निरंजन दास महाराज जी ने उनकी विचारधारा को पुष्पांजलि अर्पित करते हुए, शिक्षा के क्षेत्र में, एक मील पत्थर स्थापित

किया है। संत सरवण दास मॉडल स्कूल, का उद्घाटन, तिथि 19 फरवरी 2004 को संत निरंजन दास जी, के कर-कमलों द्वारा किया गया। शिक्षा सत्र (2004-05) से शिक्षा का आरंभ हो चुका है। स्कूल के पास लगभग 26 कनाल जमीन है। स्कूल में कुल 38 कमरे हैं। यह सारी जमीन गुरु घर के महान् सेवादार श्री ब्रिज लाल और श्रीमती गुरदेव कौर के परिवार की ओर से दान की गई है। 22 क्लास रूम 20X22 फुट के हैं। चार कमरे 32X20 फुट, दो हाल कमरे 32X45 फुट, 4 कमरे 12X14 फुट, एक प्रबन्धकीय ब्लाक 40X40 फुट, डब्ल कॉरी डोर और बच्चों की सुविधा के लिए 5 बसें हैं। यह स्कूल सी.बी.एस.ई. द्वारा प्रमाणित है। यह पूर्ण इंग्लिश मीडियम स्कूल है। दो करोड़ रुपये से अधिक की लागत से यह स्कूल तैयार किया गया है।

श्री गुरु रविदास मंदिर (संत सरवण दास नगर)

मंदिर कम्प्लैक्स के लिए जमीन अनन्य सेवादार श्री ब्रिज लाल और उनकी सुपत्नी बीबी देबो निवासी बर्मिधम (यू.के.) और श्री देस राज और उनकी सुपत्नी कमलेश कौर निवासी मॉडल हाऊस फगवाड़ा की ओर से, 108 संत निरंजन दास जी को दान की गई। इस मंदिर में एक सत्संग हाल, एक लंगर हाल और 11 कमरे हैं। मंदिर निर्माण पर, लगभग डेढ़ करोड़ रूपए व्यय हो चुके हैं। इस मंदिर के ऊपर चार स्वर्ण कलश सुशोभित हैं। इसका उद्घाटन श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज के कर-कमलों द्वारा 19 फरवरी 2004 को किया गया। उद्घाटन समारोह के समय आप जी को सांकेतिक रूप से, एक किलो सोने की चाबी भेंट की गई। इस अवसर पर श्री 108 संत निरंजन दास जी को, टाटा सफारी गाड़ी भी भेंट की गई। दोनो परिवारों श्री ब्रिज लाल जी और उनकी पत्नी देबो, श्री देस राज जी और उनकी पत्नी कमलेश जी को, गुरु घर द्वारा 'हरि' के चिह्न वाली सोने की चेनों से सम्मानित किया गया। इस मंदिर में हर समय गुरु रविदास जी की बाणी का प्रचार होता है।

तपोस्थान बाबा पिप्पल दास महाराज जी तथा

जन्मस्थान सतगुरु स्वामी सरवण दास जी (गिल्लपत्ती, बठिण्डा)

सतगुरु स्वामी सरवण दास महाराज जी का आगमन 15 फरवरी 1895 ई. को गाँव गिल्लपत्ती, जिला बठिण्डा में हुआ। इसी स्थान पर बाबा पिप्पल दास जी महाराज ने तप किया। गिल्लपत्ती गाँव से लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर गाँव नाईयांवा मार्ग पर नहर के किनारे बाबा जी की जमीन थी, जहाँ बाबा जी खेतीबाड़ी का कार्य,

करते थे। यह ज़मीन स्वर्गवासी चरन सिंह तथा उन की सुपत्नी बीबी धर्म कौर जी एवं उनके परिवार द्वारा, डेरा सच्चखण्ड बल्लां को, भेंट कर दी गई। अब यहाँ एक आश्रम का निर्माण किया गया है। 30X30 का कमरा, जिसमें बाबा पिप्पल दास जी की पावन मूर्ति स्थापित की गई है। तीन अन्य और 100 फुट लम्बी शैडु निर्मित की गई है। यह स्थान “बेरी साहिब” के नाम से प्रसिद्ध है।

श्री गुरु रविदास मंदिर सिरसगढ़ (हरियाणा)

जगत् गुरु रविदास जी की पवित्र वाणी के प्रचार के लिए तन, मन, धन से समर्पित डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां, एक ऐसा आध्यात्मिक और परमार्थी केन्द्र है, जिसकी सेवा से, समस्त संसार भली-भांति परिचित है। डेरे के महापुरुष, संत बाबा पिप्पल दास जी, संत सरवण दास जी महाराज, संत हरी दास जी महाराज, संत गरीब दास जी महाराज जी, निष्काम भावना से संगत की सेवा में मग्न रहे हैं। इस लिए समस्त भारत तो क्या, सारे संसार की संगत डेरा सच्च खण्ड बल्लां के महापुरुषों को निवेदन करती है कि महाराज जी, हमारे क्षेत्र में भी, श्री गुरु रविदास मिशन, केन्द्र, स्थापित करें। संगत के निवेदन को ध्यान में रखते हुए, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हिमाचल और पंजाब के साथ साथ हरियाणा में, अंबाला से जगाधरी जी.टी. रोड पर, 28 किलोमीटर की दूरी पर, सिरसगढ़ (निकट दुसड़का)में, श्री गुरु रविदास मंदिर का निर्माण चल रहा है। इस कार्य के लिए माननीय श्री गुरुबख्श सिंह (रिटा. आई. एफ. एस.), और बीबी राज राणी के परिवार ने 4 एकड़ और 17 मर्ले जमीन दान की है। इस मंदिर का नींव पत्थर श्री 108 संत निरंजन दास जी ने अपने कर-कमलों द्वारा 31 अगस्त 2004 को रखा। अब तक 40X114 फुट की, दो मंजिलों का निर्माण हो चुका है। मंदिर में 100X80 फुट का एक बड़ा हाल भी निर्माणाधीन है।

श्री गुरु रविदास मंदिर कात्रज पूना (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र की धरती पर, साहिब श्री गुरु रविदास जी के, पावन मिशन के प्रचार और प्रसार के लिए एक बहुत ही विशाल मंदिर कात्रज कुंडवा, शोलापुर रोड (पूना) में एक पहाड़ी पर निर्माणाधीन है। इस पवित्र कार्य के लिए श्री सुखदेव बाघमारे और बीबी राधा के परिवार की ओर से, एक एकड़ जमीन दान की गई है। इस मंदिर का नींव पत्थर, श्री 108 संत निरंजन दास जी ने, समस्त संगत की उपस्थिति में

17 दिसम्बर, 2003 को रखा गया। स्मर्णीय है कि सेठ बाघमारे परिवार ने, पहले ही अपने विशाल घर में श्री गुरु रविदास मंदिर बनाया हुआ है। श्री सुखदेव बाघमारे जी, ने कई गाँवों में, श्री गुरु रविदास जी की मूर्तियों की स्थापना करवाई है। श्री गुरु रविदास मंदिर, कटरास पूना के इस परमार्थी कार्य के लिए, श्री चमन लाल जी क्रोटाणे, मोहन लाल क्रोटाणे, मदन लाल क्रोटाणे और सुरजीत सिंह जी बहुत प्रयत्नशील हैं। इस मंदिर में 85X35 फुट का विशाल दो मंजिली गुरु रविदास मन्दिर बन चुका है। इसके साथ ही श्री सुखदेव बाघमारे जी द्वारा, श्री गुरु रविदास गेट और श्री गुरु रविदास स्तंभ का निर्माण किया गया है।

‘बेगमपुरा शहर’ (साप्ताहिक पत्रिका) त्रैभाषिक

‘बेगमपुरा शहर’ पत्रिका, ब्रह्मलीन श्री 108 संत गरीब दास जी द्वारा 1991 में आरंभ की गई थी। ब्रह्मलीन संत गरीब दास जी, बड़े दूरदर्शी महापुरुष थे। आप इस बात से, भली-भांति परिचित थे कि समाज में चेतना पैदा करने में अखबार की बहुत बड़ी भूमिका है। गुरु जी के पुरुषार्थ के कारण ही, पिछले 18 वर्षों से यह अखबार निर्विघन छप रही है। आज यह अखबार वर्तमान् गद्दी नशीन श्री 108 संत निरंजन दास जी की देख-रेख और श्री 108 संत रामानंद जी, जो अखबार के मुख्य संपादक थे, के नेतृत्व में और समस्त बेगमपुरा स्टाफ की लगन से, समाज के लोगों में अपनी विलक्षण पहचान स्थापित कर चुकी है। इस पत्रिका की प्राप्तियों को देखते हुए इसके मुख्य संपादक श्री 108 संत रामानंद जी को, भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा 10 दिसम्बर 2004 को तालकटोरा स्टेडियम, नई दिल्ली में ‘नैशनल अवार्ड’ से सम्मानित किया गया। अब यह पत्रिका तीन भाषाओं, पंजाबी के साथ साथ हिन्दी और अंग्रेज़ी में भी छपने लगी है।

श्री गुरु रविदास सत्संग भवन, डेरा सच्च खण्ड बल्लां

डेरा सच्च खण्ड बल्लां के महापुरुषों, ब्रह्मलीन सतगुरु बाबा पिप्पल दास जी महाराज, ब्रह्मलीन 108 संत सरवण दास जी महाराज, ब्रह्मलीन 108 संत हरी दास जी महाराज, ब्रह्मलीन 108 संत गरीब दास जी महाराज और वर्तमान् गद्दी नशीन 108 संत निरंजन दास जी महाराज द्वारा, श्री गुरु रविदास जी की विचारधारा का, पहले से ही भरपूर प्रचार किया जाता रहा है। उनकी आध्यात्मिक शक्ति, पवित्रता, सच्चाई और समाज कल्याण के दृष्टिकोण को मुख्य रखते हुए, उनके श्रद्धालुओं की संख्या, बहुत

तेजी से बढ़ रही है। इसीलिए श्री 108 संत सरवण दास चैरिटेबल ट्रस्ट यू. के. के निर्णय तथा विदेशी संगत के निवेदन करने पर, श्री 108 संत निरंजन दास जी द्वारा, एक विशाल 'श्री गुरु रविदास सत्संग भवन' का नींव पत्थर 12 मार्च 2000 को हज़ारों श्रद्धालुओं की उपस्थिति में रखा गया। यह सत्संग भवन 220 फुट लंबा और 180 फुट चौड़ा है। हज़ारों श्रद्धालुओं में, इस सत्संग भवन के प्रति इतना उत्साह, जोश और लगन थी कि उन्होंने इस विशाल भवन की नींव एक दिन में ही खोद ली। इस भवन के लिए अढ़ाई एकड़ ज़मीन स्वर्ण दास बंगड़ उनकी धर्म पत्नी बीबी रेशम कौर जी (यू.के.) और उनके परिवार द्वारा डेरे को दान की गई है।

सत्संग भवन का निर्माण कार्य बड़ी तेज़ी से किया गया। लगभग 300 गाँवों में से चार पाँच गाँवों के डेढ़ दो सौ श्रद्धालु, भवन के निर्माण की सेवा के लिए हर रोज़ डेरे में आते तथा निर्माण कार्य में सेवा करते, श्रद्धालुओं की सेवा भावना को देखकर संत निरंजन दास जी उनकी प्रशंसा करते और उनको आशीर्वाद देते। संत रामानंद जी कई बार संगत की श्रद्धा और उत्साह देखकर, खुद भी उनके साथ भवन के निर्माण की सेवा में, लग जाते, जिस से संगत को और उत्साह मिलता। फलस्वरूप थोड़े समय में ही इस विशाल सत्संग भवन के निर्माण का कार्य संपूर्ण हो गया। चारों कोनों पर 16 फुट ऊँचे गुंबद और मुख्य द्वार पर 20 फुट ऊँचे और एक बड़ा गुंबद सत्संग भवन की शोभा को बढ़ा रहे हैं। इतने बड़े भवन की छत के आर्कनुमा पाँच भाग हैं। सत्संग भवन में 80 फुट लंबी, एक मजबूत स्टेज भी बना दी गई है। इस स्टेज के नीचे बेसमेंट में टी. वी. स्टूडियो बनाया गया है। मुख्य द्वार के नीचे 134 फुट लंबा और 30 फुट चौड़ा 'जोड़ा घर' बेसमेंट में तैयार किया गया है। श्री गुरु रविदास सत्संग भवन का प्रचार देश-विदेशों में हो चुका है। इस सत्संग भवन के दर्शनों के लिए देश-विदेश से संगत आती रहती है। दर्शनी डियोड़ी पर मुख्य गुंबदों के अतिरिक्त, चारों कोनों में गुंबदों पर सात स्वर्ण कलश चढ़ाए गए हैं। इन गुंबदों से पर्दा उठाने की रस्म माघी के पवित्र अवसर पर, तिथि 14 जनवरी 2004 को की गई। 14 फरवरी 2007 को, सतगुरु रविदास नामलेवा बर्मिंघम संगत द्वारा स्वर्ण पालकी भेंट की गई, जिसे श्री गुरु रविदास मंदिर फगवाड़ा से, डेरा सच्चखण्ड बल्लां तक एक शोभायात्रा के रूप में लाया गया। इस विशाल भवन पर 7 स्वर्ण कलश सुशोभित हैं। इस भवन का शुभ उद्घाटन, 15 फरवरी 2007 ई. को ब्रह्मलीन सतगुरु स्वामी सरवण दास जी के आगमन पर्व पर, संत निरंजन दास जी द्वारा किया गया।

दूरदर्शन से 'अमृत वाणी श्री गुरु रविदास जी' प्रोग्राम

डेरा सच्च खण्ड बल्लां के महान् महापुरुषों द्वारा, दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल, जालन्धर से श्री गुरु रविदास जी की अमृत वाणी को, देश-विदेश में, प्रेमियों के लिए प्रसारित किया जाता है। इस प्रोग्राम में, श्री 108 संत रामानंद जी, गुरुबाणी की व्याख्या करते हैं। प्रसिद्ध कीर्तनी जत्थे गुरुबाणी कीर्तन करते हैं। यह प्रोग्राम पहले डी. डी. पंजाबी पर, आधे घंटे के लिए प्रसारित किया जाता था, परन्तु अब यह प्रोग्राम डी. डी. नेशनल जालन्धर से, हर मंगलवार शाम 4:30 बजे से 5:00 तक और डी. डी. पंजाबी पर हर बुधवार 6:30 से 7:00 बजे तक प्रसारित किया जाता है।

डेरे के प्रमुख समागम

माघ की सक्रान्ति का समागम, ब्रह्मलीन श्री 108 संत हरी दास जी की याद में, 6 फरवरी को डेरा बल्लां में, और संत हरी दास मानव एकता संत सम्मेलन संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल कूपुर-ढेपुर (कठार) में 7 फरवरी को, आगमन पूर्व संत सरवण दास जी 15 फरवरी।

ब्रह्मलीन संत सरवण दास जी का बरसी समागम 11 जून, संत गरीब दास जी का बरसी समागम 23 जुलाई को, संत रामानन्द जी का शहीदी दिवस 25 मई। इसके अतिरिक्त पहले नवरात्रे के दिन बाबा पिप्पल दास जी का ज्योति-ज्योत पर्व मनाया जाता है और डेरा सच्च खण्ड बल्लां में निशान साहिब चढ़ाए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त बैसाखी का पर्व भी मनाया जाता है। हर रविवार और सक्रान्ति को, विशेष सत्संग का आयोजन किया जाता है।

डेरा सच्च खण्ड बल्लां उपरोक्त वर्णित धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों के कारण विश्व-विख्यात है।

डेरा संत सरवण दास जी महाराज सच्चखण्ड बल्लां द्वारा स्वर्ण-पदक से सम्मानित कवि, लेखक, बुद्धिजीवी एवं समाज सेवक

- | | |
|-------------------------|-------------------------|
| 1. श्री चरण सिंह सफरी | 2. श्री भगत राम दीवाना |
| 3. श्री अमर नाथ कौस्तव | 4. श्री कांशी राम कलेर |
| 5. श्री कर्म चंद प्रेमी | 6. श्री संतोख लाल विरदी |

7. बीबी बंसो देवी 8. डॉ. कृष्णा कलसीया
9. प्रो. गुरनाम सिंह मुक्तसर 10. प्रि. सतपाल जस्सी
11. श्री चैन राम सुमन 12. डॉ. कुलवंत कौर, पटियाला
13. डॉ. जसवीर सिंह साबर 14. श्री सुखदेव बाघमारे, महाराष्ट्र
15. श्री सोहन सहिजल 16. श्री मोहन बंगड़
17. श्री सोम नाथ भारती 18. श्री अजीत कुमार कंवल
19. डॉ. धर्मपाल सिंगल 20. श्री सतपाल साहलों
21. श्री गुरमुख रंधावा 22. श्री बगीचा सिंह
23. श्री मेवी भट्टी 24. बीबी रंजना
25. पूनम महिता 26. श्री विजय कपूर
27. श्री आर. पी. शास्त्री 28. श्री ललित
29. डा० सोहनपाल सुमनाक्षर 30. श्री. वी. टी. राजशेकर

प्रधान सम्पादक- दलित वायस

31. डा० के. के. सिद्धू 32. श्री ब्रिज लाल
33. बीबी गुरदेव कौर 34. श्री देसराज
35. श्रीमती कमलेश कौर 36. श्री रतन लाल कटारिया
37. श्री बंसो देवी 38. मास्टर सलीम
39. श्री चन्न गुरायां वाले 40. भाई परमजीत सिंह
41. भाई हरपाल सिंह 42. भाई दर्शन सिंह अमन
43. भाई मनिन्दर सिंह 44. श्री स्वर्ण दास बंगड़
45. श्री परमजीत पारस 46. श्री दर्शन कुमार (टी. सीरीज)
47. श्री रत्नू रंधावे वाला

विषय सूची

भाग - 1

क्र.	विषय	पृष्ठ
1.	तोही मोही मोही तोही अंतरू कैसा.....	1
2.	मेरी संगति पोच सोच दिनु राती.....	3
3.	बेगमपुरा सहर को नाउ.....	4
4.	घट अवघट डूगर घणा इक निरगुण बैलु हमार.....	8
5.	कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ.....	10
6.	सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार.....	12
7.	मिग मीन भिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास.....	16
8.	संत तुझी तनु संगति प्रान.....	19
9.	तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा.....	21
10.	कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु.....	23
11.	हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे.....	25
12.	माटी को पुतरा कैसे नचतु है.....	28
13.	दूधु त बछै थनहु बियारिओ.....	30
14.	जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही.....	32
15.	जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे.....	36
16.	दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेके.....	38
17.	सुख सागर सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके.....	40
18.	जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा.....	43
19.	जल की भीति पवन का थंभा रक्त बुंद का गारा.....	45
20.	चमरया गांठि न जनई.....	48
21.	हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि.....	49
22.	चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो.....	51
23.	नामु तेरो आरती मजनु मुगरे.....	52
24.	नाथ कछूअ न जानउ.....	55
25.	सह की सार सुहागनि जानै.....	57
26.	जो दिन आवहि सो दिन जाही.....	60
27.	ऊचे मंदर साल रसोई.....	63
28.	दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी.....	65
29.	जिह कुल साधु बैसनो होइ.....	67
30.	मुकंद मुकंद जपहु संसार.....	69
31.	जे ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै.....	71
32.	पड़ीऐ गुनीऐ नाम सभु सुनीऐ अनभउ भउ न दरसै.....	74
33.	ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै.....	76
34.	सुखसागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जाके रे.....	77
35.	खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि.....	79

36. बिनु देखे उपजै नही आसा.....	88
37. तुझहि सुझंता कछू नाहि.....	91
38. नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं.....	94
39. हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति.....	96
40. मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते.....	99
41. परचै राम रमै जो कोई.....	102
42. अब मैं हारयो रे भाई !.....	104
43. गाइ गाइ अब का कहि गाऊँ.....	106
44. राम जन होऊँ न भगत कहाऊँ, सेवा करूँ न दासा.....	107
45. अब मेरी बूडी रे भाई तातै चडी लोक बड़ाई.....	108
46. भाई रे ! भ्रम भगति सुजानि.....	110
47. ज्यो तुम कारनि केसवे अंतर लिव लागी.....	112
48. आयौं हो आयौं देव तुम सरना.....	113
49. भाई रे राम कहां है मोहि बतावो.....	114
50. ऐसो कुछ अनुभौ कहत न आवै.....	115
51. पंडत ! अखिल खिलै नही का कहि गाऊँ कोई न कहै समुझाई.....	116
52. नरहरि चंचल है मति मोरी कैसे भगति करूँ मैं तोरी.....	118
53. तब राम नाम कहि गावैगा.....	119
54. संतो अनिन भगति यह नार्ही.....	120
55. भक्ति ऐसी सुनहु रे भाई.....	121
56. अब कछु मरम बिचारा हो हरि.....	122
57. नरहरि प्रगटसि ना हो प्रगटसि ना हो.....	123
58. ज्यो तुम कारन केसवे लालच जिव लागा.....	125
59. गोबिंदे भौजल बियाधि अपारा.....	127
60. आगै मंदा हवै रहया परकिरति न जाई.....	128
61. धृग धृग जीवणु राजे राम बिना.....	129
62. तेरा जन काहे को बोलै.....	130
63. ऐसी भगति न होयि रे भाई.....	131
64. है सब आतम सुख परकास साँचो.....	133
65. कोउ सुमरन देखौं ये सब उपली चोभा.....	134
66. पहिले पहरे रैणि दे बणिजरिया तैं जनम लिया संसार वे.....	135
67. या रामा एक तूँ दाना तेरा आदि भेख ना.....	139
68. केसवे विकट माया तोर ताते बिकल गति मोर.....	140
69. रामहि पूजा कहा चढ़ाऊँ.....	141
70. बरजि हो बरजि बीठुले माया जग खाया.....	142
71. तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु.....	144
72. बंदे जानि साहिब गनी.....	145
73. सु कछु बिचारियो ताथे मेरो मनु थिरु है रहियो.....	146
74. भाई रे सहज बन्दो सोई बिन सहज सिद्धि न होई.....	147

75. देहु कलाली एक पियाला । ऐसा अबधू होई मतवाला.....	148
76. ऐसी मेरी जाति विख्यात चमारं.....	149
77. पार गया चाहै सभ कोई दोहू उरवार पार नहि होई.....	151
78. सतगुर हमहु लखाई बाट.....	152
79. बापुरो सत रविदास कहै रे.....	153
80. ऐ अंदेस सोच यहि मेरे.....	154
81. बौरी करिलै राम सनेहा.....	155
82. रे मन मांछला संसार समुंदे, तूँ चित्र बिचित्र बिचार रे.....	157
83. रथ को चतुर चलावनहारो.....	158
84. जो तुम तोरो राम मै नहिं तोरौं.....	159
85. केहि बिधि अब सुमिरौं रे अति दुलभ दीन दयाल.....	160
86. अब कैसे छूटै नाम रट लागी.....	161
87. माधो भ्रम कैसे न बिलाई.....	162
88. मन मेरो सत सरूप बिचारं.....	164
89. थोथो जनि सोई पछोरो रे कोई.....	165
90. माधौ ! मोहि एक सहारो तोरा.....	166
91. रे मन ! चेत मीचु दिन आया.....	167
92. ऐसा ध्यान धरौं बनवारी । मन पवन दिड़ि सुखमन नाडी.....	168
93. अबिगति नाथ निरंजन देवा । मैं का जानूँ तुम्हारी सेवा.....	170
94. भेष लियो पै भेद न जान्यो । अमृत लेयि विषै सो मान्यो.....	171
95. गुरु सभु रहसि अगमहि जानै.....	172
96. का तूँ सोवै जागि दिवाना । झूठा जीवन सांचि करि जाना.....	173
97. खालिक सिकस्ता मै तेरा.....	175
98. जो मोहि बेदन कासनि आवूँ.....	176
99. ता थैं पतित नही कौ पावन, हरि तज आन न ध्याया रे.....	177
100. पावन जस माधो तोरा.....	178
101. आज दिवस लेऊँ बलिहारा.....	179
102. ऐसे जानि जपो रे जीव । जपि लियो राम न भरमो जीव.....	180
103. जग में वेद बैद मनीजै.....	182
104. तुम करहु कृपा मोहि साई.....	183
105. चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ.....	184
106. हरि सिमरै सोई संत बिचारो.....	185
107. रे मन राम नाम संभारि.....	186
108. हो बनिजारो राम को, हरि जू को टांडो लादो जायि रे.....	188
109. प्रीति सुधामनि आव.....	189
110. सब कुछ करत न कहौं कुछ कैसे.....	190
111. साधौ ! का साश्रण सुनि कीनौ.....	192
112. मेरी प्रीति गोपाल सों जन घटै हो.....	193
113. त्राहि त्राहि त्रिभुवनपति पावन.....	194

114. दरशन दीजै राम दरशन दीजै.....	195
115. जन को तारि तारि नाथ रमईया.....	196
116. जो तुम गोपालहिं नहिं गैहौ.....	197
117. प्रभु जी संगति सरन तिहारी.....	198
118. पांडे कैसी पूजि रची रे.....	199
119. जा कै राम जी धनी ता कै काहि की कमी है.....	200
120. भगति न होय रे न होई, जब लग तन सुध न होय.....	201
121. रे पायो रे राम आमी रस.....	202
122. देखि मूरखता यहु मन की.....	204
123. पीआ राम रसु पीआ रे.....	204
124. मन मोरा माया महि लपटानो.....	205
125. बीति आयु भजनु नहीं कीन्हा.....	206
126. प्रभु जी तुम औगुन बख्खणहार.....	207
127. ऐसा ही हरि क्यूं पड़वो, मन चंचलु रे भाई.....	208
128. का गाऊं कछु गायि न होयि, गाऊं रूप सहजै सोयि.....	209
129. अब का कहि कौन बताऊं.....	210
130. खोजत किथूं फिरै तेरे घट महि सिरजनहार.....	212
131. संतो कुल पखी भगति हैसी कलियुग मे ॥ निपख बिरला निवहैसी.....	213
132. पांडे ! हरि विच अंतर डाढा.....	214
133. मन मेरो थिरु न रहाइ.....	215
134. हम घर आयहु राम भतार, गावहु सखि मिल मंगलाचार.....	216
135. कालहु नायि ताहि पद सीसा.....	217
136. दुखियारी दुखियारा जग महि.....	218
137. आरती कहाँ लैं कर जोवै.....	219
138. संत उतारै आरती देव सिरोमनीये.....	220
139. गगन मंडल में आरती कीजै, नाद बिंद इके मेक करीजै.....	221
140. आरती करत हरषै मन मेरो, आवत चित तुव रूप घनेरो.....	222
भाग - 2	
1. श्लोक.....	225
2. श्री गुरु रविदास जी महाराज की उच्चारण की गई पैंतीस अक्षरी.....	233
3. श्री गुरु रविदास बाणी हफ़तावार.....	235
4. श्री गुरु रविदास बाणी पन्दरां तिथी.....	235
5. साहिब सतिगुरू रविदास महाराज जी का 'बारह मास' उपदेश.....	238
6. सांद बाणी.....	242
7. अनमोल वचन (मिलनी के समय).....	243
8. साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज के मुखार बिंद से उच्चारण की हुई लावों की विधि “शादी उपदेश”.....	243
9. सुहाग उसतत.....	244
10. साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज के मुखार बिंद से उच्चरित मंगलाचार.....	245

भाग - 3	
1. श्लोक : सर्वव्यापक राम.....	248
2. मन मन्दिर में पी बसै.....	250
3. ओंकार सत्तनाम.....	251
4. नशे का त्याग.....	254
5. ब्रह्म बूंद.....	254
6. एकै माटी के सब भांडे.....	255
7. सब में नूर है एक प्रभु का.....	256
8. एक प्रभु के नाम अनेक.....	257
9. संकट में सहारा प्रभु.....	258
10. प्रभु मिलन की जुगती.....	258
11. शब्द-सुरत जब मिल गये.....	260
12. जीवन-मरन.....	261
13. सोइ साधु भलो.....	262
14. निष्काम कर्म भावना.....	265
15. श्रम साधना (नेक कमाई).....	267
15. जात-पाति का खंडन.....	268
16. ऊँच और नीच कौन?.....	269
17. ब्राह्मण कौन?.....	270
18. क्षत्रिय कौन?.....	271
19. वैश्य कौन?.....	271
20. शूद्र कौन?.....	271
21. मन्दिर-मस्जिद एक.....	272
22. हिन्दू मुसलमान एक.....	272
23. सच्चा शूरवीर.....	274
24. सत्य-वचन.....	274
25. वासनाओं का त्याग.....	274
26. संतोष और त्याग.....	275
27. सुख-दुख.....	276
28. सच्चा प्रेम.....	276
29. श्रेष्ठ मार्ग.....	276
30. बेगमपुरा वतन.....	277
31. सच्ची सेवा.....	278
32. सच्चा उपदेश.....	278
33. मांसाहारी - नरक अधिकारी.....	280
34. पराधीनता पाप है.....	281

भाग - 4

1. श्री गुरु रविदास महाराज की जय.....	289
2. श्री गुरु रविदास जी का आगमन.....	290
3. बालपन.....	291
4. पारिवारिक जीवन.....	294
5. गुरुमुखी अक्षरों की रचना करना.....	291
6. पीरां दित्ता मरासी की ईर्ष्या.....	301
7. ठाकुर तारने की कथा.....	302
8. प्रभु का साधू वेश में श्री गुरु रविदास जी को पारस भेंट करना.....	306
9. प्रभु का संगत की सेवा के लिए मोहरों का वरदान.....	309
10. एक धनवान सेठ द्वारा अमृत का तिरस्कार करना और उस को कुष्ठ की बीमारी हो जाना.....	310
11. एक हिरणी की रक्षा.....	311
12. एक शेख द्वारा प्रेम की याचना करना.....	312
13. मृत बालक को जीवन दान देना.....	313
14. कुंभ के शुभ अवसर पर गुरु जी का गंगा जी के लिए भेंट भेजना.....	314
15. रानी झाली की कथा.....	317
16. श्री गुरु रविदास जी और उनकी शिष्य मीरा बाई.....	320
17. सतगुरु रविदास महाराज की शिष्या कर्मा बाई.....	324
18. कन्या के रूप में गंगा जी का आना और भारत डुबोना.....	326
19. उल्टी गंगा का बहाना.....	327
20. सिकंदर लोधी की साखी.....	327
21. जगद्गुरु रविदास जी की उदसियां/यात्राएं.....	328
22. श्री गुरु रविदास जी की हिमाचल पर्वत व सिरधार पर्वत यात्रा.....	334
23. राजा पीपा का गुरु जी का शिष्य बनना.....	335
24. चार युगों के जनेऊ दिखाना.....	337
25. मृत गाय को जीवित करना.....	338
26. गुरु जी को समाप्त करने का षड्यन्त्र.....	339
27. अलावदी बादशाह के साथ गोष्ठी.....	340
28. गुरु कबीर जी और गुरु नानक देव जी से ज्ञान गोष्ठियां.....	342
29. राजा चन्द्र प्रताप.....	346
30. बीबी भानवती का शिष्य होना.....	346
31. बाजीगरों की बाजी.....	347
32. गोष्ठी गोरख नाथ जी के साथ.....	347
33. श्री गुरु रविदास जी को सिकंदर लोधी द्वारा जेल में बन्द करना.....	349
34. बाबर पर गुरु रविदास जी की शिक्षाओं का प्रभाव.....	350
35. श्री गुरु रविदास जी का सच्च खण्ड पधारना.....	352
36. धन्यवाद सहित पुस्तकें.....	356

भाग - 1

शब्द १

सिरी रागु बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि

तोही मोही मोही तोही अंतरू कैसा ॥

कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥१॥

जउपै हम न पाप करंता अहे अनंता ॥

पतित पावन नामु कैसे हुंता ॥१॥ राहाउ ॥

तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी ॥

प्रभ ते जन जानीजै जन ते सुआमी ॥२॥

सरीरु आराधै मोकउ बीचारु देहु ॥

रविदास समदल समझावै कोऊ ॥३॥

(पन्ना ९३)

सतगुरु रविदास महाराज जी इस शब्द द्वारा प्रभु में अपनी अभिन्नता का

वर्णन करते हैं कि प्रभु जी ! मैं आप का नाम सिमरन कर आप का ही रूप हो गया हूँ ।

जो जीव इस संसार में सभी तरह के बंधनों से मुक्त होकर प्रभु का नाम सिमरन करता

है, वह प्रभु का ही रूप हो जाता है ।

जैसे सतगुरु नामदेव जी और सतगुरु कबीर जी महाराज फरमाते हैं :-

नामे नाराइन नाही भेदु ॥ (पन्ना ११६६)

राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी ॥ (पन्ना १६१)

तोही मोही मोही तोही अंतरू कैसा ॥

कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥१॥

हे प्रभु जी ! तेरे मेरे और मेरे तेरे में कोई भेद नहीं है । मैं आप जी का नाम

सिमरन कर आप जी का ही रूप हो गया हूँ यदि अंतर है तो केवल इतना ही है, जैसे

स्वर्ण से अनेकों प्रकार के आभूषण बनते हैं लेकिन वास्तव में वह स्वर्ण ही होते हैं ।

जब स्वर्ण के आभूषणों को कुठाली में डालकर पिघलाया जाता है तो वह स्वर्ण ही बन

जाते हैं । इसी तरह ही पानी और पानी से पैदा हुई तरंगों में कोई अंतर नहीं है । तरंग

पानी में से ही पैदा होती है और पानी में ही समा जाती है । ऐसे ही यह जीव आप में

से ही पैदा हुआ है और आप में ही समा जाता है । इस सम्बन्ध में सतगुरु नामदेव जी ने भी उच्चारण किया है :

जल ते तरंग तरंग ते है जलु कहन सुनन कउ दूजा ॥१॥

(पन्ना १२५२)

जैसे तरंग पानी से पैदा होती है और पानी में ही समा जाती है केवल बाह्य

भेद के कारण जल और तरंग कहने और सुनने को दो हैं वास्तव में यह एक ही हैं ।

ऐसे ही जीव और परमात्मा में कोई भेद नहीं है ।

जउपै हम न पाप करंता अहे अनंता ॥

पतित पावन नामु कैसे हुंता ॥१॥ राहाउ ॥

हे अनंत स्वरूप प्रभु जी ! यदि हम सांसारिक जीव पाप न करते तो आप जी

का नाम पापियों को पापों से मुक्त करने वाला कैसे होता ? सतगुरु नामदेव जी फरमाते

हैं :

पतित पवित भये राम कहत ही ॥ राहाउ ॥ (पन्ना ७१८)

परमात्मा का नाम उच्चारण करने से अनेकों पापी पवित्र हो गए हैं ।

सतगुरु नानक देव जी फरमाते हैं :

भरीऐ मति पापा कै संगि ॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ (पन्ना ४)

जब जीव की मति पापों से भर जाती है तो वह परमात्मा के नाम से रंग हो

कर पापों से मुक्त हो जाती है ।

तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी ॥

प्रभ ते जन जानीजै जन ते सुआमी ॥२॥

परमात्मा जी आप सारे संसार के जीवों और कण-कण को जानने वाले श्रेष्ठ

मालिक हो । मैं आप जी का दास हूँ । जैसे मालिक के कारण दास और दास के कारण

मालिक जाना जाता है ऐसे ही प्रभु जी आप अपने सेवकों के कारण और सेवक आप

जी (प्रभु) के कारण ही जाने जाते हैं ।

सतिगुरु नाम देव जी फरमाते हैं :

ठाकुर ते जनु जन ते ठाकुरु खेलु परिओ है तो सिउ ॥१॥ (पन्ना १२५२)

हे परमात्मा जी स्वामी के कारण सेवक और सेवक के कारण स्वामी जाना

जाता है । मेरा आप जी से बराबर का खेल पड़ गया है । मैं आप जी का ही स्वरूप हूँ ।

इस सम्बन्ध में सतगुरु अर्जुन देव जी फरमाते हैं:

हरि का सेवक सो हरि जेहा ॥ भेद न जाणहु माणस देहा ॥ (पत्रा १०७६)

हरि का सिमरन करने वाले हरि का ही रूप होते हैं। मानवीय स्वरूप के

कारण प्रभु और सेवकों में कोई अंतर नहीं समझना चाहिए।

सरीरु आराधै मोकउ बीचारु देहु ॥

रविदास समदल समझावै कोऊ ॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमान करते हैं कि प्रभु जी, मुझे ऐसे विचारों

की बख्शिश करो कि जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं मैं आपका ही सिमरन करता रहूँ।

मुझे सम-दृष्टि वाले संत महापुरुषों की संगत् प्रदान करो, जो अज्ञानता में भटके हुए

जीवों को यह समझाए कि सभी जीवों में परमात्मा का ही वास है।

शब्द २

रागु गउड़ी रविदास जी के पदे गउड़ी गुआरेरी

१ओं सतिनामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥

मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ॥१॥

राम गुसईया जीअ के जीवना ॥

मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥१॥ रहाउ ॥

मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥

चरण न छाडउ सरीर कल जाई ॥२॥

कहु रविदास परउ तेरी सांभा ॥

बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥३॥१॥

(पत्रा ३४५)

सतगुरु रविदास जी महाराज स्मस्त प्राणियों को पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु

को भूले हुए जीव की संगत् नीच है। जब यह जीव दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर भेद-

भाव और विषय-विकारों के बंधन से मुक्त हो जाता है और प्रभु के नाम की शरण ले

लेता है तो जीव का लोक-परलोक संवर जाता है।

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥

मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ॥१॥

हे प्रभु जी! मेरा भाव सांसारिक जीव की संगत् विषय-विकारों के कारण

नीच है। यह सोच मुझे दिन रात लगी रहती है। प्रभु को भूले हुए जीव का कर्म भी

नीच है और जन्म भी नीच है। जब तक यह जीव प्रभु का सिमरन नहीं करता, इस

जीव का दुर्लभ मनुष्य जन्म निष्फल है।

राम गुसईया जीअ के जीवना ॥

मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥१॥ रहाउ ॥

हे अकाल पुरख जी! जीवों को जीवन देने वाले परमात्मा जी मुझे न

भुलाइए। मैं आप जी का ही दास हूँ।

मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥

चरण न छाडउ सरीर कल जाई ॥२॥

परमात्मा जी मेरी जन्म मरण, रूप विपदा दूर करें। मुझ दास को यह स्वभाव

प्रदान करें कि चाहे मेरा शरीर चला जाए, मैं आप जी के चरण न छोड़ूँ।

कहु रविदास परउ तेरी सांभा ॥

बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु के आगे निवेदन करते हैं कि हे प्रभु जी! मैं

आप जी की शरण में आया हूँ, आप जी मुझे जल्दी आकर दर्शन दें और बिलांब न करें

जी।

शब्द ३

बेगमपुरा सहर को नाउ ॥

दुखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥

नां तसवीस खिराजु न मालु

खउफु न खता न तरसु जवालु ॥१॥

अब मोहि खूब बतन गह पाई ॥

ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥ रहाउ ॥

काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥

दोम न सेम एक सो आही ॥

आबादानु सदा मसहूर ॥

ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२॥

तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥

महरम महल न को अटकावै ॥

कहि रविदास खलास चमारा ॥

जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३॥२॥

(पन्ना ३४५)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को उपदेश देते हैं कि यह जीव प्रभु

का सिमरन कर सब तरह के बंधनों से मुक्त होकर प्रभु के निज घर 'बेगमपुरा शहर'

का वासी बन जाता है। इस तरह ही समस्त मानवता के लिए एकता, समानता,

भाईचारा स्थापित करने के लिए विश्व में 'बेगमपुरा वतन' की स्थापना पर बल दिया है

यहाँ हर जीव रंग-भेद, ऊँच-नीच, पराधीनता, गुलाम प्रथा और सभी तरह के

सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर एकता का आनंद उठा सकता है। 'बेगमपुरा वतन' में

हर प्राणी को सामाजिक समानता, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और मानवीय

अधिकार प्राप्त हों। सतगुरु रविदास महाराज जी ने स्मस्त मानवता के लिए कल्याणकारी

लोकतान्त्रिक समाजवाद की नींव रखी। ऐसी व्यवस्था संसार में होने से सब समस्याओं

का समाधान हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की टोरांटो में हुए सम्मेलन में ऐलान

किया गया कि विश्व सरकार के संविधान का आधार श्री गुरु ग्रंथ साहिब होगा और

उसकी प्रस्तावना (Preamble) सतगुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा' पर आधारित

होगी। इसी तरह मानवता के मसीहा डा० भीम राव अम्बेडकर जी ने भारत के

संविधान की नींव, प्रस्तावना और संविधान की रूप-रेखा का सृजन भी सतगुरु

रविदास महाराज जी के 'बेगमपुरा' शब्द के आधार पर किया है।

बेगमपुरा सहर को नाउ ॥

दुखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि जिस शहर में मैं रहता हूँ उस

शहर का नाम बेगमपुरा शहर है जो सब तरह के गम से मुक्त है। उस शहर में दुःख

और चिन्ता के लिए कोई स्थान नहीं है।

दूसरा अर्थ:- इस संसार में 'बेगमपुरा वतन' जैसी व्यवस्था होनी चाहिए,

जिसमें सब मनुष्यों को समान नागरिकता प्राप्त हो और जहां स्वतन्त्रता, समानता, न्याय

और भाईचारा हो। जिस में सब प्राणियों की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी हों और सब

प्राणियों के अधिकार समान हो। सभी प्राणी बेगमपुरा वतन में सभी तरह के गम से

मुक्त हो। किसी भी प्राणी को जाति-पाति का, ऊँच-नीच का, छूआ-छात का, गरीब-

अमीर का, गोरे-काले का और रंग-भेद का कोई दुःख न हो।

नां तसवीस खिराजु न मालु

खउफु न खता न तरसु जवालु ॥१॥

बेगमपुरा शहर में न कोई चिन्ता है और न कोई घबराहट। न प्रभु के नाम का

व्यापार करने के बदले कोई टैक्स देना पड़ता है। उस बेगमपुरा के वासी डर, द्वेष,

गुनाह, इच्छा, दया और कमी से मुक्त है और परमात्मा में अभेद हैं।

दूसरा अर्थ :- बेगमपुरा विश्व में हर प्राणी चिन्ता, घबराहट से मुक्त होता है,

किसी को भी व्यापार करने पर विवशतया: टैक्स नहीं देना पड़ता। जीव जुल्म के डर,

खौफ गुनाह, द्वेष और कमी से मुक्त होकर मानवीय अधिकारों और कर्तव्यों का

आनंद लेता है।

अब मोहि खूब बतन गह पाई ॥

ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥ रहाउ ॥

हे भाई मैंने प्रभु के बेगमपुरा शहर में उत्तम और अटल स्थान प्राप्त कर लिया

है। इस शहर में सदैव सुख प्राप्त है।

दूसरा अर्थ:- विश्व मानववादी वतन में हर एक जीव को वही स्थान प्राप्त

होना चाहिए जहां उसको जीवन भर सुख प्राप्त हो।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥

दोम न सेम एक सो आही ॥

उस शहर में परमात्मा की सत्ता सदैव स्थिर रहने वाली है। वहाँ प्रभु के

अतिरिक्त कोई दूसरा या तीसरा नहीं। वहाँ केवल अकाल पुरख बादशाह की सत्ता

सदैव अटल रहने वाली है।

दूसरा अर्थ:- इस बेगमपुरा वतन में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जो सदैव

स्थिर रहने वाली हो। यहां हर जीव को समानता, स्वतन्त्रता, न्याय और नागरिकता प्राप्त हो। कोई दूसरे, तीसरी श्रेणी का नागरिक न हो।

आबादानु सदा मसहूर ॥

ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२ ॥

उस परमात्मा का बेगमपुरा शहर आध्यात्मिक जनसंख्या वाली रूहों से सदा आबाद है और प्रसिद्ध है। वहां प्रभु का नाम सिमरन करने वाली अमीर, सब्र-संतोष और इच्छायों से मुक्त आत्माएं रहती हैं।

दूसरा अर्थ:- बेगमपुरा वतन सूझ-बूझ वाले इन्सानों से सदा के लिए प्रसिद्ध हो। वहां जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएं प्राप्त कर मानव/प्राणी अपना जीवन आनंदमयी गुजार रहे हों।

तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥

महरम महल न को अटकावै ॥

बेगमपुरा शहर की निवासी आत्माएं उस शहर में अपनी इच्छानुसार गमन करती हैं। उस बेगमपुरा के महलों को जानने वाली आत्माओं को घूमने-फिरने में कोई रुकावट नहीं है।

दूसरा अर्थ :- 'बेगमपुरा वतन' में मानवीय अधिकार प्राप्त नागरिकों को घूमने-फिरने की कोई रुकावट नहीं है। वह जैसे चाहें बेगमपुरा में किसी स्थान पर घूम सकते हैं।

कहि रविदास खलास चमारा ॥

जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३ ॥२ ॥

सतगुरु रविदास जी महाराज वर्णन करते हैं कि मैं प्रभु का नाम स्मरण कर सभी तरह के बंधनों से मुक्त हो गया हूँ। जो भी जीव इन बंधनों से मुक्त है, वह शुद्ध है। वही मेरा मित्र है और मेरा हमशहरी है।

दूसरा अर्थ:- सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि बेगमपुरा वतन में हर मनुष्य जाति-पाति, छूआ-छाते, गुलाम प्रथा, दास प्रथा, पराधीनता से मुक्त हो कर विश्व वतन के राज्य का नागरिक हो और सभी नागरिक मित्रतापूर्ण रहें।

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास महाराज जी ने समस्त विश्व के लिए ऐसी विश्व व्यापी व्यवस्था की नींव रखी जिस में अटल सुख हों।

शब्द ४

गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

घट अवघट डूगर घणा इक निरगुणु बैलु हमार ॥

रमईए सिउ एक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥१ ॥

को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१ ॥ रहाउ ॥

हउ बनजारो राम को सहज करउ व्यापारु ॥

मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२ ॥

उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥

मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ॥३ ॥

जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु ॥

मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥४ ॥१ ॥

(पन्ना ३४५)

सतगुरु रविदास महाराज जी स्मस्त मानवता को उपदेश देते हैं कि प्रभु की प्राप्ति का रास्ता अज्ञानता और सांसारिक झूठे बंधनों के कारण बिखड़ा और कठिन है। जीव का मन रूपी बैल उस अकाल पुरख की कृपा से यह कठिन मंजिल तय करने से परमात्मा के मजीठी रंग में रंग होकर अपना जीवन सफल कर सकता है।

घट अवघट डूगर घणा इक निरगुणु बैलु हमार ॥

रमईए सिउ एक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥१ ॥

जैसे एक गुणहीन बैल के लिए पहाड़ी का बिखड़ा और घना रास्ता तय कर अपनी मंजिल की प्राप्ति करना कठिन है। ऐसे ही इस सांसारिक जीव के लिए दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर परमात्मा की प्राप्ति का रास्ता अज्ञानता और सांसारिक झूठे बंधनों के कारण बहुत खतरनाक, पहाड़ी की भांति कठिन और जंगल की भांति घना है। इस रास्ते पर जाने वाले जीव का मन रूपी बैल बहुत कमजोर है। हे प्रभु! मेरी आप से निवेदन है कि सांसारिक जीव की श्वासो रूपी पूंजी की रक्षा करो जी।

को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१ ॥ रहाउ ॥

यदि राम नाम का व्यापार करने वाला कोई व्यापारी है तो मेरे पास आकर

प्रभु के राम नाम का व्यापार कर ले। मेरा टांडा परमात्मा के नाम से भरा हुआ है।

हउ बनजारो राम को सहज करउ व्यापारु ॥

मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२॥

मैं संसार में तुरिया अवस्था का व्यापार करता हूँ जो कि संसार में भेद-भाव से ऊपर उठ कर नौ द्वारों से ऊपर दसवें द्वार में पहुँच कर प्राप्त होती है।

सतगुरु कबीर जी फरमाते हैं :-

मोहि ऐसे बनज सिउ नहीन काजु ॥

जिह घटै मूलु नित बढै बिआजु ॥ (पन्ना ११९५)

मुझे इस संसार में प्रभु के नाम के सच्चे व्यापार के बिना और किसी झूठे व्यापार से कोई लेन-देन नहीं है, जिसके करने से स्वासों रूपी मूल कम हो जाए और कर्म रूपी ब्याज (सूद) बढ़ जाता है।

सतगुरु रविदास महाराज जी कहते हैं कि मन रूपी बैल पर परमात्मा के राम-नाम के सच्चे धन को लादा है पर संसार के लोगों ने विकारों रूपी विष को लादा है।

उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥

मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ॥३॥

मैंने इस संसार में प्रभु के सच्चे नाम का व्यापार किया है। इस लिए लोक-परलोक और मनुष्य जन्म के भाग्य का हिसाब रखने वाले चित्रगुप्त तुम मेरे भाग्य में जो मर्जी अल-पल लिख लो, मुझे यमदूतों का दंड नहीं लग सकता क्योंकि मैंने संसार के सभी जंजालों को छोड़ दिया है। जो जीव इस संसार में परमात्मा का नाम सिमरन करता है वह जीवनमुक्त हो जाता है। यमदूतों का दंड उन लोगों को लगता है जो संसार में प्रभु को भूलाकर झूठे बंधनों में फंस जाते हैं।

जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु ॥

मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥४॥१॥

जिस तरह कसुंभ का रंग कच्चा और अस्थिर है उसी तरह यह संसार भी अस्थिर और नाशवान् है।

सतगुरु कबीर साहिब जी भी इसी तथ्य की प्रौढ़ता करते हैं।

जैसा रंगु कसुंभ का मन बउरा रे तिउ पसरिओ पासारु ॥३॥ (पन्ना ३३६)

हे मूर्ख मन वाले पुरुष! जैसे कसुंभ का रंग कच्चा और अस्थिर है वैसे ही माया का पसारा भी झूठा और अस्थिर है।

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि मेरे प्रभु का रंग मजीठ की भांति पक्का, स्थिर और स्थाई है।

सतगुरु अर्जुन देव जी इस सम्बन्ध में वर्णन करते हैं :

कहु नानक रंगि चलूल भए है हरि रंगु न लहै मजीठा ॥

(सारंग महला ५, पन्ना १२१२)

शब्द ५

गउड़ी पूरबी रविदास जीउ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥

ऐसे मेरा मन बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ॥१॥

सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥१॥ रहाउ ॥

मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥

करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥२॥

जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार ॥

प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥३॥१॥

(पन्ना ३४६)

इस शब्द में सतगुरु रविदास जी मानवता को उपदेश देते हैं कि जीव ने दुर्लभ जन्म प्राप्त कर अपनी दशा कुँएँ के मेंढक की तरह बना ली है। जिस तरह कुँएँ के मेंढक को अज्ञानता के कारण कुँएँ के बाहर की दुनिया का कोई ज्ञान नहीं होता इसी तरह ही यह जीव अपने संसार में आने के वास्तविक मंतव के भेद को पहचानने की बजाए अज्ञानता वश होकर भेद-भाव और विकारों रूपी कुँएँ में फंसा हुआ है। इस को अपना लोक-परलोक संवारने की कोई समझ नहीं।

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥

ऐसे मेरा मन बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ॥१॥

हे प्रभु जी, जैसे कुएँ में मेंढक पड़ा होता है और उस को कुएँ के बाहर की दुनिया की कोई खबर नहीं होती क्योंकि मेंढक का मन अज्ञानता वश विषय विकारों में लिप्त होने के कारण कुएँ के बाहर की दुनिया के प्रति अनभिज्ञ होता है। इसी तरह की हालत इस जीव की है, जिसका मन अज्ञानता वश भ्रम रूपी कुएँ में फंसा हुआ है और उसको अपने लोक-परलोक को संवारने की कोई समझ नहीं है।

एक बार एक कुएँ में एक मेंढक था। उसकी दयनीय दशा देख कर मानसरोवर में रहने वाले एक हंस को उस पर दया आई। उस ने मेंढक को कहा, “भाई तुम्हें मानसरोवर ले चलूँ। वहाँ हीरे-मोती चुनकर आनंद भरा जीवन व्यतीत करेंगे।” मेंढक कुएँ की एक ओर छलांग लगा कर दूसरे किनारे पर पहुँचा और कहा, “मानसरोवर इतना बड़ा है?” तो हंस ने कहा कि उस मानसरोवर का तो कोई अंत नहीं है, तुम्हारी छलांगें क्या करेंगी। ऐसे ही यह जीव अज्ञानता वश विषय विकारों में फंसा रहता है और उसको अपना लोक-परलोक संवारने की कोई सुध नहीं रहती। पर संत महापुरुष जीव को इस अज्ञानता रूपी कुएँ में से निकालकर और प्रभु के नाम से जोड़कर उसका लोक-परलोक संवारने के लिए आते हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी कहते हैं :

कबीरा सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥
राम जु दाता मुक्ति को संतु जपावै नामु ॥

(पत्रा १३७३)

सिमरन के लिए दोनों ही भले हैं - प्रभु भी और संत भी। प्रभु मुक्ति का दाता है और संत जीव को नाम जपा कर प्रभु के साथ जोड़ते हैं।

परन्तु यह सांसारिक जीव अज्ञानता के कारण संत महापुरुषों से प्रश्न करते हैं कि प्रभु के नाम में धन, स्त्री, पुत्र जैसा सुख है? संत महापुरुष कहते हैं कि प्रभु का नाम तो सुखों का समुद्र है। सिमरन करने से जीव की सभी आवश्यकताएं पूरी हो जाती है। धन, स्त्री, पुत्र का सम्बन्ध तो जीव के साथ केवल शरीर के कारण है।

सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥१॥ रहाउ ॥

सब खण्डों-ब्राह्मण्डों के मालिक प्रभु जी एक पल के लिए मुझे दर्शन दो जी। सब बंधनों से मुक्त होकर जीव को प्रभु के आनंद की प्राप्ति होती है। यह जीव प्रभु को मिलने के लिए बहुत व्याकुल हो उठता है और प्रभु के आगे प्रार्थना करता है कि प्रभु जी मुझे एक पल के लिए दर्शन दो जी, ता कि आपके दर्शन कर कर मेरा मन

शांत हो जाए जी।

मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥२॥

हे प्रभु जी! अज्ञानता के कारण इस जीव की मति इतनी मैली हो चुकी है कि यह जीव ब्रह्मज्ञान की पहचान नहीं कर सकता। आप कृपा दृष्टि करो जी, जिस से सब भ्रम दूर हो जाए और मुझे शुभ व श्रेष्ठ बुद्धि प्रदान करो जी।

जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार ॥
प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥३॥१॥

हे प्रभु जी, बड़े बड़े योगी भी आपके गुणों का अंत नहीं पा सके क्योंकि आप के गुण अनंत हैं। सतगुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि मैं चमार तो केवल प्रेमा-भक्ति के कारण ही आप के गुण गाता हूँ।

शब्द ६

गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥
१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ।
तीनौ जुग तीनौ दिडे कलि केवल नाम अधार ॥१॥
पारु कैसे पाइबो रे ॥ मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥
जा ते आवागवनु बिलाइ ॥१॥ रहाउ ॥
बहु बिधि धरम निरुपीए करता दीसै सभ लोइ ॥
कवन करम ते छूटीए जिह साधे सभ सिधि होइ ॥२॥
करम अकरम बीचारीए संका सुनि बेद पुरान ॥
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ॥३॥
बाहरु उदकि पखारीए घट भीतरि बिबिधि बिकार ।
सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार ॥४॥
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार ॥५॥
परम परस गुरु भेटीए पूरब लिखत लिलाट ।

उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥६॥

भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥

सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ॥७॥

अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टारै भ्रम फास ॥

प्रेम भगति नही ऊपजै ताते रविदास उदास ॥८॥१॥

(पत्रा ३४६)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु के नाम सिमरन के बिना जीव का जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा नहीं हो सकता। परम पारस गुरु का मिलाप होने से जहाँ जीव वहम-भ्रम और कर्म-काण्डों से मुक्त हो जाता है वहीं इसके मन में सर्गुण और निर्गुण का एक ही विचार रह जाता है।

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ।

तीनों जुग तीनों दिडे कलि केवल नाम आधार ॥१॥

पहला अर्थ:- सत्ययुग में सच बोलने की प्रधानता थी, त्रेता युग में यज्ञ करने की और द्वापर युग में पूजा एवं श्रेष्ठ कर्म करने की प्रधानता थी। तीनों युगों में यह तीनों कर्म दृढ़ थे, नियत थे पर कलयुग में केवल प्रभु के नाम का ही सहारा है।

दूसरा अर्थ:- सतयुग में सच बोलने की प्रधानता थी, त्रेता युग में यज्ञ करने की और द्वापर युग में पूजा की। तीनों युगों में तीनों कर्म वेदों शास्त्रों में नियत किये गए थे। कलयुग में देवी-देवताओं का आधार माना जाता है। सतगुरु रविदास महाराज जी ने इन चारों युगों प्रधानता को न मानते हुए मानवता को उपदेश दिया है कि उपरोक्त चारों युगों के कर्म करने से जीव भव सागर से पार नहीं हो सकता। यह बात समझाकर भी कोई कह नहीं सकता कि इन कर्मों के करने से मुक्ति मिलती है। मुक्ति तो केवल प्रभु प्रेम से मिलती है।

पारु कैसे पाइबो रे ॥ मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥

जा ते आवागवनु विलाइ ॥१॥ रहाउ ॥

एक प्रभु के नाम के बिना इस भव सागर और जन्म मरण के चक्र से किस तरह मुक्त होना है? इस बात की सच्चाई मुझे कोई भी कहकर समझा नहीं रहा।

बहु बिधि धरम निरुपीए करता दीसै सभ लोइ ॥

कवन करम ते छूटीए जिह साधे सभ सिधि होइ ॥२॥

वेदों और पुराणों में अनेकों प्रकार के धर्म-कर्म नियत किये गए हैं। सारे

संसार के लोग इन कर्मों को करते भी नज़र आ रहे हैं पर गुरु जी कहते हैं कि यह नहीं बताया गया कि इन अनेकों कर्मों में से कौन सा कर्म किया जाए, जिसके करने से सभी सिद्धियां भाव मुक्ति प्राप्त हो।

करम अकरम बीचारीए संका सुनि बेद पुरान ॥

संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ॥३॥

वेदों और पुराणों को पढ़ कर मन में शंका पैदा होती है कि कौन सा कर्म किया जाए और कौन सा कर्म न किया जाए। इन कर्मों के करने से जीव के मन में भ्रम पैदा होता है। जब तक जीव के मन में भ्रम है तो अहंकार का नाश कौन करेगा? भ्रम ही तो अहंकार को जन्म देता है।

बाहरु उदकि पखारीए घट भीतरि बिबिधि बिकार ।

सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार ॥४॥

यदि तीर्थों को ही पापों से मुक्ति का साधन मान लिया जाए तो तीर्थों पर स्नान करने से जीव के शरीर की मैल तो उतर जाती है पर जीव के मन में जो अनेकों प्रकार के विकार बने रहते हैं वो प्रभु का नाम सिमरन किए बिन नहीं धोए जा सकते। फिर जीव कौन से कर्म करने से शुद्ध होगा? जीव का व्यवहार तो हाथी की भांति है। हाथी को चाहे कितना भी नहा-धुला दो पर वह स्वयं पर कीचड़ डाल कर अपना शरीर पुनः मैला कर लेता है।

सतगुरु तेग बहादुर जी वर्णन करते हैं :

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ॥

नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ॥

(पत्रा १४२८)

रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥

पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार ॥५॥

यह एक महान् सच्चाई है कि सूर्य के प्रकाश से रात का अंधकार दूर होता है और इस बात को संसार के सभी लोग बहुत अच्छी तरह से जानते हैं। ऐसे ही जब तक जीव के मन में गुरु के ज्ञान का प्रकाश नहीं होता तब तक अज्ञानता रूपी अंधकार का नाश नहीं होता।

इस सम्बन्ध में सतगुरु अंगद देव जी वर्णन करते हैं :

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥

एते चानण होदिआ गुर बिनु घोर अंधार ॥२॥

(पन्ना ४६३)

यदि इस संसार में सौ चन्द्रमा और एक हजार सूर्यों की रोशनी हो जाए तो

इतनी रोशनी होते हुए भी गुरु के ज्ञान के बिन घोर अंधकार है।

जब पारस तांबे के साथ स्पर्श करता है तो उसे स्वर्ण बनने में देर नहीं लगती।

सतगुरु नामदेव जी फरमाते हैं कि :

तुम्ह चे पारसु हम चे लोहा संगे कंचनु भैइला ॥ (पन्ना १३५१)

भाव प्रभु जी आप संसार में पारस की भांति हो। हम तो सांसारिक जीव लोहे की तरह निक्कमे हैं, पर आप जी से मिलने के कारण हम स्वर्ण बन गये हैं।

परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट।

उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥६॥

जीव को परम पारस गुरु उस समय मिलते हैं जब उसके मस्तिष्क पर पूर्व कर्मों के लेख होते हैं।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :

जा के मसतकि लिखिओ करमा ॥

सो भजि परि है गुर की सरना ॥ (पन्ना ११६५)

जिस जीव के मस्तिष्क पर श्रेष्ठ कर्मों के लेख होते हैं वह भाग कर संत महापुरुषों की शरण में आ जाता है।

इस तथ्य की प्रौढ़ता सतगुरु कबीर जी करते हैं :

कबीरा साधू संगु परापती लिखिआ होइ लिलाट ॥ (पन्ना १३७७)

परम पारस गुरु के मिलने से जीव की अज्ञानता के कठोर द्वार खुल जाते हैं और जीव तुरिया अवस्था में पहुँच जाता है।

भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥

सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ॥७॥

जिन जीवों ने अपने हृदय में भक्ति की युक्ति को सत्य कर जान लिया है

उन के सभी भ्रम और विकारों के बंधन काटे जाते हैं और उन के मन को इस तरह का

आनंद मिलता है कि प्रभु के निर्गुण सगुण दोनों गुणों का एक ही विचार रह जाता है।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :

गूंगे महा अंम्रित रसु चाखिआ पूछे कहनु न जाई हो ॥३॥ (पन्ना ६५७)

भाव जिस प्रकार एक गूंगा व्यक्ति गुड़ खाने के बाद उसकी मिठास का ब्यान नहीं कर सकता उसी प्रकार ही जो जीव प्रभु के परम आनंद में लीन है वह प्रभु के बारे में ब्यान नहीं कर सकता।

इसी सम्बन्ध में सतिगुरु कबीर महाराज जी वर्णन करते हैं :

कहु कबीर गूंगे गुडु खाइआ पूछे ते किआ कहीए ॥ (पन्ना ३३४)

अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास ॥

प्रेम भगति नही ऊपजै ताते रविदास उदास ॥८॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि जीव परमात्मा के नाम के बिना अपनी इन्द्रियों को विषय-विकारों से रोकने के लिए अनेकों प्रयत्न कर ले, पर फिर भी भ्रम दूर नहीं होता और जीव के मन में प्रेमा-भक्ति पैदा नहीं होती। जिस कारण जीव कर्म-काण्ड करता हुआ भी उदास रहता है।

शब्द ७

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंजर एक दोख बिनास ॥

पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥१॥

माधो अबिदिआ हित कीन ॥

बिबेक दीप मलीन ॥१॥ रहाउ ॥

त्रिगद जोनि अचेत संभव पुन पाप असोच ॥

मानुखा अवतार दुलभ तिही संगति पोच ॥२॥

जीअ जंत जहा जहा लगु करम के बसि जाइ ॥

काल फास अबध लागे कछु न चलै उपाइ ॥३॥

रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ॥

भगत जन भै हरन परमानंद करहु निदान ॥४॥१॥ (पन्ना ४८६)

सतगुरु रविदास जी ने जीव के जीवन में पांच विकारों और अज्ञानता का प्रभाव बताते हुए, जीव को गुरु ज्ञान प्राप्त कर, विकारों और अज्ञानता से मुक्त होकर, परमात्मा का नाम सिमरन कर, जीवन सफल करने का, पावन उपदेश दिया है क्योंकि अज्ञानता ही संसार के सभी दुखों का कारण है।

म्रिग मीन भ्रिग पतंग कुंचर एक दोख बिनास ॥

पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥१॥

हिरन, मछली, भंवरा, पतंगा और हाथी इन पाँचों में एक-एक दोष होने के कारण इनका विनाश हो जाता है। जब शिकारी ने हिरन को पकड़ना होता है तो घंड़े-हेड़े का नाद बजाता है और हिरन घंड़े-हेड़े का नाद सुनता हुआ जाल में फंस जाता है और शिकारी उसे मार देता है। मछली जिह्वा के स्वाद के कारण अपना नाश कर लेती है। जब शिकारी कांटे के साथ मांस लगाकर पानी में फेंकता है तो मछली जिह्वा के स्वाद के कारण मांस खाती है और कांटे में उसका मुँह फस जाता है और शिकारी उसे पानी में से बाहर निकाल लेता है और वह मर जाती है। भंवरा नासिका रस भाव सुगन्धि के कारण अपनी जान गंवा लेता है। जब सूर्य उदय होता है तो कमल का फूल खिल जाता है। भंवरा फूल पर सुगन्धि लेने के लिए बैठता है। जिस समय सूर्य अस्त होता है, कमल का फूल बंद हो जाता है और भंवरा कमल के फूल में दब कर मर जाता है। पतंगे को आँख रस के कारण अपनी जान गँवानी पड़ती है। जिस समय पतंगा रोशनी को देखता है तो देखता-देखता वह उसके इतना पास पहुँच जाता है कि उसमें जलकर मर जाता है। हाथी में काम-वासना है। जब शिकारी ने हाथी को पकड़ना होता है तो शिकारी गड़्ढा खोद कर, उस पर बांस की छत डालकर, उस पर कागज़ की हथिनी बनाकर खड़ी कर देता है। जब हाथी हथिनी के पास पहुँचता है तो वो गड़्ढे में गिर जाता है और सारी जिंदगी महावत के कुंडे सहता हुआ मर जाता है।

इस सम्बन्ध में सतगुरु नानक देव जी वर्णन करते हैं :-

भ्रिग पतंग कुंचर अरु मीना ॥

मिरगु मरै सहि अपुना कीता ॥ (पन्ना २२५)

पर जीव में तो यह पाँचों दोष हैं तो इसके बचने की कितनी आस की जा

सकती है?

माधो अबिदिआ हित कीन ॥

बिबेक दीप मलीन ॥१॥ रहाउ ॥

हे प्रभु जी! इस जीव ने अज्ञानता में ही अपना हित समझ लिया है, जिस कारण जीव की सोचने और समझने की शक्ति, भाव सत्य-असत्य को जानने की शक्ति मलीन हो गई है। ज्ञान की कमी के कारण यह जीव भेद-भाव में फंस कर अपना जीवन व्यर्थ गंवा रहा है।

त्रिगद जोनि अचेत संभव पुन पाप असोच ॥

मानुखा अवतार दुलभ तिही संगति पोच ॥२॥

योनियों वाले जीवों (साँप, बिच्छु, छिपकली इत्यादि) में चेतना मनुष्य की भांति नहीं होती अतः संभवतः उनमें पुण्य-पाप की और अच्छे-बुरे की समझ नहीं होती है। पर इस जीव को अवतारों की भांति मनुष्य जन्म प्राप्त हुआ है, इसकी संगत विकारों के कारण नीच है।

सतिगुरु कबीर साहिब जी भी वर्णन करते हैं :

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥ तब इह मानस देही पाई ॥

इस देही कउ सिमरहि देव ॥ सो देही भजु हरि की सेव ॥

(पन्ना ११५१)

गुरु की सेवा करने के लिए और भक्ति की कमाई करने के लिए यह मनुष्य जन्म मिला है, जिस जन्म को देवी-देवता तरसते हैं। यह जन्म हरि के सिमरन के लिए मिला है।

जीअ जंत जहा जहा लगु करम के बसि जाइ ॥

काल फास अबध लागे कछु न चलै उपाइ ॥३॥

जीव जहाँ जहाँ लगे हुए हैं अपने किये हुए कर्मों के वसीकार में लगे हैं। पर जब जीव को न काटी जाने वाली काल रूप मृत्यु की फाँसी लगती है तो उसके आगे जीव का कोई उपाय काम नहीं आता। उसको यह संसार छोड़ कर जाना पड़ता है।

रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ॥

भगत जन भै हरन परमानंद करहु निदान ॥४॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जो जीव इस संसार में

तपों में से श्रेष्ठ तप, गुरु का ज्ञान, प्राप्त कर लेता है वह विषय-विकारों से मुक्त हो जाता है। उसकी मति संसार की ओर से उपराम हो जाती है और उसके भ्रम का नाश हो जाता है। प्रभु अपने भक्तों के डर का नाश करने वाला है। हे परमानंद प्रभु जी! आप इस संसार में जीवों के विकारों और जन्म मरण के चक्र का अंत करो जी।

शब्द ८

संत तुझी तनु संगति प्रान ॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवादेव ॥१॥
संत ची संगति संत कथा रसु ॥
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव ॥१॥ रहाउ ॥
संत आचरण संत चो मारगु
संत च ओल्हग ओल्हगणी ॥ २ ॥
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि ॥
जणी लखावहु असंत पापीसणि ॥३॥
रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु ॥
संत अनंतहि अंतरु नाही ॥४॥ ॥२॥

(पन्ना ४८६)

सतगुरु रविदास महाराज जी मानवता को संत महापुरुषों की संगत् करने का पावन उपदेश देते हैं। संत महापुरुषों की संगत में से ही एकता, समानता, भाईचारा, सांझीवालता एवं परमात्मा को मिलने का रास्ता प्राप्त होता है क्योंकि संतों और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।

संत तुझी तनु संगति प्रान ॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवादेव ॥१॥
हे प्रभु जी! संत आप का शरीर हैं और संत महापुरुषों की संगत् आप के प्राण है। सतगुरु के ज्ञान द्वारा ही जाना जाता है कि संत देवों के पूजनीय देव हैं और परमात्मा का स्वरूप हैं।

बाबा फरीद जी वर्णन करते हैं :

करि किरपा प्रभि साध संगि मेली ॥

जा फिरि देखा ता मेरा अलहु बेली ॥३॥ (पन्ना ७१४)
प्रभु ने कृपा कर जब मुझे संतों की संगत् से जोड़ा तो संत महापुरुषों की संगत् के प्रताप के कारण मैंने जहां भी देखा मुझे अल्लाह बेली नज़र आया।

संत ची संगति संत कथा रसु ॥

संत प्रेम माझै दीजै देवा देव ॥१॥ रहाउ ॥

हे देवों के देव प्रभु जी! मुझे संत महापुरुषों की संगत्, संतों की कथा का आनंद और संत महापुरुषों से प्रेम देना करो जी।

सतगुरु कबीर महाराज जी वर्णन करते हैं :

संतसंगति रामु रिदै बसाई ॥१॥

साध संगति उपजै बिस्वास ॥

बाहरि भीतरि सदा प्रगास ॥४॥ (पन्ना ३४३)

संतों की संगति में जाकर जीव के हृदय में परमात्मा के नाम का वास होता है। संतों की संगत् द्वारा मन में भरोसा पैदा होने से शरीर के बृहण्ड के अंदर और बाहर भाव बृहण्ड में सदा उस परमात्मा का प्रकाश दिखाई देता है।

संत आचरण संत चो मारगु

संत च ओल्हग ओल्हगणी ॥ २ ॥

हे प्रभु जी! संतों वाला आचरण और संत महापुरुषों वाला श्रेष्ठ मार्ग मुझे दो जी क्योंकि संसार में संत महापुरुषों का आचरण और मार्ग सब से श्रेष्ठ है।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

संत का मारगु धरम की पडड़ी को वडभागी पाए ॥ (पन्ना ६२२)

संतों वाला श्रेष्ठ मार्ग और धर्म का मार्ग किसी बड़े भाग्य वाले जीव को ही प्राप्त होता है।

हे परमात्मा जी! मुझे संत महापुरुषों के दासों का दास बना दो जी क्योंकि संतों के दासों का दास बनने से मुझे संत महापुरुषों वाली संगत प्राप्त होगी।

अउर इक मागउ भगति चिंतामणि ॥

जणी लखावहु असंत पापीसणि ॥३॥

प्रभु जी आप से एक मांग और करता हूँ कि मुझे मन ऐच्छुक फल देने वाली

नाम रूप भक्ति-मणि दो, पर कदापि मुझे, जिनका आचरण संत महापुरुषों के विपरीत है, उन पापियों के दर्शन न कराओ जी।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

संतु मिलै किछु सुनीऐ कहीऐ ॥
मिलै असंतु मसटि करि रहीऐ ॥१॥ (पन्ना ८७०)

यदि संत महापुरुष मिल जाएं तो उनके अमृत वचन सुनने चाहिए। यदि कोई शंका हो तो उनसे इस की निवृत्ति का मार्ग जानना चाहिए। पर यदि कोई साकत पुरुष कहीं मिल जाए तो उसके सामने चुप ही रहना चाहिए।

**रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु ॥
संत अनंतहि अंतरु नाही ॥४॥२॥**

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि सांसारिक लोग संत महापुरुषों को जो चाहे समझें पर सच्चाई तो यह है कि संत और परमब्रह्म में कोई भेद नहीं है। संत संसार में परमात्मा का ही रूप हैं।

सतिगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

साध की सोभा साध बनि आई ॥
नानक साध प्रभु भेदु न भाई ॥

संतों की शोभा संत ही जानते हैं। हे भाई! संतों और प्रभु में कोई अंतर नहीं है।

शब्द १

तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा ॥
नीच रुख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा ॥१॥
माधउ सतिसंगति सरनि तुम्हारी ॥
हम अउगन तुम्ह उपकारी ॥१॥ रहाउ ॥
तुम मखतूल सुपेद सपीअल हम बपुरे जस कीरा ॥
सतसंगति मिलि रहीऐ माधउ जैसे मधुप मखीरा ॥२॥
जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा ॥

राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा ॥३॥

(पन्ना ४८६)

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को सत्संगत् में मधु-मक्खियों की तरह मिलकर रहने का पावन उपदेश देते हैं।

**तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा ॥
नीच रुख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा ॥१॥**

हे प्रभु जी! आप संसार में चंदन की भांति श्रेष्ठ हो। हम सांसारिक जीव विकारों के कारण इरिण्ड की तरह गुणहीन हैं पर जैसे चंदन के पास इरिण्ड का वास होता है ऐसे ही प्रभु जी हमारा वास आपके पास है। जैसे चंदन के पास रहने से इरिण्ड में भी चंदन जैसी सुगन्धि आ जाती है और नीच कहा जाने वाला इरिण्ड चंदन जैसा ही उत्तम बन जाता है। इसी प्रकार ही प्रभु जी, आप की संगत करने से हम आप का ही रूप हो गए हैं।

सतिगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कबीर चंदन का बिरवा भला बेढिओ ढाक पलास ॥
ओइ भी चंदनु होइ रहे बसे जु चंदन पासि ॥१॥ (पन्ना १३६५)

इसी सम्बन्ध में सतगुरु राम दास जी वर्णन करते हैं :

भार अठारह महि चंदनु ऊतम
चंदन निकटि सभ चंदनु हुईआ ॥ (पन्ना ८३४)

इसी प्रकार जो जीव संसार में आकर प्रभु का नाम सिमरन करता है संत महापुरुषों की संगत करता है वह इस संसार में उत्तम बन जाता है।

**माधउ सतिसंगति सरनि तुम्हारी ॥
हम अउगन तुम्ह उपकारी ॥१॥ रहाउ ॥**

हे प्रभु जी! आप की शरण ही सतसंगत है। हम सांसारिक जीव अवगुणों से भरे हुए हैं पर आप परोपकारी हो और जीवों पर दया कर उनके अवगुण वख्शाने वाले हो।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

जिन कउ क्रिपा करत है गोबिंद ते सतसंगि मिलात ॥३॥ (पन्ना १२५२)

जिस जीव पर प्रभु की कृपा होती है उसको ही सत-संगत प्राप्त होती है।

तुम मखतूल सुपेद सपीअल हम बपुरे जस कीरा ॥

सतसंगति मिलि रहीऐ माधउ जैसे मधुप मखीरा ॥२॥

हे प्रभु जी! आप सफेद पीले रेशम की भांति हो। हम अवगुणों से भरे हुए

कीड़े हैं। हम सांसारिक जीव विकारों के कारण कीड़ों की तरह निक्कमे हैं पर आप

हम पर कृपा करो। हम आप की संगत में ऐसे मिलकर रहें जैसे मधु मक्खियां मधु के

छत्ते में मिलकर रहती हैं। मधु मक्खी अपने हाकिम के आदेश की पाबन्द है। हिम्मत

और मेहनत में परिपक्व है। अधिकार छीनने वाले को मिटा देती है। विकारों का नाश

कर मिठास पैदा करती है। आप कृपा करो कि हम भी आपकी संगत में इसी प्रकार

मिलकर रहें।

जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा ॥

राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा ॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जीव की संगत, मेल-

मिलाप और जीवन नीच है क्योंकि जीव ने दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर प्रभु रूपी

राजा का सिमरन नहीं किया।

शब्द १०

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु ॥

प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरा जनु ॥१॥

तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु ॥

पान करत पाइओ पाइओ रामईआ धनु ॥१॥ रहाउ ॥

संपति बिपति पटल माइआ धनु ॥

ता महि मगन होत न तेरो जनु ॥२॥

प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन ॥

कहि रविदास छूटिबो कवन गुन ॥३॥ ॥४॥

(पन्ना ४८६)

सतगुरु रविदास जी मानवता को प्रभु-प्रेम का पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु

से प्रेम करने वाले को अपने शरीर के टुकड़े टुकड़े होने की भी कोई चिंता नहीं होती

क्योंकि उसने प्रभु को प्रेम रूपी डोरी से बाँधा होता है।

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु ॥

प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरा जनु ॥१॥

मनुष्य जन्म प्रभु के मिलन के लिए प्राप्त हुआ है। सतगुरु जी प्रभु के प्रति

तीव्र और गहरे प्यार की अवस्था का वर्णन करते हैं कि यदि मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े

भी हो जाएँ तो भी मुझे कोई डर नहीं, डर है तो केवल इस बात का कि मेरे मन में से

आप का प्रेम कम न हो जाए।

तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु ॥

पान करत पाइओ पाइओ रामईआ धनु ॥१॥ रहाउ ॥

प्रभु जी, आपके चरण कमल फूल की भांति है और मेरा मन भंवरे की तरह

है। मेरे मन ने आप जी के चरण कमलों में रहने के लिए जगह प्राप्त कर ली है। हे प्रभु

जी! आप का पावन नाम रूपी अमृत पीकर मैंने नाम रूपी धन प्राप्त कर लिया है।

संपति बिपति पटल माइआ धनु ॥

ता महि मगन होत न तेरो जनु ॥२॥

प्रभु जी, आप के नाम का आनंद लेने वाला आप का दास सुख-दुख रूपी

पर्दा, सांसारिक माया और संसार रूप झूठे धन में मगन नहीं होता।

प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन ॥

कहि रविदास छूटिबो कवन गुन ॥३॥ ॥४॥

सतगुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि प्रभु जी, दास ने आप को प्रेम की

डोरी से बांध लिया है। अब आप कौन से प्रयत्न करने से छूटेंगे। अर्थात् आप प्रेम के

सच्चे बंधन में से निकल नहीं सकते।

सतगुरु नामदेव जी उच्चारण करते हैं

मेरी बांधी भगतु छडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि ॥ (पन्ना १२५२)

प्रभु जी कहते हैं मेरी करनी मेरा नाम सिमरन करने वाले संत एवं भक्त तो

बदल सकते हैं पर मैं उनकी करनी नहीं बदल सकता क्योंकि उन्होंने मुझे प्रेम के

बंधन में बाँध लिया है। इस लिए मैं प्रेम के बन्धन में बाँधा हुआ किसी भी प्रयत्न से

आजाद नहीं हो सकता।

शब्द ११

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ॥

हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे ॥१॥ रहाउ ॥

हरि के नाम कबीर उजागर ॥

जनम जनम के काटे कागर ॥१॥

निमत नामदेउ दूध पीआइआ ॥

तउ जग जनम संकट नही आइआ ॥२॥

जन रविदास राम रंगि राता ॥

इउ गुर परसादि नरक नही जाता ॥३॥ ॥५॥

(पन्ना ४८७)

सतगुरु रविदास जी स्मस्त प्राणियों को हरि नाम जपने का पावन उपदेश देते हुए वर्णन करते हैं कि हरि नाम में रंग हो कर साँसारिक जीव जीवन मुक्त हो जाते हैं ।

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ॥

हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे ॥१॥ रहाउ ॥

हरि-हरि नाम जप कर पहले भी साँसारिक जीव मुक्त हुए हैं, हरि-हरि नाम जप कर अब भी मुक्त हो रहें हैं और हरि-हरि नाम जपकर आगे भी मुक्त होंगे ।

हरि नाम जीवों के हृदय को उज्ज्वल करने वाला है । श्वास-श्वास हरि नाम जप कर जीव संसार के अगम्य भवसागर से पार हो जाते हैं ।

सतगुरु नाम देव जी वर्णन करते हैं :-

हरि हरि करत मिटे सभि भरमा ॥

हरि को नामु लै ऊतम धरमा ॥१॥ (पन्ना ८७४)

हरि-हरि नाम जपने से सभी तरह के भ्रम दूर हो जाते हैं । हरि नाम जपना संसार में सब से सर्वोत्तम धर्म है ।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

ऐसा गिआनु बिचारु मना ॥

हरि की न सिमरहु दुख भंजना ॥ (पन्ना ११६१)

हे मन ! तू परमात्मा के ऐसे 'हरि' ज्ञान का विचार कर जो दुःखों की निवृत्ति करने वाला है ।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरि हेत ॥

ऊठत बैठत सोवते हरि हरि चेत ॥ (पन्ना ८१०)

हरि के नाम कबीर उजागर ॥

जनम जनम के काटे कागर ॥१॥

परमात्मा का नाम जप कर कबीर जी इस संसार में प्रसिद्ध हुए जिन्होंने अपना तो जन्मों-जन्मांतरों का हिसाब-किताब काटा ही बल्कि सांसारिक लोगों को एकता, समानता और भाईचारे की सूत्र में पिरोकर परमात्मा का नाम जपा कर पार किया ।

निमत नामदेउ दूध पीआइआ ॥

तउ जग जनम संकट नही आइआ ॥२॥

जब सतिगुरु नामदेव जी ने विनम्र भाव से हरि को दूध पिलाया तो उसके बाद संसार के जन्म-मरण रुपी संकट में नहीं आए भाव मुक्त हो गए ।

ठाकुरों को दूध पिलाना

संसार के कार्य अनंत हैं । जीव जगत में रहता हुआ कार्य करता-2 थक जाता है, पर कार्य खत्म नहीं होते । एक दिन नामदेव जी के पिता जी को कोई ऐसा काम पड़ गया कि उनको तीन दिन तक घर से बाहर रहना पड़ा । वह ठाकुरों को हर-रोज दूध का भोग लगाते थे । जब नामदेव जी के पिता जी काम के कारण घर से बाहर चले तो उन्होंने नामदेव जी से कहा की कि मैं तीन दिन के लिए बाहर जा रहा हूँ । सुबह उठकर पहले स्नान करना, फिर मंदिर जाकर ठाकुर जी को स्नान कराना और गाय दोह कर उन्हें दूध का भोग लगाना । यह बात मत भूलना । यदि ठाकुर जी नाराज हो गए तो हमारा कोई ठिकाना नहीं रहेगा । ऐसा कहने के पश्चात् नामदेव जी के पिता जी चले गए ।

अगले दिन नामदेव जी जल्दी उठे, स्नान किया, कपिला गाय का दूध दोह कर मंदिर चले गए । दूध को ऊँची जगह पर रख कर ठाकुर जी को स्नान कराया । मंदिर का अंदरूनी हिस्सा साफ किया । जब वह स्थान सूख गया तो धूप जलाकर दूध की कटोरी भरी और ठाकुर जी के आगे रख दिया और नामदेव जी ने विनती की :-

दूधु कटोरै गडवै पानी ॥ कपल गाइ नामै दुहि आनी ॥१॥

दूध पीउ गोबिंदे राइ ॥ दूध पीउ मेरो मनु पतीआइ ॥

नाही त घर को बापु रिसाइ ॥१॥ रहाउ ॥

सोइन कटोरी अंम्रित भरी ॥ लै नामै हरि आगै धरी ॥२॥

भोले नामदेव जी को नहीं पता था कि जगत् ठाकुरों के साथ धोखा करता

है। एक चम्मच दूध ठाकुर जी के मुँह पर लगाकर बाकी का दूध स्वयं पी जाता है।

नामदेव जी ने सोचा कि जितना दूध ठाकुर जी के आगे रखा जाता है वो सारा दूध ठाकुर जी की मूर्ति पी लेती है, पर पत्थर की मूर्ति दूध कैसे पी सकती है? दूध की कटोरी आगे रख कर नामदेव जी बैठे रहे। जब बहुत देर हो गई तो नामदेव जी बोलकर बिनती करने लगे- “हे प्रभु! दूध की कटोरी और पानी की गड़वी आप के पास रखी हुई है। मैं यह कपिला गाय का दूध लेकर आया हूँ, हे मेरे गोबिंद दूध ग्रहण कीजिए। यदि आप दूध को ग्रहण कर लेंगे तो मेरा मन शांत हो जाएगा, नहीं तो पिता जी नाराज होंगे। मैंने आप के समक्ष सोने की कटोरी रखी है। कृप्या! आप जरूर ग्रहण करें! मैंने कोई पाप नहीं किया। यदि, मेरे पिता जी से हर रोज़ दूध ग्रहण करते हो तो मुझ से क्यों नहीं? हे प्रभु! कृपा करो, दया करो, यदि आज आपने दूध ग्रहण नहीं किया तो मेरी खैर नहीं।”

कहते हैं कि शुद्ध हृदय से की गई प्रार्थना व्यर्थ नहीं जाती। प्रभु को पत्थरों में से भी प्रकट कर देती है। जो काम नामदेव जी के पिता जी सारी जिंदगी न कर सके, ठाकुर और अपने जीवन से धोखा करते रहें। न कभी शुद्ध हृदय से प्रार्थना की और न ही ठाकुर ने दूध पिया। जैसे ब्राह्मण चम्मच से दूध ठाकुर जी के मुँह पर लगाकर पीछे हटा लेता था वैसे ही नामदेव जी के पिता जी किया करते थे। परन्तु मासूम आत्मा नामदेव जी को ठाकुर द्वारा दूध न पीना अच्छा न लगा। वह ठाकुर जी के आगे प्रार्थना करने लगे। आखिर भगवान को नामदेव जी की भक्ति भावना देख कर आना पड़ा। भगवान् पत्थर की मूर्ति में से प्रकट हुए और हँसे :-

एक भगत मेरे ह्रिदय बसै ॥ नामे देखि नरायनु हसै ॥३॥

एक भक्त (नामदेव जी) उनके हृदय में वसा। नामदेव जी को देखकर भगवान हंस पड़े। हँस कर दोनो हाथ आगे बढ़ाए और दूध पी लिया। दूध पीकर मूर्ति फिर वैसे हो गई जैसी पहले थी।

“दूध पीआइ भगतु घरि गइआ। नामे हरि का दरसनु भइया ॥”

दूध पिलाकर नामदेव जी घर चले गए। ऐसे उनको प्रभु ने दर्शन दिये। यह

सतगुरु नामदेव जी की भक्ति मार्ग पर पहली प्राप्ति थी। भगवान उनका कहा मानने

लगे और छोटी आयु में ही उनको प्रभु के दर्शन हो गए। लोगों में बहुत शोभा हुई।

नामदेव जी के पिता जी को जब इस बात का पता चला तो वे बहुत प्रसन्न हुए।

जन रविदास राम रंगि राता ॥

इउ गुर परसादि नरक नही जाता ॥३॥५॥

श्री गुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि जो जीव ‘हरि’ नाम में रंग जाता है वह जीव गुरु की कृपा से नरक में नहीं जाता।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कहि कबीर रंगि राता ॥

मिलिओ जगजीवन दाता ॥४॥४॥ (पन्ना ६५५)

जो जीव इस संसार में परमात्मा के रंग से रंगा जाता है उसको जगजीवन दाता परमेश्वर मिल जाते हैं।

शब्द १२

माटी को पुतरा कैसे नचतु है ॥

देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है ॥१॥ रहाउ ॥

जब कछु पावै तब गरबु करतु है ॥

माइआ गई तब रोवनु लगतु है ॥१॥

मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ॥

बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना ॥२॥

कहि रविदास बाजी जगु भाई ॥

बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई ॥३॥६॥

(पन्ना ४१७)

सतगुरु रविदास महाराज जी इस शब्द द्वारा स्मस्त मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि मिट्टी के पुतले (जीव) को माया का त्याग कर सृजनहार परमात्मा से सच्ची प्रीति करनी चाहिए।

माटी को पुतरा कैसे नचतु है ॥

देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है ॥१॥ रहाउ ॥

पाँच तत्वों से बना हुआ यह जीव अपने संसार में आने के वास्तविक मनोरथ प्रभु के नाम को भूल कर संसार की माया में फँसा हुआ, माया के लिए किस तरह नाचता-फिरता है। जीव माया की ओर देख देख कर खुश होता है और उसे माया के बारे में सुनना और बोलना अच्छा लगता है। वह माया के प्रभाव में ही भाग-दौड़ कर रहा है।

जब कछु पावै तब गरबु करतु है ॥

माइआ गई तब रोवनु लगतु है ॥१॥

जब जीव माया प्राप्त कर लेता है तो वह माया का अहंकार करता है पर जब माया की हानि हो जाती है तब वह रोने लग जाता है, कहता है कि मैं तो लुट गया।

मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ॥

बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना ॥२॥

यह जीव संसार की माया में मग्न होकर मन में माया के बारे में ही सोचता है और वचन विचार एवं कर्म भी वही करता है जिससे जीव को माया प्राप्त हो। इस तरह वह मन, वचन और कर्म के कारण रसों में मग्न रहता है पर उसे यह मालूम नहीं जब मर जाएगा तो कहां जाकर समाना है?

सतगुरु अर्जुन देव जी महाराज वर्णन करते हैं :

खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥ (पन्ना १३५)

जिस समय जीव का अंत आता है उस समय माया के सभी भोग (जिन में फँस कर अपना जीवन गँवा लेता है) कड़वे लगते हैं।

कहि रविदास बाजी जगु भाई ॥

बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई ॥३॥ ॥६॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि प्रभु बाजीगर सृष्टि सृजनहार ने संसार की रचना रची है, वह जैसे चाहे जीव से उसी प्रकार कर्म करवाता है, परन्तु मुझे बाजीगर प्रभु से प्रेम हो गया है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

बाजीगर डंक बजाई ॥

सभ खलक तमासे आई ॥ (पन्ना ६५५)

प्रभु रूपी बाजीगर ने डुगडुगी बजाई और सारी खलकत तमाशा रूप हो आई है।

शब्द १३

गुजरी श्री रविदास जी के पदे घरु ३ ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ ॥

फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ ॥१॥

माई गोबिंद पूजा कहा लै चरावउ ॥

अवरु न फूलु अनूपु न पावउ ॥१॥ रहाउ ॥

मैलागर बेहै है भुइअंगा ॥

बिखु अम्रितु बसहि इक संगी ॥२॥

धूप दीप नईबेदहि बासा ॥

कैसे पूज करहि तेरी दासा ॥३॥

तनु मनु अरपउ फूल चरावउ ॥

गुरपरसादि निरंजनु पावउ ॥४॥

पूजा अरचा आहि न तोरी ॥

कहि रविदास कवन गति मोरी ॥५॥ ॥१॥

(पन्ना ५२५)

सतगुरु रविदास महाराज जी सांसारिक जीवों को प्रभु के आगे तन, मन अपर्ण करने का पावन उपदेश देते हैं। प्रभु की पूजा केवल सच्चे मन से ही की जा सकती है क्योंकि दुनिया के सभी पदार्थ अपवित्र हैं।

दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ ॥

फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ ॥१॥

हे प्रभु जी! आप जी की पूजा सांसारिक पदार्थों से नहीं की जा सकती। सांसारिक जीव आप के आगे दूध रख कर पूजा करते हैं पर दूध दोहने से पहले ही बछड़े ने थन में ही जूठा कर दिया है। फूलों को भंवरे ने सुगन्धि लेकर जूठा कर दिया है और जल मछली ने जूठा कर दिया है। इस लिए दूध, फल और जल पूजा में भेंट

करने के योग्य नहीं है।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :-

आनीले कुंभ भराईले ऊदक ठाकुर कउ इसनानु करउ ॥

बइआलीस लख जी जल महि होते बीटलु भैला काइ करउ ॥

आनीले फूल परोईले माला ठाकुर की हउ पूज करउ ॥

पहिले बासु लई है भवरह बीठल भैला काइ करउ ॥

आनीले दूधु रीधाईले खीर ठाकुर कउ नैवेदु करउ ॥

पहिले दूधु बिटारिओ बछरै बीठलु भैला काइ करउ। (पन्ना ४८५)

ठाकुर को स्नान कराने के लिए पानी का घड़ा लिया पर वह पानी अपवित्र है

क्योंकि उसमें 42 लाख योनियों के जीव हैं। ऐसे ही पूजा के लिए माला बनाने के लिए लाए गए फूल भवरे द्वारा सुगन्धि लेने के कारण अपवित्र हैं और दूध की बनी खीर भी अपवित्र है क्योंकि खीर वाले दूध को बछड़े ने थनों में ही अपवित्र किया होता है।

माई गोबिंद पूजा कहा लै चरावउ ॥

अवरु न फूलु अनूपु न पावउ ॥१॥ रहाउ ॥

हे माई! मैं परमात्मा की पूजा करने के लिए संसार में से पवित्र भेटा कहाँ से ला कर चढ़ाऊँ। संसार में कोई पवित्र और अनुपम फूल प्राप्त नहीं होता।

मैलागर बेहैं है भुइअंगा ॥

बिखु अम्रितु बसहि इक संगी ॥२॥

प्रभु जी, चंदन भी आप जी की पूजा करने के योग्य नहीं है क्योंकि चंदन के वृक्ष के साथ विष भरे साँप लिपटे होते हैं। इस लिए विष भरे साँप और अमृत से भरा हुआ चंदन एक स्थान पर इक्ठ्ठे रहते हैं। चंदन को साँपों ने विष के साथ अपवित्र कर दिया है।

धूप दीप नईबेदहि बासा ॥

कैसे पूज करहि तेरी दासा ॥३॥

धूप, दीपक और मीठे एंव बासी पदार्थ भी आप जी की पूजा के योग्य नहीं है। तो परमात्मा जी आप का दास इन अपवित्र पदार्थों से आप जी की पूजा कैसे करे?

तनु मनु अरपउ फूल चरावउ ॥

गुरपरसादि निरंजनु पावउ ॥४॥

माया से मुक्त निरंजन प्रभु जी आप की पूजा के लिए आप के आगे तन मन

अर्पण करने से और गुरु की कृपा से आप की प्राप्ति होती है।

पूजा अरचा आहि न तोरी ॥

कहि रविदास कवन गति मोरी ॥५॥१॥

हे प्रभु जी! अपना तन मन अर्पण रूप सच्ची पूजा के बिना सांसारिक

अपवित्र पदार्थों से आप की पूजा नहीं की जा सकती। गुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि सच्ची पूजा के बिना मेरी गति कैसे होगी? मैं आप जी की सच्ची पूजा सच्चे मन से कर के आप में विलीन हो गया हूँ।

शब्द १४

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥

अनल अगम जैसे लहरि मइओदधि जल केवल जल मांही ॥१॥

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ॥

जैसा मानीए होइ न तैसा ॥१॥ रहाउ ॥

नरपति एक सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी ॥

अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ॥ २ ॥

राज भुइअंग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ ॥

अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ ॥३॥

सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई ॥

कहि रविदास हाथ पै नैरै सहजे होइ सु होई ॥४॥१॥

(पन्ना ६५७)

सतगुरु रविदास महाराज जी मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि जब जीव के मन में से झूठे अहंकार और भ्रम का नाश हो जाता है तब सर्व-व्यापक प्रभु उसे अपने भीतर ही नजर आता है।

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥

अनल अगम जैसे लहर मड़ओदधि जल केवल जल मांही ॥१॥

हे प्रभु! जब तक जीव के मन में मैं, मेरी का झूठा अहंकार है तब तक जीव

को आपकी प्राप्ति नहीं होती, पर जब जीव अपने मन में से मैं (अहंकार) मिटा देता

है तो परमात्मा जी आप ही हो, मैं कुछ नहीं का निश्चय हो जाता है।

सतगुरु कबीर साहिब जी भी वर्णन करते हैं :-

जब हम होते तब तुम नाही अब तुम हहु हम नाही ॥

(पत्रा ३३६)

हे प्रभु जी! जब तक हम में मैं और मेरी का अहंकार था उतनी देर आप की

प्राप्ति नहीं थी पर अब ज्ञान होने के कारण आप प्राप्त हो गए हैं और अब केवल आप

ही हो, मैं मेरी का अहंकार खत्म हो गया है।

सतगुरु नानक देव जी महाराज वर्णन करते हैं :

हउमै करी तां तू नाही तू होवहि हउ नाहि ॥ (पत्रा १०१२)

प्रभु जी जीव के अहंकार करने से आप की प्राप्ति नहीं होती पर अहंकार

खत्म होने से आप की प्राप्ति होती है।

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि जैसे समुद्र में तेज आँधी

आने के कारण बहुत सी लहरें उठती हैं और फिर समुद्र में समा जाती हैं और केवल

पानी ही पानी नजर आता है। ऐसे ही जब जीव के मन में अहंकार होता है तब तक

यह जीव प्रभु से दूर रहता है। जब जीव अपने मन से अहंकार को मिटाकर प्रभु का

सिंमरन करता है तो प्रभू का ही रूप हो जाता है।

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ॥

जैसा मानीए होइ न तैसा ॥१॥ रहाउ ॥

हे प्रभु जी! क्या कहें जीव भ्रम के कारण इस संसार को सच मानता है पर

जैसा यह जीव संसार को सच समझ कर मानता है यह संसार वैसा नहीं है, भाव यह

कि संसार असत्य है।

नरपति एकु सिंघासन सोइआ सुपने भइआ भिखारी ॥

अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ॥ २ ॥

जैसे एक राजा अपने सिंघासन पर सोया हुआ सपने में भिखारी बन जाता है

और अपना राज्य होते हुए भी राजा सपने में भिखारी बन कर दुख प्राप्त करता है। ऐसी

ही हालत इस जीव की है जो संसार रूप सपने में आप से बिछुड़ कर दुख पाता है।

कथा

राजा जनक की

राजा जनक मिथिलापुरी में बिराजमान था, गर्मी के दिन थे। राजा का महल

जिसमें स्वर्ण सिंहासन पर फूलों की सेज लगी हुई थी और उस महल को ठंडी

वस्तुओं से ढंका किया गया था। राजे को अपने सिंहासन पर नौद आ गई और सपना

देखा जिस में शत्रु राजा ने उसके राज्य पर हमला कर दिया और उसका राज्य छीन

लिया। तेज धूप में राजा को नग्न अवस्था में देश से निकाल दिया गया। उस समय

उसके शरीर पर केवल लँगोटी ही थी। दूसरे राजे ने सारे गाँवों और नगरों में सूचना दे

दी कि जो कोई भी राजा जनक को अन्न एवं जल देगा वह सज़ा पाएगा और जो राजा

का निरादर करेगा उसे इनाम दिया जाएगा। प्रजा ने शत्रु राजे के डर के कारण राजा

जनक का बहुत अपमान किया। नीचे से धरती और ऊपर से आकाश की गर्मी के

कारण राजा के पाँव पर छाले पड़ गए। राजा जनक को भूख ने बहुत व्याकुल किया।

शरीर काँपने लगा, इतना कमजोर हो गया कि वह चलने फिरने से भी असमर्थ हो

गया। जिस प्रजा का उसने भला किया था उस के विरोधी राजा के भय के कारण

उसकी किसी ने कोई सहायता न की। किसी स्थान पर खिचड़ी बाँटी जा रही थी।

बहुत भिखारी इकट्ठे हुए थे, खिचड़ी बँट चुकी थी। राजा ने खिचड़ी बाँटने वाले को

प्रार्थना की कि मुझे खिचड़ी दो। खिचड़ी लेकर जब राजा खाने लगा तो उसी समय दो

मस्त साँढ आपस में लड़ते लड़ते राजा से टकरा गए। राजा का खिचड़ी वाला बर्तन

गिर कर टूट गया और खिचड़ी मिट्टी में मिल गई। राजा जोर-जोर से रोने लगा

अधिक आवाज़ के कारण उसकी निद्रा खुल गई। राजा का सपना टूट गया और उसने

अपने आप को स्वर्ण सिंहासन और फूलों की सेज पर पाया। राजा को अब कुछ भी

अच्छा न लगता। उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि मैंने जो सपना देखा है वह विपत्ति

मुझ पर जरूर आएगी, कोई शक्तिशाली शत्रु राजा मेरी ऐसी ही हालत करेगा। राजा को

अब महल और सभी सुख सुविधाएं झूठी अनुभव होने लगी। राजा दिल और दिमाग

से गिर चुका था। वह अपने घोड़े पर चढ़ सपने वाली वह जगह देखने गया जहाँ उसने

खिचड़ी मांगी थी। उस जगह को देखकर उसे यह भ्रम हो गया कि जो सपना मैंने

देखा है वो सच है या यह संसार सच है? अब राजा ने अपने दरबार में सभी ऋषि-मुनियों को बुलाया। सब के आगे प्रश्न किया कि यह सच है या वो सच है? कोई भी इस प्रश्न का उत्तर न दे सका। राजा ने सभी ऋषि-मुनियों को अपने महल में ही रख लिया और कहा कि जब तक मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता सब वहीं रहेंगे।

अष्टावकर को जब पता चला कि राजा ने उसके पिता (जो कि बहुत बड़े विद्वान् थे) और उनके साथ असंख्य ऋषि-मुनियों को अपने महल में रोक रखा है तो वह महल में पहुंचा। उसने राजा के पास जाकर राज्य सभा में राजा के प्रश्न का उत्तर देकर राजा का भ्रम (दुविधा) दूर किया। राजा जनक ने अष्टावकर जी को प्रश्न किया कि यह संसार सच है या सपना? अष्टावकर जी ने राजा के सपने की सारी स्थिति को वर्णन किया कि राजा तुमने सिंहासन पर सोते हुए एक सपना देखा जिसमें तुझ पर दूसरे राजा ने आक्रमण कर दिया और तुझे बन्दी बना कर देश निकाला दे दिया और तुम भिखारियों की भांति मांग रहे थे। इतने में आपकी निद्रा खुल गई और अपने आप को सिंहासन और फूलों की सेज पर पाया। आप को यह भ्रम था कि जो आपने सपने में देखा है वह सत्य है या संसार सत्य है। दोनों सपने झूठे हैं। संसार रूप सपना अधिक देर तक रहने वाला है जब कि रात का सपना कम समय का है। जैसे एक आदमी एक सेर आटा हर रोज खा सकता है, यदि उसके पास एक सेर है तो एक दिन में ही खत्म कर लेगा। यदि उसके पास एक मण आटा है तो चालीस दिनों में खाएगा, परन्तु सेर आटा और मण आटा दोनों ही खाने से खत्म हो जाएंगे। ऐसे ही सपना सेर आटे के सामान है और संसार मण आटे के सामान है। दोनों को एक दिन खत्म होना है। इस लिए यह संसार और सपना दोनों झूठ हैं। इस प्रकार राजा जनक का भ्रम अष्टावकर जी ने दूर किया।

राज भुइअंग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ ॥

अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ ॥३॥

जैसे साँप और रस्सी का प्रसंग है कि जीव अँधेरे के भ्रम के कारण रस्सी को साँप समझ लेता है परन्तु वास्तव में वह साँप नहीं होती। ऐसे ही भ्रम के कारण जीव को संसार सत्य नज़र आता, पर यह असत्य है। इसी तरह जीव भ्रम के कारण स्वर्ण और स्वर्ण से बने हुए आभूषणों को भिन्न-भिन्न मानता है। असल में स्वर्ण और स्वर्ण से बने हुए आभूषण स्वर्ण ही होते हैं। ऐसे ही जीव भ्रम के कारण प्रभु को अपने से

भिन्न समझता है और जब भ्रम दूर हो जाता है तो प्रभु में विलीन हो जाता है।

सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई ॥

कहि रविदास हाथ पै नैरै सहजे होइ सु होई ॥४॥१॥

भ्रम के दूर होने से प्रभु एक से अधिक रूप धारण कर सारे संसार में व्यापक नज़र आता है और सारे संसार में सभी जीवों में बसा हुआ सब प्रबन्ध चला रहा है।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :-

एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई ॥ (पन्ना ४८५)

भाव परमात्मा एक से अनेक रूप धारण कर सारे संसार में व्यापक है। जहाँ देखता हूँ वहीं परमात्मा है।

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं मैं और मेरी का भ्रम दूर होने से वह परमात्मा हाथों और पाँव से भी निकट अनुभव होता है। सहज ही उसकी प्राप्ति हो जाती है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:-

हरि महि तनु है तन महि हरि है सरब निरंतरि सोइ रे ॥

कहि कबीर राम नामु न छोडउ सहजे होइ सु होइ रे ॥३॥३॥

(पन्ना ८७०)

प्रभु सभी शरीरों में है, सब शरीर परमात्मा में हैं। प्रभु सर्व-व्यापक है। कबीर साहिब जी कहते हैं कि राम नाम का सिमरन न छोड़ो, सहज ही उसकी प्राप्ति हो जाएगी।

शब्द १५

जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे ॥

अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ॥१॥

माधवे जानत हहु जैसी तैसी ॥

अब कहा करहुगे ऐसी ॥१॥ रहाउ ॥

मीनु पकरि फांकिओ अरु काटिओ रांधि कीओ बहुबानी ॥

खंड खंड करि भोजनु कीनो तऊ न बिसरिओ पानी ॥२॥

आपन बापै नाही किसी को भावन को हरि राजा ॥

मोह पटल सभु जगतु बिआपिओ भगत नही संतापा ॥३॥
 कहि रविदास भगति इक बाढी अब इह कासिउ कहीऐ ॥
 जा कारनि हम तुम आराधे सो दुखु अजहु सहीऐ ॥४॥२॥

(पन्ना ६५८)

सतगुरु रविदास महाराज सांसारिक जीवों को प्रभु से सच्ची प्रीति कर प्रभु को प्रेम के बंधन में बांध कर, संसार के झूठे बंधनों से मुक्त होने का पावन उपदेश देते हैं। जीव को प्रभु से ऐसी प्रीति करनी चाहिए जैसी प्रीति मछली की पानी के साथ है।
 जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बांधे ॥
 अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ॥१॥
 हे प्रभु जी! यदि आप जी ने हमें संसार में मोह रूपी फास में बाँधा है तो हमने आपको प्रेम के बंधन में बांध लिया है। अब आप अपने छूटने का प्रयत्न करो क्योंकि हमने तो आपकी भक्ति कर अपने आप को सांसारिक मोह से मुक्त कर लिया है।

माधवे जानत हहु जैसी तैसी ॥

अब कहा करहुगे ऐसी ॥१॥ रहाउ ॥

हे प्रभु जी! जैसी मेरी आप के साथ प्रीति है, आप भली-भाँति जानते हो।

आप इस प्रीति से छुटकारा पाने के लिए क्या करोगे?

मीनु पकरि फाँकिओ अरु काटिओ रांधि कीओ बहुबानी ॥

खंड खंड करि भोजनु कीनो तऊ न बिसरिओ पानी ॥२॥

मेरी आप से ऐसी अटल (अटूट) प्रीति है जैसी प्रीति मछली की पानी के साथ है। फंदक मछली को पकड़ कर पानी से अलग कर के उसे काट कर टुकड़े टुकड़े करता है। कई ढंग से पका कर चबा-चबा कर खाता है, तो भी मछली पानी को नहीं भूलती। जो जीव मछली को खाता है उसे प्यास बहुत लगती है। इस लिए मछली मर कर भी पानी को नहीं भूलती।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :

मछुली कउ जैसे नीरु बालहा तिउ मेरै मन रमइआ ॥ (पन्ना ६१३)

जैसे मछली को पानी प्यारा है ऐसे ही मेरे मन को प्रभु से प्यार है।

सतगुरु नानक देव जी महाराज वर्णन करते हैं :

रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी मछुली नीर ॥ (पन्ना ६०)

हे मन! प्रभु के साथ ऐसी प्रीति कर जिस तरह की प्रीति मछली की पानी के साथ है।

आपन बापै नाही किसी को भावन को हरि राजा ॥

मोह पटल सभु जगतु बिआपिओ भगत नही संतापा ॥३॥

प्रभु जी आप किसी के बाप की सम्पत्ति नहीं हो। हरि-प्रकाश रूप राजा जी आप तो केवल प्रेमा-भक्ति करने वालों के ही हो। मोह रूपी पर्दा सारे संसार में फैला हुआ है, पर यह पर्दा प्रभु का नाम जपने वाले भक्तों को दुख नहीं देता।

कहि रविदास भगति इक बाढी अब इह कासिउ कहीऐ ॥

जा कारनि हम तुम आराधे सो दुखु अजहु सहीऐ ॥४॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी कथन करते हैं कि हे प्रभु जी, मेरे हृदय में आप की प्रेमा-भक्ति बहुत बढ़ गई है, यह मैं किस को बताऊँ? जिस जन्म मरण के दुःख से छुटकारा पाने के लिए मैं आप जी की आराधना कर रहा हूँ क्या यह दुःख अब और भी झेलने पड़ेगे? भाव नहीं झेलने पड़ेगे।

शब्द १६

दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेके ॥

राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै ॥१॥

न वीचारिओ राजा राम को रसु ॥

जिह रस अनरस बीसरि जाही ॥१॥ रहाउ ॥

जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ॥

इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ॥२॥

कहीअत आन अचरीअत अन कछु समझ न परै अपर माइआ ॥

कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ ॥३॥३॥

(पन्ना ६५८)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु भक्ति के बिना चाहे दुर्लभ मनुष्य जन्म में जीव के पास राजा इंद्र की भाँति स्वर्ग का सुख भी हो, सब निष्फल है।

दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेके ॥

राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै ॥१॥

जीव को पूर्व हुए पुण्य का फल अमूल्य मनुष्य जन्म प्राप्त हुआ है परन्तु

आत्म विचार के बिना यह जन्म निष्फल जा रहा है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारै बार ॥

जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार ॥ (पन्ना १३६६)

मनुष्य जन्म अमूल्य है, यह बार बार प्राप्त नहीं होता। जैसे किसी फल के

पेड़ से पका हुआ फल टूट जाए तो वह दोबारा शाखा पर नहीं लगता। सतगुरु रविदास

जी फरमाते हैं कि किसी जीव के पास चाहे राजा इंद्र के समान सुंदर-सुंदर घर और

स्वर्ण के सिंहासन भी हों, परन्तु हरि की भक्ति के बिना उसका जीवन किसी लेखे

नहीं लगता।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

सगल स्त्रिसटि को राजा दुखीआ ॥

हरि का नामु जपत होइ सुखीआ ॥ (श्री सुखमनी साहिब, पन्ना २६४)

सारी सृष्टि का बादशाह होते हुए भी जीव दुखी रहता है पर हरि का सिमरन

करने से वह सुखी हो जाता है।

न वीचारिओ राजा राम को रसु ॥

जिह रस अनरस बीसरि जाही ॥१॥ रहाउ ॥

इस जीव ने प्रभु राजा राम के श्रेष्ठ आनंद का विचार नहीं किया, जिस आनंद

के आने से संसार के और सभी रस चले जाते हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

जिह रस बिसरि गये रस अउर ॥१॥ (पन्ना ३३७)

जो जीव इस संसार में प्रभु के राम नाम रूप श्रेष्ठ रस को पीता है, उस रस

के पीने से संसार के सभी रस भूल जाते हैं।

जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ॥

इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ॥२॥

हे प्रभु जी! आप जी को समझने से अनजान बन कर, बावरा हो कर और

सोचे-समझे बिना सांसारिक जीव दिन व्यतीत कर रहें हैं। इन्द्रियों के विषय विकारों

में संलिप्त होने से जीव की सोचने और समझने की शक्ति कमजोर हो जाती है, जिस

कारण जीव का (परमार्थ) परमात्मा के नाम में प्रवेश नहीं होता।

कहीअत आन अचरीअत अन कछु समझ न परै अपर माइआ ॥

कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ ॥३॥३॥

जीव कहता कुछ और है करता कुछ और है। इस कारण जीव को प्रबल

माया की समझ नहीं आती।

सतगुरु रविदास जी कहते हैं कि प्रभु जी, मुझ दास की मत माया से उपराम

है। आप गुस्सा त्याग कर मुझ पर अपनी कृपा करो जी।

शब्द १७

सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके ॥

चारि पदारथ असट दसा सिधि नवनिधि करतल ताके ॥१॥

हरि हरि हरि न जपहि रसना ॥

अवर सभ तिआगि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥

नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अखर मांही ॥

बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥

सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बडै भागि लिव लागी ॥

कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी ॥३॥४॥

(पन्ना ६५८)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को सुखों के समुद्र प्रभु का हरि

सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं। जिस हरि के नाम के मूल्य के समान मूल्य

रखने वाली कोई भी मूल्यवान वस्तु नहीं है।

सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके ॥

चारि पदारथ असट दसा सिधि नवनिधि करतल ताके ॥१॥

हरि का नाम सुखों का समुद्र है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

भव सागर सुख सागर माही ॥ (पन्ना २२३)

संसार समुद्र में सुख सागर प्रभु का नाम है।

सतगुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि प्रभु के नाम के अधीन सुरतर कल्प बृक्ष, मन इच्छुक फल देने वाली मणि-चिंतामणि, कामधेनु गाय और चार पदार्थ काम, अर्थ, धर्म और मोक्ष हैं।

अठारह सिद्धियां :-

१. अणिमा- प्रमाणु तुल सूक्ष्म हो जाना, २. महिमा-महां स्थूल हो जाना, ३. गरिमा- रूई जैसा पदार्थ भारी हो जाना, ४. लघिमा प्रबल- भारी पदार्थ का रूई तुल हो जाना, ५. प्राप्ति- सभी पदार्थों का इच्छानुसार हाथ में आ जाना, ६. प्रकारमय - बिन किसी रोक के जल की तरह पृथ्वी में लय हो जाना और इच्छानुसार प्रकट हो जाना, ७. वशीकरण - भौतिक पदार्थों को अपनी आज्ञा में कर लेना, ८. ईशता- पदार्थों के रचने और लय करने की शक्ति होना, ९. अनरूपी सिद्धि- खुधा त्रिधा इत्यादि तकलीफें अनुभव न होना, १०. श्रवण सिद्धि- दूर बैठे हुए सभी की बात सुन लेना, ११. दर्शन सिद्धि- दूर बैठे हुए अपने नेत्रों से सब को देख लेना, १२. मनोवेग सिद्धि- मन के वेग अनुसार जहां दलील हो वहीं गमन करना, १३. काम रूप सिद्धि - जैसी इच्छा हो वैसा रूप धारण करना, १४. प्रकांए प्रवेश सिद्धि- भूत की तरह पराए शरीर में प्रवेश कर जाना, १५. स्वच्छन्द मृत्यु सिद्धि- भीषम पितामा की तरह अपनी इच्छा के अनुसार शरीर का त्याग करना, १६. सुर क्रीड़ा सिद्धि-अपसराओं से मिलकर विचरते देवन को देखना, १७. संकल्प सिद्धि- जो दिल में संकल्प धारण करो सो पूरा होना, १८. जहां जाना चाहें वहीं झट-पट पहुँच जाना।

नौ निधियां :-

१. पदम् निधि:- पद्म स्वर्ण इत्यादि धातुओं की खरीद फरोखत करने योग्य सब देव मंदिर बनवाने और श्रेष्ठ आचरण वाला होना पदम निधि कहलाती है। यह निधि सतोगुणी पुत्र-पोत्रों तक रहती है।

२. महा पदम् निधि:- मोती, मूंगे, हीरे इत्यादि का व्यापार करना, उत्तम पुरुषों को दान देना, इस का नाम महा पदम निधि है। यह निधि भी सतोगुणी और सात पीढ़ियों तक रहती है।

३. मकर निधि:- बाण खड़ग बरछी धनुष, ढालादिक जमा करे, इन का व्यापार करे, राजाओं से मित्रता रखे इसका नाम मकर निधि है। यह निधि तमोगुणी

एक पुरुष तक रहती है।

४. कछप निधि :- अन्न, घी, गुड़ इत्यादि का व्यापार करना, कछप सामान अंगों का संकोच करना, अथवा रखना, न आप खाना न किसी को धन देना। जमीन में दबा रखना इसका नाम कछप निधि है, यह निधि तमोगुणी है एक पुरुष पर्यन्त रहती है।

५. मुकंद निधि:- वीणा म्रिदंग इत्यादि बाजे संग्रहि करने भट मागध सूत गवइयों को धन देना, वेसवा गमन करना इसका नाम मुकंद निधि है। यह निधि रजोगुणी है एक पुरुष पर्यन्त रहती है।

६. कुंद निधि:- धातुओं और रतनों और अन्नादिक का व्यापार करना, अपमान का वचन न सहारना, उपमा होनी, बहुत प्रीति करना, बहुत भारया होनी मां, संतान अच्छी होना, पूर्व मित्रों से मिलाप का प्रेम आलोप करना, नयें से बहुत करना इसका नाम कुंद निधि है। यह राजस, तामसहौ और दो पीढ़ियों तक रहती है।

७. नील निधि:- बस्त कपास, अन्न, फल, पुष्प मोती, मूंगे, शंख, सिप्पियों, लकड़ियों और जल की वस्तुओं का व्यापार करना, तालाब-बगीचे लगाना, नदियों पर पुल बनाना, वृक्षों के जंगल और पुष्प वाटिकादि अनेक प्रकार भोगों का भोगी होना, इसका नाम नील निधि है। यह निधि सात्त्विक एवं तामसिक है, तीन पीढ़ियों तक रहती है।

८. संतख निधि :- अकेला ही उत्तम भोजन करे, उत्तम वस्त्र पहने और सब को घटिया अन्न दे, वस्त्र मैले दे, सुत दारादिकों को कुछ न दे, केवल अपने शरीर का पालन करे, इस निधि का नाम संतख निधि है। यह निधि रजो-तमो है और एक पुरुष पर्यन्त रहती है।

९. खरब निधि:- हर तरह के पदार्थ पास होना, खरब निधि कही जाती है। उस प्रभु की हथेली पर हैं।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

सभ निधान दस असट सिधान ठाकुर कर तल धरिआ ॥

(पन्ना ४१५)

सभी खजाने अठारह सिद्धिया उस प्रभु की हथेली पर हैं।

जो जीव प्रभु का सिमरन कर प्रभु के साथ एक रूप हो जाता है, उसके वश

* * * * *
 में यह सब कुछ आ जाता है।
 हरि हरि हरि न जपहि रसना ॥
 अवर सभ तिआगि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥
 हे जीव! तू ऐसे सुखों के समुद्र प्रभु का नाम अपनी रसना से क्यों नहीं
 जपता? और सभी व्यर्थ की बातों को छोड़ कर हरि के नाम का सिमरन कर।
 नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अखर मांही ॥
 बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥
 अनेकों प्रकार के प्रसंग अठारह पुराण और चार वेदों की विधियाँ सभी
 चौतीस अक्षरों में ही लिखे गए हैं। वेद व्यास जी ने सभी ग्रंथों और शास्त्रों को विचार
 कर अंत में यही प्रमार्थ कहा है कि इस संसार में राम नाम के समान कुछ भी नहीं है।
 सतगुरु अर्जन देव जी वर्णन करते हैं :
 बहु सासत् बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि ॥
 पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥
 (श्री सुखमनी साहिब)
 बहुत सारे शास्त्रों और स्मृतियों की गहन विवेचना की पर हरि के नाम के
 बराबर कोई भी नहीं पहुँचता। उस प्रभु का नाम अमूल्य है।
 सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बडै भागि लिव लागी ॥
 कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी ॥३॥४॥
 उस हरि के नाम में निर्विकल्प समाधि विषय विकारों रूप उपाधियों से
 मुक्त होकर लगती है। बड़े भाग्य से जीव का ध्यान प्रभु के साथ जुड़ता है। सतगुरु
 रविदास जी वर्णन करते हैं कि जिस जीव के हृदय में प्रभु के नाम का प्रकाश हो जाता
 है वह जीव जन्म मरण के भय से मुक्त हो जाता है।
 * * * * *
शब्द १८
 जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥
 जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥१॥
 माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि ॥
 तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ॥१॥ रहाउ ॥

* * * * *
 जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ॥
 जउ तुम तीरथ तउ हम जाती ॥२॥
 साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ॥
 तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ॥३॥
 जह जह जाउ तहा तेरी सेवा ॥
 तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा ॥४॥
 तुमरे भजन कटहि जम फांसा ॥
 भगति हेत गावै रविदासा ॥५॥५॥
 (पन्ना ६५१)
 सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को प्रभु से अटूट प्रीति करने का
 उपदेश देते हैं।
 जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥
 जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥१॥
 प्रभु जी मेरी प्रीति आप के साथ ऐसी हो, यदि आप हरियावले पहाड़ हों तो
 मैं उस पहाड़ पर रहने वाला मोर बनूँ क्योंकि मोर की सब से अधिक प्रीति हरियावले
 पहाड़ के साथ होती है। यदि आप चन्द्रमा हो तो मैं चकोर बनूँ।
 गुरु अर्जुन देव जी महाराज वर्णन करते हैं :
 प्रभ तुझ बिना नही होर ॥ मनि प्रीति चंद चकोर ॥ (पन्ना ८३८)
 हे प्रभु जी! मेरी प्रीति आप के बिना किसी और के साथ नहीं है। मेरे मन
 की आप के साथ प्रीति ऐसी है जैसी प्रीति चकोर की चन्द्रमा के साथ है।
 माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि ॥
 तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ॥१॥ रहाउ ॥
 हे प्रभु जी! यदि आप मुझ से प्रीति नहीं तोड़ोगे तो मैं भी आप से प्रीति नहीं
 तोड़ूँगा। आप से प्रीति तोड़ कर मैं और किसके साथ जोड़ूँगा?
 जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ॥
 जउ तुम तीरथ तउ हम जाती ॥२॥
 यदि प्रभु जी आप दीपक हो तो मैं उस दीपक में जगने वाली बाती बनूँ।
 यदि आप तीर्थ हो तो मैं उस तीर्थ का यात्री बनूँ।
 साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ॥

तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ॥३॥

हे प्रभु जी ! मैंने संसार की झूठी प्रीति त्याग कर आप के साथ सच्ची प्रीति जोड़ी है और आप के साथ सच्ची प्रीति जोड़ कर और अन्य सभी से तोड़ ली है।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

प्रभ की प्रीति सदा सुखु होइ ॥ (पन्ना ३११)

प्रभु के साथ प्रीति करने से सदा सुख प्राप्त होता है।

जह जह जाउ तहा तेरी सेवा ॥

तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा ॥४॥

हे प्रभु जी ! मैं जहाँ जहाँ जाता हूँ आप की ही सेवा और सिमरन करता हूँ।

आप जैसा इस संसार में कोई और मालिक देव नहीं है।

तुमरे भजन कटहि जम फांसा ॥

भगति हेत गावै रविदासा ॥५॥५॥

प्रभु जी, आप का सिमरन यमदूतों की फाँसी को काट देता है। सतगुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि मैं आप जी की प्रेमा-भक्ति के लिए ही आप जी के गुण गाता हूँ।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कोई गावै को सुणै हरि नामा चितु लाइ ॥

कहु कबीर संसा नहीं अंति परम गति पाइ ॥

(पन्ना ३३५)

कोई भी जीव हरि के गुण श्रद्धा सहित मन लगाकर गाए या सुने, सतिगुरु

कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं कि इसमें कोई शंका नहीं कि ऐसा बड़े भाग्य वाला जीव अन्त समय जरूर ही मुक्ति प्राप्त करेगा।

शब्द १९

जल की भीति पवन का थंभा रक्त बुंद का गारा ॥

हाड मास नांड़ी को पिंजरू पंखी बसै बिचारा ॥१॥

प्राणी किआ मेरा किआ तेरा ॥

जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥

राखहु कंध उसारहु नीवां ॥

साढे तीन हाथ तेरी सीवां ॥२॥

बंके बाल पाग सिर डेरी ॥

इहु तनु होइगो भसम की डेरी ॥३॥

ऊचे मंदर सुंदर नारी ॥

राम नाम बिनु बाजी हारी ॥४॥

मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा ॥

तुम सरनागति राजा रामचंद कहि रविदास चमारा ॥५॥६॥

(पन्ना ६५९)

सतगुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों की अस्थिरता का व्यान करते

हुए पावन उपदेश देते हैं कि जीव के शरीर की रचना पाँच तत्त्वों से हुई है। संसार में जीव का रहना वृक्ष के पक्षी की तरह है, इस लिए सब जीवों को भेद-भाव से मुक्त होकर प्रभु का नाम सिमरन करना चाहिए।

जल की भीति पवन का थंभा रक्त बुंद का गारा ॥

हाड मास नांड़ी को पिंजरू पंखी बसै बिचारा ॥१॥

जीव का शरीर पाँच तत्त्वों से बना है। जिसमें पानी की दीवार और हवा की स्तम्भ है। माता के रक्त और पिता के वीरज (अग्नि) का गारा लगा हुआ है। हड्डियों, मास (मिट्टी) और नसों (आकाश) का पिंजर बना हुआ है, जिसमें आत्मा रूपी पक्षी विचारा रहता है।

प्राणी किआ मेरा किआ तेरा ॥

जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥

हे जीव ! इस संसार में क्या मेरा और क्या तेरा है। जीव का इस संसार में रहना वृक्ष के पक्षी की तरह है। जैसे कोई पक्षी आकाश में उड़ता है और रात काटने के लिए किसी वृक्ष पर ठहरता है और सुबह होते ही उड़ जाता है।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :

राम कोइ न किस ही केरा ॥

जैसे तरवरि पंखि बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥ (पन्ना १७३)

इस विचार की प्रौढ़ता करते हुए सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं

बिरख बसेरो पंखि को तैसो इहु संसार ॥ (पन्ना ३३७)

जीव का इस संसार में रहना पक्षी के वृक्ष पर ठहरने के समान है जो रात गुज़ार कर उड़ जाता है।

राखहु कंध उसारहु नीवां ॥

साढे तीन हाथ तेरी सीवां ॥२॥

जीव इस संसार में रहने के लिए गहरी नींव खोद कर दीवारें और महल बनाता है पर अन्त समय सब कुछ यहीं छोड़ कर चला जाता है। इस जीव के हिस्से में केवल साढ़े तीन हाथ धरती आती है जिस पर जीव का अन्तिम संस्कार किया जाता है।

सतगुरु कबीर साहिब जी इसी सम्बन्ध में वर्णन करते हैं कि यदि जगह बढ़ भी जाए तो पौने चार हाथ हो जाएगी।

कबीर कोठे मंडप हेतु करि काहे मरहु सवारि ॥

कारजु साढे तीन हाथ घनी त पउने चारि ॥

(पन्ना १३७६)

बंके बाल पाग सिर डेरी ॥

इहु तनु होइगो भसम की डेरी ॥३॥

जीव प्रभु को भूलाकर सुंदर बाल संवार कर सिर पर टेढ़ी पगड़ी बाँधता है पर अन्त समय यह शरीर मिट्टी की डेरी बन कर रह जाता है।

ऊंचे मंदर सुंदर नारी ॥

राम नाम बिनु बाजी हारी ॥४॥

यदि जीव के पास ऊंचे महल हों और उसमें सुंदर स्त्री हो तो भी प्रभु के नाम के बिना अमूल्य मनुष्य जन्म की बाजी हार जाता है।

मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा ॥

तुम सरनागति राजा रामचंद्र कहि रविदास चमारा ॥५॥६॥

जीव का विकारों से साथ होने के कारण स्वभाव, संगत और जीवन नीच बन जाता है। सतगुरु रविदास चमार कहते हैं कि हे सब के राजा प्रभु जी, मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मेरे ऊपर कृपा करो।

शब्द २०

चमरटा गांठि न जनई ॥

लोगु गठावै पनही ॥१॥ रहाउ ॥

आर नही जिह तोपउ ॥

नही रांबी ठाउ रोपउ ॥१॥

लोगु गांठि गांठि खरा बिगूचा ॥

हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा ॥२॥

रविदास जपै राम नामा ॥

मोहि जम सिउ नाही कामा ॥३॥७॥

(पन्ना ६५९)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को उपदेश देते हैं कि जो जीव इस शरीर से झूठी प्रीति त्याग कर प्रभु का नाम सिमरन करता है वह यमदूतों के भय से मुक्त हो जाता है।

चमरटा गांठि न जनई ॥

लोगु गठावै पनही ॥१॥ रहाउ ॥

चमड़े से बने हुए शरीर के साथ मैं झूठी प्रीति करना नहीं जानता। सांसारिक लोग मेरे पास शरीर रूप जूते गँठवाने भाव पदार्थों के साथ झूठी गाँठ पाने के लिए आते हैं।

आर नही जिह तोपउ ॥

नही रांबी ठाउ रोपउ ॥१॥

मेरे पास तीक्ष्ण बुद्धि रूपी आर नहीं है जिसके साथ मैं इस शरीर रूप झूठी गाँठ-तुप करूँ और न ही मेरे पास राँबी भाव काट कर उल्टी सीधी धोखे भरी बातों वाली शिक्षा है, जिस से पदार्थ रूप चमड़े की टाँकी को छील कर और सँवार कर शरीर रूप जूते पर लगा सकूँ भाव संसार के साथ सच्ची प्रीति कर सकूँ।

लोगु गांठि गांठि खरा बिगूचा ॥

हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा ॥२॥

सांसारिक लोग इस शरीर से झूठी प्रीति जोड़ कर और झूठे संसार से प्रीति कर खुआर भाव दुःखी हो रहे हैं पर मैंने झूठे शरीर और सांसारिक पदार्थों से प्रीति नहीं

की। प्रभु के साथ सच्ची प्रीति करके उसके पास पहुँच गया हूँ भाव उसमें विलीन हो गया हूँ।

रविदास जपै राम नामा ॥

मोहि जम सिउ नाही कामा ॥३॥७॥

सतगुरु रविदास जी महाराज उच्चारण करते हैं कि मैंने प्रभु का नाम जप कर सच्ची प्रीति जोड़ ली है जिस कारण अब मेरा यमदूतों के साथ कोई लेन-देन नहीं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कहत कबीर अवर नहीं कामा ॥

हमरै मन धन राम को नामा ॥४॥४॥ (पन्ना ६९२)

संसार में प्रभु के नाम के बिना और किसी के साथ हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरे मन में प्रभु के नाम का श्रेष्ठ धन है।

शब्द २१

धनासरी भगत रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि

अब पतीआरु किआ कीजै ॥

बचनी तोर मोर मनु मानै जन कउ पूरनु दीजै ॥१॥

हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने ॥

कारन कवन अबोल ॥ रहाउ ॥

बहुत जनम बिछुरे थे माधउ इहु जनमु तुम्हारे लेखे ।

कहि रविदास आस लागि जीवउ चिर भइओ दरसनु देखे ॥२॥१॥

(पन्ना ६९४)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को विनम्रता धारण कर इस मनुष्य जन्म को परमात्मा के लेखे लगाने का पावन उपदेश देते हैं।

हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि

अब पतीआरु किआ कीजै ॥

प्रभु के आगे प्रार्थना करते हैं कि परमात्मा जी मेरे जैसा इस संसार में कोई

गरीब नहीं है और आप जैसा गरीबों पर दया करने वाला कोई दयालु नहीं है। अब आप मेरी क्या परख कर रहे हो?

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

दीन दइआलु क्रिपाल दमोदर भगति बछल भै हारी ॥ (पन्ना १७१)

आप गरीबों पर दयालु कृपालु, भक्तों के प्यारे, दुखों और पापों का नाश करने वाले हो।

बचनी तोर मोर मनु मानै जन कउ पूरनु दीजै ॥१॥

हे प्रभु जी! आप जी के सत्य-ज्ञान रूपी वचनों पर मेरा मन पसीज गया है और इस के लिए मुझे अपने दास को सम्पूर्ण ज्ञान देना करो जी।

हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने ॥

कारन कवन अबोल ॥ रहाउ ॥

सारे संसार में रमे हुए राम जी मैं आप पर बार बार बलिहार जाता हूँ, पर क्या कारण है कि आप मेरे साथ बोलते नहीं?

सतगुरु नामदेव जी महाराज वर्णन करते हैं कि :

बलि बलि जांउ हउ बलि बलि जांउ ॥ (पन्ना ७२७)

हे प्रभु मैं आप जी से बार-बार बलिहार जाता हूँ।

बहुत जनम बिछुरे थे माधउ इहु जनमु तुम्हारे लेखे ।

हे प्रभु जी आप से बिछुड़े हुए बहुत जन्म गुजर गए हैं पर यह मनुष्य जन्म मैंने आप जी को समर्पित कर दिया है।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

किरत करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥ (पन्ना १३३)

हे प्रभु जी! हम किये हुए कर्मों के कारण आप जी से बिछुड़ गए हैं, इस लिए कृपा करके मुझे अपने साथ मेल लो जी।

कहि रविदास आस लागि जीवउ

चिर भइओ दरसनु देखे ॥२॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे प्रभु जी, मैं आप जी के दर्शनों की आशा में जी रहा हूँ क्योंकि आप जी के दर्शन किये हुए बहुत समय हो गया है, इस लिए कृपा कर मुझे दर्शन दो जी।

शब्द २२

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो
स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ ॥
मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ
रसन अंग्रित राम नाम भाखउ ॥१॥
मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै ॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै ॥२॥ रहाउ ॥
साध संगति बिना भाउ नही उपजै
भाव बिनु भगति नही होई तेरी ॥
कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ
पैज राखहु राजा राम मेरी ॥२॥ ॥२॥

(पन्ना ६१४)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को प्रभु से ऐसी आनंदमय प्रीति करने का पावन उपदेश देते हैं जिस प्रीति में जीव (चित्त, आँखें, कानों, जिह्वा और मन के कारण) प्रभु के रंग में रंग हो कर प्रभु में विलीन हो जाता है ।

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो
स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ ॥

सतगुरु रविदास महाराज जी प्रभु के साथ अपनी अटूट प्रीति का वर्णन करते हैं कि हे प्रभु जी ! मैं मन में आपका सिमरन करता हूँ और कानों से आप जी का पावन यश सुनकर आनन्द से भरपूर हो गया हूँ ।

मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ
रसन अंग्रित राम नाम भाखउ ॥१॥

मैं अपने मन को भँवरा बनाकर आपके चरण-कमलों को अपने हृदय में बसाता हूँ, उनसे श्रेष्ठ रस प्राप्त करता हूँ और अपनी रसना से आप जी के अमृत राम नाम को उच्चारण करता हूँ ।

मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै ॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै ॥२॥ रहाउ ॥
हे गोबिंद प्रभु जी ! आप से मेरी प्रीति कभी भी कम न हो क्योंकि यह प्रीति

मैंने अपना जीवन अर्पण कर मंहगे मोल से प्राप्त की है ।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कंचन सिउ पाईए नही तोलि ॥

मनु दे राम लीआ है मोलि ॥ (पन्ना ३२७)

प्रभु को सोने से तोल कर नहीं पाया जाता, अपना मन देकर आपा भाव मिटा कर मोल लिया जाता है ।

साध संगति बिना भाउ नही उपजै

भाव बिनु भगति नही होई तेरी ॥

हे प्रभु जी ! संत महापुरुषों की संगति के बिना आप जी के प्रति प्रेम पैदा नहीं होता और प्रेम के बिना आप जी की भक्ति नहीं हो सकती ।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

भगति बिनु बिरथे जनमु गइओ ॥

साधसंगति भगवान भजन बिनु कही न सचु रहिओ ॥ (पन्ना ३३६)

परमात्मा की भक्ति के बिना अमूल्य जन्म व्यर्थ जा रहा है । साधु संगत और प्रभु के भजन के बिना सच्चाई कहीं भी नहीं है ।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

साध संगति बिनु तरिओ न कोई ॥ (पन्ना ३७३)

संत महापुरुषों की संगत के बिना इस संसार रूप समुद्र में से कोई भी जीव पार नहीं हो सकता ।

कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ

पैज राखहु राजा राम मेरी ॥२॥ ॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी प्रभु के आगे विनती करते हैं कि सच्चे पातशाह जी ! आप मेरी लाज रखो जी ।

शब्द २३

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥

हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे ॥१॥ रहाउ ॥

नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा

नामु तेरा केसरो ले छिटकारे ॥
 नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो
 घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे ॥१॥
 नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती ॥
 नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ॥
 नाम तेरे की जोति लगाई
 भइओ उजिआरो भवन सगलारे ॥२॥
 नामु तेरो तागा नामु फूल माला
 भार अठारह सगल जूठारे ॥
 तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ
 नामु तेरा तूही चवर ढोलारे ॥३॥
 दस अठा अठसठे चारे खाणी
 इहै बरतणि है सगल संसारे ॥
 कहै रविदास नामु तेरो आरती
 सतिनामु है हरि भोग तुहारे ॥४॥३॥

(पन्ना ६९४)

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को सभी वहम-भ्रमों से मुक्त होकर
 प्रभु का नाम जपने रूप सच्ची आरती करने का पावन उपदेश देते हैं ।

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥
 हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे ॥१॥ रहाउ ॥
 हे प्रभु जी ! तेरा नाम सिमरन करना ही तेरी सच्ची आरती है और आप जी
 का नाम सिमरन ही आप को स्नान करवाना है । आप जी के नाम के बिना संसार के
 सभी पसारे (कारोबार) झूठे हैं ।

नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा
 नामु तेरा केसरो ले छिटकारे ॥

आप जी का नाम जपना ही आरती के लिए आसन लगाना है और आप का
 नाम जपना ही केसर रगड़ने वाला उरसा है भाव केसर रगड़ने वाली शिला है और
 आप का नाम जपना ही आप पर केसर छिड़कना है ।

नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो

घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे ॥१॥

आप जी का नाम ही पानी है, आप जी का नाम ही चंदन है और आप जी
 का नाम ही चंदन रगड़कर आपको चढ़ाना है ।

नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती ॥
 नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ॥

आप का नाम जपना ही आरती के लिए दीपक है, नाम रूपी बाती दीपक में
 डाली है और आप का नाम ही उस दीपक में डाला गया तेल है ।

नाम तेरे की जोति लगाई
 भइओ उजिआरो भवन सगलारे ॥२॥

आप के नाम की ही ज्योति जगाई है जिस से सब भवनो भाव खण्डों-
 ब्रह्मण्डों में आप जी के नाम का प्रकाश हो रहा है ।

नामु तेरो तागा नामु फूल माला
 भार अठारह सगल जूठारे ॥

आप का नाम ही धागा है और आप का नाम ही फूलों की माला है । आप के
 नाम के बिना सारी वनस्पति के अठारह भार अपवित्र हैं ।

तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ
 नामु तेरा तूही चवर ढोलारे ॥३॥

हे प्रभु जी आप जी की पैदा की हुई सृष्टि में मैं आपको क्या अर्पण करूँ ?
 आप जी का नाम ही आप जी पर चंवर झुलाना है ।

दस अठा अठसठे चारे खाणी
 इहै बरतणि है सगल संसारे ॥

अठारह पुराणों, अठाहट तीर्थों और चारों खाणियों (अंडज, जेरज, सेतज
 और उत्भुज) में सारा संसार विचर रहा है ।

कहै रविदास नामु तेरो आरती
 सतिनामु है हरि भोग तुहारे ॥४॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे हरि जी ! आप जी का
 नाम ही मेरे लिए आपकी सच्ची आरती करना है । हे हरि जी सतिनाम का ही आप जी
 को भोग लगाता हूँ ।

शब्द २४

जैतसरी बाणी भगता की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

नाथ कछूअ न जानउ ॥

मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ॥१॥ रहाउ ॥

तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी ॥

हम कहीअत कलिजुग के कामी ॥१॥

इन पंचम मेरो मनु जु बिगारिओ ॥

पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥२॥

जत देखउ तत दुख की रासी ॥

अजौं न पत्याइ निगम भए साखी ॥३॥

गोतम नारि उमापति स्वामी ॥

सीसु धरनि सहस भग गांमी ॥४॥

इन दूतन खलु बधु करि मारिओ ॥

बडो निलाजु अजहु नही हारिओ ॥५॥

कहि रविदास कहा कैसे कीजै ॥

बिन रघुनाथ सरनि का की लीजै ॥६॥ १ ॥

(पन्ना ७१०)

मानवता को पावन उपदेश देते हुए सतगुरु रविदास जी जीव के जीवन पर शक्तिशाली पाँच विकारों का प्रभाव बताते हैं कि इन पाँचों के प्रभाव कारण जीव प्रभु से दूर रहता है। प्रभु का नाम सिमरन करने से ही जीव इन पाँचों के प्रभाव से मुक्त हो जाता है।

नाथ कछूअ न जानउ ॥

मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ॥१॥ रहाउ ॥

हे प्रभु जी! मैं कुछ भी नहीं जानता क्योंकि मेरा मन माया के हाथ बिक चुका है।

तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी ॥

हम कहीअत कलिजुग के कामी ॥१॥

प्रभु जी! आप संसार के मालिक कहे जाते हो। हम सांसारिक जीव माया के

प्रभाव के कारण कल्युग के विषई कहे जाते हैं।

इन पंचम मेरो मनु जु बिगारिओ ॥

पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥२॥

इन पाँच विकारों ने मेरे मन को इतना विगाड़ा है कि यह पल-पल में मुझ को आप जी से दूर ही दूर लेजा रहे हैं।

जत देखउ तत दुख की रासी ॥

अजौं न पत्याइ निगम भए साखी ॥३॥

माया के प्रभाव के कारण जहाँ भी देखता हूँ वहीं दुःख ही दुःख भाव दुखों की खान हैं। यह मन विश्वास नहीं करता कि यह संसार दुखों का घर है चाहे सभी धार्मिक ग्रंथ इस बात की गवाही देते हैं।

गोतम नारि उमापति स्वामी ॥

सीसु धरनि सहस भग गांमी ॥४॥

इस माया के प्रभाव के कारण ही गौतम ऋषि, उसकी स्त्री अहल्या, उमापति-पार्वती का पति शिव जी और स्वामी ब्रह्मा यह सभी ही माया के दूतों (काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार इत्यादि) की लपेट में आए।

गौतम ऋषि की स्त्री अहल्या जिसके साथ इन्द्र ने छल किया, पार्वती का पति शिव भी माया के रूप पर मोहित हुआ और ब्रह्मा अपनी ही बेटी पर मोहित हो गया था। जहाँ भी उसकी बेटी जाती उस ओर ही वह अपना नया मुख बनाकर सामने आ जाता। तंग आकर उसकी बेटी आकाश की ओर चली गई। ब्रह्मा ने अपना पाँचवा मुख आकाश की ओर बनाया तो शिव ने ब्रह्मा का सिर काट दिया। गौतम ऋषि के शाप के कारण इन्द्र के शरीर पर अनेकों स्त्रियों के गुप्त अंग प्रकट हो गए। यह सभी माया के कारण दुखी हुए हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:

सरपनी ते ऊपरि नहीं बलीआ ॥

जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ ॥ (पन्ना ४८०)

माया रूप नागिन से बढ़कर कोई शक्तिशाली नहीं है, जिसने ब्रह्मा, विष्णु और शिव इत्यादि को छला है।

इन दूतन खलु बधु करि मारिओ ॥

बडो निलाजु अजहु नही हारिओ ॥५॥

माया के इन पाँच दूतों ने जीव को बांध कर मारा है पर जीव बड़ा निर्लज है
कि वह अब भी इनको नहीं छोड़ता।

कहि रविदास कहा कैसे कीजै ॥

बिन रघुनाथ सरनि का की लीजै ॥६॥ १ ॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि इन से बचने के लिए क्या
किया जाए? और कहाँ जाया जाए? प्रभु के बिना किस की शरण ली जाय? भाव
परमात्मा की शरण लेकर ही जीव माया के प्रभाव से मुक्त हो सकता है।

सतगुरु कबीर साहिब जी माया के प्रभाव से बचने का उपाय बताते हैं कि:

साधू संगति दीओ रलाइ ॥ पंच दूत ते लीओ छडाइ ॥ (पन्ना ३३१)

कहि कबीर जिसु उदरु तिसु माइआ ॥

तब छूटे जब साधू पाइआ ॥५॥ ॥२३॥ (पन्ना ११६०)

साधुओं की संगत करके और प्रभु का नाम सिमरन कर यह जीव माया और
माया के पाँच दूतों से मुक्त हो जाता है।

शब्द २५

राग सूही बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सह की सार सुहागनि जानै ॥

तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै ॥

तनु मनु देइ न अंतरु राखै ॥

अवरा देखि न सुनै अभाखै ॥१॥

सो कत जानै पीर पराई ॥

जा कै अंतरि दरदु न पाई ॥१॥ रहाउ ॥

दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी ॥

जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी ॥

पुरसलात का पंथु दुहेला ॥

संगि न साथी गवनु इकेला ॥२॥

दुखीआ दरद वंदु दरि आइआ ॥

बहुतु पिआस जवाबु न पाइआ ॥

कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी ॥

जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी ॥३॥ ॥१॥

(पन्ना ७९३)

सतगुरु रविदास महाराज जी जीव रूप स्त्री को दुर्लभ जन्म में प्रभु पति की
प्राप्ति कर सुहागन बन कर लोक-परलोक का सुख प्राप्त करने का पावन उपदेश देते
हैं।

सह की सार सुहागनि जानै ॥

तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै ॥

जैसे पति की संभाल को सुहागिन जानती है जो अपने अहंकार को छोड़कर
पति के साथ आनन्द मनाती है, ऐसे ही पति-प्रभु की संभाल तत्त्ववेत्ता रूप महात्मा
सखियां ही जानती हैं जो अहंकार को त्याग कर पति प्रभु के साथ आनन्द मनाती हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:

धन सुहागनि जो पीअ भावै ॥

कहि कबीर फिरि जनमि न आवै ॥ (पन्ना ४६३)

वह सुहागिन ही धन्यता के योग्य है जो अपने प्यारे पति को भाती है और
फिर जन्म मरण में नहीं आती ॥

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं:

धनु सोहागनि जो प्रभु पछानै ॥

मानै हुकमु तजै अभिमानै ॥

प्रिअ सिउ राती रलीआ मानै ॥ (पन्ना ७३७)

वह जीव रूप स्त्री सुहागिन है जो प्रभु-पति की पहचान करती है। प्रभु के
आदेश को मान कर अभिमान (अहंकार) छोड़ कर प्यारे पति के साथ आनन्द मनाती
है।

बाबा फरीद जी महाराज वर्णन करते हैं:

जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हा झाक न होर ॥ (पन्ना १३८४)

जिन्हों का नाम सुहागवती होता है भाव जिन्हें पति प्रभु मिल जाता है
उनकी दृष्टि किसी और तरफ नहीं जाती।

तनु मनु देइ न अंतरु राखै ॥

अवरा देखि न सुनै अभाखै ॥१॥

जैसे सुहागिन स्त्री अपने पति के बिना न तो किसी और की तरफ (मंद भावना से) देखती है और न ही औरों के वचन (बुरी मत) सुनती है। न ही किसी और के साथ बोलती है। इसी तरह महात्मा रूप स्त्रियां प्रभु पति के आगे अपना तन-मन अर्पण कर देती हैं और कोई भेद नहीं रखतीं। पति-प्रभु के बिना किसी देवी-देवता की बात में ध्यान नहीं देतीं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:

तनु मनु धनु ग्रिहु सउपि सरीरु

सोई सुहागिन कहै कबीरु ॥ (पन्ना ३२८)

जिस ने तन, मन, धन और घर भाव सब कुछ प्रभु को सौंप दिया है वही स्त्री सुहागिन कही जाती है।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं:

सुनि सखीए प्रभ मिलण नीसानी ॥

मनु तनु अरपि तजि लाज लोकानी ॥ (पन्ना ७३७)

जीव रूप सुहागिन स्त्री के पति को मिलने की यही पहचान है कि वह प्रभु के आगे तन मन अर्पण कर दुनिया की लज्जा को त्याग देती है।

सो कत जानै पीर पराई ॥

जा कै अंतरि दरदु न पाई ॥१॥ रहाउ ॥

जिन दुहागिन स्त्रियों ने अपने प्रभु-पति से प्रेम नहीं किया वो सुहागिन स्त्रियों वाले पति-प्रेम के वियोग के दुःख को नहीं जान सकतीं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:

लागी होइ सु जानै पीर ॥ (पन्ना ३२७)

जिस को वियोग की पीड़ा लगी हुई है उस पीड़ा को वही जानता है।

सतगुरु रामदास जी महाराज वर्णन करते हैं:

जिसु लागी पीर पिरंम की सो जानै जरीआ ॥ (पन्ना ४४९)

जिसको प्रेम की पीड़ा लगी है वही उस पीड़ा को जानता है।

दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी ॥

जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी ॥

जैसे कुटिला स्त्री दुखी होती हुई मायके और ससुराल घर दोनों तरफ के

सुख से वंचित रह जाती है ऐसे ही प्रभु को भूली हुई जीव रूप स्त्री लोक-परलोक के सुखों से वंचित रहती है।

पुरसलात का पंथु दुहेला ॥

संगि न साथी गवनु इकेला ॥२॥

पुरसलात का रास्ता कठिन है। मरने के बाद जीव आत्मा को अकेले ही यह रास्ता तय करना पड़ता है। जहाँ कोई साथी-मित्र नहीं जाता।

बाबा फरीद जी वर्णन करते हैं:

वाट हमारी खरी उडीणी ॥

खंनिअहु तिखी बहुतु पिईणी ॥ (पन्ना ७९४)

इस पुल को पार करने वाला मार्ग तलवार की धार से भी तीखा और बाल से भी बारीक होता।

दुखीआ दरद बंदु दरि आइआ ॥

बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ ॥

हे दुखों के ज्ञाता प्रभु जी! मैं दुखी होकर आप के दर पर आया हूँ मेरे मन में आपके दर्शनों की बहुत अभिलाशा है, पर मुझे आप जी ने कोई उत्तर नहीं दिया भाव मुझे दर्शन नहीं दिए।

कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी ॥

जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि हे प्रभु जी! मैं आप की शरण में आया हूँ। आप जैसा चाहें उसी तरह मेरा उद्धार करें जी।

शब्द २६

जो दिन आवहि सो दिन जाही ॥

करना कूचु रहनु थिरु नाही ॥

संगु चलत है हम भी चलना ॥

दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना ॥१॥

किआ तू सोइआ जागु इआना ॥

तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥१॥ रहाउ ॥

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै ॥

सभ घट भीतरि हाटु चलावै ॥

करि बंदिगी छाडि मै मेरा ॥

हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ॥२॥

जनमु सिरानो पंथु न सवारा ॥

सांझ परी दहदिस अंधिआरा ॥

कहि रविदास निदानि दिवाने ॥

चेतसि नाही दुनीआ फनखाने ॥३॥२॥ (पन्ना ७९३)

सतगुरु रविदास महाराज जी संसार की अस्थिरता का वर्णन करते हुए जीव

को अज्ञानता रूप नींद से जाग कर प्रभु का नाम जप कर अपना पंथ संवारने का पावन
वैरागमयी उपदेश देते हैं।

जो दिन आवहि सो दिन जाही ॥

करना कूचु रहनु थिरु नाही ॥

जैसे जो दिन आता है वह बीत जाता है इसी तरह जीव की आयु भी कम
होती जा रही है। सभी ने संसार को छोड़ कर चले जाना है। संसार में सदैव रहने
वाला कोई भी जीव नहीं है।

सतगुरु नानक देव जी वर्णन करते हैं :

दरि कूच कूचा करि गए अवरेभि चलणहार ॥ (पन्ना ६४)

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

किआ मागउ किछु थिरु न रहाई ॥

देखत नैन चलिओ जगु जाई ॥ (पन्ना ४७१)

प्रभु जी! आप से क्या माँगू क्योंकि इस संसार में कुछ भी स्थिर रहने वाला
नहीं है। आखों के सामने संसार नाश होता दिखाई दे रहा है।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

अउध घटै दिनसु रैणारे ॥ (पन्ना १३)

दिन रात बीतने के साथ साथ जीव की आयु भी कम होती जाती है।

संगु चलत है हम भी चलना ॥

दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना ॥१॥

जीव के साथी-मित्र साथ छोड़कर संसार से जा रहे हैं। हमें भी एक दिन

संसार छोड़कर जाना पड़ेगा। जिस मृत्यु को जीव दूर समझता है वह मृत्यु जीव के सिर
पर खड़ी है।

किआ तू सोइआ जागु इआना ॥

तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥१॥ रहाउ ॥

हे जीव! तू इस संसार में अज्ञानता रूपी नींद में क्यों सोया हुआ है? तू इस
सांसारिक जीवन को सच समझ बैठा है, वास्तव में यह संसार नाशवान् है। इस लिए
भाई अज्ञानता रूपी नींद से जाग कर प्रभु को याद कर।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

जागत सोवत बहु प्रकार ॥

गुरमुख जागै सोई साक ॥ (पन्ना १११४)

संसार के लोक अनेकों प्रकार से जागते और सोते हैं पर गुरमुख परमेश्वर के
भजन में जागते हैं, वही श्रेष्ठ हैं।

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै ॥

सभ घट भीतरि हाटु चलावै ॥

जिस परमात्मा ने जीवन दिया है, वही प्रभु सभी को धैर्य भी पहुँचाता है।
प्रभु सभी शरीरों में सभी इन्द्रियों को चला रहा है।

सतगुरु अर्जुन देव जी महाराज जी वर्णन करते हैं :

सैल पथर महि जंत उपाए

ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥१॥ (पन्ना ४१५)

प्रभु ने पत्थरों में भी जीव-जंतु पैदा किये हैं, उनके खान-पान का प्रबन्ध
पहले से ही किया गया है।

करि बंदिगी छाडि मै मेरा ॥

हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ॥२॥

हे जीव! तू मैं-मेरी के अहंकार को छोड़कर एक प्रभु की बंदगी कर। अमृत
समय उठकर अपने हृदय में प्रभु के नाम का सिमरन कर।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कहतु कबीरु कोई नही तेरा ॥

हिरदै रामु की न जपहि सवेरा ॥३॥१॥ (पन्ना ६५६)

हे जीव ! इस संसार में तेरा कोई नहीं है, अमृत समय उठकर तू राम नाम का
 सिमरन क्यों नहीं करता? भाव मनुष्य जन्म में तेरा भजन किया ही काम आएगा।
 गुरु नानक देव जी महाराज वर्णन करते हैं :
अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ॥ (पन्ना २)
 भाव हे जीव ! अमृत समय उस परमात्मा के सच्चे नाम की उपमा का विचार
 कर।
 जनमु सिरानो पंथु न सवारा ॥
 सांझ परी दहदिस अंधिआरा ॥
 हे जीव ! तेरा मनुष्य जन्म निष्फल ही व्यतीत हो रहा है। तुमने नाम सिमरन
 कर अपना परलोक का रास्ता संवारा नहीं। जैसे शाम होने से दसों ही दिशाओं में भाव
 सभी ओर अंधेरा हो जाता है ऐसे ही जब मृत्यु रूपी शाम होती है तो दस इन्द्रियों में
 अंधकार हो जाता है, उस समय तुझसे प्रभु का नाम नहीं जपा जाएगा।
 कहि रविदास निदानि दिवाने ॥
 चेतसि नाही दुनीआ फनखाने ॥३॥२॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि नादान पुरुष ! तेरे जीवन का
 अंत समय आ रहा है, पर तुम्हें यह बात याद नहीं है कि यह संसार नाशवान् है। इस
 लिए हे भाई उस प्रभु का सिमरन कर जो लोक परलोक में काम आएगा।

शब्द २७
 ऊचे मंदर साल रसोई ॥
 एक घरी फुनि रहनु न होई ॥१॥
 इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी ॥
 जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी ॥१॥ रहाउ ॥
 भाई बंध कुटंब सहेरा ॥
 ओइ भी लागे काढु सवेरा ॥२॥
 घर की नारि उरहि तन लागी ॥
 उह तउ भूतु भूतु करि भागी ॥३॥
 कहि रविदास सभै जगु लूटिआ ॥

हम तउ एक राम कहि छूटिआ ॥४॥३॥ (पन्ना ७१४)
 सतगुरु रविदास जी महाराज मनुष्य शरीर की नश्वरता का वर्णन करते हुए
 वैरागमयी उपदेश देते हैं कि जीव सांसारिक बंधनों में फँस कर परमात्मा को भुलाकर
 अपना अनमोल जन्म व्यर्थ गंवा रहा है। इस लिए गुरु जी जीव को प्रभु का नाम
 जपकर सभी बंधनों से मुक्त होने का उपाय बताते हैं।
 ऊचे मंदर साल रसोई ॥
 एक घरी फुनि रहनु न होई ॥१॥
 हे जीव ! तू इस संसार में रहने के लिए ऊँचे महल और उसमें सुंदर रसोई घर
 बनाता है पर जब अंत समय आएगा तो एक घड़ी भर भी इन महलों में रहना नहीं
 मिलेगा।
 सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :
आई तलब गोपाल राइ की
माइआ मंदर छोडि चलिओ। (पन्ना ४७१)
 जिस समय प्रभु का बुलावा आएगा तो उसी समय माया के मन्दिर छोड़ कर
 जाना पड़ेगा।
 बाबा फरीद जी वर्णन करते हैं :
फरीदा कोठे मंडप माडीआ उसारदे भी गए ॥
कूडा सउदा करि गए गोरी आइ पए ॥४॥६॥ (पन्ना १३८०)
 घर, मंडप और महल बनाते हुए जीव इस संसार को छोड़ कर चले गए।
 सारी जिंदगी झूठा व्यपार करते मर गए और अन्त में कब्र में आकर पड़ गए।
 इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी ॥
 जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी ॥१॥ रहाउ ॥
 हे जीव ! तेरा शरीर घास की झोपड़ी की भांति है। जैसे घास की झोपड़ी
 जल कर मिट्टी में मिल जाती है ऐसे ही शरीर ने भी मरने के बाद मिट्टी में मिल जाना
 है।
 भाई बंध कुटंब सहेरा ॥
 ओइ भी लागे काढु सवेरा ॥२॥
 हे जीव ! जिन्हें तू अपना समझता है, वह परिवार के सदस्य और मित्र
 इत्यादि, जिस समय मृत्यु आयेगी तो यह सब सुबह-सुबह घर से निकालने लगेंगे।

भाव मृतक शरीर का अन्तिम संस्कार करने की तैयारी करने लग जाते हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

घट फूटे कोऊ बात न पूछै काढहु काढहु होई ॥ (पन्ना ४७८)

घर की नारि उरहि तन लागी ॥

उह तउ भूतु भूतु करि भागी ॥३॥

घर की स्त्री जो इसकी छाती के साथ लग कर रहती थी, जिस समय जीव मर जाता है वो भी उसको भूत-भूत कह कर दूर भागती है।

कहि रविदास सभै जगु लूटिआ ॥

हम तउ एक राम कहि छूटिआ ॥४॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि सारा संसार माया के प्रभाव के कारण लुटा जा रहा है पर मैं प्रभु का नाम जप कर छूट गया हूँ।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

हम देखत जिनि सभु जगु लूटिआ।

कहु कबीर मैं राम कहि छूटिआ ॥३॥ (पन्ना ३२१)

हम देख रहें हैं कि माया ने सारे संसार को लूटा हुआ है। मैं प्रभु का नाम जप कर इस माया के बंधन से छूट गया हूँ। जो जीव संसार में आकर प्रभु का नाम जपता है वो जीव माया के प्रभाव से मुक्त होकर प्रभु में विलीन हो जाता है।

शब्द २८

बिलावलु बाणी रविदास भगत की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी ॥

असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ॥१॥

तु जानत मै किछु नही भवखंडन राम ॥

सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥१॥ रहाउ ॥

जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु ॥

ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ॥२॥

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै ॥

जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥३॥१॥ (पन्ना ८५८)

सतगुरु रविदास महाराज जी उस समय की प्रचलित मानव विरोधी दशा का वर्णन करते हुए मानवता को उपदेश देते हैं कि प्रभु का नाम सिमरन करने वाला चाहे सांसारिक तौर पर ऊंचा या नीचा गिना जाता हो पर प्रभु की शरण प्राप्त करने से उसके सभी कार्य पूर्ण हो जाते हैं।

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी ॥

असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ॥१॥

हे प्रभु जी! जिस समाज में मैं पैदा हुआ हूँ, उसको मानवीय अधिकारों से वंचित रखा गया है। हमारी ऐसी गरीबी और दयनीय दशा को देख कर सभी हँसते थे। पर प्रभु जी आप जी का नाम जपने के कारण अब अठारह सिद्धियाँ मेरे हाथ की हथेली पर आ गई हैं। यह सब आप जी की ही कृपा है।

तु जानत मै किछु नही भवखंडन राम ॥

सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥१॥ रहाउ ॥

हे जन्म मरण के चक्र से मुक्त करने वाले प्रभु जी! आप कण-कण के ज्ञाता हो, पर मैं कुछ भी नहीं जानता। जो जीव आप की शरण लेते हैं उन सब की सभी मनोकामनाएँ पूरी होती हैं।

जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु ॥

ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ॥२॥

हे प्रभु जी! जो जीव आप की शरण ग्रहण कर लेता है उसे कोई भी दुख और कर्मों का भार नहीं रहता। आप की शरण प्राप्त करने से सभी जीव ऊँचे, नीचे, अमीर, गरीब न अगम्य भवसागर से पार हो जाते हैं।

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै ॥

जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि हे प्रभु जी! आप की कथा अकथनीय है, इस लिए बहुत कथाएँ किस लिए करनी हैं। यह सांसारिक जीव आप को कौन सी उपमा दे सकते हैं? जो आप हैं केवल आप हैं। आप के सामान कोई दूसरा है ही नहीं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

सहज की अकथ कथा है निरानी ॥ (पन्ना ३३३)

प्रभु की सहज अवस्था की कथा अकथनीय और निराली है।
 सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :
 तेरी अकथ कथा कथनु न जाई ॥ (पन्ना ६१०)
 प्रभु जी आप की कथा अकथनीय है जो कथन नहीं की जा सकती।

शब्द २९

जिह कुल साधु बैसनो होइ ॥
 बरन अबरन रंकु नही ईसुरु
 बिमल बासु जानीए जगि सोइ ॥१॥ रहाउ ॥
 ब्रह्मन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
 होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥१॥
 धनि सु गाउ धनि सो ठाउ धनि पुनीत कुटंब सभ लोइ ॥
 जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस
 होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ॥२॥
 पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबर अउरु न कोइ ॥
 जैसे पुरैन पात रहै जल समीप
 भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥३॥ ॥२॥

(पन्ना ८५८)

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि जिस कुल में प्रभु का
 सिमरन करने वाले सन्त होते हैं वह कुल इस संसार में सर्वोत्तम मानी जाती है चाहे वो
 कुल वर्णों एवं अवर्णों में से हो। प्रभु के भक्त की समानता महाविद्वान पण्डित, सारे
 संसार पर विजय प्राप्त करने वाला शूरवीर, सारे संसार पर राज्य करने वाला छत्रपति
 राजा एवं और कोई भी नहीं कर सकता।

जिह कुल साधु बैसनो होइ ॥
 बरन अबरन रंकु नही ईसुरु
 बिमल बासु जानीए जगि सोइ ॥१॥ रहाउ ॥

जिस कुल में प्रभु का नाम सिमरन करने वाले संत महापुरुष पैदा होते हैं
 चाहे वह वर्णों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और चाहे वर्णों के बाहर हों, वह कंगाल

नहीं है बल्कि वह प्रभु का स्वरूप है और उसकी पवित्र वासना सारे संसार में जानी
 जाती है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :
 कबीर सोई कुल भली जा कुल हरि को दासु ॥ (पन्ना १३७०)
 वही कुल भली है जिस कुल में हरि का दास पैदा होता है।
 ब्रह्मन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
 होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥१॥

चाहे कोई जीव ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, क्षत्रिय, डोम (मरासी), चांडाल और
 मलेच्छ किसी भी मन वाला हो पर वह प्रभु का भजन कर पुनीत (पवित्र) हो जाता
 है। वह आप भी पार होता है और अपनी दोनों कुलों ननिहाल-दादके और अनंत
 जीवों को भी नाम जपा कर पार कर देता है।

धनि सु गाउ धनि सो ठाउ धनि पुनीत कुटंब सभ लोइ ॥

धन्य वह गाँव है, धन्य वह स्थान है और धन्य ही वह पवित्र परिवार है
 जिस में संत जन्म लेते हैं।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

अठसठि तीरथ जह साध पग धरहि ॥
 तह बैकुण्ठु जह नामु उचरहि ॥ (पन्ना ८१०)

जिस स्थान पर संत चरण डालते हैं वहाँ अठासठ तीर्थों के समान पुण्य प्राप्त
 होते हैं और जिस स्थान पर भजन करते हैं वहाँ बैकुण्ठ-धाम बन जाता है।

जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस
 होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ॥२॥

जो जीव प्रभु के उत्तम नाम रूप रस को पीते हैं वह और झूठे सांसारिक रसों
 का त्याग कर देते हैं। वह प्रभु के नाम रूपी रस में मग्न होकर संसार के मीठे
 (विषरूप) रसों का त्याग कर देते हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

राम नाम छाडि अंप्रित काहे बिखु खाई ॥ (पन्ना ६१२)

रामनाम रूप अमृत को छोड़ कर संसार के मीठे विष रूपी रस क्यों खाते हो?

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

हरि रसु पीवत सद ही राता ॥

आन रसा खिन महि लहि जाता ॥ (पन्ना ३७७)

जो जीव प्रभु का नाम रूपी रस पीकर प्रभु के नाम रूपी रंग में रंगा जाता है

उसके बाकी झूठे रस एक क्षण (पल) में खत्म हो जाते हैं।

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबर अउरु न कोइ ॥

संसार में सब से महान् विद्वान् पण्डित, सब से बड़ा शूरवीर, चक्रवर्ती

बादशाह एंव और कोई भी प्रभु की भक्ति करने वाले की समानता नहीं कर सकता।

जैसे पुरैन पात रहै जल समीप

भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥३॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते करते हैं कि जैसे पुरैण बूटी जल के

पास रह कर भी जल से निरलेप रहती है, इसी तरह संत संसार में रहते हुए भी संसार

से निरलेप रहते हैं।

शब्द ३०

रागु गोंड बाणी रविदास जीउ की घरु २

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मुकंद मुकंद जपहु संसार ॥

बिनु मुकंद तनु होइ अउहार ॥

सोई मुकंद मुकति का दाता ॥

सोई मुकंद हमारा पित माता ॥१॥

जीवत मुकंदे मरत मुकंदे ॥

ता के सेवक कउ सदा अनंदे ॥१॥ रहाउ ॥

मुकंद मुकंद हमारे प्रानं ॥

जपि मुकंद मसतकि नीसानं ॥

सेव मुकंद करै बैरागी ॥

सोई मुकंदु दुरबल धन लाधी ॥२॥

एकु मुकंद करै उपकारु ॥

हमरा कहा करै संसारु ॥

मेटी जाति हुए दरबारि ॥

तुही मुकंद जोग जुगतारि ॥३॥

उपजिओ गिआन हुआ परगास ॥

करि किरपा लीने कीट दास ॥

कहु रविदास अब त्रिसना चूकी ॥

जपि मुकंद सेवा ताहू की ॥४॥१॥ (पन्ना ८७५)

सतगुरु रविदास महाराज जी सांसारिक जीवों को भेद-भाव से ऊपर उठ कर

मुक्तिदाता प्रभु मुकंद का नाम जपने का पावन उपदेश देते हैं।

मुकंद मुकंद जपहु संसार ॥

बिनु मुकंद तनु होइ अउहार ॥

हे संसार के लोगो! जन्म-मरण के चक्र से मुक्त करने वाले प्रभु का मुकंद

नाम जपो। उस मुकंद नाम जपने के बिना यह मनुष्य तन निष्फल चला जाता है।

सतगुरु कबीर जी महाराज वर्णन करते हैं :

इसु धन कारिण सिव सनकादिक खोजत भये ऊदासी ॥

मनि मुकंदु जिहबा नारायनु परै न जम की फासी ॥ (पन्ना ३३६)

प्रभु के नाम रूप श्रेष्ठ धन को खोजते हुए शिव जी और ब्रह्मा के चारों पुत्र

संसार से उपराम हो गए। हे मन! तू उस मुक्ति देने वाले नारायण परमात्मा का नाम

जप जिस से तुम्हें यमदूतों की फाँसी नहीं लगेगी।

सोई मुकंद मुकति का दाता ॥

सोई मुकंद हमारा पित माता ॥१॥

वह मुकंद मुक्ति दाता है, वही मुकंद मेरा पिता और माता है।

जीवत मुकंदे मरत मुकंदे ॥

ता के सेवक कउ सदा अनंदे ॥१॥ रहाउ ॥

जो जीव जीते हुए मरने तक मुक्ति दाता प्रभु का नाम सिमरन करता है, उस

परमेश्वर के सेवक को हमेशा ही आनंद अनुभव होता रहता है।

मुकंद मुकंद हमारे प्रानं ॥

जपि मुकंद मसतकि नीसानं ॥

उस परमात्मा का मुकंद नाम मेरे प्राण है। मस्तक के अच्छे भाग्य के अनुसार

जीव उस मुकंद नाम को जपता है।

सेव मुकंद करै बैरागी ॥

सोई मुकंदु दुरबल धन लाधी ॥२॥

संसार से वैरागी होकर जीव मुकंद प्रभु का सिमरन सेवा करता है। उस

मुकंद का नाम ही मुझ दीन को श्रेष्ठ धन मिला है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

हमरा धनु माधउ गोबिंदु धरणीधरु इहै सार धनु कहीअै ॥

(पन्ना ३३६)

हमारा धन माधउ, गोबिंद, धरणिधर प्रभु रूप है और इसी श्रेष्ठ धन का कथन किया है।

एकु मुकंद करै उपकारु ॥

हमरा कहा करै संसारु ॥

एक मुकंद ने मेरे ऊपर उपकार किया है, इस लिए संसार के लोग मेरा कुछ नहीं विगाड़ सकते।

मेटी जाति हुए दरबारि ॥

तुही मुकंद जोग जुगतारि ॥३॥

जाति भाव को दूर करके ही जीव उस मुकंद के दरबार में निवास कर सकता है। हे मुकंद जी! आप ही संसार के जीवों को युगों-युगान्तरों से पार लगाने वाले हो।

उपजिओ गिआन हुआ परगास ॥

करि किरपा लीने कीट दास ॥

जिस समय जीव के हृदय में प्रभु के ज्ञान का प्रकाश होता है, प्रभु कृपा करके कीड़े जैसे जीव को भी अपना दास बना लेता है।

कहु रविदास अब त्रिसना चूकी ॥

जपि मुकंद सेवा ताहू की ॥४॥१॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैं मुकंद का सिमरन करता हूं। प्रभु के सिमरन और सेवा के कारण सब तृष्णाएँ समाप्त हो गई हैं।

शब्द ३१

जे ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै ॥

जे ओहु दुआदस सिला पूजावै ॥

जे ओहु कूप तटा देवावै ॥

करै निंद सभ बिरथा जावै ॥१॥

साध का निंदकु कैसे तरै ॥

सरपर जानहु नरक ही परै ॥१॥ रहाउ ॥

जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति ॥

अरपै नारि सीगार समेति ॥

सगली सिंप्रिति स्रवनी सुनै ॥

करै निंद कवनै नही गुनै ॥२॥

जे ओहु अनिक प्रसाद करावै ॥

भूमि दान सोभा मंडपि पावै ॥

अपना बिगारि बिरांना सांढै ॥

करै निंद बहु जोनी हांढै ॥३॥

निंदा कहा करहु संसारा ॥

निंदक का परगटि पाहारा ॥

निंदकु सोधि साधि बीचारिआ ॥

कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ ॥४॥२॥ (पन्ना ८७५)

सतगुरु रविदास महाराज जी पावन उपदेश देते हैं कि जीव को कभी भी संत महापुरुषों की निंदा नहीं करनी चाहिए। संत महापुरुषों की निंदा करने वाला चाहे जितने चाहे उपाय कर ले, उसे नरक में जरूर जाना ही पड़ता है।

जे ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै ॥

जे ओहु दुआदस सिला पूजावै ॥

जे ओहु कूप तटा देवावै ॥

करै निंद सभ बिरथा जावै ॥१॥

यदि कोई जीव अठासठ तीर्थों पर स्नान करे, बारह शिलाओं की पूजा भी करे, चाहे वो जीवों की भलाई के लिए कुएँ और तालाब बनाए, यदि वह संतों की निंदा करता है तो यह सब कुछ किया हुआ निष्फल जाता है।

साध का निंदकु कैसे तरै ॥

सरपर जानहु नरक ही परै ॥१॥ रहाउ ॥

संतों की निंदा करने वाला जीव कैसे भवसागर पार कर सकता है? उस को

अवश्य ही नरक में जाना पड़ता है ।
 सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :
 संता कउ मति कोई निंदहु संत रामु है इकौ ॥ (पत्रा ७१३)
 हे सांसारिक जीवो! संत महापुरुषों की कभी भी निंदा न करो क्योंकि संत
 और प्रभु एक रूप हैं ।
 जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति ॥
 अरपै नारि सीगार समेति ॥
 सगली सिंग्रिति स्रवनी सुनै ॥
 करै निंद कवनै नही गुनै ॥२॥
 यदि कोई कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण के समय स्नान करे और अपनी स्त्री को
 सोलह शृंगार से सजा कर दान कर दे, सताईस स्मृतियों को कानों से सुन ले, पर यदि
 वह जीव संत महापुरुषों की निंदा करता है तो उस द्वारा यह सब किया किसी काम
 नहीं आता ।
 जे ओहु अनिक प्रसाद करावै ॥
 भूमि दान सोभा मंडपि पावै ॥
 अपना बिगारि बिरांना सांढै ॥
 करै निंद बहु जोनी हांढै ॥३॥
 यदि कोई जीव अनेकों प्रकार के प्रसाद बना कर लोगों को भोजन कराए,
 अपनी भूमि दान कर सारे संसार में प्रशंसा प्राप्त कर ले और अपना काम बिगाड़ कर
 दूसरों का काम सँवार दे फिर भी यदि वह संत महापुरुषों की निंदा करता है तो उसको
 बहुत सी योनियों में भटकना पड़ता है ।
 सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :
 संत का दोखी जनमै मरे ॥ (पत्रा २८०)
 संत महापुरुषों की निंदा करने वाला जीव जन्म लेता और मरता रहता है ।
 निंदा कहा करहु संसारा ॥
 निंदक का परगटि पाहारा ॥
 निंदकु सोधि साधि बीचारिआ ॥
 कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ ॥४॥२॥
 हे संसार के लोगो! तुम संत महापुरुषों की निंदा क्यों करते हो? सारे संसार

मे संत महापुरुषों की निंदा करने वाले का अपमान होता है । सतगुरु रविदास जी वर्णन
 करते हैं कि निंदा करने वाले जीव के कर्मों का फल अच्छी तरह विचार कर यह निर्णय
 किया है कि उस को अवश्य ही नरक में जाना पड़ेगा ।
 सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :-
 संत कै दूखनि नरक महि पाइ ॥ (पत्रा २७१)
 संत महापुरुषों की निंदा करने वाला नरक में जाता है ।

 शब्द ३२
 रामकली बाणी रविदास जी की ॥
 १ओ सतिगुर प्रसादि ॥
 पड़ीऐ गुनीऐ नाम सभु सुनीऐ अनभउ भउ न दरसै ॥
 लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥
 देह संसै गांठि न छूटै ॥
 काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटै ॥१॥ रहाउ ॥
 हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥
 गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥
 कहु रविदास सभै नही समझसि भूल परे जैसे बउरे ॥
 मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥
 (पत्रा १७३)
 सतगुरु रविदास महाराज जी पावन उपदेश देते हैं कि पारस रूप गुरु के
 उपदेश के बिना चाहे जीव प्रभु के नाम को पढ़ता रहे, गुणों की विचार करता रहे और
 सभी नामों को सुनता रहे पर फिर भी इस को ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती और झूठे
 अहंकार का नाश नहीं होता ।
 पड़ीऐ गुनीऐ नाम सभु सुनीऐ अनभउ भउ न दरसै ॥
 लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥
 गुरु के उपदेश के बिना चाहे जीव अपने आप प्रभु का नाम पढ़े, गुणों की
 विचार करे और सभी नाम सुने पर वह ज्ञान स्वरूप प्रभु के दर्शन नहीं कर सकता ।
 सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :-
 किआ पड़ीऐ किआ गुनीऐ ॥ किआ बेद पुरानां सुनीऐ ॥

पड़े सुने किआ होई ॥ जह सहज न मिलिओ सोई ॥१॥ (पन्ना ६५५)

प्रभु के नाम के बिन क्या पढ़ना, क्या विचार करना और क्या वेद-पुराणों का सुनना, इस सब का क्या लाभ है? जब तक प्रभु के सहज ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती।

इस जीव का पढ़ना, गुणना, सुनना निष्फल है।

जैसे लोहा तब तक शुद्ध स्वर्ण नहीं बन सकता जब तक उसका पारस के साथ स्पर्श नहीं होता ऐसे ही जीव तब तक विकारों से मुक्त होकर शुद्ध नहीं हो सकता जब तक गुरु रूप पारस के साथ उसका मिलाप नहीं होता।

सतगुरु कबीर साहिब जी भी इस सम्बन्ध में फरमाते हैं :

पारस कै संगि तांबा बिगरिओ सो तांबा कंचनु होइ निबरिओ ॥३॥

संतन संगि कबीरा बिगरिओ ॥ सो कबीरु रामै होई निबरिओ ॥

(पन्ना ११५८)

पारस के साथ स्पर्श होने से जैसे ताँबा स्वर्ण बन जाता है, उसी तरह मैं (कबीर) संत महापुरुषों के साथ के कारण प्रभु का रूप हो गया हूँ।

देह संसै गांठि न छूटै ॥

काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटै ॥१॥ रहाउ ॥

हे प्रभु जी! गुरु के उपदेश के बिना जीव की अज्ञानता के कारण भ्रम की गांठ नहीं खुलती क्योंकि भ्रम के कारण ही पाँच विकार (काम, क्रोध, माया, अहंकार और ईर्ष्या) मिल कर जीव को लूट रहे हैं भाव प्रभु से दूर ले जा रहे हैं।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

काम क्रोध माया मद मतसर इह संपै मो माही ॥ (पन्ना १७१)

काम, क्रोध, माया, अहंकार, ईर्ष्या यह जीव को सता रहें हैं।

हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥

गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥

पाँच विकारों के प्रभाव के कारण सांसारिक जीव इस भ्रम में फँसे हुए हैं कि हम बड़े पण्डित हैं, हम बड़े योगी और सन्यासी हैं, बड़े कवि हैं, उत्तम कुल में पैदा हुए ज्ञानी हैं, गुणवान हैं, महान् शूरवीर हैं, बड़े दानी हैं। ऐसी अहंकार वाली बुद्धि का नाश नहीं होता, जिस कारण जीव के भ्रम की निवृत्ति नहीं होती।

सतगुरु कबीर जी इस बात की प्रौढ़ता करते हुए अपनी वाणी में फरमाते हैं:

पंडित गुणी सूर हम दाते

इहु करहि बड हम ही ॥ (गुड़ी कबीर जी पन्ना ३३४)

कहु रविदास सभै नही समझसि भूल परे जैसे बउरे ॥

मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि सभी लोगों को समझाने पर भी यह समझते नहीं क्योंकि यह लोग प्रभु को बावरे जीवों की तरह भूल चुके हुए हैं, पर मुझे केवल एक नारायण का ही सहारा है। इस लिए मेरे जीवन रूपी प्राण धन्यता योग्य हैं।

शब्द ३३

रागु मारु बाणी रविदास जीउ की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥

गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथे छत्रु धरै ॥१॥ रहाउ ॥

जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै ॥

नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥१॥

नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥

कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥२॥१॥

(पन्ना ११०६)

सतगुरु रविदास जी महाराज जिन्होंने ने इस संसार में क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन किया, उस समाज में पैदा हुए जिस समाज को पढ़ने, लिखने, सुनने, अच्छे कपड़े पहनने इत्यादि मानवीय अधिकारों से वंचित रखा गया था। विश्व में एकता, समानता, भाईचारा, स्थापित करने के लिए दबे-कुचले समाज के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए और जाति के अभिमानियों का अहंकार तोड़ने के लिए पानी में पत्थर तैराने पड़े, गंगा उल्टी बहानी पड़ी, अपना कँधा चीर कर चारों युगों के जनेऊ दिखावे पड़े, राजाओं-महाराजाओं और कट्टरपंथियों के साथ लोहा लिया। अंतः उनके क्रांतिकारी, मानववादी और परमार्थी विचारों से प्रभावित होकर चारों वर्ण उनके चरणों में नतमस्तक हुए और सम्मान के लिए गुरु रविदास जी की बनारस में हाथी पर सोने की पालकी में बिठाकर शोभा यात्रा निकाली गई। उस समय सतगुरु रविदास जी महाराज ने प्रभु की उपमा करते हुए यह पावन शब्द उच्चारण किया :

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥

गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ॥१॥ रहाउ ॥

हे मेरे सुंदर प्रभु जी! ऐसा कौतक आप जी के बिना और कौन कर सकता है? हे गरीबों को निवाजने वाले प्रभु जी, आज मेरे माथे पर आप जी ने यश रूपी छत्र झूला दिया है।

जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै ॥

नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥१॥

जिसके स्पर्श से जगत के लोग अपवित्र हो जाते थे, आपकी कृपा से आज हर ओर मेरी जय जय कार हो रही है। मेरा गोविंद नीचों को ऊंच कर देता है और ऐसा करते समय वह किसी से नहीं डरता।

नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥

कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥२॥१॥

सतिगुरु नामदेव जी, सतिगुरु कबीर जी, सतिगुरु त्रिलोचन जी, सतिगुरु सधना जी, सतिगुरु सैन जी प्रभु का नाम जप कर तर गये हैं और जिन के सामाजिक, क्रांतिकारी एवं परमार्थी विचारों के आगे राजा-महाराजा और कट्टरपंथियों को झुकना पड़ा और जिन से प्रेरणा लेकर असंख्य जीव इस संसार में से पार हो गए। सतगुरु रविदास महाराज जी संतों को संबोधन करते हुए कहते हैं कि हे संत महापुरुषों सुनो! उस प्रभु द्वारा यह सब बातें बन जाती हैं, वो जो चाहे कर सकता है।

शब्द ३४

सुखसागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जाके रे ॥

चारि पदारथ असट महा सिधि नवनिधि करतल ता कै ॥१॥

हरि हरि हरि न जपसि रसना ॥

अवर सभ छाडि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥

नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही ॥

बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥

सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी ॥

कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी ॥३॥२॥

(पन्ना ११०६)

सतगुरु रविदास जी महाराज उपदेश देते हैं कि प्रभु का नाम सुखों का समुद्र है। इस लिए जीव को देवी-देवताओं की उपासना छोड़ कर कर्म-कांडों, वहम-भ्रमों से मुक्त होकर उस प्रभु का सिमरन करना चाहिए।

सुखसागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जाके रे ॥

चारि पदारथ असट महा सिधि नवनिधि करतल ता कै ॥१॥

हे संसार के लोगों! सुखों के समुद्र प्रभु का सिमरन करो, जिस के अधीन सुरतर कल्पवृक्ष, मन ऐच्छुक फल देने वाली मणि (चिंतामणि) मनोकामना पूरी करने वाली कामधेनु गाय और चार पदार्थ काम, अर्थ, धर्म और मोक्ष, अठारह बड़ी सिद्धियाँ और नौ खजाने उस प्रभु के हाथ की हथेली पर हैं। जो जीव उस प्रभु का सिमरन करता है, उसके वश में यह सब कुछ आ जाता है।

हरि हरि हरि न जपसि रसना ॥

अवर सभ छाडि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥

हे जीव! ऐसे सुखों के समुद्र प्रभु का हरि हरि नाम रसना से क्यों नहीं जपता? तू संसार की झूठी रचना के वचनों को रसना से त्याग कर प्रभु का सिमरन कर।

नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही ॥

बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥

अनेकों प्रकार पुराण और वेदों की विधियाँ सभी चौतीस अक्षरों में लिखे गए हैं। महाऋषि वेद व्यास जी ने अनेकों प्रकार के प्रसंग और वेदों की विधियों को विचार कर उनका गहराई से अध्ययन कर अंतः यह परम तत्त्व कहा है कि राम नाम के मूल्य के समान मूल्य रखने वाली दुनिया की कोई मूल्यवान वस्तु नहीं है।

सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी ॥

कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी ॥३॥२॥

प्रभु के नाम में सहज-समाधि विकारों से मुक्त होकर लगती है। और बड़े भाग्य से सहज समाधि अवस्था में पहुँच कर जीव की प्रभु से लगन लगती है। फिर उस प्रभु के दास की मति संसार में से उपराम हो जाती है और उसका मन जन्म-मरण के भय से मुक्त हो जाता है।

शब्द ३५

खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि ॥
चरनारबिंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ॥१॥
रे चित चेति चेत अचेत ॥ काहे न बालमीकहि देख ॥
किसु जाति ते किह पदहि अमरिओ राम भगति बिसेख ॥१॥ रहाउ ॥
सुआन सत्रु अजातु सभ ते क्रिस्न लावै हेतु ॥
लोगु बपुरा किआ सराहै तीनि लोक प्रवेश ॥२॥
अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु गए हरि कै पास ॥
ऐसे दुरमति निसतरे तू किउ न तरहि रविदास ॥३॥१॥

(पन्ना ११२४)

सतगुरु रविदास जी महाराज जीव को प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं कि संसार में वह जीव श्रेष्ठ है जो प्रभु की भक्ति करता है। गुरु जी सांसारिक जीवों को ब्रह्मज्ञानी त्रिकाल दूरदर्शी महाऋषि बाल्मीकि जी की प्रभु भक्ति से प्रेरणा लेकर अपना जीवन सफल करने का पावन उपदेश देते हैं।

खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि ॥
चरनारबिंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ॥१॥

चाहे कोई जीव ऊँची समझी जाति कुल का हो और छः कर्म (शिक्षा प्राप्त करनी और पढ़ाना, यज्ञ करना और कराना, दान करना और कराना) करता हो, पर यदि उसके हृदय में हरि प्रभु की भक्ति नहीं है और उसे प्रभु के चरण कमलों की कथा नहीं भाती तो वह जीव चंडाल के समान है।

रे चित चेति चेत अचेत ॥ काहे न बालमीकहि देख ॥
किसु जाति ते किह पदहि अमरिओ राम भगति बिसेख ॥१॥ रहाउ ॥

हे अचेत चित ! मैं तुझे याद कराता हूँ कि तू प्रभु को अपने हृदय में याद कर। हे जीव ब्रह्मज्ञानी महाऋषि बाल्मीकि जी की ओर क्यों नहीं देखता? उनके जीवन से प्रेरणा क्यों नहीं लेता। उनका आगमन उस जाति में हुआ जिसको शूद्र समझा जाता था पर उस प्रभु की भक्ति कर किस पद पर पहुँच गए हैं, अर्थात् अमर होकर प्रभु का रूप हो गए हैं।

सुआन सत्रु अजातु सभ ते क्रिस्न लावै हेतु ॥

लोगु बपुरा किआ सराहै तीनि लोक प्रवेश ॥२॥

महाऋषि बाल्मीकि जी जिन्होंने लोभ रुपी कुत्ते एवम अन्य विकारों पर विजय प्राप्त की हुई थी और जिनके जाने पर पाण्डवों का यज्ञ संपूर्ण हुआ उस समय कृष्ण जी एवं सब ने महाऋषि बाल्मीकि जी के चरण धोकर चरणामृत पिया और उनसे प्रेम किया। लोगों ने महाऋषि बाल्मीकि जी की महिमा क्या करनी है? उनकी महिमा तो तीन लोक (मात लोक, पाताल लोक और आकाश लोक) में हो रही है। खण्डों-ब्रह्माण्डों में उनकी जय-जय कार होती है।

अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु गए हरि कै पास ॥

ऐसे दुरमति निसतरे तू किउ न तरहि रविदास ॥३॥१॥

अजामल महापापी, पिंगला जनकपुरी की वेश्या, लुभत शिकारी और कुंचर हाथी यह सभी प्रभु का नाम जप कर परमात्मा के पास चले गए।

कथा अजामल की

अजामल एक ब्राह्मण का पुत्र था और कनौज शहर का रहने वाला था। उसका पिता राज-पुरोहित था। अजामल हर रोज शहर में गुरु के पास शिक्षा प्राप्त के लिए आश्रम जाया करता था। अजामल जो भी शब्द पढ़ता सुनता था, वह याद (कंठ) कर लेता था। उसने 20 साल की शिक्षा 10 साल में प्राप्त कर ली थी। उसकी शिक्षा पूर्ण होने वाली थी। अजामल के गुरु हमेशा उसे शहर न जाने का आदेश देते थे। एक दिन उसने गुरु के आदेश की उल्लंघन किया और शहर में जाकर वेश्याओं के बाजार में से गुजरा। वेश्याओं के जवान रूप ने उसको मोहित किया और सुंदर स्त्रियों की ओर देखता हुआ घर चला गया। घर जाकर उसका मन पढ़ने और पाठ याद करने में न लगा। इसी प्रकार वह कुछ दिन वेश्याओं के बाजार में से गुजरता रहा। एक दिन जब वह बाजार से गुजरा तो सुंदर स्वरूप कलावती ने उस की बाजू पकड़ ली और उसको अपने जाल में फँसा कर पाप कर्मों में लगा लिया। अब अजामल का मन पाठ पढ़ने में नहीं लगता था। उसके गुरु ने उसके पिता को बुलाकर कहा कि अब आप अजामल की शादी कर दो। उस का अब कुँवारा रहना योग्य नहीं है। अजामल का बाप राज-पण्डित था और उसने झटपट ही थोड़े दिनों में प्रबन्ध कर अजामल की शादी कर दी।

अजामल की अर्धांगिनी बहुत गुणवती थी पर अजामल ने वेश्या की प्रीति न छोड़ी। अजामल का बाप परलोक सिधार गया। उसके बाद राजा ने अजामल को

राज-पण्डित बना दिया। राज पण्डित बन कर उसकी जिम्मेदारिया बढ़ गई। वह धर्म, समाज और राज्य का मुखिया बन गया, पर उसने उच्च पदवी मिलने पर भी वेश्या के पास जाना न छोड़ा। सारे शहर में राज-पंडित की वेश्या के पास जाने की खबर फैल गई और यह बात राजा को भी पता चल गई। राजा ने अजामल को अपने पास बुलाकर समझाया कि राज-पंडित को ऐसे छोटे कर्म नहीं करने चाहिए और वेश्या के पास जाना छोड़ देना चाहिए। अजामल ने उत्तर दिया कि मैं कलावती से प्रेम करता हूँ, इस लिए मैं उसे नहीं छोड़ सकता। राजा ने अजामल और कलावती को अपने राज्य से निकाल दिया। अब अजामल और कलावती शहर से बाहर झोपड़ी बना कर रहने लगे। अब अजामल हर-रोज जंगल में जाता और शिकार कर वापिस आ जाता। उनके घर छः पुत्र थे और सातवां पुत्र पैदा होने वाला था।

एक दिन देवनेत से ऐसा हुआ कि कुछ साधू महात्मा अजामल के घर आ गए, पर कलावती के पास संतों को देने के लिए कुछ नहीं थी। जब अजामल घर आया तो वह जानवर मार कर लाया तो कलावती ने इस दिन जानवर न बनाने दिया। उसने बोला कि हे पति देव! पहले ही पता नहीं किस कुकर्म के कारण हमारी यह दशा हुई है। हमें आज मांस नहीं पकाना चाहिए, हो सकता है कि महात्मा कोई अच्छा वचन कर जाएं और हमारा कल्याण हो जाए। पति पत्नी ने पके हुए दाने और गुड़ संत महापुरुषों को भेंट किया और दोनों ने विनती की कि महाराज जी हमने बहुत छोटे कर्म किए हैं, हमारा कल्याण करो। प्रभु रुपी संत महापुरुषों ने वचन किया कि आपके घर सातवां पुत्र पैदा होगा, उसका नाम नारायण रखना और उसके साथ प्रीति करने से आप का उद्धार होगा। यह उपदेश कर साधू चले गए। जब उस लड़के ने जन्म लिया तो अजामल ने संत महापुरुषों के वचन अनुसार उसका नाम नारायण रखा और उस से बहुत प्रीति की। वह चलता-फिरता, उठता बैठता अपने पुत्र नारायण को ही पुकारता रहता। जब अजामल का अन्त समय आया तो धर्मराज के यमदूत उसको लेने आए। यमदूतों का भयानक रूप देखकर वह बहुत डर गया और वह अपनी रक्षा के लिए अपने पुत्र नारायण को पुकारने लगा। धर्मराज के यमदूतों ने समझा कि यह तो कोई प्रभु का भक्त है, जो अन्त समय नारायण प्रभु को पुकारता है। इस लिए धर्मराज के यमदूत पीछे हट गए और प्रभु के दूत सुंदर विमान में बिठा कर अजामल को सच्चखण्ड में ले गए। इस प्रकार अजामल पापी का संत महापुरुषों की कृपा से उद्धार हुआ।

पिंगला की कथा

जनकपुरी में पिंगला नाम की अतिसुंदर रूपवती वेश्या निवास करती थी। एक दिन वह वेश्या फुलेल और सुगन्धि लगाकर और फूलों की सेज अपने मकान में सजा कर और सोलह शृंगार कर प्रातः काल से संध्या तक अपने द्वार पर बैठी रही, ता कि कोई पुरुष आए और विषय सुख करे। सुबह से संध्या हो गई उस दिन कोई भी उसके पास न आया। इस तरह जब पहर रात हो गई तब वेश्या जो फूलों की सेज बिछा रखी थी उस पर लेट गई। पर कामदेव की मित्रता और द्रव की वृष्णा से उसको निद्रा न आई और सेज से उठकर फिर द्वार पर आई। इसी तरह आते जाते आधी रात बीत गई और कोई भी पुरुष उसके पास नहीं आया। उस समय पिंगला को अपने आप ऐसा ज्ञान उत्पन्न हुआ जो कोई दस हजार वर्ष तक तप करे तो भी उसको ऐसा तान प्राप्त न हो। अपने मन में विचार कर कहने लगी, मूर्ख मन! तू बड़ा दुष्ट है। जो पुरुष काम, क्रोध और जन्म-मरण के वश में है उससे तू प्रीति की इच्छा करता है और नारायण प्रभु जो कण-कण में विद्यमान है और हमेशा निकट रहता है, सभी लोगों की आशा पूरी करता है, सारी सृष्टि को भोजन देता है और कभी मुख से कुछ नहीं कहता। जब कि कोई मनुष्य एक दिन देता है और दूसरे दिन ही सुना देता है। भगवान कैसे दीन दयाल, करुणा के सागर हैं, उनके भक्तों के मन में जो कुछ इच्छा होती है वे तो सभी पूरी कर देते हैं और ऐसा अचल पदार्थ भक्तों को देते हैं वो जो कभी कम नहीं होता, दिन प्रतिदिन बढ़ता रहता है। जो भगवान दीन-दयाल, करुणा-निधान और संतों के हितकारी है उसको तो मन से भुला दिया है और जो मनुष्य शरीर से हाड मांस और विष्य का कीड़ा है उसके नौ द्वार हैं सभी द्वारों से दुर्गन्ध बहती है, इसी से सुख मानना और इस सँसार को सत्य कर जानना सो धिक्कार है मेरी बुद्धि पर जो मैंने इस जन्म को व्यर्थ ही गाँवा दिया। अब मैं भगवान की निष्काम भक्ति करूँगी जिससे मेरा लोक परलोक सँवर जाए। भगवान भी ऐसे भक्तों के वश में हैं जिनकी कोई इच्छा नहीं होती। लक्ष्मी जी ने भगवान की सेवा की तो कृपा कर भगवान उसके हृदय में वस गए। जो स्त्री पुरुष की इच्छा करती है वो बड़ी मूर्ख है। जब तक स्त्री पुरुष जिंदा रहेंगे तब तक दोनों मिलकर भोजन करते हैं परन्तु जो पुरुष मृत्यु को प्राप्त होगा वह क्या देगा? आज से जो कुछ भगवान मुझे देगा उसको खा कर संतोष करूँगी और भगवान का सिमरन करूँगी। पिंगला ने अपने मन में कहा कि आज तक मुझ से धर्म का कोई कार्य नहीं हुआ, न ही तीर्थ तप किये और दान किया। मैं नहीं जानती मुझ

जैसी पापिन और चण्डाल को ऐसी श्रेष्ठ बुद्धि कहाँ से प्राप्त हो गई। आज द्रव प्राप्त नहीं हुआ जिस कारण ऐसी बुद्धि हुई यह बात झूठी है। पहले बहुत से दिन ऐसे हुए हैं जब द्रव भी प्राप्त नहीं हुआ था और ऐसी बुद्धि प्राप्त नहीं हुई थी। आज तो भगवान जी की बड़ी कृपा मुझ पर हुई है। उस दिन उस वेश्या को ज्ञान महात्मा दत्तात्रय जी के चरणों से प्राप्त हुआ था। उनके दर्शनों से उसकी बुद्धि निर्मल हो गई। उसने प्रभु की भक्ति की और उसको प्रभु की प्राप्ति हो गई।

कथा-फंदक की

एक लोधिया नाम का फंदक था। उसके पास एक कूकरी थी। कूकरी भी उस तरह की थी वो जो खुशबू लेकर पक्षी को पकड़ लेती थी। लोधिया उस कूकरी और जाल को लेकर सदा ही पक्षियों को पकड़ा करता था। लोधिया पक्षियों को जंगल से पकड़कर बाज़ार में बेचकर अपनी उपजीविका चलाता था। एक दिन लोधिया शिकार को गया, उस दिन उसे कोई भी पक्षी प्राप्त नहीं हुआ। तब लोधिया उदास और चिंतित हो गया। जंगल में पक्षियों की भाल की। खोजता हुआ एक स्थान पर आया जहाँ पदम आसन लगा कर अंतर्मुखी ध्यान में लीन होकर एक तपस्वी भक्ति कर रहा था। लोधिया ने उसके समक्ष खड़ा होकर अपने मन में वर मांगते हुए कहा कि जितने भी पक्षी मुझे प्राप्त होंगे उसका आधा भाग मैं आपको भेंट करूँगा। इस तरह तपस्वी के समक्ष वर मांग कर जब शिकारी ने जंगल में जाकर जाल बिछाया तब सात पक्षी जाल में फंस गए। उन पक्षियों को लेकर तपस्वी के आगे विनती की हे मुनिवर! यह पक्षी आप ले लो। जब मुनि ने आँख खोलकर उसकी ओर देखा और कहा हे पापी यह तू क्या कार्य करता है? तुम्हें प्रभु का डर नहीं है। यह बात सुनकर लोधिया बोला हे तपस्वी! मैंने से वर माँगा था कि जो कुछ मुझे प्राप्त होगा उसका आधा भाग मैं आपको भेंट करूँगा, सो जो मुझे प्राप्त हुआ मैंने भेंट कर दिया। आधा भाग आप ले लो और आधा भाग मैं घर ले जाऊँगा। यदि आप आधे भाग से प्रसन्न नहीं हैं तो यह सारा ले लें। मैं और पक्षी पकड़ लूँगा। यदि आप इन्हें मारने से डरते हैं तो मैं मार दूँगा। यदि आप इसे स्वीकार नहीं करेंगे तो चाकू से अपना गला काट कर प्राण त्याग दूँगा। फंदक की यह बात सुनकर तपस्वी हैरान होकर बोला हे फंदक! और पक्षी पकड़ कर लाओगे तो मैं इसे स्वीकार कर लूँगा। वह पक्षी ऐसा हो जिसकी चार भुजाएँ, शंख, चक्र, गदा, पदम हाथों में धारण किया हो शीश पर मुकुट धारण किया हो, अतिसुंदर कद और कुतम्बर धारण किया हो। हे फंदक! यदि ऐसा पक्षी पकड़कर लाओगे तो मैं

तुम्हें बहुत सारा धन दूँगा। यह सुनकर फंदक ने कहा कि मैं अभी ऐसा पक्षी पकड़ कर लाता हूँ। फंदक ने सात पक्षियों को छोड़ दिया और मन में दृढ़ निश्चय कर जंगल में जाल लगा दिया। उस पक्षी के स्वरूप का ध्यान करते हुए उसने बहुत से स्थानों पर जाल लगाया पर वह पक्षी उसे कहीं नज़र न आया। इस प्रकार जंगल में घूमते घूमते तीन पहर व्यतीत हो गए। भूखा, प्यासा होने के कारण लोधिया बहुत व्याकुल हो गया। जब चौथा पहर शुरू हुआ उस समय उसकी पत्नी उसको ढूँढती हुई उसके पास आ गई। जब लोधिया ने स्त्री को पास देखा तो बहुत हैरान हुआ। उसने अपनी पत्नी को सारी बात बताई और कहा कि जब तक मैं उस पक्षी को नहीं पकड़ लेता तब तक मैं अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगा। यह बात सुनकर पत्नी ने कहा हे स्वामी! ऐसा पक्षी तो तीन काल तक हाथ नहीं आएगा। न ही इस तरह का पक्षी मैंने सुना और देखा है। आप भी अपने मन में विचार कर सोचो कि ऐसा पक्षी कभी आपने देखा या सुना है। हे मेरे सिरताज! किसी ने तुम्हें ठग बुद्धि लगाई है या तू बावला हो गया है। यदि अपना भला चाहते हो तो घर चलो रात काफी हो गई है। यह बात सुनकर लोधिया गुस्से में चाकू और कुल्हाड़ी लेकर उसका गला काटने के लिए तैयार हो गया। स्त्री ने सोचा यह पूर्ण गुस्से में है, कहीं मेरा नाश ही न कर दे यह सोच कर वो घर को चले गई। काफी समय के बाद भी लोधिया को ऐसे पक्षी की प्राप्ति न हुई। जंगल में रह कर ऐसे पक्षी के स्वरूप का ध्यान करते हुए सूर्य उदय होने तक जाल लगाकर रखा और मन में सोचता रहा कि जब पक्षी प्राप्त होगा तब ही मेरा जीवन सफल होगा। इस प्रकार सोचता हुआ भूखा, प्यासा, व्याकुल सभी तरफ ऐसे पक्षी को देखता रहा पर ऐसा पक्षी कहीं नज़र नहीं आया। दूसरे और तीसरे दिन भी ऐसे पक्षी की प्राप्ति नहीं हुई। तीसरे दिन संध्या को लकड़ियाँ इकट्ठी कर चिता बना कर जलकर मरने के लिए मन बना कर जब चिता को आग लगा कर ऊपर बैठने लगा तब भक्त वच्छल, दीन बन्धु, पतित-पावन, उसका प्रेम भाव देखकर उस पक्षी का स्वरूप धारण कर सामने खड़े हो गए। जब उस पक्षी का स्वरूप लोधिया ने देखा तब झट ही खुशी से उस पक्षी को पकड़ने के लिए उसके पीछे भागने लगा पर वह पक्षी कैसे पकड़ा जाए? हजारों साल मुनि तपस्या करते रहे और वह पक्षी कभी ध्यान में नहीं आया। लोधिया उस पक्षी के पीछे भाग-भाग कर हार गया। उसकी हड्डियाँ और घुटने टूट गए, लहू की धारा शरीर में से निकलने लगी। व्याकुल हुआ चाकू लेकर अपना गला काटने लगा। जब वह चाकू अपने गले पर चलाने ही लगा था तो उसी समय प्रभु पक्षी का रूप धारण कर

जाल में फँस गया। लोधिया बहुत प्रसन्न हुआ और पक्षी को पकड़ कर तपस्वी के पास पहुँच गया। जब तपस्वी ने भगवान को आते देखा तो उसने उठकर दोनों हाथों को जोड़ कर भगवान को नमस्कार की। तपस्वी बड़े प्रेम के साथ पक्षी रूप भगवान को आसन पर बैठाया, सम्मान सहित फंदक को भी आसन पर बैठाया। जंगल में से फूल फल लाकर भगवान के आगे रखे। कृपा निधान प्रभु चतुरभुज रूप धारण कर शंख, गदा, चक्र, पदम और माला सहित दोनों को दर्शन देते हैं और एक हाथ के साथ फंदक गले से लगाकर दूसरे हाथ से फंदक को दिलासा देते हैं जिस ने बहुत दिनों से भूखा प्यासा रह कर भारी पीड़ा सहन की थी। प्रभु ने उसको बहुत प्रेम किया और एक हाथ के साथ तपस्वी को दिलासा देते रहे। प्रभु ने दोनों को कहा कि आपको मेरा धाम प्राप्त है। इस तरह लोधिया और तपस्वी दोनों का उद्धार हुआ।

कथा दूसरे फंदक की

शिकारी का उद्धार करना और हिरनी की रक्षा करनी

एक समय की बात है कि सतगुरु रविदास जी महाराज जी एकांत जंगल में बैठकर प्रभु का सिमरन कर रहे थे, जो स्थान बारानसी में आज लहरतारा के नाम से जाना जाता है। गुरु जी के आस-पास बहुत मन भाता और प्यारा दृश्य था। उस समय गुरु जी के पास से एक हिरनी भागती हुई गुजरी, जिसके पीछे शिकारी लगा हुआ था। वह हिरनी को मारने के लिए तयार था। शिकारी ने हिरनी को अपने नियंत्रण में कर लिया था। हिरनी ने सोचा कि अब उसका जीवन मुश्किल में पड़ गया है और शिकारी उसे मार डालेगा। उसने सोचा कि अब वह अपने बच्चों को नहीं मिल सकती दूध पिलाना तो बहुत दूर की बात है। हिरनी अपने मन में ऐसा सोच कर दुखी हो रही थी और अपने बच्चों को याद कर उसकी आँखों में आंसू बहने लगे। यह देख कर शिकारी ने हिरनी से पुछा कि तेरी आँखों में आंसू आने का क्या कारण है? हिरनी ने कहा कि मुझे अपने बच्चों की याद आ रही है, इस लिए मेरी यह दशा है। शिकारी को हिरनी ने कहा हे शिकारी! तू मुझे दो पल के लिए छोड़ दे, मैं अपने बच्चों को दूध पिलाकर तेरे पास आ जाऊँगी। शिकारी ने उत्तर दिया कि यदि कोई तुम्हारी जमानत देगा तो मैं तुम्हें छोड़ सकता हूँ।

पास ही गुरु रविदास जी थे। उन्होंने शिकारी को कहा कि मैं इसकी जमानत देता हूँ और तेरे पास तब तक रहूँगा जब तक हिरनी वापिस नहीं आ जाती। शिकारी ने

दो घड़ी के लिए हिरनी को छोड़ दिया। हिरनी तेजी से भागती हुई अपने बच्चों के पास पहुँची। बच्चों ने जब देखा कि उनकी माता आ गई है तो वह अपनी माता से लिपट गए। जब वह दूध पीने लगे तो उन्होंने देखा कि उनकी माता उदास है। बच्चों ने माता को दुखी देखकर पूछा कि माता जी आपकी उदासी का क्या कारण है? तो हिरनी ने सारी बात सुनाई। बच्चों ने कहा माता जी अब हम दूध नहीं पीयेंगे बल्कि आप के साथ जाएंगे। आप से पहले हम अपनी जान देंगे, हमारे बाद ही आपकी बारी आएगी। हिरनी कुछ देर बाद अपने बच्चों के साथ जहाँ शिकारी और गुरु जी बैठे थे वहाँ पहुँच गई। हिरनी ने शिकारी को कहा कि अब इन संत महापुरुषों को छोड़ दो। हम दो घड़ी से पहले ही आप के पास पहुँच गए हैं। जब शिकारी ने हिरनी को मारने के लिए कटार का वार किया तो शिकारी का कटार वाला हाथ ऊपर रह गया। वह जड़ पत्थर के समान हो गया। उसको अपनी आँखों के सामने मृत्यु नाचती हुई दिखाई देने लगी। जब उसको ऐसे आभास हुआ तो वह मन ही मन में पश्चाताप करने लगा और बार-बार गुरु जी के आगे नमस्कार करने लगा। उसने गुरु जी से क्षमा माँगी। गुरु जी ने भविष्य में उसको ऐसा करने से मना कर दिया और सत्य का उपदेश दिया। इस प्रकार सतगुरु रविदास जी ने शिकारी का उद्धार किया।

गजेन्द्र हाथी की कथा

होता और ब्रहमा दो भाई थे। वह दोनों इक्के रहते थे और भक्ति करते थे। एक दिन दोनों एक राजा के पास दक्षिणा लेने गए। किसी कारण या स्वाभाविक होता को दक्षिणा ज्यादा मिली और ब्रहमा को कम। ब्रहमा ने सोचा कि मुझे कम और मेरे भाई को ज्यादा दक्षिणा मिली है। सारी दक्षिणा एक सी होनी चाहिए। उसने दोनों दक्षिणा को मिला कर इकट्ठी कर ली। दो हिस्से कर अपने भाई को कहने लगा एक हिस्सा ले लो।

होता: नहीं, यह नहीं हो सकता, मैं तो उतना हिस्सा लूँगा जितना मुझे मिला था। आप ने दक्षिणा इकट्ठी क्यों की?

ब्रहमा: ईर्ष्या क्यों करते हो?

होता: ईर्ष्या और लालच तो आप ने किया है। जब आप को दक्षिणा कम मिली तो आप ने दोनों एक सामान कर दीं। कितनी बुरी बात है। लालची! मुझे मेरा पूरा हिस्सा दो।

ब्रह्मा: मैं लालची हूँ तो तुम तेंदुए की तरह हो। यह मैं तुम्हें श्राप देता हूँ, तुम गंडकी नदी में तेंदुया बनकर रहोगे लालची। होता भी कम न था उसने भगवत भक्ति की थी। उसने भी ब्रह्मा को शाप दे दिया कि यदि मैं तेंदुया बनकर रहूँगा तो याद रखो कि तुम भी मस्त हाथी बनोगे और उस नदी पर पानी पीने आओगे तो मैं नदी में डूबाकर तुम्हें मार दूँगा तो तुम्हें उस समय किया हुआ लालच याद आएगा।

ऐसा कहते हुए होता अपना हिस्सा छोड़कर घर आ गया। कुछ समय के बाद दोनों भाई मर गए और अगला जन्म धारण कर लिया। होता तेंदुया बना और ब्रह्मा हाथी। दोनों गंडकी नदी पर पहुँच गए। वह नदी बहुत गहरी थी।

देखो! लालच कितना बुरा है, भाई-भाई में झगड़ा करा दिया। दोनों ने कुल नाश कर ली। वास्तव में अहंकार और लालच बुद्धि को भ्रष्ट कर देता है। लालच के मारे लोग दुखी होते हैं इस लिए लालच कभी नहीं करना चाहिए।

ब्रह्मा हाथी बना, बड़ा हाथी मानों हाथियों का सरदार। उसके साथ कोई न झगड़ता। वह हाथियों के झुंड में रहता और जंगल का बादशाह था। शाप के पूरा होने के लिए उसे गंडकी नदी पर जाना पड़ा। पानी ठंडा था, हाथी प्यासे थे। सबके आगे वह हाथी था जो ब्रह्मा था। वह जब पानी पीने के लिए आगे बढ़ा तो आगे उसका भाई तेंदुए का रूप धारण कर बैठा था। वह ब्रह्मा की टांगे पकड़ कर उसको गहरे पानी में खींच कर आगे-आगे जाने लगा। जब हाथी डूबने लगा तो वह जोर जोर से चींखने चिल्लाने लगा। ऐसा देखकर दूसरे हाथी बड़े हैरान हुए, हथनियाँ चींखने चिल्लाने लगी पर उसको बाहर निकालने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

तेंदुए ने ब्रह्मा से बदला लेना था, इस लिए वह जोर से पकड़ कर बैठा रहा। हाथी बलवान था, उसको भी ज्ञात हो गया कि पिछले जन्म का हिसाब बाकी है। वह भी पानी से बाहर निकलने का प्रयत्न करने लगा। उसने अपना सिर पानी में न डूबने दिया। तेंदुया उसको डूबाने का प्रयत्न करता रहा।

तेंदुए और हाथी को लड़ते हुए काफी समय हो गया था। हाथी भूखा था पर पानी में से क्या खाए। तेंदुया तो पानी से ही अपनी भूख मिटा लेता था पर हाथी दुबला होने लगा और डूबने लगा। जब वह डूबने लगा तो उसने अपनी सूँड उपर उठाकर आकाश की ओर देखा और प्रभु को याद किया। उसने कमल का फूल अपनी सूँड के साथ प्रभु को भेंट किया। उसने विनती कर ऐसे पुकार की-“ हे प्रभु! पहले ही मैं

हाथी की योनि में आया हूँ। अब प्रभु जी मुझ पर कृपा करो। मैं पानी में डूबूँ.... यदि यहीं मर गया तो फिर किसी बुरी योनि में जन्म लूँगा। मेरी प्रार्थना सुनो प्रभु।”

हाथी ने शुद्ध हृदय से पुकार की तो उसी समय प्रभु उसकी पुकार सुनकर नदी के किनारे (तट) पर आए। सुदर्शनचक्र से तेंदुए का मुख चीर कर हाथी की रक्षा की और उसे हाथी की योनि से मुक्त कर फिर से भक्त रूप में प्रकट किया। तेंदुया भी प्रभु का यश करने लगा तो उसका भी जन्म बदल गया।

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि इतनी बुरी बुद्धि वाले जीव प्रभु का नाम जप कर मुक्त हो गए। हे जीव! यदि तू भी एक चित होकर प्रभु का सिमरन करेगा तो तू क्यों नहीं पार होगा। भाव तू भी अवश्य ही पार हो जाएगा।

शब्द ३६

भैरव बाणी रविदास जीउ की घरु २

१ ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

बिनु देखे उपजै नही आसा ॥
जो दीसै सो होइ बिनासा ॥
बरन सहित जो जापै नामु ॥
सो जोगी केवल निहकामु ॥१॥
परचै रामु रवै जउ कोई ॥
पारसु परसै दुबिधा न होई ॥१॥ रहाउ ॥
सो मुनि मन की दुबिधा खाइ ॥
बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ ॥
मन का सुभाउ सभु कोई करै ॥
करता होइ सु अनभै रहै ॥२॥
फल कारन फूली बनराइ ॥
फलु लागा तब फूलु बिलाइ ॥
गिआनै कारन करम अभिआसु ॥
गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥३॥
घित कारन दधि मथै सइआन ॥
जीवत मुक्त सदा निरबान ॥

कहि रविदास परम बैराग ॥

रिदै रामु की न जपसि अभाग ॥४॥१॥ (पन्ना ११६७)

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव पारस रूप गुरु के बताए हुए उपदेश पर चलकर प्रेम सहित प्रभु का सिमरन करता है उसके मन में से दुविधा का नाश हो जाता है और तीन लोक में समाए हुए प्रभु को प्राप्त कर लेता है। ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति होने से इस जीवन में मुक्त होकर सदा रहने वाले निर्वाण पद को प्राप्त कर लेता है।

बिनु देखे उपजै नही आसा ॥

जो दीसै सो होइ बिनसा ॥

प्रभु के देखे बिना जीव के मन में उसको प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न नहीं होती। पर संसार में जो कुछ भी दिखाई दे रहा है वह सब कुछ नाशवान है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं:

नैनत देखत इहु जग जाई ॥१॥ (पन्ना १०८३)

भाव आँखों से देखते हुए यह संसार नाश हो रहा है।

बरन सहित जो जापै नामु ॥

सो जोगी केवल निहकामु ॥१॥

जो जीव प्रेम भाव से प्रभु का नाम सिमरन करता है केवल वही निष्कामी सच्चा योगी है।

परचै रामु रवै जउ कोई ॥

पारसु परसै दुबिधा न होई ॥१॥ रहाउ ॥

जो जीव गुरु के उपदेश के अनुसार प्रभु का सिमरन करता है, उसके जीवन में से दुविधा का नाश हो जाता है। जैसे लोहा पारस से स्पर्श कर स्वर्ण बन जाता है, ऐसे ही वह जीव गुरु रूपी पारस से मिलकर सोने की भांति शुद्ध हो जाता है।

सतगुरु नानक देव जी वर्णन करते हैं:

पारस भेटि कंचनु धातु होई सतसंगति की वडिआई ॥ (पन्ना ५०५)

जैसे पारस से स्पर्श कर कोई भी धातु स्वर्ण हो जाती है। ऐसा ही यश सतसंग का है, जिसमें जाकर जीव स्वर्ण की भांति शुद्ध हो जाता है।

सो मुनि मन की दुबिधा खाइ ॥

बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ ॥

वास्तविक मुनि संसार में वह है जो मन में से दुविधा को खत्म कर देता है

और दस द्वारों से मुक्त तीन लोक (मात लोक, आकाश लोक, पाताल लोक) में समाए हुए प्रभु में विलीन हो जाता है।

सतगुरु अमरदास जी वर्णन करते हैं :

सो मुनि जि मन की दुबिधा मारे ॥

दुबिधा मारि ब्रह्म बीचारे ॥१॥

इस संसार में वास्तविक मुनि वो है जो मन की दुविधा खत्म कर प्रभु की विचार करता है।

मन का सुभाउ सभु कोई करै ॥

करता होइ सु अनभै रहै ॥२॥

संसार में सभी जीव अपने मन के स्वभाव के अनुसार ही कर्म करते हैं। पर जीव अपने मन को अपने वश में कर लेता है वह जीव संसार में बिना किसी भय के करता पुरुष के साथ एक रूप हो कर जीवन में चलता है।

फल कारन फूली बनराइ ॥

फलु लागा तब फूलु बिलाइ ॥

जैसे सारी सृष्टि की वनस्पति फल देने के लिए फलती है और उसको फूल लगते हैं पर जिस समय फल लग जाते हैं तो उस समय फूल झड़ जाते हैं।

गिआनै कारन करम अभिआसु ॥

गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥३॥

इसी तरह जिज्ञासु ज्ञान प्राप्त करने के लिए श्रेष्ठ कर्म करता है पर जिस समय ब्रह्मज्ञान रूपी फल लग जाता है तो कर्म रूपी फूलों का नाश हो जाता है।

घ्रित कारन दधि मथै सइआन ॥

जीवत मुक्त सदा निरबान ॥

जैसे समझदार स्त्री घी की प्राप्ति के लिए दही का मंथन करती है जब माखन निकल आता है तो मंथन करना बंद कर देती है। ऐसे ही ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के लिए जिज्ञासु श्रेष्ठ कर्म करता है। जिस समय ब्रह्म ज्ञान प्राप्त हो जाता है जीते जी मुक्त अवस्था प्राप्त कर हमेशा रहने वाले निर्वाणपद को प्राप्त कर लेता है।

कहि रविदास परम बैराग ॥

रिदै रामु की न जपसि अभाग ॥४॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे अभागे पुरुष! तू परम
वैराग की प्राप्ति के लिए अपने हृदय में प्रभु का रामनाम क्यों नहीं जपता? जिस नाम
सिमरन के कारण अटल निर्वाणपद की प्राप्ति हो जाती है।

शब्द ३७

बसंतु बाणी रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

तुझहि सुझंता कछू नाहि ॥

पहिरावा देखे ऊभि जाहि ॥

गरबवती का नाही ठाउ ॥

तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥१॥

तू कांइ गरबहि बावली ॥

जैसे भादउ खूंबराजु तू तिसते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥

जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु ॥

तनि सुगंध दूढे प्रदेसु ॥

अपतन का जो करे बीचारु ॥

तिसु नही जम कंकुर करे खुआरु ॥२॥

पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु ॥

ठाकुरु लेखा मगनहारु ॥

फेड़े का दुखु सहै जीउ ॥

पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥३॥

साधू की जउ लेहि ओट ॥

तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥

कहि रविदास जो जपै नामु ॥

तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥६॥

(पन्ना १११६)

सतगुरु रविदास महाराज जी जीव को अपने अमूल्य मनुष्य जीवन में
नाशवान् शरीर के झूठे अहंकार को छोड़ कर संत महापुरुषों की शरण में जा कर अपने

पापों की निवृत्ति करते हुए प्रभु का नाम सिमरन कर जाति-जन्म और योनि इत्यादि के
भेद-भाव से मुक्त होकर जीवन सफल करने का पावन उपदेश देते हैं।

तुझहि सुझंता कछू नाहि ॥

पहिरावा देखे ऊभि जाहि ॥

हे जीव! तुम्हें इस संसार में झूठा अहंकार होने के कारण कुछ समझ नहीं

आता और तू अपने पहरावे को देख कर अहंकार कर रहा है।

गरबवती का नाही ठाउ ॥

तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥१॥

अहंकार से भरी हुई जीव रूप स्त्री का प्रभु के दरबार में कोई स्थान नहीं है।

मृत्यु रूप कौआ हर समय तुम्हारे सिर पर बोल रहा है भाव मृत्यु तुम्हारे सिर पर खड़ी
है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

पाछै कछू न होइगा जउ सिर परि आवै कालु ॥

(पन्ना १३७१)

जिन्दगी के पूरे होने के बाद तुमसे कुछ नहीं होगा।

तू कांइ गरबहि बावली ॥

जैसे भादउ खूंबराजु तू तिसते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥

हे नादान स्त्री! तू झूठा अहंकार क्यों करती है? जैसे भादों के महीने में
खुम्बों का राज ढाई दिन भाव जीवन कुछ समय के लिए ही होता है, तेरा तो कोई
भरोसा ही नहीं, तू तो उससे भी जल्द समाप्त होने वाली है।

जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु ॥

तनि सुगंध दूढे प्रदेसु ॥

जैसे हिरन की नाभि में कस्तूरी की सुगन्धि है, पर वह इस सुगन्धि को
जंगल और पहाड़ों में दूँढता रहता है। इस तरह ही परमात्मा का निवास जीव के अंदर
है पर अज्ञानता के कारण यह जीव प्रभु को बाहर दूँढ रहा है।

सतगुरु तेग बहादुर जी वर्णन करते हैं :

काहे रे बन खोजन जाई ॥

सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥१॥ (पन्ना ६८४)

हे जीव, उस परमात्मा की खोज में जंगलों में क्यों भटक रहा है। परमात्मा माया से मुक्त है, हमेशा सारे संसार में समाया हुआ है और हर समय जीव के साथ है।

अपतन का जो करे बीचारु ॥
तिसु नही जम कंकुर करे खुआरु ॥२॥

जो जीव अपने अनमोल शरीर की विचार कर प्रभु की अपने अंदर खोज करता है, उसको यमदूत खुआर नहीं करते।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :
दिल महि खोजि दिलै दिलि खोजहु एही ठउर मुकामा ॥२॥
 (पन्ना ९३४९)

हे मानव ! अपने दिल में प्रभु की खोज कर, यही प्रभु के ठहरने का स्थान है।

सतगुरु पीपा जा महाराज वर्णन करते हैं :-
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ॥
 (पन्ना ६९५)

जो प्रभु ब्रह्माण्ड में है वही प्रभु शरीर रूप पिंड में है। जो जीव अपने अंदर उस प्रभु की खोज करता है, प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु ॥
ठाकुरु लेखा मगनहारु ॥

जो जीव प्रभु को भुलाकर अपने पुत्र और स्त्री का अहंकार करता है, उस से प्रभु लेखा माँगता है।

फेड़े का दुखु सहै जीउ ॥
पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥३॥

हे जीव ! जिस समय तुम्हें किये हुए बुरे कर्मों का फल भोगना पड़ेगा तो उस समय किस को पुकार पुकार कर अपने बचाव के लिए कहेगा कि हे प्यारे, मुझे बचाओ। तुम्हारी कोई सहायता नहीं करेगा।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :
जनम मरन दुख फेड़ करम सुख
जीअ जनम ते छूटै ॥१॥ रहाउ ॥ (पन्ना ४७५)

जन्म मरण का दुख किये हुए कर्मों का फल है और सुख इस जीव से छूट जाता है।

साधू की जउ लेहि ओट ॥
तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥

हे जीव ! यदि तू संत महापुरुषों का आसरा ले लेगा तो तेरे किये हुए करोड़ों-करोड़ों पापों का नाश हो जाएगा।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :
संत जना मिलि हरि जसु गाइओ ॥
कोटि जनम के दूख गवाइओ ॥ (पन्ना ७२०)

हे जीव ! तू संत जनों से मिलकर प्रभु का यशगान् कर जिस से तुम्हारे करोड़ों जन्मों के दुःख दूर हो जाएंगे।

कहि रविदास जो जपै नामु ॥
तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥६॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जो जीव इस संसार में परमात्मा का नाम सिमरन करता है, उसका जाति, जन्म और योनि से कोई काम नहीं रहता भाव वह जन्म मरण के चक्र से मुक्त होकर प्रभु में विलीन हो जाता है।

शब्द ३८
मलार बाणी भगत रविदास जी की ॥
१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥
 रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥१॥ रहाउ ॥
 सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे
 संत जन करत नहीं पानं ॥
 सुरा अपवित्र नत अवर जल रे
 सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥१॥
 तर तारि अपवित्र कर मानीए रे
 जैसे कागरा करत बीचारं ॥
 भगति भागउतु लिखीए तिह ऊपरे

पूजीए करि नमसकारं ॥२॥

मेरी जाति कुटबांढला ढोर ढोवंता

नितहि बनारसी आसा पासा ॥

अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति

तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥३॥१॥ (पन्ना १२९३)

सतगुरु रविदास जी मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव प्रभु का सिमरन करता है वह प्रभु का ही रूप हो जाता है और उसकी महिमा सारे संसार में फैल जाती है।

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥

रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥१॥ रहाउ ॥

हे नगर के चतुर पुरुषो! हे नागर जाति के लोगो, हे नागर मल्ल! मेरी जाति प्रकट ही चमार है। मैंने अपने हृदय में प्रभु के गुणों को धारण किया है।

सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे

संत जन करत नहीं पानं ॥

यदि गंगाजल की मदिरा बनाई जाए तो संत जन उसको ग्रहण नहीं करते हैं क्योंकि वह गंगाजल अपने चलत प्रवाह से अलग होकर अपवित्र हो गया है। इस तरह ही यदि कोई जीव ऊँची कुल में पैदा हुआ है और वह प्रभु का नाम सिमरन नहीं करता तो वह प्रभु के दरबार में प्रवान नहीं होता।

सुरा अपवित्र नत अवर जल रे

सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥१॥

इस के विपरीत अपवित्र मदिरा या और नदियों-नालियों का पानी जिस समय गंगा में मिल जाता है तो वह कुछ और नहीं रहता बल्कि गंगा का ही रूप हो जाता है। इस तरह ही जिन को संसार के अज्ञानी लोग जाति के कारण शूद्र समझते हैं, जब वह प्रभु का सिमरन करते हैं तो प्रभु में विलीन हो जाते हैं।

सतगुरु अमरदास जी वर्णन करते हैं :-

जिउ मीहि वुठै गलीआ नालिआ टोभिआ का जलु जाइ पवै

विचि सुरसरी सुरसरी मिलत पवित्रु पावनु होइ जावै ॥ (पन्ना ८५५)

जैसे वारिश होने से गलियों, नालों का पानी गंगा में पड़ कर गंगा की भांति पवित्र हो जाता है ऐसे ही प्रभु का नाम जो जपते हैं वह जीव प्रभु में विलीन होकर प्रभु

का रूप हो जाते हैं।

तर तारि अपवित्र कर मानीए रे

जैसे कागरा करत बीचारं ॥

जैसे ताड़ का वृक्ष अपवित्र माना जाता है क्योंकि उसमें नशे जैसा जल होता है। विचार करने वाले ताड़ के वृक्ष के पत्तों से बने कागज को अपवित्र समझते हैं।

भगति भागउतु लिखीए तिह ऊपरे

पूजीए करि नमसकारं ॥२॥

परन्तु जब उन पर प्रभु का नाम और प्रभु की उपमा लिख दी जाती है तो नमस्कार कर पूजे जाते हैं। इसी तरह जिनको सांसारिक जीव अज्ञानता के कारण नीच समझते हैं उन्हो ने प्रभु का नाम सिमरन किया तो वह भी इस संसार में पूज्य हो गये।

मेरी जाति कुटबांढला ढोर ढोवंता

नितहि बनारसी आसा पासा ॥

मेरी जाति मरे हुए पशुओं का चमड़ा उतारने वाली और मरे हुए पशुओं को उठाने वाली है एवं चमड़े का कार्य करती है जो कि नित-प्रति बनारस के आस-पास रहती है।

अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति

तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि हे प्रभु जी! आप के दास ने अब आपकी शरण ले ली है। अब मुझे ब्रह्मणों के प्रमुख दंडवत् नमस्कार करते हैं। यह सब आप के नाम की महिमा है।

शब्द ३९

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति

तास सम तुलि नही आन कोऊ ॥

एक ही एक अनेक होइ बसथरिओ

आन रे आन भरपुरि सोऊ ॥ रहाउ ॥

जा कै भागवतु लेखीए अवरु नही पेखीए

तास की जाति आछोप छीपा ॥

बिआस महि लेखीए सनक महि पेखीए

नाम की नामना सपत दीपा ॥१॥

जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे

बधु करहि मानीआहि सेख महीद पीरा ॥

जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी

तिहू रे लोक परसिध कबीरा ॥२॥

जा के कुटंब के डेढ सभ ढोर दोवंत फिरहि

अजहु बनारसी आस पासा ॥

आचार सहित बिप्र करहि डंडउति

तिन तनै रविदास दासान दासा ॥३॥१॥ (पन्ना १२९३)

सतगुरु रविदास महाराज जी पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु एक से अनेक रूप धारण कर सारे संसार में समाया हुआ है। जो जीव उस प्रभु का सिमरन कर उस में विलीन हो जाता है, उस के समान कोई और नहीं हो सकता। ऐसे प्रभु का नाम जप कर नाम देव जी और कबीर जी प्रसिद्ध हुए। वेद व्यास जी और सनक जी ने भी उस प्रभु की उपमा की है।

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति

तास सम तुलि नही आन कोऊ ॥

एक ही एक अनेक होइ बसथरिओ

आन रे आन भरपुरि सोऊ ॥ रहाउ ॥

जो जीव परमात्मा का नाम सिमरन करते हैं उनकी समानता विष्णु, शिव एवं और कोई नहीं कर सकता। वह प्रभु एक है और एक से अनेक रूप धारण कर इस संसार में व्याप्त है। हे जीव! तुम उस प्रभु की ओर आयो भाव उसका सिमरन करो।

सतगुरु नामदेव जी वर्णन करते हैं :

एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई ॥ (पन्ना ४८५)

पूर्ण प्रभु एक से अनेक रूप धारण कर सारे संसार में व्यापक है। जहाँ भी देखते हैं वही प्रभु है।

जा कै भागवतु लेखिए अवरु नही पेखीऐ

तास की जाति आछोप छीपा ॥

नामदेव जी के जीवन में प्रभु की भक्ति को देखते हैं तो प्रभु सिमरन के बिना और कुछ नज़र नहीं आता। उनकी जाति अछूत समझी जाती छींबा थी, जो प्रभु का

नाम जप कर प्रभु का ही रूप हो गए।

सतगुरु अर्जुन देव जी वर्णन करते हैं :

ऊच ते ऊच नामदेउ समदरसी

रविदास ठाकुर बणि आई ॥१॥ (पन्ना १२०७)

ऊँचे से ऊँचे नामदेव जी समदर्शी थे और रविदास जी प्रभु का रूप होकर संसार में आए थे।

सतगुरु धंन जी वर्णन करते हैं :

गोबिंद गोबिंद गोबिंद संगि नाम देउ मनु लीणा ॥ (पन्ना ४८७)

प्रभु का गोबिंद नाम जप कर नामदेव जी उस गोबिंद प्रभु में विलीन हो गए हैं।

बिआस महि लेखीऐ सनक महि पेखीऐ

नाम की नामना सपत दीपा ॥१॥

महान् विद्वान् वेद व्यास जी के लिखे हुए ग्रंथों में भी प्रभु के नाम की उपमा लिखी हुई है और ब्रह्मा के पुत्र सनक के जीवन में भी प्रभु के नाम का यश देखा जाता है अर्थात् उन्होंने प्रभु के नाम की उपमा की। प्रभु के नाम की महिमा सात दीप में भाव सारे खण्डों-ब्रह्मण्डों में हो रही है।

जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे

बधु करहि मानीआहि सेख महीद पीरा ॥

जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी

तिहू रे लोक परसिध कबीरा ॥२॥

जिस कबीर जी की कुल के लोग ईद और बकरीद के दिनों में गाय और बकरी की कुर्बानी देकर अपने पूर्वजों शेख शहीद पीरों को मानते थे, पर उनके पुत्र ने प्रभु का नाम जप कर ऐसी बात की कि अपने बड़ों को गाय और बकरी को मारने से रोक दिया और वहम-भ्रमों से मुक्त कर प्रभु के नाम से जोड़ा। ऐसे परमार्थी विचारों के कारण कबीर साहिब तीन लोकों में प्रसिद्ध हुए।

सतगुरु धंन जी वर्णन करते हैं :

बुनना तनना तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा ॥

नीच कुला जोलाहरा भइओ गुनीय गहीरा ॥१॥ (पन्ना ४८७)

कबीर जी ने बुनना छोड़ कर प्रभु के चरणों से प्रीति की। जिस कबीर को

लोग नीच कुल का जुलाहा समझते थे, वो शुभ गुणों के समुद्र हो गए।

जा के कुटंब के डेढ सभ ढोर दोवंत फिरहि
अजहु बनारसी आस पासा ॥
आचार सहित बिप्र करहि डंडउति
तिन तनै रविदास दासान दासा ॥३॥१॥

सतगुरु रविदास जी महाराज वर्णन करते हैं कि मेरी कुल के लोग अभी तक बनारस के आस-पास मरे हुए पशुओं को उठाते हैं। उनका पुत्र मैं प्रभु के दासों का दास हूँ और अब ब्राह्मण मुझे छड़ी की भांति सीधे लेट कर (दंडवत कर) पूरे मान-सम्मान और मर्यादा से प्रणाम करते हैं।

शब्द ४०

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते ॥
साध संगति पाई परम गते ॥ रहाउ ॥
मैले कपरे कहा लउ धोवउ ॥
आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ॥१॥
जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ ॥
झूठे वनजि उठि ही गई हाटिओ ॥२॥
कहु रविदास भइओ जब लेखो ॥
जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ ॥३॥१॥३॥ (पन्ना १२९३)

सतगुरु रविदास महाराज जी सांसारिक जीवों को पावन उपदेश देते हैं कि संत महापुरुषों की संगत करने से पापों और अज्ञानता रूप नींद का नाश हो जाता है और जीव परम-पद को प्राप्त कर लेता है।

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते ॥
साध संगति पाई परम गते ॥ रहाउ ॥
प्राणों से प्यारा प्रभु कौन सी भक्ति करने से प्राप्त होता है? संत महापुरुषों की संगत करने से जीव सब से श्रेष्ठ अवस्था प्रभु मिलाप रूप परम-पद मुक्ति प्राप्त करता है।

बाबा फरीद जी फरमाते हैं :-
करि किरपा प्रभि साधसंगि मेली ॥

जा फिरि देखा ता मेरा अलहु बेली ॥३॥ (पन्ना ७१४)

प्रभु ने कृपा दृष्टि कर मुझे साधु संगत से मिलाया है (जोड़ा है)। जिसके प्रताप के कारण मैं जहाँ देखता हूँ मुझे अल्लाह बेली ही दिखाई देता है। सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

कहु कबीर इह कहीऐ काहि ॥
साध संगति बैकुंठ आहि ॥ (पन्ना ३२५)

यह बात क्यों कहें कि कोई बैकुंठ नहीं है। संतों की संगत ही बैकुंठ है।

मैले कपरे कहा लउ धोवउ ॥
आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ॥१॥

संत महापुरुषों की संगत के बिना जीव अंतमन रूपी मैले कपड़ों को कहाँ जा कर धोएगा? और अज्ञानता रूप नींद में कब तक सोएगा?

जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ ॥
झूठे वनजि उठि ही गई हाटिओ ॥२॥

संत महापुरुषों की संगत कर जीव ने जो जो कर्मों का लेखा जमा किया हुआ है उस लेखे का नाश हो गया। संतों की संगत के कारण संसार में से झूठे व्यापार की दुकान का नाश हो गया।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

संतहु बनजिआ नामु गोबिद का ऐसी खेप हमारी ॥१॥ (पन्ना ११२३)

संतों ने इस संसार में प्रभु के नाम का व्यापार किया है और मैंने भी ऐसी खरीददारी की है।

कहु रविदास भइओ जब लेखो ॥
जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ ॥३॥१॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी वर्णन करते हैं कि जिस समय जीव को हिसाब देना पड़ेगा तो जीव वही कुछ देखता है जो उसने किया है और इस लेखे का हिसाब संत महापुरुषों की संगत और नाम सिमरन करने से ही खत्म होता है।

सतगुरु कबीर साहिब जी वर्णन करते हैं :

धरम राइ जब लेखा मागै किआ मुखु लै कै जाहिगा ॥
कहतु कबीर सुनहु रे संतहु साधसंगति तरि जाहिगा ॥३॥१॥

(पन्ना ११०६)

हे जीव ! जिस समय धर्मराज ने तुम से कर्मों का हिसाब मांगना है तो प्रभु के नाम के बिना उसके पास कौन सा मुख लेकर जाएगा। इस लिए कबीर साहिब जी कहते हैं कि हे संत जनों सुनो ! संतो की संगत करने से जीव पार हो जाएगा।

श्लोक

हरि सो हीरा छाडि कै
करहि आन की आस ॥
ते नर दोजक जाहिगे
सति भाखै रविदास ॥

(पत्रा १३७७)

प्रभु के हीरे रूपी नाम को छोड़ कर जो जीव मुक्ति की कोई और आस (आशा) रखता है, गुरु रविदास जी महाराज वर्णन करते हैं कि मैं सदा अटल रहने वाली सच्चाई कहता हूँ कि ऐसा जीव नरक में जाएगा।

राग रामकली

शब्द - 41

परचै राम रमै जो कोई। पारस परसे दुबिधा न होई ॥ टेक ॥
जो दीसे सो सकल बिनास। अनडीठे नाहीं विसवास ॥१॥
बरन सहित कहै जो राम। सो भगता केवल निहकाम ॥२॥
फल कारन फूलै बनराई। उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥३॥
ज्ञानहि कारन करम कराई। उपजै ज्ञान तब करम नसाई ॥४॥
बटिक बीज जैसा आकार। पसरियौ तीनि लोक पासार ॥५॥
जहाँ का उपजा तहां समाई। सहज शूनय मे रह्यो लुकाई ॥६॥
जो मन बिंदै सोई बिंद। अमावस मैं जैसे दीसै चंद ॥७॥
जल में जैसे तूबा तिरै। परचै पिंड जीवै नाहिं मरै ॥८॥
सो मुनि कौण जु मन को खायि। बिन दुआरे तिरलोक समाइ ॥९॥
मन की महिमा सब कोय कहै। करता सो जो अनभै रहै ॥१०॥
कहै रविदास यह परम बैराग। राम नाम कीन जपहु सुभाग ॥११॥
धृत कारनि दधि मथै सयान। जीवन मुक्ति सदा निरबाण ॥१२॥
इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी प्राणियों को पारस रूपी गुरु के उपदेशानुसार चल कर प्रभु प्राप्ति करने का पावन उपदेश देते हैं।
परचै राम रमै जो कोई। पारस परसे दुबिधा न होई ॥ टेक ॥
जो प्राणी गुरु उपदेशानुसार प्रभु का सिमरन करता है जिस प्रकार पारस को छू लेने से लोहा शुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार यह प्राणी भी पारस रूपी गुरु की संगत में जाकर सोने की भांति शुद्ध हो जाता है।
जो दीसे सो सकल बिनास। अनडीठे नाहीं विसवास ॥१॥
जो संसार में दिखाई देता है, सब नश्वर है, परन्तु प्रभु को देखे बिना उसके प्रति आस्था उत्पन्न नहीं होती।
बरन सहित कहै जो राम। सो भगता केवल निहकाम ॥२॥
जो प्रभु भक्त प्रेम सहित प्रभु का नाम जपता है, वह निष्कामी है।
फल कारन फूलै बनराई। उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥३॥
जैसे वनस्पति के वृक्षों को फल लगने से पहले फूल लगते हैं, परन्तु जिस समय फल लग जाते हैं, तो फूल झड़ जाते हैं।
ज्ञानहि कारन करम कराई। उपजै ज्ञान तब करम नसाई ॥४॥
इसी प्रकार जिज्ञासु ज्ञान की प्राप्ति के लिए श्रेष्ठ कर्म करते हैं, परन्तु जब उसे ज्ञान प्राप्त होता हो जाता है तब कर्मों का नाश हो जाता है, अर्थात् फिर कर्म करने की आवश्यकता नहीं रहती।

बटिक बीज जैसा आकार। पसरियौ तीनि लोक पासार ॥५॥

जैसे बट वृक्ष की शाखाएँ बहुत दूर तक फैली होती है परन्तु ऊपर से देखने पर उसका आकार अपेक्षेयता छोटा नज़र आता है। उसी प्रकार प्रभु तीनों लोकों अर्थात् समस्त सृष्टि में विद्यमान है।

जहाँ का उपजा तहाँ समाई। सहज शून्य मे रह्यो लुकाई ॥६॥

प्राणी प्रभु से उत्पन्न हुआ, उसी का अंश है तथा उसका सिमरन कर वह सहज शून्य अवस्था में विलीन हो जाता है।

जो मन बिंदै सोई बिंद। अमावस मैं जैसे दीसै चंद ॥७॥

जो मन है, वह प्रभु का अंश है परन्तु साधना के बिना उसके दर्शन नहीं होते। जैसे चन्द्रमा तो होता है परन्तु अमावस के दिन दिखाई नहीं देता। उसी प्रकार प्रभु का अस्तित्व तो सदैव है परन्तु अज्ञानतावश जीव उसको अनुभव नहीं कर सकता।

जल में जैसे तूँबा तिरै। परचै पिंड जीवै नाहिं मरै ॥८॥

जिस प्रकार रूई सदैव जल में तैरती है उसी प्रकार जो जीव गुरु उपदेशानुसार इसशरीर रूपी पिण्ड में बैठे प्रभु का स्मरण करता है, वह सदैव जीवित रहता है, उसकी मृत्यु नहीं होती।

सो मुनि कौण जु मन को खायि। बिन दुआरे तिरलोक समाइ ॥९॥

वास्तविक मुनि वह है जो मन में से दुबिधा को समाप्त कर लेता है, दशम दारों से रहित तीनों लोकों में विद्यमान प्रभु में लीन हो जाता है।

मन की महिमा सब कोय कहै। करता सो जो अनभै रहै ॥१०॥

संसार के सभी जीव अपने मन की महिमानुसार कर्म करते हैं, परन्तु जो प्राणी कर्तापुरुष के साथ एक रूप हो जाते हैं, वे निर्भय हो जाते हैं।

कहै रविदास यह परम बैराग। राम नाम कीन जपहु सुभाग ॥११॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि हे सोभाग्यशाली प्राणी! तू अपने मन में प्रभु के परम वैराग्य को धारण कर, उसका नाम जप।

धृति कारनि दधि मथै सयान। जीवन मुक्ति सदा निरबाण ॥१२॥

जिस प्रकार एक समझदार स्त्री घी की प्राप्ति के लिए दही को मथती है, परन्तु उसमें से मक्खन निकल आता है तो वह उसे मथना बंद कर देती है। इसी प्रकार ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए जीव/प्राणी श्रेष्ठ कर्म करता है, जब उसे ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो वह प्राणी इस जीवन में ही सदैव रहने वाले निर्वाण पद को प्राप्त कर लेता है।

शब्द - 42

अब मैं हारयो रे भाई।

थकित भयों सभ हाल चाल ते, लोकन बेद बड़ाई ॥ टेक ॥

थकित भयो गायन अरु नाचन, थाकी सेवा पूजा ॥

काम क्रोध ते देह थकित भई, कहूँ कहाँ लौं दूजा ॥१॥

राम जनु होऊँ न भगत कहाऊँ, चरन पखारु न देवा ॥

जोई जोई करूँ उलटि मोहिं बांधे, ता ते निकटि न भेवा ॥२॥

पहले ज्ञान का किया चाँदना, पीछे दीया बुझाई ॥

शून्य सहज मैं दोऊ त्यागे राम कहूँ न खुदाई ॥३॥

दूर बसै खट कर्म सकल अरु, दूरऊ कीन्हे सेऊ ॥

ज्ञान ध्यान दोऊ दूर कीन्हे, दूरिउ छाड़ै तेऊ ॥४॥

पंचो थकित भयो हैं जहाँ तहाँ, जहाँ तहाँ थिति पाई ॥

जा कारन मैं दौरयो फिरतो, सो अब घट में पाई ॥५॥

पंचो मेरी सखी सहेली, तिन निधि दई दिखाई ॥

अब मन फूलि भयो जग महिया, उलटि आप में समाई ॥६॥

चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो, अब मोसे चलयो न जाई ॥

साई सहज मिलयो सोई सनमुख, कहै 'रविदास' बड़ाई ॥७॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि जीव, प्रभु का नाम सिमरन कर परम आनन्द रूपी सहजावस्था में पहुँच कर प्रभु में विलीन हो जाता है। कर्म-काण्डों द्वारा जीव को प्रभु की प्राप्ति नहीं होती।

अब मैं हारयो रे भाई।

थकित भयों सभ हाल चाल ते, लोकन बेद बड़ाई ॥ टेक ॥

हे भाई! प्रभु के नाम के बिना मैं हार गया हूँ। संसार के लोग वेदों शास्त्रों को महत्त्व देते हैं। इस हाल से थक कर मैं प्रभु का नाम सिमरन कर उसका ही रूप हो गया हूँ।

थकित भयो गायन अरु नाचन, थाकी सेवा पूजा ॥

काम क्रोध ते देह थकित भई, कहूँ कहाँ लौं दूजा ॥१॥

सच्चे प्रेम के बिना गाने, नाचने, बाह्य पूजा और सेवा में जीव थक जाता है।

काम, क्रोध इत्यादि विकारों के कारण शरीर भी थक जाता है। बताओ कि ऐसी स्थिति में इन कर्म काण्डों से जीव प्रभु के साथ कैसे जुड़ सकता है? भाव नहीं जुड़ सकता।

राम जनु होऊँ न भगत कहाऊँ, चरन पखारु न देवा ॥

जोई जोई करूँ उलटि मोहिं बांधे, ता ते निकटि न भेवा ॥२॥

मैं प्रभु का दास हूँ। मैं न तो किसी देवता का भक्त कहलाता हूँ और न ही किसी देवता के चरण धोता हूँ। प्रभु के नाम के बिना जो कुछ भी करता हूँ, उसके विपरीत मैं माया जाल में फँस जाता हूँ क्योंकि इन आडम्बरों से प्रभु के भेद को नहीं जाना जा सकता।

पहले ज्ञान का किया चाँदना, पीछे दीया बुझाई ॥
शून्य सहज मैं दोऊ त्यागे, राम कहूँ न खुदाई ॥३॥

पहले ज्ञान का प्रकाश होने से अज्ञानता रूपी दीपक बुझ गया, तदपश्चात् परमानन्द रूपी सहजावस्था में पहुँच कर ज्ञान और अज्ञान दोनों खत्म हो गए। तुरियावस्था में पहुँच कर न राम और न ही रहीम कहने की आवश्यकता है, अर्थात् जीव प्रभु का रूप हो जाता है।

दूर बसै खट कर्म सकल अरु, दूरऊ कीन्हे सेऊ ॥
ज्ञान ध्यान दोऊ दूर कीन्हे, दूरिउ छाड़ै तेऊ ॥४॥

शास्त्रों के अनुसार छः कर्मों को भी त्याग दिया है और शिव की भक्ति से भी मुझे कोई लेन देन नहीं है। सहजावस्था में पहुँच कर मैं ऐसे ज्ञान-ध्यान इत्यादि से मुक्त हो गया हूँ।

पंचो थकित भयो हैं जहाँ तहाँ, जहाँ तहाँ थिति पाई ॥
जा कारन मैं दौरयो फिरतो, सो अब घट में पाई ॥५॥

पाँच विकारों का नाश कर मैंने स्थिर सहजावस्था प्राप्त कर ली है। जिस प्रभु की प्राप्ति के लिए मैं इधर-उधर दौड़ता फिर रहा था उसकी प्राप्ति मुझे अपने शरीर में से हो गई है।

पंचो मेरी सखी सहेली, तिन निधि दई दिखाई ॥
अब मन फूलि भयो जग महिया, उलटि आप में समाई ॥६॥

अब पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ मेरी सहेलियाँ बन गई हैं और पाँचों को प्रभु की ओर लगाने से मैंने अपने भीतर से ही प्रभु का नाम रूपी खजाना प्राप्त कर लिया है। जो मन संसार की उपमा में लगा हुआ था अब इसके विपरीत प्रभु जी में विलीन हो गया है।

चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो, अब मोसे चलयो न जाई ॥
साई सहज मिलयो सोई सनमुख, कहै 'रविदास' बड़ाई ॥७॥

चलते चलते मेरा मन इतना थक गया है कि अब इससे और चला नहीं जाता। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सहजावस्था में पहुँचकर प्रभु मुझे प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त हो गया है।

शब्द - 43

गाड़ गाड़ अब का कहि गाऊँ ।
गावणहार कूँ निकट बताऊँ ॥ टेक ॥

जब लगि है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा ।
जब मन मिल्यौ आस नहिं तन की, तब को गावणहारा ॥१॥

जब लग नदी न समुद्र समावै, तब लग बडै हंकारा ।
जब मन मिल्यौ राम सागर सो, तब यह मिटी पुकारा ॥२॥

जब लग भगति मुक्ति की आसा, परम तत्त सुणि गावै ।
जहाँ जहाँ आस धरत है यह मन, तहाँ तहाँ कछु न पावै ॥३॥

छाड़ै आस निरास परम पदु, तब सुख सति कर होई ।
कहै 'रविदास' जासूँ और कहत है, परम तत्त अब सोई ॥४॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी प्रभु को अपने निकट अनुभव करने का पवित्र उपदेश देते हैं जैसे कि नदी समुद्र में समाकर समुद्र का ही रूप हो जाती है ऐसे ही जीव प्रभु का नाम सिमरन कर उसका ही रूप हो जाता है।

गाड़ गाड़ अब का कहि गाऊँ ।
गावणहार कूँ निकट बताऊँ ॥ टेक ॥

जिस प्रभु के गुण मैं गाता हूँ अब मैं उसके क्या गुण गाऊँ? क्योंकि उसको अब मैं अपने निकट ही पाता हूँ।

जब लगि है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा ।
जब मन मिल्यौ आस नहिं तन की, तब को गावणहारा ॥१॥

जब तक जीव को प्रभु की प्राप्ति की आशा है तब तक वह परमात्मा को पुकारता है, पर जब मन प्रभु से मिल जाता है, तब उसे शरीर की सुध-बुध नहीं रहती। फिर कोई गाने वाला भी नहीं रहता।

जब लग नदी न समुद्र समावै, तब लग बडै हंकारा ।
जब मन मिल्यौ राम सागर सो, तब यह मिटी पुकारा ॥२॥

जब तक नदी में अहंकार रहता है, समुद्र में नहीं मिल जाती, तब तक वह खूब वेग से चलती रहती है, शोर मचाती है, बाढ़ लाती है और मिट्टी को काटती है। परन्तु जब वह समुद्र में समा जाती है तो समुद्र का ही रूप हो जाती है। ऐसे ही जब तक जीव के मन में अहंकार रहता है तब तक प्रभु से दूर रहता है। जब अहंकार समाप्त हो जाता है तब जीव प्रभु रूपी समुद्र में समा कर परमात्मा का ही रूप हो जाता है। पुकार समाप्त हो जाती है।

जब लग भगति मुक्ति की आसा, परम तत्त सुणि गावै ।
जहाँ जहाँ आस धरत है यह मन, तहाँ तहाँ कछु न पावै ॥३॥

जब तक प्रभुप्रेमी को मुक्ति की इच्छा होती है वह परम तत्त्व प्रभु की महिमा गाता और सुनता है। पर जब जीव इच्छाओं को त्याग कर, प्रभु की भक्ति करता है, तो उसको परम तत्त्व, भाव मुक्ति की प्राप्ति होती है।
छाड़ै आस निरास परम पद, तब सुख सति कर होई।
कहै 'रविदास' जासूँ और कहत है, परम तत्त्व अब सोई ॥४॥
जब जीव सांसारिक इच्छाओं से निराश होकर सिमरन करता है, तब वह जीव परम पद को प्राप्त कर, सभी सुख प्राप्त करता है। गुरु जी फरमाते हैं कि सांसारिक लोग, परमात्मा को भिन्न-भिन्न प्रकार से व्यक्त करते हैं, परन्तु उसकी प्राप्ति ही परम तत्त्व है।

शब्द - 44

राम जन होऊँ न भगत कहाऊँ, सेवा करूँ न दासा।
गुनीं जोग जगय कछु न जानूँ, तां थै रहूँ उदासा ॥टेक॥
भगत हूआ तो चढ़ै बड़ाई, जोग करूँ जग मानै ॥
गुन हुआ तो गुणी जन कहै, गुनी आप को तानै ॥१॥
ना मैं ममता मोह न मोहिया, ये सब जाहि बिलाई ॥
दोजख भिस्त दोऊ सम कर जानै-दुहुँ तरक है भाई ॥२॥
मैं तैं तैं मैं देखि सकल जग, मैं तैं मूल गंवाई।
जब मन समता एक एक मन, तबहिं एक है भाई ॥३॥
किसन करीम राम हरि राघव, जब लग एक न पेखा।
बेद कतेब कुरान पुराननि, सहज एक नहिं देखा ॥४॥
जोय जोय कर पूजिए सोय सोय कांची, सहज भाव सति होई।
कहि 'रविदास' मैं ताहि को पूजूँ, जाके गांव ठांव नहिं कोई ॥५॥
इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज उस परम आनन्दमयी अवस्था का वर्णन करते हैं जिसमें जीव प्रभु का नाम सिमरन कर उसमें (प्रभु में) ही विलीन हो जाता है।
राम जन होऊँ न भगत कहाऊँ, सेवा करूँ न दासा।
गुनीं जोग जगय कछु न जानूँ, तां थै रहूँ उदासा ॥टेक॥
गुरु रविदास जी प्रभु में विलीन होकर उस परम उच्च आनन्दमयी अवस्था का वर्णन करते हैं कि प्रभु जी! मैं आप का नाम सिमरन कर आप का ही रूप हो गया हूँ। हे प्रभु जी! न मैं आपका दास और न ही भक्त कहलाता हूँ, न ही आपकी सेवा करने वाला सेवक हूँ। हे प्रभु जी! न ही मैं योग और यज्ञ करने वाले गुणों के बारे में जानता हूँ। ऐसे कर्म करने से मैं उदास रहता हूँ।

भगत हूआ तो चढ़ै बड़ाई, जोग करूँ जग मानै ॥
गुन हुआ तो गुणी जन कहै, गुनी आप को तानै ॥१॥
हे प्रभु जी! जो जीव आप की भक्ति करता है, उसकी महिमा बढ़ेगी और अगर कोई जीव यज्ञों की साधना करता है, तो वह योगी माना जाता है। अगर कोई गुणवान है, तो उसको सांसारिक लोग गुणी कहेंगे और गुणी स्वयं को उत्तम मानता है कि मेरे जैसा गुणी और कौन है?
ना मैं ममता मोह न मोहिया, ये सब जाहि बिलाई ॥
दोजख भिस्त दोऊ सम कर जानै-दुहुँ तरक है भाई ॥२॥
न ही मुझे संसार की झूठी ममता और मोह ने मोहित किया है, यह सब मुझ से बहुत दूर चले गए हैं। मैं नरक और स्वर्ग दोनों को एक समान समझता हूँ, इस लिए मैंने दोनों को त्याग दिया है।
मैं तैं तैं मैं देखि सकल जग, मैं तैं मूल गंवाई।
जब मन समता एक एक मन, तबहिं एक है भाई ॥३॥
सांसारिक जीव मैं मेरी और अहंकार के कारण प्रभु को भूले हुए हैं और इस अहंकार में प्रभु को दिल से भुला दिया है। पर जब जीव सभ जीवों को एक समान जानकर प्रभु से सच्चा प्रेम करता है तब यह जीव और प्रभु एक हो जाते हैं।
किसन करीम राम हरि राघव, जब लग एक न पेखा।
बेद कतेब कुरान पुराननि, सहज एक नहिं देखा ॥४॥
कृष्ण, करीम, राम, हरि और राघव इत्यादि उस सर्वव्यापक प्रभु के अनेकों नाम हैं। इस बात का अनुभव तब तक नहीं होता जब तक सब जीवों को एक समान नहीं देखा जाता। फिर चाहे वह वेद, कतेब, कुरान, पुराण सभी पढ़ ले, पर सहजावस्था की प्राप्ति तो उसे प्रभु के नाम सिमरन से ही होती है।
जोय जोय कर पूजिए सोय सोय कांची, सहज भाव सति होई।
कहि 'रविदास' मैं ताहि को पूजूँ, जाके गांव ठांव नहिं कोई ॥५॥
प्रभु के नाम के बिना जो भी कर्मकाण्ड और साधना है, वह कच्ची भाव झूठी है। सहजावस्था रूपी सच्ची पूजा कर, जीव उस सत्य-स्वरूप प्रभु की प्राप्ति कर लेता है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं तो उस प्रभु की पूजा करता हूँ जिसका कोई विशेष स्थान और नाम नहीं, अर्थात् वह प्रभु ब्रह्माण्ड के कण-कण में विद्यमान है।

शब्द - 45

अब मेरी बूड़ी रे भाई तातै चडी लोक बड़ाई ॥टेक॥
अति अहंकार उर में सत-रज-तम ता मैं रहयो उरझाई ॥

क्रम बसि परयौ कछु न सूझै, स्वामी नाम भुलाई ॥१॥
 हम मानौ गुनी जोग सुनि जुगता हम महा पुरुख रे भाई ॥
 हम मानौ सूर सकल बिधि तियागी ममता नहीं मिटाई ॥२॥
 हम मानै अखिल शुनि मन सोध्यो सब चेतनि सुधि पाई ।
 ज्ञान ध्यान सबही हम जान्यो बूझै काऊन सों जाई ॥३॥
 हम मानै परम प्रेम रस जान्यो, नौ बिधि भगति कराई ॥
 स्वांग देखि सबही जग डहक्यो फिर आपन पोर बँधाई ॥४॥
 सांग धे सांच न जान्यो लोगनि यहि भरमाई ॥
 सयंग रूप मेशी जब पहेरी बोली तब सुधि पाई ॥५॥
 ऐसी भगति हमारी सन्तो प्रभुता एह बड़ाई ॥
 आपन अन्न और नहि मानत तातै मूल गंवाई ॥६॥
 भणै रविदास उदास ताही तैं अब कछु करयो न जाई ॥
 आपो खोइया भगति होत है तब रहै अन्तर उरझाई ॥७॥
 इस पावन शब्द में श्री गुरु रविदास जी जीवों को अहंकार का त्याग कर प्रभु
 का नाम सिमरन करने का उपदेश देते हैं ।
 अब मेरी बूझी रे भाई तातै चडी लोक बड़ाई ॥टेक॥
 हे भाई ! जिस समय जीव का अहंकार खत्म हो जाता है उस समय उसकी
 संसार में उपमा होने लगती है ।
 अति अहंकार उर में सत-रज-तम ता मैं रह्यो उरझाई ॥
 क्रम बसि परयौ कछु न सूझै, स्वामी नाम भुलाई ॥१॥
 प्रभु के नाम के बिना जीव अहंकार के कारण सतोगुणी, रजोगुणी और
 तमोगुणी बुद्धि में उलझा रहता है । कर्मों के वश में रहकर इस जीव को प्रभु के प्रति
 कोई समझ नहीं रहती । प्रभु की नाम रूपी नाव जो संसार रूपी भवसागर से पार कराने
 वाली है उसको जीव ने भुला दिया है ।
 हम मानौ गुनी जोग सुनि जुगता हम महा पुरुख रे भाई ॥
 हम मानौ सूर सकल बिधि तियागी ममता नहीं मिटाई ॥२॥
 यदि जीव अहंकार के कारण अपने आप को विद्वान्, गुणी, योगी, अच्छी
 युक्ति को जानने वाला और महान् समझता है । जीव अहंकार के कारण ही अपने आप
 को वीर और त्यागी समझता है परन्तु इसकी ममता नहीं मिटती ।
 हम मानै अखिल शुनि मन सोध्यो सब चेतनि सुधि पाई ।
 ज्ञान ध्यान सबही हम जान्यो बूझै काऊन सों जाई ॥३॥
 जीव स्वयं को सबसे बड़ा और मन पर नियंत्रण वाला मानता है कि मैंने

चेतन का ज्ञान पाया है, पर इसने प्रभु को याद करने की समझ नहीं पाई । यह जीव
 अहंकार के कारण खुद को बड़ा ज्ञानवान समझता है । इसने प्रभु को जाना ही नहीं ।
 हम मानै परम प्रेम रस जान्यो, नौ बिधि भगति कराई ॥
 स्वांग देखि सबही जग डहक्यो फिर आपन पोर बँधाई ॥४॥
 यह जीव अपने आप को प्रेम रस का ज्ञाता मानता है और कहता है कि मैंने
 नौ प्रकार की भक्ति की है । संसार रूपी झूठे स्वाँग को देखकर जीव ने सच्चे प्रभु को
 नहीं जाना और अपनी उपमा बढ़ाने में लगा रहा ।
 सांग धे सांच न जान्यो लोगनि यहि भरमाई ॥
 सयंग रूप मेशी जब पहिरी बोली तब सुधि पाई ॥५॥
 संसार के झूठे स्वरूप को देखकर सच्चे प्रभु को नहीं जाना, यही भ्रम लोगों
 को हो रहा है । जैसे यदि भेड़ शेर का रूप धारण कर ले तो भी उसकी आवाज सुनकर
 उसको पहचाना जा सकता है कि यह शेर नहीं है । इसी तरह जब तक जीव प्रभु के
 नाम से नहीं जुड़ता, तब तक इसको प्रभु की प्राप्ति नहीं होती, चाहे जितने चाहे रूप
 बदल ले ।
 ऐसी भगति हमारी सन्तो प्रभुता एह बड़ाई ॥
 आपन अन्न और नहि मानत तातै मूल गंवाई ॥६॥
 हे संत जनों ! प्रभु की भक्ति इतनी सच्ची है कि मैं उस प्रभु की सच्ची भक्ति
 कर उसका ही रूप हो गया हूँ । यह सब प्रभु की ही उपमा है, परन्तु जो जीव अपने
 आप को सबसे प्रिय मानता है और दूसरे लोगों को कुछ नहीं समझता, अहंकार के
 कारण वह अपना आप गँवा लेता है ।
 भणै रविदास उदास ताही तैं अब कछु करयो न जाई ॥
 आपो खोइया भगति होत है तब रहै अन्तर उरझाई ॥७॥
 सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैं संसार से उपराम हूँ । मैं प्रभु की
 क्या उपमा करूँ ? भाव उसकी महिमा अपरम्पार है । स्वयं को मिटाकर प्रभु की भक्ति
 होती है, जिसके पश्चात् जीव और प्रभु में अन्तर समाप्त हो जाता है, तथा जीव प्रभु
 का ही रूप हो जाता है ।

 शब्द - 46
 भाई रे ! भ्रम भगति सुजानि ।
 जो लों साँच नहीं पहिचान ॥टेक॥
 भ्रम नाचन भ्रम गायण भ्रम जप तप दान ।

भ्रम सेवा भ्रम पूजा भ्रम सों पहिचान ॥१॥
 भ्रम खट कर्म सकल संहिता भ्रम गृहि बन जानि ॥
 भ्रम करि करि करम कीउ भ्रम की यह बानि ॥२॥
 भ्रम इंद्री निग्रह कीया भ्रम गुफा में बास ॥
 भ्रम तौ लौ जानिये करै सुन्न की आस ॥३॥
 भ्रम शुद्ध सरीर जो लौ भ्रम नांव बिनांव ॥
 भ्रम भनि रविदास तौ लौ जौ लौ चाहै ठांव ॥४॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को प्रभु की भक्ति करने का उपदेश देते हैं। उस प्रभु की भक्ति के बिना सब जीव भ्रम-ग्रस्त भ्रमण कर रहे हैं।

भाई रे! भ्रम भगति सुजानि।
 जो लों साँच नहीं पहिचान ॥टेक॥

हे भाई! यह संसार एक झूठा भ्रम है, इस लिए प्रभु के उत्तम ज्ञान को तुम भक्ति के द्वारा जानो। जब तक जीव के हृदय में प्रभु की सच्ची भक्ति नहीं है, तब तक उसे प्रभु की पहचान नहीं हो सकती।

भ्रम नाचन भ्रम गायण भ्रम जप तप दान।
 भ्रम सेवा भ्रम पूजा भ्रम सों पहिचान ॥१॥

प्रभु के नाम के बिना नाचना, गाना, जप करना, तप करना और दान करना सब भ्रम है। प्रभु-प्रेम के बिना सेवा करनी, पूजा करनी यह सब भ्रम है। इस लिए हे भाई! तुम भ्रम की पहचान करो क्योंकि यह संसार भी एक भ्रम है।

भ्रम खट कर्म सकल संहिता भ्रम गृहि बन जानि ॥
 भ्रम करि करि करम कीउ भ्रम की यह बानि ॥२॥

छः प्रकार के कर्म करना, वेदों शास्त्रों के सारे विधि विधान और गृहस्थ छोड़ कर जंगल में चले जाना यह सब भ्रम ही हैं। भ्रम वश किए गए सभी कर्म भ्रम ही है।

भ्रम इंद्री निग्रह कीया भ्रम गुफा में बास ॥
 भ्रम तौ लौ जानिये करै सुन्न की आस ॥३॥

इन्द्रियों को वश में करना और गुफा में वास करना यह सारे ही भ्रम हैं। जब जीव सहजावस्था में पहुँच कर परमात्मा की इच्छा करता है, तब वह संसार के झूठे भ्रम को जान लेता है।

भ्रम शुद्ध सरीर जो लौ भ्रम नांव बिनांव ॥

भ्रम भनि रविदास तौ लौ जौ लौ चाहै ठांव ॥४॥

प्रभु की सच्ची भक्ति के बिना शुद्ध शरीर रखना भी भ्रम है। जगत् गुरु रविदास जी वर्णन करते हैं कि जब तक जीव को परमब्रह्म की प्राप्ति नहीं होती, तब तक भ्रम का नाश नहीं होता, चाहे जीव सारी दुनिया का भ्रमण कर ले।

शब्द-47

ज्यो तुम कारनि केसवे अंतर लिव लागी।
 एक अनुपम अनुभवी किमि होइ बिभागी ॥टेक॥
 एक अभिमानी चातिगा बिचरत जग माहीं।
 जदपि जल पूरन मही कहूँ वा रुचि नाही ॥१॥
 जैसे कामी देखि कामिनी हिरदै सूल उपजाई ॥
 कोटि वेद बिधि उचरै बाकी बिथा न जाई ॥२॥
 जो जेहि चाहै सो मिलै आरति गति होई।
 कहै रविदास यह गोप नाही जानै सब कोई ॥३॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु प्रेम का वर्णन करते हैं कि जिस समय जीव की प्रभु से लगन लग जाती है, तब वह जीव प्रभु का रूप हो जाता है।

ज्यो तुम कारनि केसवे अंतर लिव लागी।
 एक अनुपम अनुभवी किमि होइ बिभागी ॥टेक॥
 हे प्रभु जी! जब से मेरे मन में आपके प्रेम की लगन लगी है, मैं आप में ही समा गया हूँ। एक आपके प्रेम का अनुभव भी अनुपम है जो बांटा नहीं जा सकता और न ही व्यक्त किया जा सकता है।

एक अभिमानी चातिगा बिचरत जग माहीं।
 जदपि जल पूरन मही कहूँ वा रुचि नाही ॥१॥

जैसे एक प्रेम अभिमानी पपीहा संसार में स्वांति बूंद की तलाश में घूमता है, चाहे सारी धरती पानी से भरी हो, परन्तु उसकी रूचि स्वांति बूंद के बिना, किसी और पानी में नहीं होती, ऐसे ही प्रभु प्रेमी की रूचि केवल आप जी के नाम में ही है।

जैसे कामी देखि कामिनी हिरदै सूल उपजाई ॥
 कोटि वेद बिधि उचरै बाकी बिथा न जाई ॥२॥

जैसे कामी पुरुष स्त्री को देखकर, शूल जैसी पीड़ा अनुभव करता है चाहे करोड़ों वैद, अनेक विधियों से उसका इलाज करें, परन्तु उसकी काम पीड़ा खत्म नहीं होती। ऐसे ही प्रभु के प्रेमी जीव को, प्रभु से एक पल के वियोग से भी, दुःख अनुभव

होता है।

जो जेहि चाहै सो मिलै आरति गति होई।
कहै रविदास यह गोप नाही जानै सब कोई ॥३॥

जो जीव प्रभु से प्यार करता है, उसको प्रभु की प्राप्ति होती है। आवश्यकता केवल प्रभु की शरण में जाने की है। गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि यह बात छुपी हुई नहीं है, हर कोई इस बात को जानता है कि जो जीव प्रभु से सच्चा प्यार करता है, उसको प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

शब्द-48

आर्यों हो आर्यों देव तुम सरना।
जानि कृपा कीजै आपनौ जना ॥ टेक ॥
त्रिबिधि जोनि बास जम की अगम त्रास
तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिरयौ ॥
ममिता अंह विखै मदि मातों
ऐह सुख कबहुं न दूतुर तिरौं ॥१॥
तुम्हरे नांव बिसास छाड़ी है आन की आस
संसार धरम मेरे मन न धीजै ॥
रविदास दास की सेवा मानि हो देवाधिदेव
पतित पावन नाम प्रगट कीजै ॥२॥

इस शब्द द्वारा श्री गुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव प्रभु की शरण में आ जाता है, प्रभु की कृपा से वह जीव जीवन मुक्त हो जाता है।

आर्यों हो आर्यों देव तुम सरना।
जानि कृपा कीजै आपनौ जना ॥ टेक ॥
सतगुरु रविदास जी महाराज विनम्रता से प्रभु के आगे निवेदन करते हैं कि हे देवों के देव प्रभु जी! मैं आप की शरण में आया हूँ। आप मुझे अपना दास समझकर मुझ पर कृपा कीजिए, अपने दर्शन दीजिए।

त्रिबिधि जोनि बास जम की अगम त्रास
तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिरयौ ॥
प्रभु जी! आपके सिमरन के बिना यह जीव विभिन्न योनियों में निवास कर अनेक दुखों में भटक रहा है।
ममिता अंह विखै मदि मातों
ऐह सुख कबहुं न दूतुर तिरौं ॥१॥

प्रभु के नाम के बिना जीव ममता, अहंकार, विषय-वासनाओं में मग्न रहता है। विषयों के सुख में रह कर जीव पाँच दूतों पर विजय हासिल नहीं कर सकता।

तुम्हरे नांव बिसास छाड़ी है आन की आस
संसार धरम मेरे मन न धीजै ॥
प्रभु जी! आप के नाम के बिना मैंने अन्य सभी इच्छाएँ छोड़ दी हैं क्योंकि आपके नाम के बिना, मेरा संसार के झूठे धर्म कर्म में मन नहीं लगता।

रविदास दास की सेवा मानि हो देवाधिदेव
पतित पावन नाम प्रगट कीजै ॥२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज, प्रभु से विनम्र भाव से निवेदन करते हैं कि हे प्रभु जी! अपने दास की सेवा स्वीकार करो और पापियों को पवित्र करने वाले नाम की बख्शिष करो जी।

शब्द - 49

भाई रे राम कहां है मोहि बतावो ॥
सत राम ता के निकट न आवो ॥ टेक ॥
राम कहत सब जगत भुलाना ॥ सो यहु राम न होई ॥
करम अकरम करुनामय केसो ॥ करता नाव सु कोई ॥१॥
जा रामहि सबै जग जानै ॥ भ्रमि भूलो रे भाई ॥
आप आप थै कोई न जाणै ॥ कहै कौन सो जाई ॥२॥
सत तन लोभ परस जीय तन मन ॥ गुन परसत नहीं जाई ॥
अलिख नाम जा कौ ठौर न कतहूँ ॥ क्यूं न कहौ समुझाई ॥३॥
भगै रविदास उदास ताही तै ॥ करता कौ हैं भाई ॥
केवल करता एक सही करि ॥ सति राम तिहि ठाई ॥४॥

इस पावन शब्द में श्री गुरु रविदास जी जीवों को सर्वव्यापक राम का नाम सिमरन करने का उपदेश देते हैं।

भाई रे राम कहां है मोहि बतावो ॥
सत राम ता के निकट न आवो ॥ टेक ॥
हे भई! तुम राम नाम का उच्चारण तो करते हो, पर मुझे बताओ कि वे राम कहाँ हैं? सर्वव्यापक सच्चे राम के तो तुम निकट भी नहीं आ रहे, भाव तुम अज्ञानता के कारण भटक रहे हो।

राम कहत सब जगत भुलाना ॥ सो यहु राम न होई ॥
करम अकरम करुनामय केसो ॥ करता नाव सु कोई ॥१॥

सच्चे सर्वव्यापक राम को भुलाकर, राम राम करता हुआ, सारा संसार भूला हुआ है, पर वह सर्वव्यापक राम नहीं है। सर्वव्यापक राम तो, सारे संसार के कर्मों को करने वाला और दयालु प्रभु सारे संसार का कर्णधार है।

जा रामहि सबै जग जानै ॥ भ्रमि भूलो रे भाई ॥

आप आप थै कोई न जाणै ॥ कहै कौन सो जाई ॥२॥

जिस सर्वव्यापी राम को सारा संसार जानता है, हे भाई! तूने झूठे भ्रम में उसे भुला दिया है। भाई अपने आप ही उस प्रभु को कोई नहीं जान सकता। तुम्हें यह बात कौन समझाए?

सत तन लोभ परस जीय तन मन ॥ गुन परसत नहीं जाई ॥

अलिख नाम जा कौ ठौर न कतहूँ ॥ क्यूँ न कहौ समुझाई ॥३॥

वह प्रभु सतोगुण, तमोगुण और रजोगुण तीनों पर तन, मन और लोभ से मुक्त है और उसके गुणों को व्यक्त नहीं किया जा सकता। राम का नाम सर्वज्ञ है, उसके रहने का कोई एक ठिकाना नहीं है। हे भाई! तुम्हें इस बात की समझ क्यों नहीं आती?

भणै रविदास उदास ताही तै ॥ करता कौ हैं भाई ॥

केवल करता एक सही करि ॥ सति राम तिहि ठाई ॥४॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरा मन संसार से उपराम होकर, कर्णधार प्रभु के नाम से जुड़ा है और वह प्रभु कण-कण में है।

शब्द - 50

ऐसो कुछ अनुभौ कहत न आवै ॥

साहिब मिलै तो को बिगरावै ॥ टेक ॥

सब में हरि है हरि में सब है हरि अपनो जिन जाना ॥

साखी नहीं और कोई दूसर जाननहार सयाना ॥१॥

बाजीगर सों रचि रहीये बाजी का मरम न जाना ॥

बाजी झूठ साँच बाजीगर जाना मन पतियाना ॥२॥

मन थिर होइ तो कोई न सूझै, जानै जाननहारा ॥

कहै रविदास बिमल विवेक सुख सहिज सरूप संभारा ॥३॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज, सब जीवों को हरि के नाम का सिमरन करने का उपदेश देते हैं कि उस हरि के मिलाप के आलौकिक अनुभव का वर्णन नहीं किया जा सकता। जीव को हरि रूपी बाजीगर से प्रेम करना चाहिए।

ऐसो कुछ अनुभौ कहत न आवै ॥

साहिब मिलै तो को बिगरावै ॥ टेक ॥

प्रभु के मिलाप के परम आनन्द का वर्णन नहीं किया जा सकता। जब जीव को हरि की प्राप्ति हो जाती है, तब कोई उसे हरि से अलग नहीं कर सकता।

सब में हरि है हरि में सब है, हरि अपनो जिन जाना ॥

साखी नहीं और कोई दूसर जाननहार सयाना ॥१॥

सारे जीवों में हरि है और सब जीव हरि में विद्यमान हैं। इस भेद को केवल उसने ही जाना है जिसने हरि को जान लिया है। उस हरि के समान कोई दूसरा और नहीं है। उस हरि को समझने वाला इस संसार में उत्तम है।

बाजीगर सों रचि रहीये बाजी का मरम न जाना ॥

बाजी झूठ साँच बाजीगर जाना मन पतियाना ॥२॥

जैसे कोई जीव बाजीगर की बाजी को देखकर उस में मग्न हो जाता है परन्तु बाजीगर के खेल के भेद को नहीं जान सकता। इस प्रकार ही हरि रूपी बाजीगर ने संसार का खेल रचाया है, यह झूठा है परन्तु वह हरि बाजीगर सच्चा है। जिस जीव को इस बात का ज्ञान हो गया है कि यह माया झूठी है और हरि सच है, उस जीव का मन हरि में विलीन हो जाता है।

मन थिर होइ तो कोई न सूझै, जानै जाननहारा ॥

कहै रविदास बिमल विवेक सुख सहिज सरूप संभारा ॥३॥

जिस जीव का मन प्रभु के नाम में लीन हो गया है, उस को और कुछ नहीं भाता और वह कण-कण के ज्ञाता प्रभु को जान लेता है। उस जीव को निर्लेप प्रभु विचार सच्चे सुख और सहज स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है।

शब्द - 51

पंडत! अखिल खिलै नही का कहि गांऊ कोई न कहै समुझाई ॥

अबरन बरन रूप नहीं जा के सो कहाँ लयो लायि समाई ॥ टेक ॥

चंद सूर नहिं राति दिवस नहिं धरनि आकास न भाई ॥

करम अकरम नहीं सुभ असुभ नही का कहि देहु बड़ाई ॥१॥

सीत न ऊसन वायु नहीं सरवत काम कुटिल नहीं होई ॥

जोग न भोग रोग नहीं जा कै कहों नांव सति सोई ॥२॥

निरंजन निराकार निरलेपहि निरबिकार निरासी ॥

काम कुटिलता ता ही कहि गावै हर हर आवै हांसी ॥३॥

गगन धूर धूप नहिं जा के पवन पूर नहीं पाणी ॥

गुन बिगुन कहियत नहीं जा कै कहो तुम बात सयानी ॥४॥

याही सौ तुम जोग कहत हौ जब लग आस की पासि ॥

छूटे तबही जब मिलै एक ही भणै रविदास उदासी ॥५॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि प्रभु सर्वव्यापक है और एक है। उसमें कोई भिन्न-भेद नहीं है। इस लिए सांसारिक लोगों को जाति-पाति, भ्रम, कर्म-काण्ड, बरन अबरन के चक्र से मुक्त होकर उस प्रभु का सिमरन करना चाहिए।

पंडित! अखिल खिलै नही का कहि गांऊ कोई न कहै समुझाई ॥

अबरन बरन रूप नहीं जा के सो कहाँ लयो लायि समाई ॥ टेक ॥

हे भाई! कोई भी पंडित यह बात समझाकर नहीं बताता कि सर्वव्यापक प्रभु भिन्न-भिन्न नहीं होता भाव वह सर्वज्ञ है और सब जीवों में एक से अनेक रूप धारण कर सारे संसार में विद्यमान है। उस प्रभु का कोई अबरन नहीं है, कोई बरन नहीं है, कोई रूप नहीं है और वह कहाँ समाया हुआ है?

चंद सूर नहिं राति दिवस नहिं धरनि आकास न भाई ॥

करम अकरम नहीं सुभ असुभ नही का कहि देहु बड़ाई ॥१॥

वह प्रभु न चन्द्रमा है, न सूर्य, न ही रात, न ही दिन, न ही धरती और न आकाश है। वह कर्म नहीं, अकर्म नहीं, शुभ नहीं, अशुभ नहीं। हे भाई! मैं प्रभु की उपमा कैसे करूँ?

सीत न ऊसन वायु नहीं सरवत काम कुटिल नहीं होई ॥

जोग न भोग रोग नहीं जा कै कहों नांव सति सोई ॥२॥

वह प्रभु ठंडी या गर्म वायु नहीं है और नीच कर्म भी नहीं है। प्रभु योग और भोग क्रिया से मुक्त है क्योंकि उस प्रभु का नाम सच्चा है।

निरंजन निराकार निरलेपहि निरबिकार निरासी ॥

काम कुटिलता ता ही कहि गावै हर हर आवै हांसी ॥३॥

प्रभु माया, आकार, विकारों, श्वासों इत्यादि से मुक्त और निरलेप है। कामी और कुटिल जीव सच्ची प्रीति के बिना उसका नाम गाते हैं, जिस पर मुझे बार-बार हँसी आती है क्योंकि ऐसे जीव बाहरी दिखावा ही करते हैं।

गगन धूर धूप नहिं जा के, पवन पूर नहीं पाणी ॥

गुन बिगुन कहियत नहीं जा कै, कहो तुम बात सयानी ॥४॥

प्रभु को केवल आकाश, धूल और धूप नहीं कहा जा सकता और न ही उसको जल और वायु कहा जा सकता है। उस प्रभु को केवल निर्गुण और सगुण भी नहीं कहा जा सकता। यही बात सर्वोत्तम है।

याही सौ तुम जोग कहत हौ जब लग आस की पासि ॥

छूटे तबही जब मिलै एक ही भणै रविदास उदासी ॥५॥

सतगुरु रविदास जी कहते हैं कि हे पंडित! जिस उम्मीद से तुम बँधे हुए हो तुम उन बाहरी आडम्बरों को योग कहते हो, इस कारण तुम प्रभु के स्वरूप को नहीं समझ सकते। जीव इन बाहरी आडम्बरों से तब मुक्त होता है, जब वह केवल एक प्रभु का नाम सिमरन कर, संसार में रहते हुए उपराम हो जाता है।

शब्द - 52

नरहरि चंचल है मति मोरी कैसे भगति करूँ मैं तोरी ॥टेक॥

तूँ मोहि देखै मैं तोहि देखूँ प्रीति परस्पर होई ॥१॥

तूँ मोहि देखै हऊँ तोहि न देखूँ ऐहु मति सब बुधि खोई ॥२॥

सब घट अंतर रमसि निरंतर मैं देखत हूँ नहीं जाना ॥

गुन सब तोर मोरि सब औगुन कृत उपकार न माना ॥३॥

मैं तो तोरि मोरी असमझिस कैसे करि निसतारा ॥

कहि रविदास माधो करुणामय जै जै जगत अधारा ॥४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीव को पावन उपदेश देते हैं कि जीव अज्ञानता वाली बुद्धि को त्याग कर प्रभु की सच्ची भक्ति करता है और प्रभु का ही रूप हो जाता है।

नरहरि चंचल है मति मोरी कैसे भगति करूँ मैं तोरी ॥टेक॥

हे प्रभु जी! आप को भूले हुए जीव की मति चंचल है, इस लिए आप ही बताइए कि जीव आप की भक्ति कैसे करे, भाव जब तक मेरी मति चंचल थी, तब तक मैं आप की भक्ति नहीं कर सकता था।

तूँ मोहि देखै मैं तोहि देखूँ प्रीति परस्पर होई ॥१॥

हे प्रभु जी! अब मैंने चंचल मति को त्याग दिया है और आप जी की सच्ची भक्ति करता हूँ। मुझे अब ऐसा अनुभव हो रहा है जैसे आप मुझे देख रहे हैं और मैं भी आपके दर्शन कर रहा हूँ। अब हमारी परस्पर, आपकी और मेरी, सच्ची प्रीति हो गई है।

तूँ मोहि देखै हऊँ तोहि न देखूँ ऐहु मति सब बुधि खोई ॥२॥

मैंने यह विचार अपने मन से निकाल दिया है कि आप मुझे देख रहे हैं और मैं आप के दर्शन नहीं कर रहा हूँ। भाव कि तुम्हारी और मेरी प्रीति अटूट है।

सब घट अंतर रमसि निरंतर मैं देखत हूँ नहीं जाना ॥

हे प्रभु जी! आप सभी प्राणियों में निवास कर रहे हो। मैं इस सच को समझकर भी नहीं समझ सका।

गुन सब तोर मोरि सब औगुन कृत उपकार न माना ॥३॥

हे प्रभु जी! आप सर्व गुणी हो, मुझ में सब अवगुण हैं क्योंकि मैंने आपके उपकार को नहीं जाना।

मैं तो तोरि मोरी असमझिस कैसे करि निसतारा ॥

हे प्रभु! जब तक, मैं आपको समझने से अनभिज्ञ था, तब तक मैं मुक्त कैसे हो सकता था?

कहि रविदास माधो करुणामय जै जै जगत अधारा ॥४॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे सर्वव्यापी प्रभु! आप कृपावान हो, आप सारे जगत का आधार स्वरूप हो और आप के गुण गाकर जीव मुक्त होते हैं।

शब्द - 53

तब राम नाम कहि गावैगा ॥

रारंकार रहित सभहिन में अंतरि मेल मिलावैगा ॥टेक॥

लोहा कंचन सम कर देखै भेद अभेद समावैगा ॥

जो सुख होवै पारस के परसे सो सुख वा को आवैगा ॥१॥

गुर प्रसादि भई अनुभैमति विष अमृत सम ध्यावैगा ॥२॥

कहै रविदास मेदि आपा पर तब वा ठौरहि पावैगा ॥३॥

इस पावन शब्द में श्री गुरु रविदास जी महाराज प्राणियों को यह पावन उपदेश देते हैं कि जीव प्रभु से सच्ची प्रीति कर प्रभु का नाम सिमरन कर उसका ही रूप हो जाता है।

तब राम नाम कहि गावैगा ॥

रारंकार रहित सभहिन में अंतरि मेल मिलावैगा ॥टेक॥

जब जीव एकाग्र होकर, प्रभु का नाम गाएगा, तब जीव घट घट में उपस्थित प्रभु को, अपने भीतर ही मिला लेगा।

लोहा कंचन सम कर देखै भेद अभेद समावैगा ॥

प्रभु की कृपा से लोहे व सोने को समान जानने की स्थिति में पहुंच कर प्रभु अभेद के भेद को पाकर उसी में विलीन हो जाएगा।

जो सुख होवै पारस के परसे सो सुख वा को आवैगा ॥१॥

जैसे जो सुख और आनन्द लोहे को पारस के साथ स्पर्श होने से मिलता है, भाव लोहा स्वर्ण बन जाता, ऐसे ही जो आनंद जीव को प्रभु की प्राप्ति से मिलता है, उस परमानंद रूपी सुख का वर्णन गा कर नहीं किया जा सकता।

गुर प्रसादि भई अनुभैमति विष अमृत सम ध्यावैगा ॥२॥

गुरु की कृपा से जीव की मति भय से मुक्त हो जाती है। जिसके फलस्वरूप विष और अमृत एक समान हो जाते हैं।

कहै रविदास मेदि आपा पर तब वा ठौरहि पावैगा ॥३॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं जब जीव अंह भाव मिटा लेता है, उस समय प्रभु के दरबार में स्थान प्राप्त कर लेता है, भाव प्रभु का ही रूप हो जाता है।

शब्द - 54

संतो अनिन भगति यह नाही ॥

जब लग सत-रज-तम तीनो गुन बियापत है या माहीं ॥ टेक ॥

सोई आन अंतर करै हरि सों अपमारग को आनै।

काम क्रोध मद लोभ मोह की पल पल पूजा ठानै ॥१॥

सकित सनेह इष्ट अंग लावै अस्थल अस्थल खेलै।

जो कछु मिलै आन अखत जियो सुत दारा सिर मेलै ॥२॥

हरिजन हरि बिनु और न जानै तजै आन सभ तियागी।

कहि रविदास सोई जन निर्मल निसिदिन निज अनुरागी ॥३॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास जी महाराज जीवों को प्रभु के समक्ष समर्पित होकर सच्ची भक्ति करने का उपदेश देते हैं।

संतो अनिन भगति यह नाही ॥

जब लग सत-रज-तम तीनो गुन बियापत है या माहीं ॥ टेक ॥

हे संतो! यह प्रभु की अनन्य भक्ति नहीं है, जब तक जीव में सतो, रजो, तमो तीन गुण, विद्यमान हैं।

सोई आन अंतर करै हरि सों अपमारग को आनै।

काम क्रोध मद लोभ मोह की पल पल पूजा ठानै ॥१॥

संसार की झूठी माया ही जीव को प्रभु से दूर विपरीत दिशा में ले जा रही है। जिस कारण जीव काम, क्रोध, अंहकार, लोभ और मोह में फँसा हुआ पल-पल माया की पूजा करके प्रभु से दूर जा रहा है।

सकित सनेह इष्ट अंग लावै अस्थल अस्थल खेलै।

जो कछु मिलै आन अखत जियो सुत दारा सिर मेलै ॥२॥

प्रभु का प्रेमी भक्त सर्व शक्तिमान प्रभु को अपने हृदय में बसा लेता है और खण्डों ब्रह्मण्डों में जा कर आनन्द लेता है। प्रभु के नाम के बिना जीव को संसार में जो कुछ प्राप्त होता है। वह पुत्र और स्त्री भाव परिवार के काम आता है। अंत समय में जीव के साथ केवल सिमरन ही जाएगा।

हरिजन हरि बिनु और न जानै तजै आन सभ तियागी ।

कहि रविदास सोई जन निर्मल निसिदिन निज अनुरागी ॥३॥

प्रभु का दास किसी भी वस्तु को परमात्मा के समान नही समझता और सब पदार्थों को त्याग देता है । सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि वही जीव माया मुक्त है, जो दिन रात अर्थात् श्वास-श्वास प्रभु का सिमरन करता है और उसके नाम में लीन रहता है ।

शब्द - 55

भक्ति ऐसी सुनहुरे भाई ।

आई भगति तऊ गई बडाई ॥ टेका॥

कहा भयो नाचे अरु गाये कहा भयो तप कीन्हे ।

कहा भयो जो चरन पखारे जौ लो तत्त नहीं चीन्हें ॥१॥

कहा भयो जे मूंड मुंडायौ बहु तीरथ ब्रत कीन्हे ।

स्वामी दास भगत अरु सेवक काहू परम तत्त नहीं चीन्हें ॥२॥

कहै 'रविदास' तेरी भगति दूर है भाग बडै सो पावै ।

तजि अभिमान मेटि आपा पर पिपलक है चुनि खावै ॥३॥

गुरु रविदास जी जीवों को प्रभु भक्ति करने का पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु की भक्ति उस समय जीवन में आती है जब जीव के मन में से लोक उपमा और झूठे अहंकार का नाश हो जाता है ।

भक्ति ऐसी सुनहुरे भाई ।

आई भगति तऊ गई बडाई ॥ टेका॥

हे भाई! सुनो, प्रभु की भक्ति ऐसी पवित्र है जिस के आने से जीव के मन से अहंकार का नाश हो जाता है ।

कहा भयो नाचे अरु गाये कहा भयो तप कीन्हे ।

कहा भयो जो चरन पखारे जौ लो तत्त नहीं चीन्हें ॥१॥

बाह्य आडम्बरो के कारण कुछ हासिल नहीं हो सकता । चाहे जीव नाचे, गाये, तप करे और देवी देवताओं के चरण धोये, यह सब करने से कोई लाभ नहीं होता, जब तक कोई जीव परम तत्व को नही जानता, भाव सच्ची प्रेम भक्ति नहीं करता

कहा भयो जे मूंड मुंडायौ बहु तीरथ ब्रत कीन्हे ।

स्वामी दास भगत अरु सेवक काहू परम तत्त नहीं चीन्हें ॥२॥

चाहे जीव सिर मुंडवा ले, तीर्थ स्नान करे और व्रत रखे, इस से प्रभु की

प्राप्ति नहीं हो सकती । स्वामी और दास भक्ति (गुरु और शिष्य भक्ति करने) का भी कोई लाभ नहीं जब तक यह जीव परम तत्व प्रभु को नहीं जानता ।

कहै 'रविदास' तेरी भगति दूर है भाग बडै सो पावै ।

तजि अभिमान मेटि आपा पर पिपलक है चुनि खावै ॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी कथन करते हैं कि प्रभु जी आपकी भक्ति दूर है । जिस जीव के बड़े भाग्य हैं, वही जीव आपकी भक्ति करता है । जिस प्रकार अपने झूठे अहंकार को त्याग कर चींटी रेत में मिली हुई चीनी को चुन-चुन कर खा लेती है, ऐसे ही जो जीव इस संसार के झूठे अहंकार को त्याग कर विनम्रता ग्रहण कर प्रभु की भक्ति करता है, वह परमानन्द की प्राप्ति कर लेता है ।

शब्द - 56

अब कछु मरम बिचारा हो हरि ।

आदि अंत औसान राम बिन कोय न करै निसतारा हो हरि ॥टेक॥

जल ते पंक पंक ते अमृतजल जलहि सुध होइ जैसे ।

ऐसे भरम करम जीय बांधियो छूटैं तुम बिन कैसे हो हरि ॥१॥

जप तप बिधी निषेध नाम करुणामै पाप पुन दोऊ माया ।

ऐसे मोहित मन गति बिमुख धन जनम जनम डँहकाया हो हरि ॥२॥

ताड़न छेदन त्राछन खेदन बहु बिधि करि ले उपाई ।

लुणखड़ी संजोग बिना जैसे कनिक कलंक न जाई हो हरि ॥३॥

कहि रविदास उदास ताही तैं कहा उपाय अब कीजै ।

भै बूड़त भैभीत भगति जन करि अवलंबन दीजै हो हरि ॥४॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को उपदेश देते हैं कि परमात्मा के नाम के बिना जीव की मुक्ति नहीं हो सकती । प्रभु के नाम का सहारा लेकर जीव इस संसार रूपी भवसागर को पार कर लेता है ।

अब कछु मरम बिचारा हो हरि ।

आदि अंत औसान राम बिन कोय न करै निसतारा हो हरि ॥टेक॥

हे हरि जी! आप जी का सिमरन कर मैंने अब वास्तविक रहस्य अर्थात् ब्रह्म ज्ञान के भेद को विचार लिया है कि सृष्टि के आदि से लेकर अंत तक आप जी के बिना प्राणियों को कोई भी मुक्ति नहीं दे सकता ।

जल ते पंक पंक ते अमृतजल जलहि सुध होइ जैसे ।

ऐसे भरम करम जीय बांधियो छूटैं तुम बिन कैसे हो हरि ॥१॥

जैसे पानी में कीचड़ होता है और कीचड़ में कमल के रूप में अमृत पैदा

होता है इस प्रकार पानी ही पानी को सुख प्रदान करता है। कीचड़ में रह कर कमल कीचड़ से निर्लेप रहता है, ऐसे ही जीव कर्म और भ्रम के बंधन में बंधा हुआ है। हे प्रभु यह जीव आप के बिना इन झूठे बंधनों से कैसे मुक्त हो सकता है? केवल आप की कृपा से ही जीव झूठे बंधनों से मुक्त हो सकता है।

जप तप बिधी निषेध नाम करुणामै पाप पुन दोऊ माया।

ऐसे मोहित मन गति बिमुख धन जनम जनम डँहकाया हो हरि ॥२॥

जप करना, तप करना, विधि के द्वारा वर्जित पाप-कर्म और पाप-पुण्य दोनों ही, हरि जी आप के नाम के बिना माया के रूप हैं। इन झूठे आडम्बरों के कारण जीव आप से विमुख होकर, जन्म-जन्मान्तर तक संसार के आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है।

ताड़न छेदन त्राछन खेदन बहु बिधि करि ले उपाई।

लुणखड़ी संजोग बिना जैसे कनिक कलंक न जाई हो हरि ॥३॥

चाहे सोने की कालिख दूर करने के लिए सोने को जितना मर्जी तपाया, छेदा और खदेड़ा जाए, परन्तु सोने की कालिख निशाद के बिना नहीं उतरती। ऐसे ही जीव हरि के नाम के बिना जितनी चाहे योग-साधना और तप करे परन्तु जीव के अंतर्मन से कालुष नहीं जाती।

कहि रविदास उदास ताही तैं कहा उपाय अब कीजै।

भै बूझत भैभीत भगति जन करि अवलंबन दीजै हो हरि ॥४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि कल्युग के प्रभाव से बचने के लिए अब जीव क्या उपाय (साधन) करे? हे हरि जी! संसार के भयपूर्ण भवसागर में डूब रहे जीव को आप कृपा कर अपना सहारा देकर भव-सागर से पार करो जी।

शब्द - 57

नरहरि प्रगटसि ना हो प्रगटसि ना हो

दीना नाथ दयाल ॥ टेक ॥

जनमत ही ते हो बिगरान।

अब कछू बूजत बहुरि सियान ॥१॥

परिवार बिमुख मोहि लाग।

कछु समुझि परत नहिं जानि ॥२॥

यह भौ बिदेस कलि काल।

हम आन परियो जमजाल ॥३॥

कबहुक तोर भरोस।

जो मैं न कहूँ तो मोर दोस ॥४॥

अस कहियत हूँ मैं अजान।

अहो प्रभु तुम सर्वज्ञ सयान ॥५॥

सुत सेवक सदा असोच।

ठाकर पितहिं सब सोच ॥६॥

रविदास बिनवै कर जोरि

अहो सुआमी तुम मोहिं न छोरि ॥७॥

सुतौ पुरबला अकरम मोर।

बलि जाऊँ करौ जिन कोर ॥८॥

इस शब्द द्वारा श्री गुरु रविदास जी सांसारिक जीवों को प्रभु के समक्ष विनम्रता से प्रार्थना करने का ढंग बताते हैं कि प्रभु के दर्शनों की चाह में जीव प्रभु के समक्ष दर्शन देने के लिए निवेदन करता है।

नरहरि प्रगटसि ना हो प्रगटसि ना हो

दीना नाथ दयाल ॥ टेक ॥

हे प्रभु जी! आप प्रकट हो कर मुझे दर्शन नहीं दे रहे हो। आप कृपा करके दीन-बन्धु मुझे दर्शन दीजिए।

जनमत ही ते हो बिगरान।

अब कछू बूजत बहुरि सियान ॥१॥

प्रभु जी संसार में आकर जीव आप से बिछुड़ जाता है। इस बात की समझ बुद्धिमान जीवों को ही आती है।

परिवार बिमुख मोहि लाग।

कछु समुझि परत नहिं जानि ॥२॥

प्रभु के नाम में लीन जीव को संसार रूपी परिवार विमुख प्रतीत होता है। जब तक जीव अज्ञानता रूपी निद्रा से नहीं जागता तब तक जीव को इस बात की समझ नहीं आती।

यह भौ बिदेस कलि काल।

हम आन परियो जमजाल ॥३॥

जीव अपने घर को भूल, मृत्युलोक (विदेश) में काल के अधीन होकर कल्युग में बुरे कर्म करता है, इसी लिए यमदूतों के जंजाल में फँस जाता है।

कबहुक तोर भरोस।

जो मैं न कहूँ तो मोर दोस ॥४॥

प्रभु जी! मुझे हर समय आप पर दृढ़ विश्वास है। अगर जीव आपका नाम

सिमरन नहीं करता तो यह उसका ही दोष है ।
अस कहियत हूँ मैं अजान ।
अहो प्रभु तुम सर्वज्ञ सयान ॥५॥
 प्रभु जी ! माया के जाल में फंसा हुआ जीव आप के गुण नहीं गा सकता है
 और न ही आपके बारे में जान सकता है । प्रभु जी आप सबसे श्रेष्ठ, सर्वव्याप्त व
 अन्तर्यामी हो ।
सुत सेवक सदा असोच ।
ठाकर पितरि सब सोच ॥६॥
 जैसे पिता के होते हुए पुत्र व स्वामी के होते हुए दास चिंता मुक्त रहता है
 क्योंकि पिता को हर समय पुत्र की तथा स्वामी को दास की चिंता रहती है, उसी प्रकार
 प्रभु का नाम सिमरन करने वाले दास सदैव चिंता से मुक्त होते हैं क्योंकि उनकी चिंता
 स्वयं प्रभु करते हैं ।
रविदास बिनवै कर जोरि
अहो सुआमी तुम मोहिं न छोरि ॥७॥
 सतगुरु रविदास जी महाराज विनम्रता से प्रभु के समक्ष हाथ जोड़कर विनती
 करते हैं कि प्रभु जी ! आप हम जीवों के अवगुण न देखो, हम पर कृपा करो जी ।
सुतौ पुरबला अकरम मोर ।
बलि जाऊँ करौं जिन कोर ॥८॥
 प्रभु जी, जीव पिछले जन्म में किए हुए बुरे कर्मों के कारण, आप से बिछड़ा
 हुआ था । मैं आप पर बलिहार जाता हूँ । आप मेरे दोषों की तरफ ध्यान न दो जी, अपना
 नाम जपाओ जी ।

शब्द - 58

ज्यो तुम कारन केसवे लालच जिव लागा ।
निकट नाथ प्राप्त नहीं मति मंद अभागा ॥ टेक ॥
सागर सलिल सरोदिका जल थल अधि काई ॥
स्वाती बूंद की आस है पिउ पियास न जाई ॥१॥
जो रे सनेही चाहीए चितवत हो दूरी ।
पंगुल फल न पहुँच ही कछु साध न पूरी ॥२॥
कहै रविदास अकथ कथा उपनिषद् सुनीजै ।
जस तूँ तस तूँ ही कस उपमा दीजै ॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु के प्रेम में मग्न जीव की
 अवस्था का वर्णन करते हैं कि प्रभु प्रेमी जीव को प्रभु के दर्शन करने से सच्चा सुख
 मिलता है । प्रभु के गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता ।
ज्यो तुम कारन केसवे लालच जिव लागा ।
निकट नाथ प्राप्त नहीं मति मंद अभागा ॥ टेक ॥
 प्रभु जी आप की प्राप्ति के लिए जीव को दुर्लभ जन्म मिला है परन्तु जीव
 को संसार में झूठा लालच लगा हुआ है, जिस कारण ऐसे मन वाले अभागे जीव को,
 अपने भीतर विद्यमान प्रभु की प्राप्ति नहीं हो रही ।
सागर सलिल सरोदिका जल थल अधिकाई ॥
स्वाती बूंद की आस है पिउ पियास न जाई ॥१॥
 संसार में सागर, तालाब, सरोवर और जल के बहुत से स्रोत हैं परन्तु पपीहे
 को केवल स्वाति बूंद की अभिलाषा है । स्वाति बूंद के बिना पपीहे की किसी और
 जल से प्यास नहीं मिटती । इस प्रकार ही प्रभु प्रेमी जीव की प्यास, केवल प्रभु के
 दर्शन करने से ही मिटती है ।
जो रे सनेही चाहीए चितवत हो दूरी ।
पंगुल फल न पहुँच ही कछु साध न पूरी ॥२॥
 जो सच्चा प्रेम जीव को परमात्मा के साथ करना चाहिए था, वह प्रेम जीव के
 मन से बहुत दूर है भाव वह प्रेम जीव के अंदर नहीं है । इस लिए जीव को प्रभु की
 प्राप्ति नहीं होती । जैसे अपंग जीव वृक्ष पर लगे हुए फल तक नहीं पहुँच सकता,
 केवल फल को दूर से देख ही सकता है, ऐसे ही जीव सच्ची प्रीति के बिना, प्रभु को
 प्राप्त नहीं कर सकता और जीव की आशा पूरी नहीं होती ।
कहै रविदास अकथ कथा उपनिषद् सुनीजै ।
जस तूँ तस तूँ ही कस उपमा दीजै ॥
 सतगुरु रविदास जी महाराज कथन करते हैं कि प्रभु की कथा अकथनीय है
 चाहे जीव जितने भी उपनिषद् सुन ले, परन्तु प्रभु जी आप जैसे हो, वैसे ही रहोगे ।
 सांसारिक जीव आप की क्या उपमा कर सकते हैं । भाव आपकी उपमा नहीं की जा
 सकती ।

शब्द - 59

गोबिंदे भौजल बियाधि अपारा ।

ता तै कछु सूझत वार न पारा ॥ टेक ॥

अगम ग्रेह दूर दूरन्तर बोलि भरोस दीजै ।

तेरी भगति परोहन सन्त अरोहन मोहिं चढ़ाई किन लीजै ॥१॥

लोह की नाव पखानन बोझी सुकिरित भाव बिहीना ।

लोभ तरंग मोह भयों गालौ मन मीन भयो जन लीना ॥२॥

तुम दीना नाथ दयाल दमोदर कीनै हेत बिलंब कीजै ।

रविदास दास सन्त चरन मोहि अवलंबन दीजै ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज इस शब्द में पावन उपदेश देते हैं कि संसार

रूपी समुद्र दुखों से भरा हुआ है, जिसमें सन्त ही जीव को प्रभु का नाम जपा कर, इस संसार रूपी समुद्र से पार कर सकते हैं ।

गोबिंदे भौजल बियाधि अपारा ।

ता तै कछु सूझत वार न पारा ॥ टेक ॥

हे प्रभु जी! संसार रूपी भवसागर अनंत दुखों से भरा हुआ है। इस लिए जीव को भवसागर के पार जाने की समझ नहीं है।

अगम ग्रेह दूर दूरन्तर बोलि भरोस दीजै ।

तेरी भगति परोहन सन्त अरोहन मोहिं चढ़ाई किन लीजै ॥१॥

जीव प्रभु के निज घर से दूर संसार में आया है। प्रभु के नाम के बिना कोई भी निज घर में पहुँचने का भरोसा नहीं देता। आप जी की भक्ति संसार सागर से पार करती है। संत उस भक्ति रूप नाव पर सवार होकर, सांसारिक जीवों को भक्ति के साथ जोड़कर पार करते हैं। प्रभु जी, इस भक्ति रूपी नाव पर मुझे क्यों नहीं बैठने देते।

लोह की नाव पखानन बोझी सुकिरित भाव बिहीना ।

लोभ तरंग मोह भयों गालौ मन मीन भयो जन लीना ॥२॥

जीव ने संसार में भ्रम के कारण जीवन रूपी नाव को लोहे की बनाकर उस में बुरे कर्म रूपी पत्थर भरे हुए हैं, वह श्रेष्ठ कर्मों से रहित है। लोभ की तरंगें और मोह के काल के कारण जीवन रूपी नाव डूब रही है। जैसे मछली लोभ के काँटे में फँस कर अपनी जान गँवा लेती है, वैसे ही प्रभु को भूल कर जीव का मन झूठे जंजालों में फँस कर अपने जीवन को निष्फल गँवा लेता है।

तुम दीना नाथ दयाल दमोदर कीनै हेत बिलंब कीजै ।

रविदास दास सन्त चरन मोहि अवलंबन दीजै ॥३॥

हे प्रभु, दीन-दयालु आप मेरी विनती सुनो जी, मुझे दर्शन दो जी। आप जी किस कारण विलंब कर रहे हो। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं संतों के चरणों का दास हूँ। मुझे आप अपना दर्शन देकर सहारा दो जी।

शब्द - 60

आगै मंदा हवै रहया परकिरति न जाई ॥

कूकर चौकी चहोडियै फिरि बहे सु भाई ॥टेक॥

सुरसरी मै जु सुरा परयौ को करै न बिचार ॥

राम नाम हिरदै बसै सब सुख निधि सार ॥१॥

कहै रविदास सुनि केसवे अंतह करन बिचार ॥

तुम्हारी भगति कै कारनै फिरि हवै हो चमार ॥२॥

इस पावन शब्द में गुरु रविदास जी महाराज जीवों को प्रभु से प्रेम करने वाला, स्वभाव बना कर, जीवन सफल करने का उपदेश देते हैं।

आगै मंदा हवै रहया परकिरति न जाई ॥

कूकर चौकी चहोडियै फिरि बहे सु भाई ॥टेक॥

प्रभु के नाम सिमरन के बिना, जीव का आगे जाकर बुरा हाल होता है भाव जीव दुख भोगता है। इस कारण जीव का स्वभाव नहीं बदलता।

जैसे कुत्ते को नहला-धुलाकर अगर चौकी पर बिठाया जाए तो वह अपने स्वभाव वश वहाँ बैठ नहीं सकता, ऐसे ही यह जीव जितने चाहे आडम्बर और कर्मकाण्ड करे परन्तु सत्संग के बिना जीव का खोटा स्वभाव नहीं बदलता।

सुरसरी मै जु सुरा परयौ को करै न बिचार ॥

राम नाम हिरदै बसै सब सुख निधि सार ॥१॥

यदि गंगा में मदिरा पड़ जाए तो वह गंगा का ही रूप हो जाती है, इस में कोई संशय नहीं है। ऐसे ही जिस समय जीव के हृदय में प्रभु का नाम बस जाता है तो जीव प्रभु का ही रूप हो जाता है और सब से श्रेष्ठ सुख को प्राप्त कर लेता है।

कहै रविदास सुनि केसवे अंतह करन बिचार ॥

तुम्हारी भगति कै कारनै फिरि हवै हो चमार ॥२॥

गुरु रविदास जी महाराज निवेदन करते हैं कि हे प्रभु! मेरी विनती सुनिए और इस पर विचार करिए जी! हे प्रभु! अपने अर्न्तमन में आप के नाम की विचार करने और भक्ति करने से मैं चमार आप जी का ही रूप हो गया हूँ।

राग रामकली, चउपदा

शब्द - 61

धिग धिग जीवणु राजे राम बिना ॥ टेक ॥

देहि नैन बिनु, चंद रैन बिनु, ज्यों मीना गहरु जले बिना ।

हसती सुंड बिनु, पंखी पंख बिनु, जैसे मन्दिर दीप बिना ॥१॥

जैसे ब्राह्मण वेद विहूणा, तैसो प्राणी तुझ नाम बिना ॥

बेसबा, कूं सुत काकौ कहीए, तैसो भगत जन राम बिना ॥२॥

मंतर सुरति बिनु, नारी कंत बिनु, जैसो धरती इन्द्र बिना ।

ज्यों ब्रिच्छा फलहिं विहूणा, त्यों प्राणी तुझ प्रेम बिना ॥३॥

काम क्रोध हंकार निबारउ, तृष्णा त्यागहु संत जना ।

कहि रविदास भई सीतल काया, ज्यों हों लागो गुर चरना ॥४॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि

प्रभु के नाम के बिना जीव का जीवन निरर्थक है ।

धिग धिग जीवणु राजे राम बिना ॥ टेक ॥

प्रभु पातिशाह के बिना जीव का जीवन धिक्कार है ।

देहि नैन बिनु, चंद रैन बिनु, ज्यूं मीना गहरु जले बिना ।

हसती सुंड बिनु, पंखी पंख बिनु, जैसे मन्दिर दीप बिना ॥१॥

जीव दो नेत्रों के बिना, चन्द्रमा रात्रि के बिना, मछली गहरे पानी के बिना,

हाथी सूंड के बिना, पक्षी पंख के बिना, मन्दिर दीपक के बिना व्यर्थ है ।

जैसे ब्राह्मण वेद विहूणा, तैसो प्राणी तुझ नाम बिना ॥

बेसबा, कूं सुत काकौ कहीए, तैसो भगत जन राम बिना ॥२॥

जिस प्रकार ब्राह्मण वेदों के ज्ञान के बिना व्यर्थ है, उसी प्रकार प्रभु के नाम

के बिना जीव का मानवीय जन्म व्यर्थ है । जिस प्रकार वेश्या के पुत्र को कोई नाम नहीं

दिया जा सकता, उसी प्रकार दास को भी प्रभु के नाम के बिना कोई नाम नहीं दिया जा

सकता ।

मंतर सुरति बिनु, नारी कंत बिनु, जैसो धरती इन्द्र बिना ।

ज्यों ब्रिच्छा फलहिं विहूणा, त्यों प्राणी तुझ प्रेम बिना ॥३॥

जैसे मंत्र सुरति के बिना स्त्री पति के बिना, धरती बारिश के बिना, वृक्ष फल

के बिना अधूरे हैं, इसी तरह जीव प्रभु के प्रेम के बिना अधूरा है ।

काम क्रोध हंकार निबारउ, तृष्णा त्यागहु संत जना ।

कहि रविदास भई सीतल काया, ज्यों हों लागो गुर चरना ॥४॥

हे भाई संत जनों के पास जाकर काम, क्रोध, अहंकार और तृष्णाओं का

त्याग करो । सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि उस समय जीव की

काया पवित्र हो जाती है, जब यह गुरु के चरणों के साथ लगती है ।

राग गाऊड़ी

शब्द - 62

तेरा जन काहे को बोलै ।

बोलि बोलि अपनी भगति किऊ खोलै ॥ टेक ॥

बोलत बोलत बडै बियाधी बोल अबोलै जाई ।

बोलै बोल अबोल को पकरै बोल बोल को खाई ॥१॥

बोलै गियान ओर बोल धियान, बोलै बेद बड़ाई ।

उर में धरि धरि जब ही बोलै, तब ही मूल गंवाई ॥२॥

बोलि बोलि औरहि समझावै तब लगि नहीं रे भाई ।

बोलि बोलि समझ जब बूझी तब काल सहित सब खाई ॥३॥

बोलै गुरु अर बोलै चेला बोल बोल परतिति जाई ।

कहै रविदास थकति भयो जब ही तबहि परमनिधि पाई ॥४॥

इस शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी महाराज उपदेश देते हैं कि जो जीव प्रभु

भक्ति करता है वह विवादों, कर्मकाण्डों और वहम-भ्रमों में नहीं पड़ता । इस लिए

आडम्बरो में फँसे हुए जीवों के पीछे न लगते हुए प्रभु की सच्ची भक्ति में मग्न होकर

परम तत्त्व को जानना चाहिए ।

तेरा जन काहे को बोलै ।

बोलि बोलि अपनी भगति किऊ खोलै ॥ टेक ॥

हे प्रभु! आप का सेवक बोल बोल कर भक्ति क्यों प्रकट करे? आप का

सेवक सम्मान न करने वाले लोगों के आगे, जो जीव को गलत राह पर लगाते हैं,

बोल बोल कर अपनी प्रेम-भक्ति को प्रकट नहीं करता ।

बोलत बोलत बडै बियाधी बोल अबोलै जाई ।

बोलै बोल अबोल को पकरै बोल बोल को खाई ॥१॥

व्यर्थ बोलने से झगड़ा बढ़ जाता है, इस प्रकार बोलने से जीव व्यर्थ बोल

जाता है । व्यर्थ बोलने वाला जीव, अधिक न बोलने वाले, प्रभु के दास पर क्रोधित

होता है । प्रभु भक्त, भक्ति में लीन केवल आवश्यकतानुसार ही बोलता है । व्यर्थ

बोलने वालों के शब्द दूसरों को कष्ट देते हैं, भाव विवाद पैदा करते हैं ।

बोलै गियान ओर बोल धियान बोलै बेद बड़ाई ।

उर में धरि धरि जब ही बोलै तब ही मूल गंवाई ॥२॥

जब जीव झूठे अहंकार में ज्ञान की बातें करता है, बोल बोल कर वेदों और शास्त्रों की उपमा करता है और सच्चाई को हृदय में छुपाकर जब बोलता है, तो विवाद के मूल से बहुत दूर चला जाता है ।

बोलि बोलि औरहि समझावै तब लगि नहीं रे भाई ।

बोलि बोलि समझ जब बूझी तब काल सहित सब खाई ॥३॥

जब तक जीव विवाद कर, बोल बोल कर दूसरों को समझाता है, तब तक हे भाई! समझ नहीं आती, परन्तु जब प्रेम भाव से बोल कर उसके सार तत्त्व को ग्रहण करता है तो जीव मृत्यु के साथ साथ, सब को अपने अधीन कर लेता है ।

बोलै गुरु अर बोलै चेला बोल बोल परतिति जाई ।

कहै रविदास थकति भयो जब ही तबहि परमनिधि पाई ॥४॥

जब गुरु और शिष्य ब्रह्म विचार करते हैं, तब शिष्य को गुरु के वचनों पर पूरा भरोसा हो जाता है । गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब जीव व्यर्थ के विवादों को छोड़ कर, गुरु के वचनों पर भरोसा कर, प्रभु की भक्ति में लीन होता है, तब परम तत्त्व (मुक्ति) को प्राप्त कर लेता है ।

शब्द - 63

ऐसी भगति न होयि रे भाई ।

राम नाम बिन जो कछु करीये सो सब भ्रम कहायी ॥टेक॥

भगति न रस दान भगति न कथै गियान ।

भगति न बन में गुफा खुदाई ॥१॥

भगति न ऐसी हांसी भगति न आसा पासी ।

भगति न सब कुल कान गवाई ॥२॥

भगति न इन्द्री बांधै भगति न जोग साधै ।

भगति न अहार घटायी ये सब करम कहायी ॥३॥

भगति न निद्रा साधै भगति न बैराग बांधै ।

भगति न ये सब बेद बड़ाई ॥४॥

भगति न मूड मुडाये भगति न माला दिखाये ।

भगति न चरन धुआये ये सब गुनी जन गायी ॥५॥

भगति न तौलों जानी जौं लौं आप को आप बखानी ।

जोई जोई करै सो सो करम बड़ाई ॥६॥

आपा गयो तब भगति पायी ऐसी है भगति भाई ।

राम मिलियो अपने गुन खोइयो रिधि सिधि सभै जो गंवाई ॥७॥

कहि रविदास छूटी सब आस तब हरि ताही के पास ।

आतमा थिर भयी तबही निधि पायी ॥८॥

सतगुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को प्रभु की सच्ची प्रेमा-भक्ति करने का उपदेश देते हैं । प्रभु के नाम सिमरन के बिन जो कुछ किया जाता है, उस सब को भ्रम कहा जाता है ।

ऐसी भगति न होयि रे भाई ।

राम नाम बिन जो कछु करीये सो सब भ्रम कहायी ॥टेक॥

हे भाई! आडम्बरों से प्रभु की भक्ति नहीं होती । प्रभु के नाम के बिना जो कुछ भी जीव द्वारा किया जाता है, उसे भ्रम कहा जाता है ।

भगति न रस दान भगति न कथै गियान ।

भगति न बन में गुफा खुदाई ॥१॥

प्रभु की सच्ची भक्ति के बिना रस दान और कथा ज्ञान करना भक्ति नहीं है । न ही जंगल और पहाड़ों की गुफाओं में रहना भक्ति है ।

भगति न ऐसी हांसी भगति न आसा पासी ।

भगति न सब कुल कान गवाई ॥२॥

भक्ति कोई मज्जाक नहीं है और न ही जूए का पासा है जिसको जैसे चाहा डाल दिया । अपनी कुल मर्यादा को भूलना भी भक्ति नहीं है ।

भगति न इन्द्री बांधै भगति न जोग साधै ।

भगति न अहार घटायी ये सब करम कहायी ॥३॥

केवल अपनी इन्द्रियों पर काबू करना भक्ति नहीं है । योग साधना भी भक्ति नहीं है और आहार कम करना, व्रत रखना भी भक्ति नहीं है । इस सब को आडम्बर (कर्मकाण्ड) ही कहा जाता है ।

भगति न निद्रा साधै भगति न बैराग बांधै ।

भगति न ये सब बेद बड़ाई ॥४॥

निद्रा को अपने वश में करना भक्ति नहीं है । दुनिया से उपराम होना भी भक्ति नहीं है । वेदों की उपमा करना भी भक्ति नहीं है ।

भगति न मूड मुडाये भगति न माला दिखाये ।

भगति न चरन धुआये ये सब गुनी जन गायी ॥५॥

सिर मुण्डवाना और माला पहन कर दिखाना भी भक्ति नहीं है । चरणों को धुलाना भी भक्ति नहीं है, सारे गुणवान् पुरुषों का यही विचार है ।

भगति न तौलों जानी जौं लौं आप को आप बखानी ।

जोई जोई करै सो सो करम बडाई ॥६॥

जीव को उस समय तक भक्ति की समझ नहीं आती, जब तक वह अहंकार में बोलता है। प्रभु की सच्ची प्रीति के बिना, जीव जो कुछ भी करता है, केवल अपने कर्मों की प्रशंसा करता है।

आपा गयो तब भगति पायी ऐसी है भगति भाई ।

राम मिलियो अपने गुन खोइयो रिधि सिधि सभै जो गंवाई ॥७॥

हे भाई! अहंकार मिटा कर ही वास्तविक भक्ति की जा सकती है। जब प्रभु की भक्ति की प्राप्ति होती है, तो जीव में अहंकार के कारण पैदा हुए, सभी विकार खत्म हो जाते हैं और रिद्धियों-सिद्धियों की इच्छा समाप्त हो जाती है।

कहि रविदास छूटी सब आस तब हरि ताही के पास ।

आतमा थिर भयी तबही निधि पायी ॥८॥

गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि जब जीव की सभी इच्छाएं समाप्त हो जाती है, तब जीव प्रभु में विलीन होकर स्थिर हो जाता है। उस समय सर्वोच्च निधि रूपी प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

शब्द - 64

है सब आतम सुख परकास साँचो ।

निरंतर निराहार कलपित ऐ पाँचौ ।टेक॥

आदि मध्य औसान एक रस तार तूब न ताथी ।

थावर जंगम कीट पतंगा पूरि रहयो हरि रायी ॥२॥

सबैस्वर सबैझी सब गति करता हरता सोयी ।

सिव न असिव न साध अरु सेवक उनै भाव नहि होयी ॥२॥

धरम अधरम मोच्छ नहि बंधन जरा मरन भव नासा ।

द्विसटि अद्विसटि गेय अरु गियाना एक मेक रविदासा ॥३॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज उपदेश देते हैं कि प्रभु का प्रकाश ही परम सुख है और वह प्रभु कण-कण में विद्यमान है और उसके गुणों को व्यक्त नहीं किया जा सकता।

है सब आतम सुख परकास साँचो ।

निरंतर निराहार कलपित ऐ पाँचौ ।टेक॥

सभी प्राणियों में उस प्रभु का अंश है। प्रभु जी आप ही प्रकाशमान् सत्य स्वरूप, परम सुख देने वाले, स्वयंसिद्ध, निरंतर और निराहारी हो। पाँच तत्त्वों से बने

प्राणियों के शरीर कल्पित हैं।

आदि मध्य औसान एक रस तार तूब न ताथी ।

थावर जंगम कीट पतंगा पूरि रहयो हरि रायी ॥२॥

वह प्रभु सृष्टि का आदि, मध्य और अंत है। वह प्रभु सारे संसार में एक समान समाया हुआ है। हे भाई! वह प्रभु सच में ही प्रेमा-भक्ति रूपी धागे से बंधा हुआ है। प्रभु जंगलों, पहाड़ों, कीड़ों, पतंगों सब जीवों में और हर जगह विद्यमान है।

सबैस्वर सबैझी सब गति करता हरता सोयी ।

सिव न असिव न साध अरु सेवक उनै भाव नहि होयी ॥२॥

वह प्रभु सब का श्रेष्ठ स्वामी है। संसार का कर्ता-धर्ता और जीवों को मुक्ति देने वाला है। वह अज्ञानता का नाश करने वाला है। प्रभु न तो कल्याणकारी और न ही अकल्याणकारी है। वह न तो स्वामी और न ही सेवक लगता है क्योंकि उसमें कोई द्वैत भावना नहीं होती।

धरम अधरम मोच्छ नहि बंधन जरा मरन भव नासा ।

द्विसटि अद्विसटि गेय अरु गियाना एक मेक रविदासा ॥३॥

उस प्रभु के निज-घर में न किसी का कोई धर्म है, न अधर्म, न मुक्ति है, न बंधन है, न बुढ़ापा है और न ही मृत्यु। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह परमात्मा सभी दृश्य और अदृश्य-पदार्थों में भी है। प्रभु स्वयं ही ज्ञान है और स्वयं ही ज्ञानी, पर ऐसा जीव को उस समय अनुभव होता है जब जीव प्रभु का भजन कर प्रभु से एकरूप हो जाता है।

शब्द - 65

कोउ सुमरन देखौं ये सब उपली चोभा ॥

जा कै जेसी सुमिरन ता कौ तैसी सोभा ।टेक॥

हमरी ही सीख सुनै सौं ही मांडे रे ॥

थोरे ही इतरायी चालै पतिशाहि छाडे रे ॥१॥

अतिही आतुर ह्वै कांचा ही तोले रे ॥

ऊडे जल पैसे नहीं पांड राखो रे ॥२॥

थोरे ही थोरे मुसीयत पराइयो धना ।

कहै रविदास सुनो सन्त जना ॥३॥

इस शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी महाराज बाहरी आडम्बरों का निषेध करते हुए फरमाते हैं कि प्रभु अर्थात् सच्चे पातिशाह की प्राप्ति सच्चे सिमरन से होती है।

कोउ सुमरन देखौं ये सब उपली चोभा ॥

जा कै जेसी सुमिरन ता कौ तैसी सोभा ।टेक ॥

प्रभु के सच्चे सिमरन के बिना श्रेष्ठ मार्ग मैंने और कोई नहीं देखा । सच्चे नाम के बिना, आडम्बरों द्वारा किया गया सिमरन, केवल दिखावा मात्र ही है । परन्तु जिस जीव के अंदर, जितना प्रकाश होता है, उसकी शोभा भी उतनी ही होती है । जो जीव एकाग्र होकर, प्रभु का सिमरन करता है, उसकी हमेशा शोभा होती है ।

हमरी ही सीख सुनै सौं ही मांडे रे ॥

थोरे ही इतरायी चालै पतिशाहि छाडे रे ॥१॥

पाखंडी लोग मेरे पास सच्ची शिक्षा लेने आते हैं परन्तु वे सच्ची शिक्षा को ग्रहण नहीं करते और वे झूठा अहंकार कर विवाद में पड़ जाते हैं । झूठे अहंकार के कारण, संसार में प्रभु के पातिशाही सुख को छोड़कर बाह्य आडम्बरों में लगे हुए हैं ।

अतिही आतुर हूँ कांचा ही तोले रे ॥

ऊडे जल पैसे नहीं पांड राखो रे ॥२॥

पाखंडी लोग संसार के झूठे धंधों में व्याकुल होकर झूठा व्यापार करते हैं । परन्तु जैसे जल हमेशा नीचे की ओर बहता है, ऐसे ही जो जीव विनम्र भाव से, प्रभु का सिमरन करता है, उस पर प्रभु की कृपा होती है ।

थोरे ही थोरे मुसीयत पराड़यो धना ।

कहै रविदास सुनो सन्त जना ॥३॥

हे जीव ! धीरे-धीरे तेरा श्वासों रूपी धन गलत रास्ते पर लग रहा है भाव प्रभु की ओर से हटकर संसार के झूठे आडम्बरों में लग रहा है । गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि हे संत जनो ! मेरी बात सुनिए, हमें प्रभु की सच्ची भक्ति करनी चाहिए ।

शब्द - 66

पहिले पहरे रैणि दे बणिजरिया तैं जनम लिया संसार वे ।

सेवा चूको राम की बणिजारिया तेरी बालक बुद्धि गंवार वे ॥१॥

बालक बुद्धि गंवार न चेतियो भूला माया जाल वे ।

कहा होय पाछे पछिताये जल पहिले न बांधी पाल वे ॥२॥

बीस बरस का भया अयाना थामि न सका भाव वे ।

जन रविदास कहै बणिजारिया जनम लिया संसार वे ॥३॥

दूजे पहरे रैण दे बणिजारिया तूँ निरखत चालियो छांह वे ।

हरि न दमोदर ध्याइया बणिजारिया तैं लेयी न सका नांव वे ॥४॥

नांव न लीया औगुन कीया इस जोबन कै तान वे ।

अपनी परायी गिनी न कायी मंद करम कमान वे ॥५॥

साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी भीर परै तुझ तांह वे ।

जन रविदास कहै बणिजारिया तूँ निरखत चाला छांह वे ॥६॥

तीजै पहरे रैण दे बणिजारिया तेरे ढिलड़े पड़े प्रान वे ।

काया रवानी ना करै बणिजारिया, घट भीतर बसे कुजान वे ॥७॥

एक बसै कुजान कायागढ़ भीतर पहिला जनम गंवायि वे ।

अब की बेर न सुकिरित कीयो बहुरि न यहि गडि पायि वे ॥८॥

कंपी देह कायागढ़ छीना फिर लागा पछितान वे ।

जन रविदास कहै बणिजारिया तेरे ढिलड़े पड़े परान वे ॥९॥

चौथे पहरे रैन दे बणिजारिया तेरी कंपन लागी देह वे ।

साहिब लेखा मांगिया बणिजारिया तू छड़ि पुरानी श्रेह वे ॥१०॥

छड़ि पुरानी जिंद अयाना बालदि लदि सबेरिया वे ।

जम के आये बांधि चलाये बारी पूगी तेरिया वे ॥११॥

पंथ चले अकेला होय दुहेला किस को देह सनेह वे ।

जन रविदास कहै बणिजारिया तेरी कंपन लागी देह वे ॥१२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज मनुष्य जन्म की जीवन रूपी रात्रि के चार भागों

बाल अवस्था, युवा अवस्था, ढलती आयु रूपी अवस्था (बुढ़ापा) और मृत्यु अवस्था का वर्णन करते हुए, जीव रूपी बनजारे को, प्रभु के सच्चे नाम का व्यापार कर जीवन सफल बनाने का पावन उपदेश देते हैं ।

पहिले पहरे रैणि दे बणिजरिया तैं जनम लिया संसार वे ।

सेवा चूको राम की बणिजारिया तेरी बालक बुद्धि गंवार वे ॥१॥

हे बनजारे जीव ! संसार की जीवन रूपी रात्रि के पहले पहर भाव बचपन में,

जब तुमने इस संसार में जन्म लिया, उससे पहले तेरी लगन माता के गर्भ में, प्रभु से जुड़ी हुई थी । पर संसार में आने के बाद, तेरी लगन प्रभु से टूट गई । इस लिए बालपन में तेरी बुद्धि अनजान होने के कारण, तुमने प्रभु का नाम सिमरन नहीं किया ।

बालक बुद्धि गंवार न चेतियो भूला माया जाल वे ।

कहा होय पाछे पछिताये जल पहिले न बांधी पाल वे ॥२॥

हे जीव ! बालक बुद्धि होने के कारण, तुमने प्रभु को याद नहीं किया । तुम

परमात्मा को भूल कर संसार के झूठे माया जाल में फँसे रहे । अब भाई, अंत समय पछताने का क्या लाभ ? हे जीव ! तुमने जल की तरह बह रहे जीवन को रोक कर, परमात्मा की तरफ नहीं बाँधा भाव प्रभु से नहीं जोड़ा ।

बीस बरस का भया अयाना थामि न सका भाव वे ।

जन रविदास कहै बणिजारिया जनम लिया संसार वे ॥३॥

हे भाई! तुम बीस वर्ष के होकर भी प्रभु के नाम से अनभिज्ञ रहे। भाई, तुमने अपनी गलत भावनाओं को बाँध कर, अपने मन को प्रभु की ओर नहीं लगाया। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! तुम्हें यह जन्म प्रभु का भजन करने के लिए मिला है, इस लिए प्रभु का सिमरन कर।

दूजे पहरे रैण दे बणिजारिया तूँ निरखत चालियो छांह वे।

हरि न दमोदर ध्याइया बणिजारिया तैं लेयी न सका नांव वे ॥४॥

हे बनजारे जीव! तुम रात्रि रूपी जीवन के दूसरे पहर अर्थात् जवानी की अवस्था में संसार के झूठे जीवन को देखते हुए भी, परमात्मा को भुलाकर, अज्ञानता वश अंधेरे में जा रहे हो। हे बनजारिया, तुम ने 'हरि' का सिमरन नहीं किया, तू हरि का नाम सिमरन नहीं कर सका।

नांव न लीया औगुन कीया इस जोबन कै तान वे।

अपनी परायी गिनी न कायी मंद करम कमान वे ॥५॥

हे भाई! तुमने जवानी के अहंकार और झूठे मान में प्रभु का नाम सिमरन नहीं किया। तुमने अपने जीवन साथी और पराई स्त्री में कोई भेद नहीं जाना, बल्कि बुरे कर्म करने में व्यस्थ रहे।

साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी भीर परै तुझ तांह वे।

जन रविदास कहै बणिजारिया तूँ निरखत चाला छांह वे ॥६॥

हे जीव! जब प्रभु तुमसे कर्मों का हिसाब मांगेगा, तो तुझे अपने किये हुए कर्मों का हिसाब देना पड़ेगा। उस समय तुम पर मुसीबतें आ गिरेंगी। हे बनजारिया! तू जीवन के दूसरे पहर में, अज्ञानता के कारण, बुरे कर्मों में पड़ कर, अंधकार की ओर जा रहा है।

तीजै पहरे रैण दे बणिजारिया तेरे ढिलड़े पड़े प्रान वे।

काया रवानी ना करै बणिजारिया, घट भीतर बसे कुजान वे ॥७॥

हे बनजारे जीव! जब तुम्हारी जीवन रूपी रात्रि का तीसरा पहर अर्थात् ढलती आयु आई, तो तुम्हारे प्यारे प्राण ढीले पड़ने लगे हैं।

हे जीव! तेरा शरीर कमजोर हो रहा है, हे बनजारिया! अब तुम क्या करोगे? तुझ में अभी भी नासमझी है।

एक बसै कुजान कायागढ़ भीतर पहिला जनम गंवायि वे।

अब की बेर न सुकिरित कीयो बहुरि न यहि गडि पायि वे ॥८॥

हे जीव! तेरे शरीर रूपी किले में एक प्रभु का निवास है। जीवन का अब तक का समय, तुमने प्रभु को भूल कर व्यर्थ गँवा दिया है। हे भाई! तुमने दुर्लभ जन्म

प्राप्त करके, प्रभु का नाम सिमरन रूपी श्रेष्ठ कर्म नहीं किया, यह शरीर रूपी किला तुम्हें पुनः नहीं मिलेगा। भाव तुम्हें पुनः मनुष्य जन्म प्राप्त नहीं होगा।

कंपी देह कायागढ़ छीना फिर लागा पछितान वे।

जन रविदास कहै बणिजारिया तेरे ढिलड़े पड़े परान वे ॥९॥

हे बनजारिया! तेरा शरीर रूपी किला कांपने लगा है भाव तुम्हारा शरीर कमजोर होने के कारण कांपने लग पड़ा है। प्रभु का सिमरन न करके अब तुम पछता रहे हो। सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि हे बनजारिया! जिंदगी के तीसरे पहर के आने से तेरे प्राण ढीले पड़ रहे हैं, तुम्हारा अन्त समय आ रहा है, इस लिए तू प्रभु को याद कर।

चौथे पहरे रैन दे बणिजारिया तेरी कंपन लागी देह वे।

साहिब लेखा मांगिया बणिजारिया तू छाड़ि पुरानी श्रेह वे ॥१०॥

हे बनजारे जीव! रात्रि रूपी जीवन के चौथे पहर, बुढ़ापे के आने से, तुम्हारा शरीर कांपने लगा है। अब प्रभु ने कर्मों का हिसाब मांगा है और तुम्हें यह संदेश भेजा है कि तुम्हारे जीवन का अन्त समय आ गया है।

छाड़ि पुरानी जिंद अयाना बालदि लदि सबेरिया वे।

जम के आये बांधि चलाये बारी पूगी तेरिया वे ॥११॥

हे अनजान जीव! अन्त समय आने पर तुझे अपना पुराना शरीर छोड़ कर जाना पड़ेगा। शुभ समय का कुछ लाभ उठा ले। जैसे किसान सवेरा होते ही, अपने बैलों को हांक कर, खेतों की ओर ले जाता है, इस प्रकार ही जीवन रूपी रात्रि के चौथे पहर के बीत जाने के बाद, तुझे यमदूतों ने बांध कर ले जाना है। तेरा संसार में आने का समय खत्म हो गया है।

पंथ चले अकेला होय दुहेला किस को देह सनेह वे।

जन रविदास कहै बणिजारिया तेरी कंपन लागी देह वे ॥१२॥

अंत समय जीव को परलोक का कठिन रास्ता अकेले ही तय करना पड़ेगा। प्रभु के नाम के बिना इस कठिन रास्ते में और कोई सहाई नहीं होगा। उस समय तू अपने किस प्यारे को पुकारेगा? सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे बनजारिया! जीवन के चौथे पहर के आने के कारण तेरा शरीर कांपने लग पड़ा है भाव अब तेरा अन्त समय आ गया है। इस लिए तू प्रभु को याद कर।

शब्द - 67

या रामा एक तूँ दाना तेरा आदि भेख ना।
तूँ सुलतान सुलताना बंदा सकिसता अजाना।टेक॥
मैं बेदियानत बदनज़र दरमंद बरखुरदार।
बेअदब बदबखत बीरा बेअकल बदकार॥१॥
मैं गुनहगार गुमराह गाफिल कमदिला करतार।
तूँ दरकदर दरियान दिल मैं हिरसिया हुसियार॥२॥
यह तन हसत खसत खराब खातिर अंदेसा बिसियार।
रविदास दासहि बोलि साहिब देहु अब दीदार॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज उपदेश करते हैं कि प्रभु पातिशाहों का पातिशाह और सर्वगुण सम्पन्न है। परन्तु यह जीव प्रभु को भूल कर दुखी होता है। यह शरीर शीघ्र नाश होने वाला है, इस लिए जीव को प्रभु का सिमरन करना चाहिए।

या रामा एक तूँ दाना तेरा आदि भेख ना।
तूँ सुलतान सुलताना बंदा सकिसता अजाना।टेक॥

सतगुरु रविदास जी प्रभु के समक्ष विनती करते हैं कि हे सर्वव्यापक प्रभु जी, केवल आप ही संसार में सबसे बुद्धिमान हो। आप ही सृष्टि के आरम्भकर्ता हो और आपका कोई स्वरूप नहीं है। आप बादशाहों के बादशाह हो। यह सांसारिक जीव, आपकी महिमा से अनभिज्ञ होने के कारण, आप से बिछुड़ा हुआ है।

मैं बेदियानत बदनज़र दरमंद बरखुरदार।
बेअदब बदबखत बीरा बेअकल बदकार॥१॥

प्रभु जी! अज्ञानता के कारण आपकी महिमा से अनभिज्ञ जीव बेईमान, स्वार्थी, अज्ञानी, बेगैरत, दुखी, बावरा, बेसमझ और दुराचारी है।

मैं गुनहगार गुमराह गाफिल कमदिला करतार।
तूँ दरकदर दरियान दिल मैं हिरसिया हुसियार॥२॥

हे करतार! आप के नाम से वंचित जीव गुनाहगार, गुमराह और कमजोर है। प्रभु जी आप सृष्टि के मालिक, दरियादिल और दयावान् हो, जीव आप को भूलकर, संसार के झूठे कार्यों में लोभी और चालाक बना रहता है।

यह तन हसत खसत खराब खातिर अंदेसा बिसियार।
रविदास दासहि बोलि साहिब देहु अब दीदार॥३॥

यह जो शरीर है, शीघ्र नाश होने वाला है, इस लिए हे जीव! इस दशा में ज्यादा शंका मत कर। गुरु रविदास जी महाराज प्रभु के सम्मुख प्रार्थना करते हैं कि हे साहिब जी! आप बोलिए और दर्शन दीजिए ताकि इस जीव का कल्याण हो जाए जी।

राग आसावरी

शब्द - 68

केसवे विकट माया तोर ताते बिकल गति मोर।टेक॥
सुबिश डसन कराल अहिमुख ग्रसति सुदृड सु मेश।
निरूखि माखी बखत बियाकुल लोभ काल ना देख॥१॥
इंद्रियादिक दुख दारन असंख्यादिक पाप।
तोहि भजत रघुनाथ अंतरि ताहि त्रास ना ताप॥२॥
प्रतिज्ञा प्रतिपाल चहुँ जुगि भगति पुरवन काम।
आस मोहि भरोस है रविदास जै जै राम॥३॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु के नाम को ही माया के प्रभाव से मुक्ति दिलाने का एक मात्र उपाय बताते हैं।

केसवे विकट माया तोर ताते बिकल गति मोर।टेक॥

हे प्रभु जी! आप के नाम के बिना माया बहुत भयानक और कष्ट देने वाली है। इस लिए जीव की दशा और समझ बहुत ही व्याकुलता वाली है।

सुबिश डसन कराल अहिमुख ग्रसति सुदृड सु मेश।
निरूखि माखी बखत बियाकुल लोभ काल ना देख॥१॥

यह माया अपने सुंदर विष रूपी भयानक साँप जैसे मुँह से जीव को डंक मारती है। सुदृढ़ जीव को भी यह सुंदर माया खा जाती है। जैसे मक्खी मीठे पदार्थों को देखकर व्याकुल होती है, ऐसे ही लोभी पुरुष लोभ में आकर समय नहीं देखता और बेचैन रहता है।

इंद्रियादिक दुख दारन असंख्यादिक पाप।
तोहि भजत रघुनाथ अंतरि ताहि त्रास ना ताप॥२॥

जीव इन्द्रियों व विषय विकारों के अधीन होकर अनेक पाप करता है और दुःख झेलता है यदि जीव प्रभु की बंदगी करेगा, तो वह सभी दुःखों से मुक्त हो जाएगा।

प्रतिज्ञा प्रतिपाल चहुँ जुगि भगति पुरवन काम।
आस मोहि भरोस है रविदास जै जै राम॥३॥

प्रण के अनुसार चारों युगों में जीवों का पालन करने वाले प्रभु! आप अपने भक्तों की सभी कामनाएं पूर्ण करने वाले हो। गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि प्रभु जी मुझे तो आप पर ही भरोसा है। हे सर्वव्यापक प्रभु जी, आप की जै हो जी।

शब्द - 69

रामहि पूजा कहा चढ़ाऊँ ॥
 फल अरु फूल अनुपम न पाऊँ ॥टेक ॥
 थनहर दूध जो बछरु जुठारओ ॥
 पुहुप भंवर जल मीन बिटारिओ ॥१॥
 मलियागिर बेडिओ भुअंगा ।
 विष अमृत दोऊ एकै संग ॥२॥
 धूप दीप नईबेदहि बासा ।
 कैसे पूज करहि तेरी दासा ॥
 मनही पूजा मनही धूप ।
 मनही सेऊँ सहज सरूप ॥३॥
 पूजा अरचा न जानूँ तेरी ॥
 कहै रविदास कवन गति मेरी ॥४॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को कर्म-काण्डों तथा वहमों-भ्रमों से ऊपर उठकर, सच्चे मन से, प्रभु की पूजा करने का पावन उपदेश बख्श करते हैं ।

रामहि पूजा कहा चढ़ाऊँ ॥
 फल अरु फूल अनुपम न पाऊँ ॥टेक ॥
 हे प्रभु जी ! मैं सांसारिक पदार्थों में आप की पूजा के लिए क्या भेंट करूँ?
 संसार के सभी पदार्थ अपवित्र हैं । फिर मैं अद्भुत फल एवं फूल कहाँ से लाऊँ?
 थनहर दूध जो बछरु जुठारओ ॥
 पुहुप भंवर जल मीन बिटारिओ ॥१॥
 दूध भी आप जी की पूजा के लिए भेंट करने योग्य नहीं है क्योंकि दूध को तो बछड़ा पहले ही थनों में से पीकर जूठा कर देता है । फूल को भंवर तथा जल को मछली अपवित्र कर देती है । इस लिए फूल एवं जल भी आप जी की पूजा के योग्य नहीं है ।
 मलियागिर बेडिओ भुअंगा ।
 विष अमृत दोऊ एकै संग ॥२॥
 प्रभु जी ! चंदन भी आप जी की पूजा योग्य नहीं हैं क्योंकि चंदन के साथ सदैव साँप लिपटे रहते हैं । विषैले साँप तथा अमृतमयी चंदन इकट्ठे करते हैं ।
 धूप दीप नईबेदहि बासा ।
 कैसे पूज करहि तेरी दासा ॥

धूप, दीपक, मीठे एवं बासे पदार्थ से प्रभु जी, मैं आप जी की पूजा कैसे करूँ? क्योंकि ये सभी अपवित्र हैं ।
 मनही पूजा मनही धूप ।
 मनही सेऊँ सहज सरूप ॥३॥
 प्रभु जी ! सच्चे मन के साथ आपकी पूजा की जा सकती है और सच्चा मन ही आप जी को धूप चढ़ाने के समान है । मन की सहजावस्था में ही आप जी के स्वरूप के दर्शन होते हैं ।

पूजा अरचा न जानूँ तेरी ॥
 कहै रविदास कवन गति मेरी ॥४॥
 हे प्रभु जी ! मैं सांसारिक पदार्थों के साथ आप जी की पूजा करना नहीं जानता । अब मेरी कौन सी गति होगी? अर्थात् मैं आप जी की पूजा सच्चे मन से करता हूँ ।

शब्द - 70

बरजि हो बरजि बीठुले माया जग खाया ॥
 महाप्रबल सब ही बस कीये, सुर नर मुनि भरमाया ॥ टेक ॥
 बालक बिरध तरुन अति सुन्दर, नाना भेस बनावै ।
 जोगी जती तपी सन्यासी, पंडित रहिन न पावै ॥१॥
 बाजीगर की बाजी कारनि सब को कौतिग आवै ।
 जो देखै सो भुलि रहै वाका चेला मरम जो पावै ॥२॥
 खंड ब्रह्मण्ड लोक सभ जीते, ऐहि बिधि तेज जनावै ।
 सिअंभू का चित चौर लियो है, वा कै पाछै लागा धावै ॥३॥
 इन बातन सुखचैन मरियत है, सब को रहे उझारी ।
 नेक दृष्टि किन राखो कैसो, मेटो बिपति हमारी ॥४॥
 कहै 'रविदास' उदास भयो मन, भाजि कहाँ अब जयीये ।
 इत उत तुम गोबिन्द गुसाईं तुमहीं मांहि समैये ॥५॥
 सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को झूठी माया से बचने का उपाय बताते हैं कि इस संसार में माया तो सभी को लुभा रही है, परन्तु जो जीव प्रभु का भजन करता है, वह माया के प्रभाव से मुक्त होकर, परमात्मा में विलीन हो जाता है ।
 बरजि हो बरजि बीठुले माया जग खाया ॥
 महाप्रबल सब ही बस कीये, सुर नर मुनि भरमाया ॥ टेक ॥

संसार की झूठी माया से मुक्त कराने वाले प्रभु जी! अपनी शक्तिशाली माया को रोको। इस प्रबल माया ने सारा संसार अपने वश में किया हुआ है और देवताओं, मनुष्यों और मुनियों को भ्रम में डाला हुआ है।

बालक बिरध तरुन अति सुन्दर, नाना भेस बनावै।
जोगी जती तपी सन्यासी, पंडित रहिन न पावै ॥१॥

इस माया ने अनेक प्रकार के सुंदर रूप बनाकर बच्चों, बुजुर्गों, युवकों/तरुणों और बुद्धिमानों को लुभाया हुआ है। इस माया के आगे योगी-जती, तपी, सन्यासी और पंडित भी नहीं टिक पाते।

बाजीगर की बाजी कारनि सब को कौतिग आवै।
जो देखै सो भुलि रहै वाका चेला मरम जो पावै ॥२॥

प्रभु बाजीगर की बाजी के कारण, सारे संसार के जीव कौतुक भाव तमाशा कर रहे हैं, जो माया को देखकर प्रभु को भूल रहे हैं, परन्तु प्रभु का सच्चा उपासक वही है जो झूठी माया के भेद को जान लेता है।

खंड ब्रह्मण्ड लोक सभ जीते, ऐहि बिधि तेज जनावै।
सिअंभू का चित चौर लियो है, वा कै पाछै लागा धावै ॥३॥

प्रभु का सिमरन करने वालों के बिना, इस माया ने खण्डों ब्रह्मण्डों के लोगों को जीत कर, अपने अधीन कर लिया है। इस विधि से माया अपनी शक्ति दिखाती है। इस माया ने सब जीवों का मन अपनी ओर लगा लिया है। यथार्थ में माया ही सब का पीछा कर अपने अधीन कर लेती है।

इन बातन सुखचैन मरियत है, सब को रहे उझारी।
नेक द्विष्ट किन राखो कैसो, मेटो बिपति हमारी ॥४॥

इस झूठी माया के पीछे लगकर और इसकी बातें करके जीव दुःखी हो कर मर जाता है। माया सबसे कहती है कि मैं तेरी हूँ। हे प्रभु जी! आप माया के प्रभाव को खत्म कर हमारी रक्षा करो।

कहै 'रविदास' उदास भयो मन, भाजि कहाँ अब जयीये।
इत उत तुम गोबिन्द गुसाईं तुमहीं मांहि समैये ॥५॥

श्री गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे प्रभु जी! आप जी का भजन कर, मेरा मन माया से उपराम हो गया है और आप के नाम के बिना, माया से बचने का कोई अन्य उपाय नहीं है। प्रभु जी! आप हर जगह भाव लोक परलोक में विद्यमान हो, यह जीव आपका भजन करके, माया के प्रभाव से मुक्त होकर, आप में ही समा जाता है।

शब्द - 71

तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु।
पान करत पायो पायो रमइया धन ॥टेक॥

संपति बिपति पटल माया धन।
ता महि मगन न होत तेरो जन ॥१॥

कहा भयो जे गत तन छिन-छिन।
प्रेम जाइ तो जरपै तेरो निज जन ॥२॥

प्रेम रज लै राखो रिदै धरि ॥
कहै रविदास छूटिबो कवन परि ॥३॥

जगत्गुरु रविदास जी महाराज समस्त मानवता को प्रभु-प्रेम का पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु-प्रेम करने वाले को, अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े होने की भी कोई चिंता नहीं होती।

तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु।
पान करत पायो पायो रमइया धन ॥टेक॥

प्रभु जी! आप के चरण, कंवल फूल के समान हैं और मेरा मन भंवरे के समान है। मेरे मन ने आप जी के चरण कंवलों में रहने के लिए, स्थान प्राप्त कर लिया है। हे प्रभु जी! आप का पावन नाम रूपी अमृत पीकर, मैंने नाम रूपी धन प्राप्त कर लिया है।

संपति बिपति पटल माया धन।
ता महि मगन न होत तेरो जन ॥१॥

प्रभु जी! आप जी के नाम का आनंद लेने वाला आप जी का दास सुख दुःख रूपी पर्दे, सांसारिक माया एवं संसार रूपी झूठे धन में मग्न नहीं होता।

कहा भयो जे गत तन छिन-छिन।
प्रेम जाए तो जरपै तेरो निज जन ॥२॥

प्रभु जी! मेरा शरीर टुकड़े-टुकड़े भी हो जाए तो मुझे कोई भय नहीं, आप जी के दास को भय तो इस बात का है कि मेरे मन में से आप का प्रेम कम न हो जाए।

प्रेम रज लै राखो रिदै धरि ॥
कहै रविदास छूटिबो कवन परि ॥३॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि प्रभु जी! दास ने आपको प्रेम भाव से हृदय में बसाया हुआ है। आब आप क्या यत्न करके उससे छुटकारा पाओगे? अर्थात् आप प्रेम के सच्चे बंधन में से निकल नहीं सकते।

शब्द - 72

बंदे जानि साहिब गनी ।
 समझि बेद कतेब बोलै काबे में किया मनी ।।टेक ।।
 ज्वानी दुनी जमाल सूरति देखिए थिरि नाहिं वे ।
 दम छ सै सहंस इक्कीस हर दिन खजाने थैं जाहिं वे ॥१॥
 मनी मारे गर्ब 'गाफिल' बेमेहर बेपीर वे ।
 दरी खाने परत चोबा होत नहीं तकसीर वे ॥२॥
 स्याही सपेदी तुरंगी नाना रंग बिसाल वे ।
 नापैद तैं पैदा कीया पैमाल करत न बार वे ॥३॥
 कुछु गाँठि खरची मिहर तोसा खैर खूबी हाथि वे ।
 धनी का फुरमान आया तब कीया चालै साथ वे ॥४॥
 तजि बदजवां बेनजर कमदिलां करि खसम की कान वे ।
 रविदास की अरदास सुण कुछु हक हलाल पछाण वे ॥५॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को प्रभु का नाम सिमरन कर नाम रूपी श्रेष्ठ धन को प्राप्त करने का उपदेश देते हैं, जो जीव के लोक-परलोक में सहायक बनता है ।

बंदे जानि साहिब गनी ।
 समझि बेद कतेब बोलै काबे में किया मनी ।।टेक ।।
 हे मनुष्य ! यह बात अच्छी तरह जान ले कि प्रभु बहुत धनवान् है । वेद, कतेब इत्यादि धार्मिक पुस्तकें यही समझा रही हैं कि उस प्रभु के बिना काबे में कोई और विशेष मणि नहीं है ।

ज्वानी दुनी जमाल सूरति देखिए थिरि नाहिं वे ।
 दम छ सै सहंस इक्कीस हर दिन खजाने थैं जाहिं वे ॥१॥
 यौवन की अवस्था का जोश और सुंदरता सदैव रहने वाली नहीं है । इक्कीस हजार छः सौ श्वास तेरे अमूल्य जीवन की पूँजी में से व्यर्थ जा रहे हैं ।
 मनी मारे गर्ब 'गाफिल' बेमेहर बेपीर वे ।
 दरी खाने परत चोबा होत नहीं तकसीर वे ॥२॥
 हे मूर्ख ! बे-रहम (क्षमाहीन) और बे-गुरे (नास्तिक) प्राणी तू अहंकार में नष्ट हो रहा है । दस द्वारों वाले शरीर को प्राप्त कर अच्छे मार्ग पर चल, ताकि तुमसे कोई भूल न हो ।

स्याही सपेदी तुरंगी नाना रंग बिसाल वे ।
 नापैद तैं पैदा कीया पैमाल करत न बार वे ॥३॥

प्रभु ने काला, सफेद और पीला इत्यादि अनेक अनंत रंग बनाए हैं, उस स्वयं-प्रकाशमान् प्रभु ने संसार की रचना की है और विनाश करते समय भी वह देर नहीं लगाता ।

कुछु गाँठि खरची मिहर तोसा खैर खूबी हाथि वे ।
 धनी का फुरमान आया तब कीया चालै साथ वे ॥४॥
 हे जीव ! तू प्रभु के नाम और मेहर का तोसा और अच्छे गुणों की खैर अपने दामन से बाँध ले, जो तेरे लोक-परलोक के मार्ग में तेरी सहायक होगी । जिससे तुम्हें परमानंद की प्राप्ति होगी । जिस समय प्रभु का आदेश/बुलावा आएगा, उस समय नाम रूपी धन ही तेरे साथ जाएगा ।

तजि बदजवां बेनजर कमदिलां करि खसम की कान वे ।
 रविदास की अरदास सुण कुछु हक हलाल पछाण वे ॥५॥
 हे अंधे और कमजोर दिल वाले जीव, तुम बुरा बोलना त्याग दो और परमात्मा का आश्रय लो । सतगुरु रविदास जी महाराज समझाते हैं कि हे जीव ! तुम सच्चे प्रभु की पहचान करो ।

शब्द - 73

सु कुछु बिचारियो ताथे मेरो मनु थिरु ह्वै रहियो ॥
 हरि रंग लागो ताथै मेरो बरन पलटि भयो ।।टेक ।।
 धन्न सो पंथी पंथ चलावा ।
 अगम गवन में गम दिखलावा ॥१॥
 अबरन बरन कथै जिन कोई ।
 घट घट बियापि रहियो हरि सोई ॥२॥
 जिहि पद सुन नर प्रेम पियासा ।
 सो पद राम रहियो रविदासा ॥३॥

इस पावन शब्द में श्री गुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को परमात्मा के नाम का विचार करने का उपदेश देते हैं कि जब जीव प्रभु के नाम का विचार करता है तो प्रभु में विलीन हो जाता है । उस परमावस्था का वर्णन गुरु जी इस शब्द में करते हैं ।

सु कुछु बिचारियो ताथे मेरो मनु थिरु ह्वै रहियो ॥
 हरि रंग लागो ताथै मेरो बरन पलटि भयो ।।टेक ।।
 जब मैंने परमात्मा के नाम की थोड़ी सी ही विचार की, तो मेरा मन स्थिर हो गया । जब मुझे 'हरि' नाम का मजीठी रंग लगा, तो झूठा रंग बदल गया ।

धन सो पंथी पंथ चलावा ।

अगम गवन में गम दिखलावा ॥१॥

धन्य वे संत और साधक हैं जिन्होंने प्रभु भक्ति रूप पंथ चलाया है । प्रभु का नाम गम से मुक्त होकर प्रभु में विलीन होना सिखाता है और आवागमन् को समाप्त करता है ।

अबरन बरन कथै जिन कोई ।

घट घट बियापि रहियो हरि सोई ॥२॥

गुरु जी फरमाते हैं कि भेद-भाव मत करो क्योंकि सब जीव एक समान हैं और संसार के कण कण में हरि व्यापत है ।

जिहि पद सुननर प्रेम पियासा ।

सो पद राम रहियो रविदासा ॥३॥

जिस प्रभु के प्रेम पद की प्राप्ति के लिए देवता और जीव व्याकुल हैं, गुरु जी कथन करते हैं कि मैं उस प्रभु के परम पद की प्राप्ति कर, उसी में विलीन हो गया हूँ ।

शब्द - 74

भाई रे सहज बन्दो सोई बिन सहज सिद्धि न होई ।

नयौलीन मन जो जानिये जब कीट भृङ्गी होई ।टेक ॥

आपा पर चीन्हें नहीं रे और को उपदेश ।

कहां ते तुम आयो रे भाई जाहूगे कित देस ॥१॥

कहिये तो कहिये का कहि कहीये कहाँ न को पतियाइ ।

रविदास दास अजान हैं करि रहियो सहज समाइ ॥२॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि जीव को प्रभु के आगे तुरिया अवस्था की प्राप्ति के लिए विनती करनी चाहिए । जीव बाह्य आडम्बरों से मुक्त होकर, तुरिया अवस्था में पहुँच कर प्रभु में लीन हो जाता है ।

भाई रे सहज बन्दो सोई बिन सहज सिद्धि न होई ।

नयौलीन मन जो जानिये जब कीट भृङ्गी होई ।टेक ॥

हे भाई ! सहज अवस्था की प्राप्ति के लिए उस प्रभु के समक्ष विनती करो क्योंकि तुरिया अवस्था तक पहुँचने से पहले मुक्ति नहीं मिल सकती । जो जीव प्रभु के नाम से जुड़ कर उसमें लीन हो जाता है, उसे कीड़े के भृङ्गी होने के समान समझना चाहिए । भृङ्गी कीड़ा जिस कीड़े को अपनाता है, वह उसके चारों ओर चक्र काटता है और वह भृङ्गी हो जाता है । इस कीड़े की तरह ही, वह जीव भी, प्रभु में लीन होकर, प्रभु का ही रूप हो जाता है ।

आपा पर चीन्हें नहीं रे और को उपदेश ।

कहां ते तुम आयो रे भाई जाहूगे कित देस ॥१॥

हे जीव ! तुम अपने और पराये को जान नहीं सके तथा औरों को उपदेश देते हो । हे भाई ! तुम अपने अंदर से यह खोज करो कि तुम कहाँ से आए हो । और शरीर को छोड़ने के बाद किस देश में जाना है ?

कहिये तो कहिये का कहि कहीये कहाँ न को पतियाइ ।

रविदास दास अजान हैं करि रहियो सहज समाइ ॥२॥

प्रभु की प्राप्ति के बिना उसकी कथा करें तो क्या करें क्योंकि ऐसे कहने पर कोई विश्वास नहीं करता । गुरु रविदास जी महाराज कथन करते हैं कि मैं आप का दास संसार के आडम्बरों से अनजान होकर, सहजावस्था में पहुँच कर आप में ही विलीन हो गया हूँ ।

शब्द - 75

देहु कलाली एक पियाला । ऐसा अबधू होई मतवाला ।टेक ॥

कहै कलाली पियाला देऊ । पीवन हारे का सिर लेऊ ॥१॥

ऐरी कलाली तैं क्या किया । सिर के साटै पियाला दिया ॥

सिर कै साटै महिंगा भारी । पीवेगा अपना सिर डारी ॥२॥

चंद सूर दोउ सनमुख होई । पीवै पियाला मरै न कोई ॥३॥

सहज सुन्न में भाठी स्रवै । पीवै रविदास गुरुमुख द्रवै ॥४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को प्रभु के नाम का दान देने वाले गुरु के पास जाकर, नाम रूपी प्याला पीने का पावन उपदेश देते हैं । ऐसा प्याला गुरु के आगे सर्वस्व भेंट करने से प्राप्त होता है ।

देहु कलाली एक पियाला । ऐसा अबधू होई मतवाला ।टेक ॥

परमात्मा के नाम रूपी अमृत का प्याला देने वाले संतजनों, एक प्याला मुझे भी देना जी । ऐसे प्याले को पीने के लिए मैं वैरागी हूँ और पीकर मस्त होने वाला हूँ ।

कहै कलाली पियाला देऊ । पीवन हारे का सिर लेऊ ॥१॥

परमात्मा का नाम रूपी प्याला देने वाले गुरु जी फरमाते हैं कि मैं तुम्हें ऐसा प्याला तभी दे सकता हूँ, जब तुम मेरे आगे अपना शीश भेंट करो, भाव अपना आप मिटा दो ।

ऐरी कलाली तैं क्या किया । सिर के साटै पियाला दिया ॥

हे प्रभु का नाम रूपी प्याला देने वाले गुरु जी ! यह आप ने क्या किया ? आप ने तो मेरा शीश लेकर मुझे अमृत का प्याला दिया है । भाव कि वही जीव अमृत का

प्याला प्राप्त कर सकता है जो अपना तन-मन गुरु के आगे अर्पण कर देता है।
सिर कै साटै महिगा भारी। पीवेगा अपना सिर डारी ॥२॥
 सिर के बदले में अत्यधिक मूल्यवान् प्याला प्राप्त होता है, अपना सिर
 न्यौछावर कर जीव ऐसा पियाला ग्रहण करता है।
चंद सूर दोउ सनमुख होई। पीवै पियाला मरै न कोई ॥३॥
 इड़ा और पिंगला दोनों नसें जहाँ इकट्ठी होती हैं, वहाँ सुष्मना नाड़ी से
 मिलती हैं, तो दशमद्वार में प्रवेश कर जीव प्रभु का नाम रूपी अमृत प्याला पीता है।
 फिर वह जीवन मुक्त हो जाता है।
सहज सुन्न में भाठी स्रवै। पीवै रविदास गुरुमुख द्रवै ॥४॥
 प्रभु के ऐसे नाम रूपी प्याले को दशमद्वार में प्रवेश कर, सहज भाव तुरिया
 अवस्था रूपी भट्टी द्वारा तैयार हुई अमृतधारा झरती है। गुरु रविदास महाराज जी
 फरमाते हैं कि ऐसी अवस्था में पहुँच कर, गुरुमुख जीव, ब्रह्मनंद रूपी प्रेम प्याला पीते
 हैं।

शब्द - 76

ऐसी मेरी जाति विखियात चमारं ॥
हिरदे राम गोबिंद गुन सारं ॥टेक॥
सुरसरि जल लीया कृत बारुनी रे
जैसे संत जन नाहिं करत पानं।
सुरा अपवित्र निति गंगजल मानिये
सुरसरि मिलत नहिं होत आनं ॥१॥
तर तारि अपवित्र कर मानिये
जैसे कागरा करत बिचारं।
भगवत भगवंत जब ऊपरे लिखिये
तब पूजिये करि नमस्कारं ॥२॥
अनेक अधम जिब नाम सुनि ऊधरे
पतित पावन भये परसि सारं।
भनत रविदास रंरकार गुन गाबंत
संत साधु भये सहज पारं ॥३॥
 जगद्गुरु रविदास महाराज जी मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव
 प्रभु का नाम लेता है, वह प्रभु का ही रूप हो जाता है और उसका यश संसार भर में
 फैल जाता है।

ऐसी मेरी जाति विखियात चमारं ॥
हिरदे राम गोबिंद गुन सारं ॥टेक॥
 मैं प्रसिद्ध चमार जाति से संबंध रखता हूँ और मैंने अपने हृदय में प्रभु के
 गुणों को धारण किया अर्थात् बसाया हुआ है।
सुरसरि जल लीया कृत बारुनी रे
जैसे संत जन नाहिं करत पानं।
 यदि गंगाजल से मदिरा बना ली जाए, तब भी संत जन उसका सेवन नहीं
 करते क्योंकि वह गंगाजल अपने निरंतर प्रवाह से अलग होकर, अपवित्र हो गया है।
 उसी प्रकार यदि कोई जीव ऊँचे कुल में पैदा हुआ है परन्तु वह प्रभु का नाम नहीं
 जपता, वह प्रभु के दरबार में मान्य नहीं होता।
सुरा अपवित्र निति गंगजल मानिये
सुरसरि मिलत नहिं होत आनं ॥१॥
 इसके विपरीत अपवित्र मदिरा अथवा अन्य नदियों नालों का पानी, जिस
 समय गंगा में मिल जाता है, तो वह कुछ और न रहकर, गंगा का ही रूप हो जाता है।
 इसी प्रकार जिन्हें संसार के अज्ञानी लोग जाति के कारण शूद्र समझते हैं, जब वे
 परमात्मा का नाम जपते हैं, तो वह प्रभु के साथ मिलकर परमात्मा में अभेद्य हो जाते
 हैं।
तर तारि अपवित्र कर मानिये
जैसे कागरा करत बिचारं।
 जिस प्रकार ताड़ का वृक्ष अपवित्र माना जाता है, क्योंकि उसमें नशे के
 समान जल होता है। विचारक ताड़ के वृक्ष के पत्तों से बने कागज को अपवित्र मानते
 हैं।
भगवत भगवंत जब ऊपरे लिखिये
तब पूजिये करि नमस्कारं ॥२॥
 परन्तु जब उन पर प्रभु का नाम तथा प्रशंसा लिख दी जाती है तो उन्हें
 नमस्कार कर उसकी पूजा की जाती है। इस प्रकार जिन जीवों को सांसारिक लोग
 अज्ञानता के कारण नीच समझते थे, जब उन्होंने परमात्मा का नाम लिया, तो वे भी इस
 संसार में नमस्कार कर पूजे जाते हैं।
अनेक अधम जिब नाम सुनि ऊधरे
पतित पावन भये परसि सारं।
 अनेकों जीव जिन्हें भ्रम वश लोग नीच जाति के समझते थे, वे जीव प्रभु का
 पावन नाम जपकर मुक्त हो गए।

भनत रविदास रंरकार गुन गाबंत

संत साधु भये सहज पारं ॥३॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि रंग-रूप से रहित, प्रभु के गुण गाकर, संत जन सहजावस्था में पहुँचकर मुक्त हो जाते हैं।

शब्द - 77

पार गया चाहै सभ कोई दोहू उरवार पार नहि होई ॥ टेक ॥

पार कहै उरवार सो पारा बिन पद परचे भ्रमै गंवारा ॥१॥

पार परमपद मांझि मुरारी ता में आप रमैं बनवारी ॥२॥

पूरन ब्रह्म बसै सभ ठाँई कहै रविदास मिलै सुख साँई ॥३॥

जगत्गुरु रविदास जी महाराज जीवों को पावन उपदेश देते हैं कि हर जीव इस संसार में मुक्त होना चाहता है परन्तु उस परम तत्त्व प्रभु को जाने बिना जीव मुक्त नहीं हो सकता और परम-पद की प्राप्ति होने पर ही जीव को ब्रह्म सुख प्राप्त होता है।

पार गया चाहै सभ कोई दोहू उरवार पार नहि होई ॥ टेक ॥

हर जीव इस संसार में मुक्त होना चाहता है परन्तु प्रभु के नाम सिमरन के बिना जीव अपना जीवन निष्फल गँवा लेता है और भवसागर से पार नहीं होता।

पार कहै उरवार सो पारा बिन पद परचे भ्रमै गंवारा ॥१॥

प्रभु का नाम जप कर जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होने को ही मुक्ति कहा जाता है परन्तु परम तत्त्व को जाने बिना यह गँवार पुरुष भ्रम में ही फँसा रहता है।

पार परमपद मांझि मुरारी ता में आप रमैं बनवारी ॥२॥

परम पद की अवस्था ही भवसागर से पार होने की अवस्था है जिस में परमात्मा स्वयं निवास करता है।

पूरन ब्रह्म बसै सभ ठाँई कहै रविदास मिलै सुख साँई ॥३॥

परम पद की अवस्था में पहुँच कर, पूर्ण प्रभु सब जगह भाव संसार के कण-कण में विद्यमान प्रतीत होता है। गुरु रविदास महाराज जी कथन करते हैं कि प्रभु की प्राप्ति ही परम-सुख है।

शब्द - 78

सतगुरु हमहु लखाई बाट ।

जनम पाछले पाप नसाने,

मिटोगौ सभु संताप ॥ टेक ॥

बाहर खोजत जनम गंवाए,

उनमनि ध्यान रहे घट आप ।

शबद अनाहद बाजत घट मंहि,

अगम ग्यान भौ गुर प्रताप ॥१॥

धन दारा मंहि रहियो मगन नित,

गुणियो न मिचु कौ चाप ॥

कहि रविदास गुरु राह दिखावै,

तृछा बुझि मिटि मन संताप ॥२॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को सतगुरु के बताए मार्ग पर चलकर, प्रभु की अपने भीतर से ही प्राप्ति कर जीवन सफल करने का पावन उपदेश बख्शिष्य करते हैं।

सतगुरु हमहु लखाई बाट ।

जनम पाछले पाप नसाने,

मिटोगौ सभु संताप ॥ टेक ॥

सतगुरु जीव को संसार रूपी भवसागर से पार लगने के लिए नाम रूपी मार्ग दिखलाते हैं, जिस पर चलकर, जीव अपने पिछले सभी पापों एवं दुखों को खत्म कर लेता है।

बाहर खोजत जनम गंवाए,

उनमनि ध्यान रहे घट आप ।

जीव, प्रभु को बाहर खोजने में ही जन्म गंवा लेता है, परन्तु नाम जपकर, ध्यान लगाकर, सहजावस्था में पहुँचकर, वह अपने भीतर से ही प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

शबद अनाहद बाजत घट मंहि,

अगम ग्यान भौ गुर प्रताप ॥१॥

अनहद शब्द एक रस जीव के भीतर गूँज रहा है। ऐसा ज्ञान, गुरु कृपा से ही प्राप्त होता है।

धन दारा मंहि रहियो मगन नित,

गुणियो न मिचु कौ चाप ॥

जीव नित्य प्रति धन एवं स्त्री में मग्न रहता है तथा प्रभु के गुणों पर विचार नहीं करता।

कहि रविदास गुरु राह दिखावै,
तृष्णा बुझि मिटि मन संताप ॥२॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि जब गुरु प्रभु को मिलने का मार्ग दिखाता है, तो उस मार्ग पर चलकर, जीव के मन में से सारी तृष्णाएं एवं संताप समाप्त हो जाते हैं, जीव प्रभु के साथ जुड़ जाता है।

शब्द - 79

बापुरो सत रविदास कहै रे।
गियान बिचार चरन चित लावै हरि की सरनि रहै रे ॥टेक॥

पाती तोड़े पूजि रचावै तारन तिरन कहै रे।
मूरति माहिं बसै परमेशर तौ पानी माहिं तिरै रे ॥१॥

त्रिबिध संसार कवन बिधि तिरबौ जे दृड नाव न गहे रे।
नाम छाडिने डांडे बैसे तौ दूना दुःख सहे रे ॥२॥

गुरु को सबद अरु सुरति कुदाली खोदत कोई लहै रे।
राम कहहु कै बाटै न आयो सो नेकु लबहै रे ॥३॥

झूठी माया जग डहकाया तौ तिन ताप दहै रे।
कहै रविदास राम जप रसना माया काहू के संग न रहै रे ॥४॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज ने, जीवों को झूठी माया से बचने के लिए गुरु से शब्द लेकर उसका सिमरन करके, परमानंद की प्राप्ति करने का उपदेश दिया है।

बापुरो सत रविदास कहै रे।
गियान बिचार चरन चित लावै हरि की सरनि रहै रे ॥टेक॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि मैं सत्य कहता हूं कि जीवों को हरि के सत्यज्ञान की विचार करनी और हरि के चरणों में मन लगाना चाहिए और उसकी शरण में रहना चाहिए।

पाती तोड़े पूजि रचावै तारन तिरन कहै रे।
मूरति माहिं बसै परमेशर तौ पानी माहिं तिरै रे ॥१॥

सच्चे प्रेम के बिना, जीव फूल पत्ते तोड़कर, हरि की मूर्ति के आगे, पूजा के लिए चढ़ाता है। हरि को जीवों को पार लगाने वाला कहा जाता है। यदि मूर्ति में हरि का निवास है, तो मूर्ति को पानी पर तैरना चाहिए।

त्रिबिध संसार कवन बिधि तिरबौ जे दृड नाव न गहे रे।
नाम छाडिने डांडे बैसे तौ दूना दुःख सहे रे ॥२॥

जब तक जीव को संसार रूपी भवसागर से पार होने के लिए हरि के नाम की मजबूत नांव नहीं मिलती, तब तक जीव सतो-रजो-तमो रूपी संसार से कैसे पार हो सकेगा? हरि के नाम की मजबूत नांव को छोड़ कर, देवी-देवताओं की पूजा रूपी डंडे, भाव चप्पु का सहारा लेकर इसको बहुत कष्ट झेलना पड़ेगा।

गुरु को सबद अरु सुरति कुदाली खोदत कोई लहै रे।
राम कहहु कै बाटै न आयो सो नेकु लबहै रे ॥३॥

इस संसार में कोई विरला ही ऐसा जीव है, जो गुरु से शब्द लेकर उसका सिमरन कर, सुरति रूपी कुदाली से, अपने भीतर से, प्रभु की खोज से, शब्द-सुरति का मेल कर, परमानंद की खोज करता है। सब का मालिक राम, किसी की बांट में नहीं आया, जो नेक हृदय से हरि की खोज करता है वह मालिक को पा लेता है।

झूठी माया जग डहकाया तौ तिन ताप दहै रे।
कहै रविदास राम जप रसना माया काहू के संग न रहै रे ॥४॥

झूठी माया ने सारे संसार को भ्रमाया हुआ है, इस लिए जीव को तीन दुख आधि, व्याधि, उपाधि व्याप रहे हैं। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे संसार के प्राणियों! अपनी रसना से हरि का नाम सिमरन करो ता कि तुम्हारा मन सच्चे हरि से ही जुड़ा रहे। माया तो कभी भी किसी के साथ नहीं रहती।

शब्द - 80

ऐ अंदेस सोच यहि मेरे।
निसिवासर गुन गाऊँ तेरे ॥टेक॥

तुम चिंतत मेरी चिंतहु जाई।
तुम चिंतामनि होय कि नाई ॥१॥

भगति हेत तुम कहा कहा नहिं कीन्हा।
हमरी बेर भये बलहीना ॥२॥

कहै रविदास दास अपराधी।
जेहि तुम द्रवो मैं भगति न साधी ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को पावन उपदेश देते हैं कि जीव के मन में दिन-रात प्रभु के गुण गाने की चिंता होनी चाहिए।

ऐ अंदेस सोच यहि मेरे।
निसिवासर गुन गाऊँ तेरे ॥टेक॥

हे प्रभु जी! मेरे मन में यह चिंता और सोच लगी रहती है कि मैं दिन रात

आप के गुण गाता रहूँ।
 तुम चिंतंत मेरी चिंतहु जाई।
 तुम चिंतामनि होय कि नाई ॥१॥
 प्रभु जी! आपका पावन नाम याद करने से मेरे मन की सभी चिंताएं समाप्त
 हो गई हैं। आप का एक नाम ही मन-वांछित फल देने वाली मणि है।
 भगति हेतु तुम कहा कहा नहीं कीन्हा।
 हमरी बेर भये बलहीना ॥२॥
 प्रभु जी! आप अपने भक्तों के लिए क्या क्या नहीं करते? पर मेरी बारी आने
 पर आप बलहीन हो गए हो, मेरी सहायता क्यों नहीं करते?
 कहै रविदास दास अपराधी।
 जेहि तुम द्रवो मैं भगति न साधी ॥३॥
 गुरु रविदास जी महाराज कथन करते हैं कि प्रभु जी का दास अपराधी है,
 जो आप का दास कहला कर आप की भक्ति रूपी साधना नहीं करता।

शब्द - 81

बौरी करिलै राम सनेहा।
 संग सहेली वियाह चली सब,
 छांडि नैहरि रा गोहा ॥ टेक ॥
 खेल खिलार बड़स सभ बीती,
 मन चित भज न पिउ परतीती।
 मैं मैं जौ लौं गर्भ बौरानी,
 तौ लौं पियारा मनु नहिं आनी ॥१॥
 आपा मेटि मैं मेरी खोही,
 गरब तियागी अरपिहि निज देही।
 पिउ कौ नारी उहि मन आई,
 जिहि अभि अंतर अवरु नहिं काई ॥२॥
 जौ लौं पियारा मन नहिं आई,
 का सोरह शिंगार बनाई ॥
 सोइ सती रविदास बखानी,
 तन मन सिऊं पिउ रंग समानी ॥३॥
 इस शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी जीव रूपी स्त्री को, पति प्रभु को
 प्राप्त कर, अपना जीवन सफल बनाने का, पावन उपदेश बखिंश करते हैं।

बौरी करिलै राम सनेहा।
 संग सहेली वियाह चली सब,
 छांडि नैहरि रा गोहा ॥ टेक ॥
 प्रभु को भूली हुई जीव रूपी बौरी स्त्री! तू प्रभु के साथ स्नेह कर। अन्य
 जीव रूपी सहेलियां-स्त्रियां प्रभु के साथ मिल गई हैं अर्थात् ब्याही गई हैं। इस लिए
 तू भी इधर-उधर की बातें छोड़ कर प्रभु का सिमरन कर।
 खेल खिलार बड़स सभ बीती,
 मन चित भज न पिउ परतीती।
 हे जीव रूपी स्त्री! प्रभु को भुलाकर, तेरी आयु संसार के अन्य कार्यों में
 व्यतीत हो रही है। तू मन व चित्त एक कर प्रभु पर विश्वास क्यों नहीं करती।
 मैं मैं जौ लौं गर्भ बौरानी,
 तौ लौं पियारा मनु नहिं आनी ॥१॥
 जितनी देर यह जीव रूपी स्त्री हंकार के कारण बावरी बनी रहती हैं उतनी
 देर प्रिय पति के मन को नहीं भाती।
 आपा मेटि मैं मेरी खोही,
 गरब तियागी अरपिहि निज देही।
 मैंने अपने आप को मिटाकर अर्थात् मैं-मेरी के अहंकार को त्यागकर प्रभु
 पति के आगे अपनी काया को समर्पित कर दिया है।
 पिउ कौ नारी उहि मन आई,
 जिहि अभि अंतर अवरु नहिं काई ॥२॥
 प्रभु पति के मन को वही जीव रूपी स्त्री भाती है, जिसके भीतर प्रभु के
 अतिरिक्त अन्य किसी का विचार नहीं है।
 जौ लौं पियारा मन नहिं आई,
 का सोरह शिंगार बनाई ॥
 यदि यह जीव रूपी स्त्री पति परमात्मा को नहीं भाती तो यह जितने मर्जी
 श्रृंगार कर ले, वे सब व्यर्थ हैं।
 सोइ सती रविदास बखानी,
 तन मन सिऊं पिउ रंग समानी ॥३॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी बखान करते हैं कि वही जीव रूपी स्त्री सती है
 जो अपने पति के समक्ष तन मन अर्पित कर देती है और उसके रंग में रंग होकर उसी
 में विलीन हो जाती है।

रे मन मांछला संसार समुंदे, तूँ चित्र बिचित्र बिचार रे।
जिहि गाले गलियाहीं मरीये, सो संग दूरि निवारि रे ॥ टेक ॥
यम है डिगणि डोरि है कंकण, पर तिय गालौ जाणि रे।
ह्वै रस लुबुध रमे यौं मूरख, मन पछितावे नियांणि रे ॥ १ ॥
पाप गुनियो छै धरम निबौली, तूँ देखि देखि फल चाखि रे।
परतिरिया संग भलौ जौं होवै, तो राणौ रावन देखि रे ॥ २ ॥
कहै रविदास रतन फल कारनि, गोबिंद कै गुन गाइ रे।
कांचौ कुंभ भरियो जल जैसे, दिन दिन घटतौ जाइ रे ॥ ३ ॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी, मन रूपी मछली को, प्रभु का सिमरन कर, संसार रूपी समुद्र से, पार होने का पावन उपदेश देते हैं।

रे मन मांछला संसार समुंदे, तूँ चित्र बिचित्र बिचार रे।
जिहि गाले गलियाहीं मरीये, सो संग दूरि निवारि रे ॥ टेक ॥

हे मन ! तू मछली के समान है, संसार समुद्र के समान है तथा कई प्रकार के रंगों से भरा हुआ है। तू इसकी विचार कर। इन संसार के झूठे बंधनों में फंसकर, भाई तुम गल कर मर रहे हो। इन बंधनों को तू दूर कर।

यम है डिगणि डोरि है कंकण, पर तिय गालौ जाणि रे।
ह्वै रस लुबुध रमे यौं मूरख, मन पछितावे नियांणि रे ॥ १ ॥

यमदूतों की मृत्यु रूपी गाज किसी भी समय तुम पर गिर सकती है और तू संसार के विकारों रूपी बंधन (कंगल) में बंधा हुआ है तथा पराई स्त्री का साथ तुम्हें गलाने वाला है। हे मूर्ख पुरुष, तू संसार के रस-कस से लुभान्वित है, बाद में तुझे अन्जानों की भांति पछताना पड़ेगा।

पाप गुनियो छै धरम निबौली, तूँ देखि देखि फल चाखि रे।
परतिरिया संग भलौ जौं होवै, तो राणौ रावन देखि रे ॥ २ ॥

पाप करने वाले मनुष्य के लिए छह धर्म कौड़ी निमोली (नीम की गुठली) समान हैं, तू इनकी ओर देख-देखकर पाप रूपी फलों को चख। पराई स्त्री के साथ से यदि कल्याण होता, तो तू राजा रावण की दशा देख।

कहै रविदास रतन फल कारनि, गोबिंद कै गुन गाइ रे।
कांचौ कुंभ भरियो जल जैसे, दिन दिन घटतौ जाइ रे ॥ ३ ॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे भाई ! तू प्रभु के अमूल्य नाम रूपी रत्न की, फल प्राप्ति के लिए उसका गुणगान कर। प्रभु के नाम बिना जिस प्रकार कच्चा घड़ा यदि पानी से भरा हुआ, तो वह दिन प्रति दिन खरता रहता है,

उसी प्रकार प्रभु के नाम के बिना तेरा जीवन व्यर्थ जा रहा है।

रथ को चतुर चलावनहारो।
खिन हाँकै खिन ऊभौ राखै नहीं आन कौ सारो ॥ टेक ॥
जब रथ रहे सारथी थाकै तबको रथहि चलावै।
नाद बिंद सबै ही थाकै मन मंगल नहि गावै ॥ १ ॥
पाँच तत्त को यहू रथ साज्यो अरधै उरध निवासा।
चरन कमल लियो लाइ रह्यो है गुन गावै रविदासा ॥ २ ॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज पाँच तत्त्वों के बने हुए शरीर रूपी रथ को चलाने वाले मन रूपी रथवान को प्रभु की तरफ लगाने का उपदेश देते हैं। उस प्रभु से लगन लगा कर यह जीव उस में लीन हो जाता है।

रथ को चतुर चलावनहारो।
खिन हाँकै खिन ऊभौ राखै नहीं आन कौ सारो ॥ टेक ॥

पाँच तत्त्वों से बने हुए मनुष्य शरीर रूपी रथ को चलाने वाला मन रूपी चालक बहुत चतुर है। क्षणभर में ही यह शरीर को दौड़ाने लग जाता है और क्षणभर में ही मार्ग के इधर उधर होने से बचा लेता है। इस बात का और किसी को पता नहीं चलता।

जब रथ रहे सारथी थाकै तबको रथहि चलावै।
नाद बिंद सबै ही थाकै मन मंगल नहि गावै ॥ १ ॥

जिस समय शरीर रूपी रथ तो होता है परन्तु मन रूपी सारथी थक जाता है तो रथ को कौन चलाएगा? उस समय मन मंगलमय और विनोद भरपूर गीत नहीं गा सकेगा। भाव यह जीव परमात्मा को भुलाकर परमानंद को अनुभव नहीं कर सकता। जीव का मन परमात्मा के गुण नहीं गा सकता।

पाँच तत्त को यहू रथ साज्यो अरधै उरध निवासा।
चरन कमल लियो लाइ रह्यो है गुन गावै रविदासा ॥ २ ॥

परमात्मा ने पाँच तत्त्वों जल, वायु, मिट्टी, अग्नि एवं आकाश से शरीर रूपी रथ बनाया है, जिसका लोक परलोक में निवास है। गुरु रविदास जी महाराज प्रभु के गुण गाते हुए उच्चारण करते हैं कि प्रभु जी मैं आप जी के चरण कमलों में ध्यान लगा कर आप में लीन हो गया हूँ।

शब्द - 84

जो तुम तोरो राम मैं नहिं तोरौं ।
तुम सों तोरि कवन सौ जोरौ ॥टेक॥
तीरथ बरत न करौ अंदेसा ।
तुम्हरे चरन कमल का भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाओं तुम्हारी पूजा ।
तुम सा देव अवर नहिं दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि सो जोरियो ।
हरि सो जोरि सबन से तोरियो ॥३॥
सब पर हरि तुमारी आसा ।
मन क्रम बचन कहै रविदासा ॥४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी जीवों को आडम्बरमुक्त होकर, प्रभु से सच्ची प्रीति करने का उपदेश देते हैं ।

जो तुम तोरो राम मैं नहिं तोरौं ।
तुम सों तोरि कवन सौ जोरौ ॥टेक॥

हे प्रभु जी ! मेरी आप जी से सच्ची प्रीति है, यदि आप मुझ से प्रीति तोड़ेंगे भी, मैं नहीं तोड़ूंगा । क्योंकि आप जी से प्रीति तोड़ कर, मैं और किससे जोड़ूंगा?

तीरथ बरत न करौ अंदेसा ।
तुम्हरे चरन कमल का भरोसा ॥१॥

तीर्थों पर स्नान करना और व्रत रखना, इन बाह्य कर्मों को करने की मुझे कोई चिंता नहीं क्योंकि मेरा सच्चा भरोसा तो केवल आप जी के चरण कंवलों में है ।

जहँ जहँ जाओं तुम्हारी पूजा ।
तुम सा देव अवर नहिं दूजा ॥२॥

प्रभु जी ! मैं जहाँ भी जाता हूँ, केवल आप की ही पूजा करता हूँ । आप जैसा महान् देव और कोई दूसरा नहीं है ।

मैं अपनो मन हरि सो जोरियो ।
हरि सो जोरि सबन से तोरियो ॥३॥

हे प्रभु जी ! मैंने अपने मन को आप जी से जोड़ा है और आप जी से जोड़ कर सबसे तोड़ लिया है ।

सब पर हरि तुमारी आसा ।
मन क्रम बचन कहै रविदासा ॥४॥

गुरु रविदास जी निवेदन करते हैं कि प्रभु जी ! हर समय मेरे मन में आप जी

से मिलने की इच्छा होती है, मेरा मन, कर्म और बचन यही कहते हैं ।

शब्द - 85

केहि बिधि अब सुमिरौ रे अति दुलभ दीन दयाल ॥
मैं महा विषई अधिक आतुर कामना की झाल ॥टेक॥
कहां डिंब बाहर कीये हरि कनक कसौटी हार ॥
बाहर भीतर साखि तूँ हौ कीयो सु सौ अंधियार ॥१॥
कहा भयो बहुत पाखंड कीये हरि हिरदै सपने न जान ॥
जो दारा बिभिचारिनी मुखि पतिबरता जिय आन ॥२॥
मैं हिरदै हारि बैठयो हरि मो पै सरयो न एको काज ॥
भाव भगति रविदास दे प्रतिपाल करो मोहि आज ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि आडम्बरों से, प्रभु की प्राप्ति नहीं होती । इस लिए आडम्बरों और कर्म-काण्डों से मुक्त होने के लिए, जीव को प्रभु का सिमरन करना चाहिए ।

केहि बिधि अब सुमिरौ रे अति दुलभ दीन दयाल ॥
मैं महा विषई अधिक आतुर कामना की झाल ॥टेक॥

हे प्रभु जी ! जीव किस ढंग से आपका सिमरन करे? हे दीन दयाल प्रभु जी, आप जी की प्राप्ति बहुत कठिन है क्योंकि जीव विकारों में व्याकुल होकर, महा विषयी बन, वासनाओं की खोज में लगा रहता है ।

कहां डिंब बाहर कीये हरि कनक कसौटी हार ॥
बाहर भीतर साखि तूँ हौ कीयो सु सौ अंधियार ॥१॥

जीव प्रभु की प्राप्ति के लिए आडम्बर करता है परन्तु प्रभु की कसौटी पर वही जीव शुद्ध पाया जाता है, जो स्वर्ण की तरह शुद्ध होता है । हरि जी आप जीव के भीतर और बाहर की सब जानने वाले साक्षी हो, परन्तु आप जी को भूले हुए जीव का ध्यान अज्ञानता रूपी अंधकार में है ।

कहा भयो बहुत पाखंड कीये हरि हिरदै सपने न जान ॥
जो दारा बिभिचारिनी मुखि पतिबरता जिय आन ॥२॥

यह जीव बहुत आडम्बर करता है पर कभी सपने में भी प्रभु को याद नहीं करता, ऐसा करने से क्या होगा? जैसे कोई दुराचारी स्त्री बातें तो पतिव्रता होने की करती है, पर उसका ध्यान किसी और पुरुष में होता है । ऐसी स्त्री को पति की प्राप्ति नहीं होती । इस तरह ही यदि जीव रूपी स्त्री बातें तो पति अर्थात् प्रभु की प्राप्ति की करती है पर मन में प्रभु से सच्ची प्रीति नहीं है तो उस जीव रूपी स्त्री को, पति रूपी

प्रभु की प्राप्ति नहीं होती।
 मैं हिरदै हारि बैठयो हरि मो पै सरयो न एको काज ॥
 भाव भगति रविदास दे प्रतिपाल करो मोहि आज ॥३॥
 हे प्रभु जी! आप जी के नाम के बिना मैं संसार की बाजी हार कर बैठ गया हूँ, मेरा एक भी कार्य पूरा नहीं हुआ। सतगुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे प्रभु जी! अपनी प्रेमा-भक्ति की कृपा कर आज ही मुझे प्रतिपाल करो जी।

शब्द - 86

अब कैसे छूटै नाम रट लागी ॥टेक॥
 प्रभु जी तुम चंदन हम पानी ॥
 जाकी अंग अंग बास समानी ॥१॥
 प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा ॥
 जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
 प्रभुजी तुम दीपक हम बाती ॥
 जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
 प्रभु जी तुम मोती हम धागा ॥
 जैसे सोनहि मिलत सुहागा ॥४॥
 प्रभु जी तुम सुआमी हम दासा ॥
 ऐसी भगति करै रविदासा ॥५॥
 इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु से अपनी सच्ची प्रीति को व्यक्त करते हैं।

अब कैसे छूटै नाम रट लागी ॥टेक॥
 हे प्रभु जी! मेरे हृदय में आप की प्रेम-भक्ति है अब आप ही बताओ कि राम-नाम की रट कैसे हट सकती है? भाव अब यह रट छूट नहीं सकती।
 प्रभु जी तुम चंदन हम पानी ॥
 जाकी अंग अंग बास समानी ॥१॥
 हे प्रभु जी! आप चंदन हो और मैं पानी के समान हूँ। जैसे पानी चंदन से मिल कर चंदनयुक्त हो जाता है, ठीक वैसे ही मेरे अंग-अंग में नाम की सुगंधि बस रही हैं। प्रभु जी! मैं भी आप के साथ मिलकर आप का ही रूप हो गया हूँ।
 प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा ॥
 जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
 प्रभु जी! आप बादलों की तरह हो और मैं जंगली मोर के समान हूँ। जैसे

बादलों को देखकर, मोर आनन्दित जो जाता है, वैसे ही मैं आप जी के दर्शन कर आनन्दित हो जाता हूँ। जिस प्रकार चकोर और चन्द्रमा की प्रीति है, ऐसी ही प्रीति मेरी आप जी से है। जिस तरह चकोर चन्द्रमा की ओर निरंतर एक टक देखता रहता है, इस प्रकार प्रभु जी मैं भी सदैव आपके दर्शनों के वियोग में रहता हूँ।
 प्रभुजी तुम दीपक हम बाती ॥
 जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
 प्रभु जी! मेरी आप से प्रीति दीये और बाती की तरह है। आप दीये की तरह हो और मैं दीये में जलने वाली बाती के समान हूँ, पर प्रभु जी आप के नाम की ज्योति संसार के कोने-कोने में दिन रात जल रही है।
 प्रभु जी तुम मोती हम धागा ॥
 जैसे सोनहि मिलत सुहागा ॥४॥
 हे प्रभु जी! आप मोती हो और मैं धागे के समान हूँ। मेरी प्रीति आप से मोती और धागे की प्रीति की तरह है। जैसे सोने से सुहागे का मिलाप होता है ठीक वैसे ही मैं आप जी से मिला हुआ हूँ।
 प्रभु जी तुम सुआमी हम दासा ॥
 ऐसी भगति करै रविदासा ॥५॥
 हे प्रभु जी! आप सारे संसार के स्वामी हो। मैं आप का दास हूँ। स्वामी के बिना दास का और दास के बिना स्वामी का कोई महत्त्व नहीं। दास का सदैव अपने स्वामी से स्नेह होता है। सतगुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं सदैव ही आप जी की ऐसी सच्ची भक्ति करता हूँ।

शब्द - 87

माधो भ्रम कैसे न बिलाई ॥
 ताथैं दुती दरसै आई ॥ टेक ॥
 कनक कुटक सूत पट जुदा रजु भुअंग भ्रम जैसा ॥
 जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्यों, ब्रह्म जीव दुति ऐसा ॥१॥
 बिमल एक रस उपजै न बिनसै, उदय अस्त दोऊ नाहीं ॥२॥
 बिगता बिगत घटै नहि कबहुँ, बसत बसै सभ माहीं ॥३॥
 निस्चल निराकार अज अनुपम, निरभय गति गोबिन्दा ॥
 अगम अगोचर अच्छर अतरक निर्गुण अंत अनंदा ॥४॥
 सदा अतीत गियान घन बरजित निरबिकार अबिनासी ॥
 कहै रविदास सहज सुन्न सत, जीवन मुक्त निधि कासी ॥५॥

इस पावन शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी उपदेश देते हैं कि परमात्मा की कृपा से जीव के भ्रम का नाश हो जाता है और जीव परम-पद को प्राप्त कर लेता है।
माधो भ्रम कैसे न बिलाई ॥
ताथैं दुती दरसै आई ॥ टेक ॥
 हे प्रभु जी ! जीव का भ्रम क्यों समाप्त नहीं होता? क्योंकि जीव के अंदर द्वैत भावना है।
कनक कुटक सूत पट जुदा रजु भुअंग भ्रम जैसा ॥
जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्यों, ब्रह्म जीव दुति ऐसा ॥१॥
 जैसे भ्रम के कारण सोने और सोने से बने आभूषण, सूत और सूत से बने कपड़े भिन्न लगते हैं, ऐसे ही अज्ञानता रूपी भ्रम के कारण अंधेरे में रस्सी भी साँप प्रतीत होती है। जल और जल से पैदा हुई तरंगें, पत्थर और पत्थर से बनी ठाकुर की मूर्ति भिन्न लगती है। पर वास्तव में सोना और सोने से बने आभूषण, सूत और सूत से बने कपड़े एक ही हैं। रस्सी साँप नहीं, वास्तव में रस्सी है। जल और जल से पैदा हुई तरंग जल ही है। पत्थर और पत्थर से बने हुए ठाकुर एक ही है। इसी प्रकार ही द्वैत भाव होने के कारण जीव प्रभु से भिन्न लगता है। द्वैत रूपी भ्रम के नष्ट होने से जीव प्रभु में अभेद हो जाता है।
बिमल एक रस उपजै न बिनसै, उदय अस्त दोऊ नाहीं ॥
बिगता बिगत घटै नहिं कबहुँ, बसत बसै सभ माहीं ॥२॥
 निर्मल प्रभु निरंतर संसार में विद्यमान है। वह प्रभु न तो जन्म लेता है और न ही मरता है न ही उदय होता है और न ही अस्त होता है। अंतर्यामी प्रभु न घटता है न बढ़ता है। प्रभु सब में विद्यमान है।
निश्चल निराकार अज अनुपम, निरभय गति गोबिन्दा ॥
अगम अगोचर अच्छर अतरक निर्गुण अंत अनंदा ॥३॥
 प्रभु सदैव निश्चल, निरंकार, अजन्मा, अनुपम, निर्भय गोबिंद, अगोचर अविनाशी, तर्कहीन, निर्गुण और आनंद स्वरूप है।
सदा अतीत गियान घन बरजित निरबिकार अबिनासी ॥
कहै रविदास सहज सुन्न सत, जीवन मुक्त निधि कासी ॥४॥
 प्रभु सदैव रहने वाला है और उसको बाह्य ज्ञान द्वारा नहीं जाना जा सकता। वह प्रभु विकारों और नाश से मुक्त है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि उस प्रभु की सहज सुन्न अवस्था सत है। यह सहजावस्था रूप सत्य जीवों को जीवन में ही मुक्ति रूपी श्रेष्ठ खजाना प्रदान करती है।

शब्द - 88
मन मेरो सत सरूप बिचारं ॥
आदि अंत अनंत परम पद संसा सकल निवारं ॥ टेक ॥
 जस हरि कहीये तस हरि नांही है अस जस कछु तैसा ॥
 जानत जानत जान रह्यो मन मरम कहो निज कैसा ॥१॥
 कहियत आन अनुभवत आन रस मिलै न बिगर होई ॥
 बाहर भीतर प्रगट गुप्त घट घट प्रति अवर न कोई ॥२॥
 आदहु एक अंत फुनि सोई मध्य उपाधि सु कैसे ॥
 अहै एक पै भ्रम से दूजो कनक अलंकृत जैसे ॥३॥
 कहै रविदास प्रकाश परम पद का जप तप ब्रत पूजा ॥
एक अनेक अनेक एक हरि कहौ कौण बिधि दूजा ॥४॥
 इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास महाराज जी जीवों को प्रभु के सत्य-स्वरूप की विचार करने का उपदेश देते हैं कि वह प्रभु संसार का हमेशा रहने वाला आधार है। उसका सिमरन करने से जीव के अंदर उसके नाम का प्रकाश होने पर वह प्रभु को संसार के कण कण में व्यापक अनुभव करता है।
मन मेरो सत सरूप बिचारं ॥
आदि अंत अनंत परम पद संसा सकल निवारं ॥ टेक ॥
 हे मेरे मन ! तू सत्य-स्वरूप हरि की विचार कर। वह हरि आदि से लेकर अंत तक रहने वाला अनंत है और जीवों को परम पद मुक्ति प्रदान करने वाला है। हरि का सिमरन करने से जीव के सभी भ्रम दूर हो जाते हैं।
जस हरि कहीये तस हरि नांही है अस जस कछु तैसा ॥
जानत जानत जान रह्यो मन मरम कहो निज कैसा ॥१॥
 यह सांसारिक लोग हरि को जैसा कहते हैं, हरि उस तरह का नहीं है। प्रभु के स्वरूप के बारे में क्या कहा जाए? सांसारिक जीव प्रभु को जानकर भी नहीं जान सके और उसके सत्य स्वरूप के भेद को नहीं पा सके।
कहियत आन अनुभवत आन रस मिलै न बिगर होई ॥
बाहर भीतर प्रगट गुप्त घट घट प्रति अवर न कोई ॥२॥
 जीव प्रभु के बारे में कहता कुछ और है पर उसका अनुभव करना कुछ और है। जीव को प्रभु के नाम का रस मिलता है, फिर वह जीव उस हरि में विलीन हो जाता है और दोबारा उस प्रभु से अलग नहीं होता। अंदर बाहर भाव संसार के कण कण में, प्रभु परमात्मा परोक्ष रूप में व्यापक है। प्रत्येक प्राणी के भीतर उस प्रभु के बिना कोई और नहीं है।

आदहु एक अंत फुनि सोई मध्य उपाधि सु कैसे ॥

अहै एक पै भ्रम से दूजो कनक अलंकृत जैसे ॥३॥

प्रभु सृष्टि के आदि में भी एक था अब भी है, और भविष्य में भी रहेगा।

प्रभु केवल एक है, पर भ्रम के कारण जीव उस प्रभु को ऐसे भिन्न जानता है, जैसे भ्रम के कारण सोने और उससे बने हुए आभूषणों को भिन्न-भिन्न समझता है, पर वास्तव में वह सोना ही होते हैं। इस लिए जीव भ्रम के कारण प्रभु से अलग है, पर जब भ्रम का नाश हो जाता है तो जीव उस प्रभु में विलीन हो जाता है।

कहै रविदास प्रकाश परम पद का जप तप ब्रत पूजा ॥

एक अनेक अनेक एक हरि कहौ कौण बिधि दूजा ॥४॥

गुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं, जिस समय जीव के हृदय में प्रभु का प्रकाश हो जाता है, तो जीव परम पद को प्राप्त कर लेता है। तब जीव को जप-तप और पूजा विधियों को करने की आवश्यकता नहीं रहती। प्रभु एक से अनेक रूप धारण कर संसार में व्यापक है। प्रभु के समान कोई दूसरा नहीं है।

शब्द - 89

थोथो जनि सोई पछोरो रे कोई।

पछोरो जा मे निज कन होई ॥टेक॥

थोथी काया थोथी माया।

थोथा हरि बिन जनम गंवाया ॥१॥

थोथा पंडित थोथी बानी।

थोथी हरि बिन सबै कहानी ॥२॥

थोथा मंदिर भोग बिलासा।

थोथी आन देव की आसा ॥३॥

साचा सुमिरन नाम बिसासा।

मन बच करम कहै रविदासा ॥४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज इस शब्द में जीवों को प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं, उस प्रभु के नाम के बिना सब कुछ झूठा है।

थोथो जनि सोई पछोरो रे कोई।

पछोरो जा मे निज कन होई ॥टेक॥

हे भाई! प्रभु का नाम सत्य है उसे झूठा समझ कर कोई न भुलाओ। उस प्रभु

को क्यों भुलाओगे, जिसके आत्मसुख के कण सारे संसार में समाए हुए हैं।

थोथी काया थोथी माया।

थोथा हरि बिन जनम गंवाया ॥१॥

प्रभु के नाम के बिना यह शरीर भी झूठा है और माया भी झूठी है। प्रभु के नाम के बिना यह जीव झूठा जन्म गँवा रहा है।

थोथा पंडित थोथी बानी।

थोथी हरि बिन सबै कहानी ॥२॥

प्रभु के नाम के बिना पंडित भी झूठा है और पंडित की वाणी भी झूठी है।

प्रभु के नाम के बिना सभी कहानियां भी झूठी हैं।

थोथा मंदिर भोग बिलासा।

थोथी आन देव की आसा ॥३॥

महलों में रह कर विषय-विकारों में समय व्यतीत करना भी झूठ है और किसी देवी देवता की आशा रखना भी झूठ है।

साचा सुमिरन नाम बिसासा।

मन बच करम कहै रविदासा ॥४॥

परमात्मा का सच्चा सिमरन करना ही प्रभु के नाम में सच्चा विश्वास रखना है। गुरु रविदास जी फरमान करते हैं कि हे भाई! मन, वचन और कर्म से हरि के सच्चे नाम का सिमरन करो।

शब्द - 90

माधौ ! मोहि एकु सहारौ तोरा ॥टेक॥

तुमहि मात पिता प्रभ मेरो, हौं मसकीन अति भोरा।

तुम जउ तजो कवन मोहि राखे, सहिहै कौनु निहोरा ॥१॥

बाहाडंबर हौं कबहुं न जान्यौ, तुम चरनन चित मोरा।

अगुन सगुन दौ समकरि आन्यौ, चहुं दिस दरसन तोरा ॥२॥

पारस मनि मुहि रतु नहिं, जग जंजार न थोरा।

कहि रविदास तजि सभ तृष्णा, इकु राम चरन चित मोरा ॥३॥

इस शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को प्रभु का आश्रम ग्रहण कर जीवन सफल करने का पावन उपदेश देते हैं।

माधौ ! मोहि एकु सहारौ तोरा ॥टेक॥

हे प्रभु जी! मुझे एक आप जी का ही आश्रय है।

तुमहि मात पिता प्रभ मेरो, हौं मसकीन अति भोरा।

तुम जउ तजो कवन मोहि राखे, सहिहै कौनु निहोरा ॥१॥

प्रभु जी! आप मेरे माता-पिता हो, मैं निर्धन आप जी के चरण कमलों का

भंवरा हूँ। यदि प्रभु जी आप जी ने मेरा परित्याग कर दिया, फिर मुझे कौन संभालेगा?
आप के बिना किसके समक्ष अपने गिले-शिकवे व्यक्त करूंगा।

बाहाडंबर हों कबहुं न जान्यौ, तुम चरनन चित मोरा।

अगुन सगुन दौ समकरि आन्यौ, चहुँ दिस दरसन तोरा ॥२॥

मैं कभी भी बाह्य आडंबरों को करना नहीं जानता, मेरा मन तो केवल आप जी के चरण कंवलों में रहता है। आप मेरे अवगुणों व गुणों को एक समान कर देखिए।
मैं चारों दिशाओं में अर्थात् हर ओर आप जी के दर्शन दीदार करता हूँ।

पारस मनि मुहि रतु नहिं, जग जंजार न थोरा।

कहि रविदास तजि सभ तृष्णा, इकु राम चरन चित मोरा ॥३॥

मुझे पारस मणि की रत्ती भी आवश्यकता नहीं है। संसार के सभी जंजाल प्रभु के नाम के समक्ष झूठ है। गुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जीव को सभी तृष्णाएं त्याग कर प्रभु के चरणकंवलों के साथ चित्त लगाना चाहिए।

राग सोरठ

शब्द - 91

रे मन ! चेत मीचु दिन आया,

तो जग जाल न भया पराया ॥ टेक ॥

कानि सुनै न नजरि दीसै, जीह थिरु न रहाई।

मुण्ड रु तन थर थर कांपे, अंतहु बिरियां पहुंतौ आई ॥१॥

केसौ सेतह पिकु भये सभु, तन मनु बल बिलमाया।

मध्यांन गयौ तुरा चलि आई, अजहुं जग रह्यौ भरमाया ॥२॥

पानी गयो पलु छीजै काया, यहि तन जरा जराना।

पांचौ थाके जरा जरु सानै, तौ रामहि मरमु न जाना ॥३॥

हंस पंखेरू चंचलु भाई, समुझि पेखि मन मांहि।

प्रति पलु मीचु गरासै देही, फुनि रविदास चेतहु नांहि ॥४॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी, शरीर में वास कर रहे, आत्मा रूपी हंस को, प्रभु का नाम जपकर, अमूल्य जन्म सफल करने का, पावन उपदेश दे रहे हैं।

रे मन ! चेत मीचु दिन आया,

तो जग जाल न भया पराया ॥ टेक ॥

हे मन ! तुम चेतन हो जाओ और प्रभु को याद करो क्योंकि तुम्हारे आँखें

मीचने का समय, अर्थात् अंत समय निकट आ रहा है। अंत समय आने पर भी, तुम्हें

संसार रूपी जंजाल, पराया नहीं लग रहा है। भाव इस जगत के जंजाल से, स्वयं को मुक्त करो।

कानि सुनै न नजरि दीसै, जीह थिरु न रहाई।

मुण्ड रु तन थर थर कांपे, अंतहु बिरियां पहुंतौ आई ॥१॥

अंत समय अर्थात् वृद्धावस्था के आने पर, कान सुनने में एवं आँखें देखने में असमर्थ हो जाते हैं तथा जिह्वा बोल नहीं पाती है। मन स्थिर नहीं रहता अर्थात् मन को कई प्रकार के डर व्याप्त हो जाते हैं। वृद्धावस्था आने पर बाल झड़ जाते हैं, शरीर कांपने लगता है, और अंततः मृत्यु आ जाती है।

केसौ सेतह पिकु भये सभु, तन मनु बल बिलमाया।

मध्यांन गयौ तुरा चलि आई, अजहुं जग रह्यौ भरमाया ॥२॥

प्रभु के बिना सब कुछ झूठ लगता है, तन एवं मन का बल कम होना शुरू हो जाता है। प्रौढ़ावस्था बीत जाती है एवं बुढ़ापा आ घेरता है। फिर भी जीव भटकता रहता है।

पानी गयो पलु छीजै काया, यहि तन जरा जराना।

पांचौ थाके जरा जरु सानै, तौ रामहि मरमु न जाना ॥३॥

शरीर को सींचने वाला श्वासों रूपी पानी कम होना शुरू हो जाता है और इस तन को बुढ़ापा आने लगता है। पांचो ज्ञानेन्द्रियां थक जाती हैं और फिर भी यह जीव प्रभु का भेद नहीं जान पाता।

हंस पंखेरू चंचलु भाई, समुझि पेखि मन मांहि।

प्रति पलु मीचु गरासै देही, फुनि रविदास चेतहु नांहि ॥४॥

हे चंचल मन वाले भाई ! यह आत्मा रूपी हंस शरीर में से उड़ने वाला है। इस बात को तू अपने मन में समझ कर देख ले। सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे जीव ! काल पल-पल शरीर को खा रहा है, फिर पुनः प्रभु को स्मरण करने का समय नहीं मिलेगा, इस लिए तू प्रभु का स्मरण कर।

राग भैरो

शब्द - 92

ऐसा ध्यान धरौं बनवारी। मन पवन दिडि सुखमन नाडी ॥ टेक ॥

सोई जपु जपौं जो बहुरि न जपना। सोई तपु तपौं जो बहुरि न तपना ॥१॥

सोई गुरु करौं जो बहुरि न करना। ऐसी मरौं जो बहुरि न मरना ॥२॥

उलटी गंग जमुन में लयावो। बिनही जल मजन है आवौं ॥३॥

लोचन भरि भरि बियंब निहारौं। जोति बिचारि न और बिचारौं ॥४॥

पिंड परे जीव जिस घरि जाता। शब्द अतीत अनाहद राता ॥५॥

जा पर किरपा सोई भल जानै। गूंगौ साकर कहा बखानै ॥६॥

सुन्न मण्डल में तेरा बासा। ताथै जाव में रहौं उदासा ॥७॥

कह रविदास निरंजन ध्याउ, जिस घरि जाओ हौ बहुरि न आउ ॥८॥

सतगुरु रविदास जी जीवों को, प्रभु का दशम द्वार में ध्यान लगा कर, सुन्न मंडल में पहुँच कर, जीवन मुक्त होने का पावन उपदेश देते हैं।

ऐसा ध्यान धरौं बनवारी। मन पवन दिड़ि सुखमन नाडी ॥टेक॥

हे जीव! तू प्रभु का ऐसा ध्यान कर, जिससे तेरा मन प्रभु से जुड़ जाए और

तेरे श्वास इड़ा-पिंगला, जहाँ दोनो नाड़ियाँ मिलती हैं- सुखमना नाड़ी भाव दशम द्वार में पहुँच जाए।

सोई जपु जपौं जो बहुरि न जपना। सोई तपु तपौं जो बहुरि न तपना ॥१॥

हे जीव! आत्मदर्शी गुरु की शरण ग्रहण कर। इस अवस्था में पहुँच कर,

यदि तू प्रभु का नाम सिमरन करेगा, तो तुझे बार बार नाम सिमरन करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी और ऐसा श्रेष्ठ तप करेगा, तो तुझे पुनः तप करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

सोई गुरु करौं जो बहुरि न करना। ऐसी मरौं जो बहुरि न मरना ॥२॥

गुरु का ज्ञान ही अज्ञानता का नाश कर सकता है और फिर किसी और की आवश्यकता नहीं रहती। जब जीव प्रभु का नाम जप कर जीवन मुक्त हो जाता है तो उसे पुनः मरना नहीं पड़ता।

उलटी गंग जमुन में लयावो। बिनही जल मजन है आवौं ॥३॥

जब जीव अपने ध्यान को, संसार की ओर से हटा कर, प्रभु की ओर लगाता है, तो गंगा भाव इड़ा नाड़ी, जमुना भाव पिंगला नाड़ी मिल कर, सुखमना नाड़ी से मिलती हैं, तो इस दशम द्वार रूपी जलविहीन त्रिवेणी में स्नान कर अपना जीवन सफल कर लेता है।

लोचन भरि भरि बियंब निहारौं। जोति बिचारि न और बिचारौं ॥४॥

फिर जीव मन रूपी आँखों से प्रभु की प्रतिमा को देखने का आनन्द अनुभव करता है और जीव परमात्मा के सत्य स्वरूप का, विचार कर उसका रूप हो जाता है। उस की ज्योति में ही विलीन हो जाता है और उसके शेष सभी विचार समाप्त हो जाते हैं।

पिंड परे जीव जिस घरि जाता। शब्द अतीत अनाहद राता ॥५॥

शरीर रूपी पिंड में विराजित प्रभु से मिल कर जीव उस बेगमपुरे भाव प्रभु के निज घर में जाता है और यह जीव वास्तविक एक रस प्रभु के नाम में रंगा जाता है।

जा पर किरपा सोई भल जानै। गूंगौ साकर कहा बखानै ॥६॥

जिस पर प्रभु कृपा करता है वही परमानन्द के अनुभव को जानता है। जैसे गूंगा जीव, शक्कर खाने के स्वाद को बता नहीं सकता, ऐसे ही प्रभु का आनन्द लेने वाला जीव, उसे व्यक्त नहीं कर सकता।

सुन्न मण्डल में तेरा बासा। ताथै जाव में रहौं उदासा ॥७॥

मेरा निवास, प्रभु के सुन्न मंडल रूपी निजघर में है। इस लिए मैं संसार में रहता हुआ भी, इस संसार से उपराम रहता हूँ।

कह रविदास निरंजन ध्याउ, जिस घरि जाओ हौ बहुरि न आउ ॥८॥

गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं माया से मुक्त निरंजन प्रभु का सिमरन करता हूँ। अब परमात्मा के सुन्न मंडल रूपी निज घर में आने के कारण, मैं कहीं और नहीं जाऊँगा भाव मैं उस प्रभु का सिमरन कर, उसमें विलीन हो गया हूँ और मैं संसार में पुनः जन्म लेकर नहीं आऊँगा।

शब्द - 93

अबिगति नाथ निरंजन देवा। मैं का जानू तुम्हारी सेवा ॥टेक॥

बाँधू न बंधन छाऊं न छाया। तुमहीं सेऊं निरंजन राया ॥१॥

चरन पताल सीस असमाना। सो ठाकुर कैसे संपुट समाना ॥२॥

सिव सनकादिक अंत न पाया। ब्रह्म खोजत जनम गंवाया ॥३॥

तोड़ू न पाती पूजूं न देवा। सहज समाधि करूँ हरि सेवा ॥४॥

नख प्रसेद जा के सुरसरि धारा। रोमावली अठारह भारा ॥५॥

चारो बेद जा के सुमिरत सांसा। भगति हेत गावै रविदासा ॥६॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज आडम्बरों और कर्मकाण्डों से मुक्त होकर, सर्व-व्याप्त, प्रभु का सिमरन करने का उपदेश देते हैं।

अबिगति नाथ निरंजन देवा। मैं का जानू तुम्हारी सेवा ॥टेक॥

हे अविनाशी माया मुक्त प्रभु जी! मैं आप जी की सेवा करने के बारे में कुछ नहीं जानता।

बाँधू न बंधन छाऊं न छाया। तुमहीं सेऊं निरंजन राया ॥१॥

मैं सांसारिक बंधनों में नहीं पड़ूँगा और इनकी छाया भी अपने ऊपर नहीं पड़ने दूँगा। हे माया मुक्त प्रभु, मैं केवल आप जी की सेवा ही करूँगा।

चरन पताल सीस असमाना। सो ठाकुर कैसे संपुट समाना ॥२॥

वह प्रभु, जिसके चरण पाताल और शीश आकाश समझा जाता है, क्या वह ठाकुर प्रभु किसी स्थान पर सीमित हो सकता है? भाव नहीं, वह तो सर्व-व्यापक है।

सिव सनकादिक अंत न पाया। ब्रह्म खोजत जनम गंवाया ॥३॥

उस प्रभु का आदि-अन्त शिव जी और सनकादिक इत्यादि ब्रह्म के चारों पुत्र नहीं पा सके। प्रभु को भुलाकर ब्रह्म ने वेदों को जानने में ही अपना अमूल्य जीवन गँवा लिया।

तोड़ूँ न पाती पूजूँ न देवा। सहज समाधि करूँ हरि सेवा ॥४॥

हे प्रभु जी! वनस्पति की पत्तियाँ तोड़ कर, मैं आप की पूजा नहीं करता। हे प्रभु जी! मैं तो सहज समाधि में पहुँच कर, आप का सिमरन करता हूँ और आप जी की सेवा में उपस्थित हूँ।

नख प्रसेद जा के सुरसरि धारा। रोमावली अठारह भारा ॥५॥

प्रभु के चरणों के पसीने में से गंगा की श्रेष्ठ धारा बहती है और उस प्रभु की कृपा से ही, वनस्पति के अठारह भार, शरीर के रोम जाने जाते हैं।

चारो बेद जा के सुमिरत सांसा। भगति हेत गावै रविदासा ॥६॥

चारों वेदों के रचयिता भी, प्रभु का श्वास-श्वास सिमरन करते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु की प्रेमा-भक्ति के लिए मैं गुण गा रहा हूँ।

शब्द - 94

भेष लियो पै भेद न जान्यो। अमृत लेयि विषै सो मान्यो ॥टेक॥

काम क्रोध में जनम गंवायो। साधु संगति मिलि राम न गायो ॥१॥

तिलक दियो पै तपनि न जाई। माला पहिर घनेरी लाई ॥२॥

कहै रविदास मरम जो पाऊँ। देव निरंजन सत कर ध्याऊँ ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज, जीवों को आडम्बर त्याग कर, संत महापुरुषों की संगत में जाकर प्रभु के नाम सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं।

भेष लियो पै भेद न जान्यो। अमृत लेयि विषै सो मान्यो ॥टेक॥

हे आडम्बरी जीव! तुमने भेष तो साधुओं वाला बना लिया है परन्तु तुमने प्रभु के गुप्त भेद को नहीं जाना। तुमने प्रभु के ब्रह्मज्ञान को नहीं जाना, बल्कि संसार रूपी विषय-विकारों को अमृत समझ रखा है।

काम क्रोध में जनम गंवायो। साधु संगति मिलि राम न गायो ॥१॥

हे जीव! तुम प्रभु को भूलकर, काम क्रोध इत्यादि विकारों में अपना जन्म गंवा रहे हो और संतों की संगत में जाकर प्रभु का नाम सिमरन नहीं करते।

तिलक दियो पै तपनि न जाई। माला पहिर घनेरी लाई ॥२॥

माथे पर चंदन का तिलक लगाने से, तेरे भीतर से विषय विकारों की तपिश नहीं जाएगी। जितनी चाहे घनी मालाएँ पहन ले, फिर भी तुम्हारे भीतर से भ्रम का नाश

नहीं होगा।

कहै रविदास मरम जो पाऊँ। देव निरंजन सत कर ध्याऊँ ॥३॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव कर्मकाण्डों को त्याग कर, ब्रह्म ज्ञान के भेद को जान लेता है, वही जीव माया से मुक्त प्रभु को, सत्य जान कर उसका सिमरन करता है।

शब्द - 95

गुरु सभु रहसि अगमहि जानै।

ढूँढै कोउ षट सासत्रन मंहि, किंधू को वेद वशानै ॥टेक॥

सांस उसांस चढ़ावै बहु विधि, बैठहिं सुनि समाधी।

फांटियो कानु भभूत तनि लाई, अनिक भरमत वैरागी ॥१॥

तीरथ बरत करयि बहुतेरे, कथा बसत बहु सानै।

कहि रविदास मिलियौ गुर पूरे, जिहि अंतर हरि मिलानै ॥२॥

जगतगुरु रविदास महाराज जी, सभी जीवों को, बाह्य कर्मकाण्डों से मुक्त होकर, गुरु की शरण में जाकर, प्रभु से मिलाप करने का, पावन उपदेश देते हैं।

गुरु सभु रहसि अगमहि जानै।

गुरु सभी अगम रहस्यों को जानने वाला है।

ढूँढै कोउ षट सासत्रन मंहि, किंधू को वेद वशानै ॥टेक॥

कोई जीव उसे भ्रमवश बाहर छह शास्त्रों में तथा वेदों में खोजता फिरता है।

सांस उसांस चढ़ावै बहु विधि, बैठहिं सुनि समाधी।

कोई जीव विविध प्रकार से, सांसों को चढ़ाता उतारता है तथा कोई सुन समाधि में बैठा है।

फांटियो कानु भभूत तनि लाई, अनिक भरमत वैरागी ॥१॥

किसी ने अपने कान फड़वाकर, शरीर पर राख लगाई हुई है तथा कई वैरागी

बनकर, अनेक स्थानों का भ्रमण करते हैं।

तीरथ बरत करयि बहुतेरे, कथा बसत बहु सानै।

कई जीव विभिन्न तीर्थों पर सनान करते हैं तथा कथाओं का व्याख्यान करते हैं।

कहि रविदास मिलियौ गुर पूरे, जिहि अंतर हरि मिलानै ॥२॥

गुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जब जीव को पूरा गुरु मिल जाता है, तब वह भीतर से ही जीव को प्रभु के साथ मिला देता है।

राग बिलावल

शब्द -96

का तूँ सोवै जागि दिवाना । झूठा जीवन सांचि करि जाना ॥टेक ॥
जो दिन आवै सो दुख मे जाही । कीजै कूच रहियो सच नाही ॥
संगि चलियो है हम भी चलना । दूर गवन सिर ऊपर मरना ॥१ ॥
जो कछु बोया लुनिये सोई । ता में फेर फार नहीं होई ॥
छाड़िय कूर भजो हरि चरना । ता को मिटे जनम अरु मरना ॥२ ॥
जिनि जीऊ दिया सो रिजक अमड़ावै । घट-घट भीतर रहट चलावै ॥
करि बंदगी छाड़ि मैं मेरा । हिरदै करीम संभरि सबेरा ॥३ ॥
आगे पंथ खरा है झीना । खाँडै धार जैसा है पैना ॥
जिस ऊपर मारग है तेरा । पंथी पंथ संवार सवेरा ॥४ ॥
क्या तैं खरचा क्या तैं खाया । चल दरहाल दिवान बुलाया ॥
साहिब तो पै लेखा लेसी । भीरि परिया तूँ भरि भरि देसी ॥५ ॥
जनम सिराना किया पसारा संवारा । सांझ परी चहुँ दिसि अंधियारा ॥
कहि रविदास निदानि दिवाना । अजहुँ न चेतै दुनी फंदखाना ॥६ ॥
जगत्गुरु रविदास महाराज जी, संसार की अस्थिरता का वर्णन करते हुए
जीव को अज्ञानता रूपी नींद से जगा कर, प्रभु का नाम जप कर अपना पंथ संवारने का
पावन वैरागमयी उपदेश देते हैं ।

का तूँ सोवै जागि दिवाना । झूठा जीवन सांचि करि जाना ॥टेक ॥
हे जीव ! तुम इस संसार में अज्ञानता रूपी नींद में क्यों सोये हुए हो ? तुम इस
झूठे जीवन को ही सत्य समझ रहे हो । वास्तव में यह संसार नश्वर है, अतः हे भाई !
अज्ञानता रूपी नींद से जागकर, प्रभु का स्मरण करो ।
जो दिन आवै सो दुख मे जाही । कीजै कूच रहियो सच नाही ॥
संगि चलियो है हम भी चलना । दूर गवन सिर ऊपर मरना ॥१ ॥
जो दिन चढ़ता है, वह दुख में व्यतीत हो जाता है । इसी प्रकार जीव की
आयु घटती जाती है । सभी ने संसार को छोड़कर चले जाना है । संसार में स्थिर रहने
वाला कोई भी जीव नहीं है । जीव के संगी साथी साथ छोड़ कर संसार से जा रहे हैं ।
हमें भी एक दिन संसार त्याग कर चले जाना है । जिस मृत्यु का आना जीव दूर समझता
है, वह मृत्यु इन्सान के सिर पर खड़ी है ।

जो कछु बोया लुनिये सोई । ता में फेर फार नहीं होई ॥
छाड़िय कूर भजो हरि चरना । ता को मिटे जनम अरु मरना ॥२ ॥
हे भाई ! जो कुछ तुमने बोया है, तुम वही काटोगे अर्थात् तुम जैसे कर्म

करोगे, वैसा ही परिणाम भुगतोगे । इनमें कोई कमी-वृद्धि नहीं होगी । हे भाई, कूड
(झूठ) को छोड़कर, प्रभु के चरणों के साथ जुड़, जिसके साथ तेरा जन्म मरण मिट
जाए ।

जिनि जीऊ दिया सो रिजक अमड़ावै । घट-घट भीतर रहट चलावै ॥
करि बंदगी छाड़ि मैं मेरा । हिरदै करीम संभरि सबेरा ॥३ ॥
जिस प्रभु ने जीवन प्रदान किया है, वही सब को रिजक पहुँचाता है । प्रभु
सभी शरीरों में सारी इन्द्रियों को चला रहा है । हे इन्सान तू मैं-मेरी के अहंकार को
छोड़कर प्रातः काल उठकर अपने हृदय में प्रभु के नाम का सिमरन कर ।
आगे पंथ खरा है झीना । खाँडै धार जैसा है पैना ॥
जिस ऊपर मारग है तेरा । पंथी पंथ संवार सवेरा ॥४ ॥
मृत्यु के पश्चात् आगे परलोक का मार्ग तलवार की धार जैसा बारीक है,
जिसके ऊपर से गुजर कर जाना है । अतः हे नाशवान जीव ! तुम प्रातः काल के समय
प्रभु का सिमरन करके, अपना पंथ संवार अर्थात् परलोक का मार्ग संवार लो ।
क्या तैं खरचा क्या तैं खाया । चल दरहाल दिवान बुलाया ॥
साहिब तो पै लेखा लेसी । भीरि परिया तूँ भरि भरि देसी ॥५ ॥
हे भाई ! इस संसार में आकर तुमने क्या खर्च किया और क्या खाया । धर्मराज
दरबार को बुलाकर तुमसे यह पूछेगा । उस समय साहिब तुमसे हिसाब मांगेगा । एक
समय प्रभु के नाम के बिना, तुम पर बुरे कर्म हावी हो जाएंगे तथा तुम्हें हिसाब देना
पड़ेगा ।

जनम सिराना किया पसारा संवारा । सांझ परी चहुँ दिसि अंधियारा ॥
कहि रविदास निदानि दिवाना । अजहुँ न चेतै दुनी फंदखाना ॥६ ॥
हे जीव ! तेरा मनुष्य जन्म निष्फल ही व्यतीत होता जा रहा है । तुमने नाम
जपकर अपना परलोक मार्ग नहीं संवारा । जैसे शाम ढलने पर, दसों दिशाओं में अर्थात्
हर ओर अंधेरा ही अंधेरा पसर जाता है । इसी प्रकार जब मृत्यु रूपी शाम ढलती है, तो
दसों इन्द्रियों में अंधकार हो जाता है, इस समय तुमसे प्रभु के नाम का सिमरन नहीं
किया जा सकेगा ।

सतगुरु रविदास महाराज जी फ़रमाते हैं कि हे नासमझ पुरुष ! अभी तक भी
तुम्हें याद नहीं कि यह दुनिया नश्वर है । इसलिए हे भाई, उस परमात्मा का सिमरन
कर, जो लोक-परलोक में तुम्हारा सहायक होगा ।

शब्द - 97

खालिक सिकस्ता मैं तेरा ।

दे दीदार उमेदगार बेकरार जीऊ मेरा ॥टेक॥

अवलि आखिर इलह आदिम मौज फरिस्ता बन्दा ।

जिस की पनह पीर पैगम्बर मैं गरीब क्या गंदा ॥१॥

तू हाजरा हजूर जोग इक अवर नहीं दूजा ।

जिसके इसक आसरा नाही क्या निवाज क्या पूजा ॥२॥

नालीदोज़ हनोज बेबखत कमि खिजमतिगार तुम्हारा ।

दरमाँदा दर ज्वाब न पावै कहि रविदास बिचारा ॥३॥

जगत्गुरु रविदास जी उपदेश देते हैं कि प्रभु को भूला हुआ जीव, जितनी

चाहे पूजा-अर्चना करता रहे, परन्तु प्रभु की शरण प्राप्त किये बिना, उसका जीवन सफल नहीं हो सकता ।

खालिक सिकस्ता मैं तेरा ।

दे दीदार उमेदगार बेकरार जीऊ मेरा ॥टेक॥

हे प्रभु जी ! मैं तेरा हूँ, परन्तु तेरे दर्शन न होने के कारण मैं अपने आप को

आप से भिन्न अनुभव करता हूँ । हे प्रभु जी ! आप मुझे दर्शन दो । मेरा हृदय आप जी के दर्शनों के लिए व्याकुल हो उठा है ।

अवलि आखिर इलह आदिम मौज फरिस्ता बन्दा ।

जिस की पनह पीर पैगम्बर मैं गरीब क्या गंदा ॥१॥

प्रभु जी ! आदि से लेकर अंत तक, आप ही संसार के कण-कण में समाए

हुए हो । प्रभु जी ! आप का नाम सिमरन करने वाला ही, श्रेष्ठ मनुष्य है । हे प्रभु जी ! आप की शरण, तो पीर पैगम्बरों ने भी ली है, तो मैं गरीब आप जी की शरण कैसे नहीं

ले सकता ?

तू हाजरा हजूर जोग इक अवर नहीं दूजा ।

जिसके इसक आसरा नाही क्या निवाज क्या पूजा ॥२॥

प्रभु जी आप सारे संसार में व्याप्त हो । आप के समान अन्य कोई दूसरा नहीं

है । प्रभु जी, जिस जीव ने आपके प्रेम को अपना आश्रय नहीं बनाया, चाहे वह नमाज़ गुज़ार ले, चाहे पूजा कर ले, यह सब करना निष्फल है ।

नालीदोज़ हनोज बेबखत कमि खिजमतिगार तुम्हारा ।

दरमाँदा दर ज्वाब न पावै कहि रविदास बिचारा ॥३॥

प्रभु जी, आप से अनभिज्ञ होने के कारण, जीव अब तक नाली में पड़े कीड़े

की तरह दुख भोग रहा है, बताओ वह आपका सेवक कैसे बन सकता है ? गुरु

रविदास जी महाराज विनती करते हैं कि हे प्रभु ! आपका दर्शन रूपी उत्तर न पाकर यह दीन जीव दुखी रहता है ।

शब्द - 98

जो मोहि बेदनि कासनि आखूँ

हरि बिन जीवन कैसे करि राखो ॥टेक॥

जिव तरसै इक दंग बसेरा करहु, सँभाल तुम सिरजन मेरा ॥

बिरह तपै तन अधिक जरावै, नींद न आवै भोजन न भावै ॥१॥

सखी सहेली गरब गहेली पिउ की बात न सुनहु सहेली ॥

मैं रे दुहागनि अधिकरि जानी, गयो सो जोबन साध न मानी ॥२॥

तू दाना सांई साहिब मेरा, खिदमतगार बंदा मैं तेरा ॥

कहै रविदास अंदेसा येही, बिन दरसन क्यों जीवहि सनेही ॥३॥

इस पावन शब्द में जगत्गुरु रविदास महाराज जी, प्रभु प्रेम की अवस्था का

वर्णन करते हैं कि हरि जी आप जी का सेवक आप के दर्शन के बिना जीवित नहीं रह सकता, वह तो केवल आप जी के दर्शन की आशा में ही जी रहा है ।

जो मोहि बेदनि कासनि आखूँ

हरि बिन जीवन कैसे करि राखो ॥टेक॥

हे भाई ! मेरे मन में हरि के वियोग की इतनी पीड़ा है कि मैं ब्यान नहीं कर

सकता । 'हरि' के बिना मैं अपना जीवन कैसे जीऊँ ?

जिव तरसै इक दंग बसेरा, करहु सँभाल तुम सिरजन मेरा ॥

बिरह तपै तन अधिक जरावै, नींद न आवै भोजन न भावै ॥१॥

हे हरि जी ! आप की दया के लिए मेरा जीवन तरस रहा है, आप कृपा दर्शन

देकर मेरी संभाल करो । आप जी के बिना, कोई देवता या मुनि मेरी चिंता करने वाला नहीं है । हरि जी, आप के दर्शनों के वियोग में, मन और तन बहुत तड़प रहा है, जिस

कारण मुझे नींद नहीं आती और भोजन भी अच्छा नहीं लगता ।

सखी सहेली गरब गहेली पिउ की बात न सुनहु सहेली ॥

मैं रे दुहागनि अधिकरि जानी गयो सो जोबन साध न मानी ॥२॥

हे सखी सहेली जीव रूपी स्त्री ! जितना समय तुझ में अहंकार है, उतनी देर

तुम पति रूपी हरि की, बात भी नहीं सुनती । मैं उन जीव रूपी स्त्रियों को दुहागिनी मानता हूँ, जो अपने पति रूपी हरि को भुला देती हैं और जीवन की यौवनावस्था, पति

प्रभु के बिना व्यतीत कर रही हैं । वे जीवन में संत महापुरुषों की शिक्षा पर नहीं

चलतीं ।

तू दाना साईं साहिब मेरा खिदमतगार बंदा मैं तेरा ॥

कहै रविदास अंदेसा येही बिन दरसन क्यों जीवहि सनेही ॥३॥

हे प्रभु जी! सब के भीतर की बात को समझने वाले, आप मेरे स्वामी हो और मैं आप की सेवा और सिमरन करने वाला, आप का दास हूँ। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि प्रभु जी मेरे मन में यह डर है कि आप जी का सेवक आप के दर्शनों के बिना कैसे जी सकता है? भाव दर्शनों के बिना नहीं जी सकता।

शब्द - 99

ता थैं पतित नही कौ पावन, हरि तज आन न ध्याया रे ॥

हम अपूजि पूजि भये हरि थै, नाम अनूपम गाया रे ॥ टेक ॥

अस्तादस बुयाकरन बखानै रे, तीन काल खट जीता रे ॥

प्रेम भगति अंतर गति नाही, ता ते धानुक नीका रे ॥१॥

ता थै भलो स्वान को सत्रु, हरि चरन न चित लाया रे ॥

मूआं मुकति बैकुंठ बासा, जीवत इहां जस पाया रे ॥२॥

हम अपराधी नीच घर जनमे, कुटुम्ब लोक करै हाँसी रे ॥

कहै रविदास राम जपु रसना, काटै जनम की पासी रे ॥३॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि प्रभु का नाम पापियों को पावन करने वाला है और जिस का सिमरन करके, इन्सान संसार में पूजनीय बन जाता है। प्रभु के चरण कवलों के साथ प्रीति लगाकर, जीव जीवन काल में ही मुक्त हो जाता है।

ता थैं पतित नही कौ पावन, हरि तज आन न ध्याया रे ॥

हम अपूजि पूजि भये हरि थै, नाम अनूपम गाया रे ॥ टेक ॥

उस प्रभु से बड़ा पतित पावन अर्थात् पापियों को पावन करने वाला, अन्य कोई नहीं है, इसलिए प्रभु के बिना, अन्य किसी का स्मरण क्यों करें। हे भाई! उस संसार में पूजनीय नहीं थे, परन्तु प्रभु का सिमरन कर हम पूजनीय हो गए। अतः भाई! उस अनुपम प्रभु के नाम का गुण-गान करो।

अस्तादस बुयाकरन बखानै रे, तीन काल खट जीता रे ॥

प्रेम भगति अंतर गति नाही, ता ते धानुक नीका रे ॥१॥

अठारह व्याकरण बताते हैं कि प्रभु-सिमरन करने वाला जीव तीनों कालों व छह कर्मों से ऊपर उठ जाता है। जिस जीव के हृदय में, प्रभु की प्रेमा भक्ति नहीं है, उसे नीच समझा जाता है।

ता थै भलो स्वान को सत्रु, हरि चरन न चित लाया रे ॥

मूआं मुकति बैकुंठ बासा, जीवत इहां जस पाया रे ॥२॥

उसकी अपेक्षा वह जीव श्रेष्ठ है, जो लोभ रूपा कुत्ते पर विजय प्राप्त कर प्रभु के चरणों के साथ अपना मन जोड़ता है। जीव जीवित भाव को मारकर इस जीवन में ही बैकुंठ का निवासी बन जाता है, उसकी महिमा प्रत्येक ओर होती है।

हम अपराधी नीच घर जनमे, कुटुम्ब लोक करै हाँसी रे ॥

कहै रविदास राम जपु रसना, काटै जनम की पासी रे ॥३॥

चाहे अज्ञानी लोग भ्रम वश हमें अपराधी, निम्न घर में और कुटुम्ब में जन्म लेने वाले समझते हैं और हमारी तरफ देखकर मज़ाक उड़ाते हैं। सतगुरु रविदास महाराज जी कथन करते हैं कि हे जीव! सभी प्रकार के भेदभाव से मुक्त होकर, प्रभु का सिमरन करो, जिससे जन्म-मरण का आवागमन समाप्त हो जाता है।

राग टोडी

शब्द - 100

पावन जस माधो तोरा ।

तुम दारुन अघमोचन मोरा ॥ टेक ॥

कीरति तेरी पाप बिनासे लोक बेद यों गावै ।

जौं हम पाप करत नहिं भूधर तौ तूँ कहा नसावै ॥१॥

जब लग अंग पंक नहिं परसै तौं जल कहा पखालै ।

मन मलीन विषया रस लंपट तौं हरि नाम संभालै ॥२॥

जो हम बिमल हिरदै चित अंतरि दोस कौन पर धरिहौ ।

कहि रविदास प्रभु तुम दयाल हौ अबंध मुक्ति का करिहौ ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज, जीवों को पवित्र करने वाले, प्रभु के नाम सिमरन का पावन उपदेश देते हैं। प्रभु का हृदय में सिमरन करने से, जीव, प्रभु में विलीन हो जाता है।

पावन जस माधो तोरा ।

तुम दारुन अघमोचन मोरा ॥ टेक ॥

हे प्रभु जी! आप की महिमा पवित्र है। आप मेरे कठिन पापों का नाश करने वाले हो।

कीरति तेरी पाप बिनासे लोक बेद यों गावै ।

जौं हम पाप करत नहिं भूधर तौ तूँ कहा नसावै ॥१॥

प्रभु जी! आप का यश पापों का नाश करने वाला है, परन्तु लोग केवल वेदों

का गायन ही उत्तम मानते हैं। हे प्रभु जी! अगर हम सांसारिक लोग बड़े पाप न करते, तो आप किसके पापों को नाश करते?

जब लग अंग पंक नहिं परसै तौं जल कहा पखालै।

मन मलीन विषया रस लंपट तौं हरि नाम संभालै ॥२॥

जब तक शारीरिक अंगों को पाप रूपी कीचड़ नहीं छूता, तब तक प्रभु के नाम रूपी जल में उनको धोने की क्या आवश्यकता है? ऐसे ही, जब तक, जीव का मन, विषय विकारों के कारण मैला होता है, तब तक ही मन को प्रभु का नाम सिमरन कर शुद्ध किया जाता है।

जो हम बिमल हिरदै चित अंतरि दोस कौन पर धरिहौ।

कहि रविदास प्रभु तुम दयाल हौ अबंध मुक्ति का करिहौ ॥३॥

हे प्रभु जी! अगर हमारा हृदय पवित्र होता, तो तुम किसके दोष दूर करते? गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं हे प्रभु जी, आप दयालु हो। मुझे आपकी प्राप्ति हो गई है इस लिए मुझे किसी और मुक्ति की आवश्यकता नहीं।

राग गौड़-गोंड

शब्द - 101

आज दिवस लेऊँ बलिहारा ॥

मेरे गृह आया राजा राम का प्यारा ॥ टेक ॥

आँगन बगड़ भवन भयो पावन ॥

हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥२॥

करुँ डंडोत चरन पखारुँ ॥

तन मन धन संतन पर वारुँ ॥३॥

कथा कहैं अरु अर्थ बिचारैं ॥

आप तरैं औरन को तरैं ॥४॥

कह रदिदास मिलै निज दास ॥

जनम जनम कै काटै पास ॥५॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी, संतों के मिलाप का महत्व ब्यान करते हैं कि संतों के चरण पड़ने से, जीव का गृह पवित्र हो जाता है, जहाँ बैठकर संत जन प्रभु के नाम की कथा करते हैं। ऐसे संत स्वयं भी पार होते हैं और जीवों को भी पार लगाते हैं।

आज दिवस लेऊँ बलिहारा ॥

मेरे गृह आया राजा राम का प्यारा ॥ टेक ॥

यह पावन शब्द सतगुरु रविदास जी महाराज ने उस समय उच्चारण किया, जिस समय उनके घर में संत पधारे। महाराज जी कहते हैं कि मैं आज के महान् दिन पर बलिहार जाता हूँ क्योंकि आज मेरे गृह को पवित्र करने के लिए, प्रभु के प्यारे संत आए हैं।

आँगन बगड़ भवन भयो पावन ॥

हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥२॥

संतों के आने से, मेरा घर और आँगन पवित्र हो गए हैं, जहाँ बैठ कर प्रभु के संत-जन प्रभु का यश गा रहे हैं।

करुँ डंडोत चरन पखारुँ ॥

तन मन धन संतन पर वारुँ ॥३॥

मैं संतों को दंडवत् प्रणाम करता हूँ, उनके चरण धोता हूँ और अपना तन, मन, धन संत-महापुरुषों पर कुर्बान करता हूँ, समर्पित करता हूँ।

कथा कहैं अरु अर्थ बिचारैं ॥

आप तरैं औरन को तरैं ॥४॥

संत महापुरुष प्रभु की कथा उच्चारण करते हैं और प्रभु के पावन नाम की विचार करते हैं। वह परमात्मा का नाम सिमरन कर स्वयं तो पार लगते ही हैं और दूसरे जीवों को भी प्रभु का नाम सिमरन करवा कर पार लगाते हैं।

कह रदिदास मिलै निज दास ॥

जनम जनम कै काटै पास ॥५॥

सतगुरु रविदास महाराज जी विनती करते हैं कि प्रभु जी आप के दास अर्थात् मेरा मिलाप हर रोज संतों से होता रहे और मैं जन्म-2 के बन्धनों से सदा के लिए मुक्त हो जाऊँ।

शब्द - 102

ऐसे जानि जपो रे जीव। जपि लियो राम न भरमो जीव ॥टेक॥

गनिका थी किस करमा जोग। पर पुरसन सो रमती भोग ॥१॥

निसि बासर दुस्करम कमाई। राम कहत बैकुंठे जाई ॥२॥

नामदेव कहिये जाति कै ओछ। जा को जस गाइये त्रिलोक ॥३॥

भगति हेत भगता के चले। अंकमाल ले बीठल मिले ॥४॥

कोटि यग जो कोउ करै। राम नाम सम तऊ न निस्तै ॥५॥

निरगुन का गुन देखो आई। देही सहित कबीर सिधाई ॥६॥

मोरी कुचिल जात कुचिल में बास। भगत चरन हरिचरन निवास ॥७॥

चारिउ बेद किया खंडौति । जन रविदास करै डंडौति ॥८॥

इस पावन शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी जीवों को वहम-भ्रमों और कर्म-काण्डों से मुक्त होकर, प्रभु का सिमरन करने का उपदेश देते हैं । जिस प्रभु का सिमरन करके, नामदेव जी और कबीर जी की महिमा तीनों लोक में होती है ।

ऐसे जानि जपो रे जीव । जपि लियो राम न भरमो जीव ।टेक ॥

हे जीव ! ऐसे सर्वव्यापक प्रभु को जान कर उसका सिमरन कर, जिससे तेरी भटकन समाप्त हो जाएगी ।

गनिका थी किस करमा जोग । पर पुरसन सो रमती भोग ॥१॥

गनिका एक वेश्या थी, जो पराये पुरुषों के साथ छोटे कर्म करने में लिप्त रहती थी ।

निसि बासर दुस्करम कमाई । राम कहत बैकुंठे जाई ॥२॥

वह वेश्या रात दिन छोटे कर्म करती थी, पर संतों की संगत करने से उसने छोटे कर्मों को त्याग कर, प्रभु का नाम सिमरन कर सच्छखण्ड में निवास किया ।

नामदेव कहिये जाति कै ओछ । जा को जस गाइये त्रिलोक ॥३॥

सतगुरु नामदेव जी को सांसारिक लोग भ्रम के कारण निम्न जाति का कहते थे, जिनका नाम आज सारे लोग गाते हैं और उनकी महिमा तीनों लोक में होती है ।

भगति हेत भगता के चले । अंकमाल ले बीठल मिले ॥४॥

प्रभु अपने भक्तों के प्रेम के कारण उनको मिलता है । प्रभु अपने भक्तों को प्रेम सहित आलिंगन में लेकर मिलता है ।

कोटि यग जो कोउ करै । राम नाम सम तऊ न निस्तै ॥५॥

चाहे जीव करोड़ों यज्ञ कर ले पर वह प्रभु नाम के बिना संसार रूपी भवसागर को पार नहीं कर सकता ।

निरगुन का गुन देखो आई । देही सहित कबीर सिधाई ॥६॥

निर्गुण प्रभु के गुण देखो कि सतिगुरु कबीर जी निर्गुण प्रभु का नाम सिमरन कर, देहीसहित ही बैकुंठ धाम चले गए ।

मोरी कुचिल जात कुचिल में बास । भगत चरन हरिचरन निवास ॥७॥

हे प्रभु जी ! अज्ञानी लोग मुझे शूद्र समझते हैं, पर प्रभु जी मुझे संत महापुरुषों की संगत कर, आप जी के चरणों में निवास प्राप्त हुआ है ।

चारिउ बेद किया खंडौति । जन रविदास करै डंडौति ॥८॥

सतगुरु रविदास जी फरमान करते हैं कि जीव को वर्णों के आधार पर बाँटने वाले और कर्मकाण्डों में फँसाने वाले, चार वेदों का मैं खण्डन करता हूँ । हे प्रभु जी !

मैं आप जी का दास आपको दंडवत् प्रणाम करता हूँ ।

राग - सारंग

शब्द - 103

जग में वेद बैद मनीजै ।

इन में अवर अगम कछु औरै कहौ कवन परि कीजै ।टेक ॥

भौजल बियाधि असाधि प्रबल अति परम पंथ न गहीजै ॥१॥

पढ़ै सुणै कछु समुझि न परई अनुभै पद न लहीजै ॥२॥

चख बिहुन कतार चलतु है तिनहु अंस भुज दीजै ॥३॥

कहै रविदास बमेक तत बिनु सब मिलि गरत परीजै ॥४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी पावन उपदेश देते हैं कि केवल प्रभु का नाम ही, संसार रूपी भवसागर से, सब दुखों का नाश कर, पार लगाने वाला है । इस लिए जीवों को, प्रभु के नाम रूपी परम तत्त्व को जान कर, अपना जीवन सफल करना चाहिए ।

जग में वेद बैद मनीजै ।

इन में अवर अगम कछु औरै कहौ कवन परि कीजै ।टेक ॥

संसार में, वेदों को, रोगों की निवृत्ति करने वाला वैद्य माना जाता है, परन्तु इन वेदों में कुछ और कहा गया है तथा प्रभु का अकथनीय परम तत्त्व कुछ और है । इनमें से किस पर भरोसा किया जाए?

भौजल बियाधि असाधि प्रबल अति परम पंथ न गहीजै ॥१॥

संसार रूपी भवसागर को पार करने में, विभिन्न कठिनाईयां यथा मोह, माया, तृष्णा, क्रोध आदि हैं जिनका पार पाना असंभव (असाध्य) है । इसी कारण जीव के लिए परमात्मा के नाम (भक्ति) का मार्ग पर चलना कठिन हो रहा है ।

पढ़ै सुणै कछु समुझि न परई, अनुभै पद न लहीजै ॥२॥

वेदों को केवल पढ़ने और सुनने से ही, जीव को कोई ज्ञान प्राप्त नहीं होता, जिस कारण जीव प्रभु के अनुभव रूपी परम-पद की प्राप्ति नहीं करता ।

चख बिहुन कतार चलतु है तिनहु अंस भुज दीजै ॥३॥

ज्ञान रूपी आँखों के बिना, जीव प्रभु को भूलकर कुमार्ग पर चला रहा है । ऐसे जीव का कोई भी सहायक नहीं बनता ।

कहै रविदास बमेक तत बिनु सब मिलि गरत परीजै ॥४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि संसार के जीव परम तत्त्व को नहीं जानते, जिस कारण वे नरक में जाते हैं ।

शब्द - 104

तुम करहु कृपा मोहि साईं ॥ टेक ॥

स्वास स्वास तुझ नाम संभारूँ, तुमहि भेंटि ममु मन हरसाई ।

तुमहु दयाल कृपाल करुणानिध तुम्हहि दीनबंध रघुराई ॥१॥

तुम्हारी सरन रहों निसवासर, भरमत फिरौं न हौं हरि राई ।

तुम्हारी अनुकमप मान मदु छुटै, राम रसायन अमृत पाई ॥२॥

ऐसो बधु जाचिहुं करुनामैं, तुझ चरन तजि कितहु न जाई ।

चरण सरण रविदास राबरी, अपनो जान लेहु उर लाई ॥३॥

इस पावन शब्द में जगत्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को प्रभु का श्वास-श्वास सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं ।

तुम करहु कृपा मोहि साईं ॥ टेक ॥

हे प्रभु जी ! आप मुझ पर कृपा करो ।

स्वास स्वास तुझ नाम संभारूँ, तुमहि भेंटि ममु मन हरसाई ।

तुमहु दयाल कृपाल करुणानिध तुम्हहि दीनबंध रघुराई ॥१॥

मैं श्वास-श्वास आप जी के नाम का सिमरन करता हूँ, आप जी के दर्शन करने से मेरा मन आनन्दित हो जाता है । प्रभु जी आप दयालु, कृपालु, दयावान, गरीब निवाज हो ।

तुम्हारी सरन रहों निसवासर, भरमत फिरौं न हौं हरि राई ।

तुम्हारी अनुकमप मान मदु छुटै, राम रसायन अमृत पाई ॥२॥

प्रभु जी ! मैं सदैव आप की शरण में रहता हूँ । मैं संसार में भ्रमण नहीं करता, आप जी का ही सिमरन करता हूँ । आप जी की कृपा से मन-अहंकार का नाश हो गया है और आप जी का नाम रूपी अमृत मैंने प्राप्त कर लिया है ।

ऐसो बधु जाचिहुं करुनामैं, तुझ चरन तजि कितहु न जाई ।

चरण सरण रविदास राबरी, अपनो जान लेहु उर लाई ॥३॥

हे प्रभु जी ! मैंने केवल आप जी के चरणकवलों की ही याचना की है, इन्हें छोड़कर, मैं अन्य किसी ओर नहीं जा सकता । सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि प्रभु जी, मैं आप जी के चरणों की शरण में आया हूँ, आप मुझे अपनाकर अपने हृदय से लगा लें ।

शब्द - 105

चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ ॥ टेक ॥

गुर की साटि ज्ञान का अच्छर बिसरै

तों सहज समाधि लगाऊँ ॥१॥

प्रेम पाटी सुरति लेखनि करिहौ

ररा ममा लिखि आंक दिखाऊ ॥२॥

येह बिधि मुक्त भये सनकादिक

रिदै बिदारि प्रकाश दिखाऊँ ॥३॥

कागद कँवल मति मसि करि निर्मल

बिन रसना निस दिन गुण गाऊँ ॥४॥

कहै रविदास राम जपि भाई

संत साखि दे बहुरि न आऊँ ॥५॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को हरि नाम जपने की पाठशाला में पढ़कर हरि से मिल कर मुक्त होने का उपदेश देते हैं ।

चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ ॥ टेक ॥

हे मेरे मन ! चल मैं तुम्हें हरि नाम जपने वाली पाठशाला में पढ़ाऊँ ।

गुर की साटि ज्ञान का अच्छर बिसरै

तों सहज समाधि लगाऊँ ॥१॥

इस पाठशाला में, श्रेष्ठ मार्ग की भटकन से रोकने वाली, गुरु की उपदेश रूपी छड़ी है और हरि से मिलाने वाले, ज्ञान का अक्षर, पढ़ाया जाता है । यदि जीव ज्ञान का अक्षर भूल भी जाए, तो गुरु की कृपा से, जीव की सहज समाधि लग जाती है ।

प्रेम पाटी सुरति लेखनि करिहौ

ररा ममा लिखि आंक दिखाऊ ॥२॥

हरि की इस पाठशाला में पढ़ने के लिए प्रेम की तख्ती है और सुरति की कलम है, जिससे 'र' और 'म' सर्वव्यापी 'राम', प्रभु का नाम रूपी अंक लिखा जाता है ।

येह बिधि मुक्त भये सनकादिक

रिदै बिदारि प्रकाश दिखाऊँ ॥३॥

प्रभु की पाठशाला में, ऐसी विधि से पढ़कर, 'सनक' इत्यादि चारों भाई, मुक्त हुए हैं, जिन के हृदय में परमात्मा की विचार करने से, प्रकाश हुआ देखा जाता है ।

कागद कँवल मति मसि करि निर्मल

बिन रसना निस दिन गुण गाऊँ ॥४॥

हृदय को कलम और बुद्धि को निर्मल स्याही बनाकर, जिह्वा के बिना, दिन रात, हरि के गुण गाए जाते हैं।

कहै रविदास राम जपि भाई

संत साखि दे बहुरि न आऊँ ॥५॥

जगद्गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे भाई! संत इसके प्रमाण हैं कि प्रभु का सिमरन करने से, जीव मुक्त हो जाता है और पुनः जन्म-मरण के चक्र में, नहीं आता।

शब्द - 106

हरि सिमरै सोई संत बिचारौ।

अवरु जनम बेकाम राम बिन,

कोटि जनम सौं उपरि बारौ ॥ टेक ॥

हरि पद बिमुख कुटिल मायारत,

राम चरण चितहु न सानै।

जिन मन मानु हउमैं बसहि,

तिह जन संत कहौ किम मानै ॥१॥

कपट डंभ पर निंदा बूझौ,

संत जनम भौ किलविष कारी।

ज्यों बरिया रुत बूंद उदधि मंहि आई,

मिलै सोई जल खारौ ॥२॥

ता परसंगि सीप स्वाति नछत्र,

मोती निपजत नीर तै न्यारौ।

कहि रविदास मोह मद त्यागो,

राम चरण मन संत बिचारौ ॥२॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी, सभी जीवों को, संतों की संगत करने का, पावन उपदेश बख्शिष्य करते हैं।

हरि सिमरै सोई संत बिचारौ।

अवरु जनम बेकाम राम बिन,

कोटि जनम सौं उपरि बारौ ॥ टेक ॥

जो संत प्रभु का सिमरन करते हैं, वही श्रेष्ठ विचार वाले हैं क्योंकि प्रभु के नाम के बिना, जीव का जन्म निष्फल जाता है, अतः हमें करोड़ों जन्म, संतों पर

न्यौछावर करने चाहिएं।

हरि पद बिमुख कुटिल मायारत,

राम चरण चितहु न सानै।

जिन मन मानु हउमैं बसहि,

तिह जन संत कहौ किम मानै ॥१॥

हरि के सर्वोच्च पद को छोड़कर, जीव प्रभु से बेमुख, कामी एवं मायाधारी हो जाता है तथा प्रभु के चरण कंवलों में मन नहीं लगाता। जिस जीव के मन में, गर्व अहंकार बसता है, वह जीव संतों को कैसे सम्मान दे सकता है।

कपट डंभ पर निंदा बूझौ,

संत जनम भौ किलविष कारी।

कपट करना, धोखा करना तथा पराई निन्दा करना, बहुत बड़े पाप है। संतों की संगत कर, यह जीव कठिन पापों से मुक्ति पा लेता है।

ज्यों बरिया रुत बूंद उदधि मंहि आई,

मिलै सोई जल खारौ ॥२॥

जब वर्षा ऋतु आती है तो सारा पानी खारे समुद्र में समा जाता है।

ता परसंगि सीप स्वाति नछत्र,

मोती निपजत नीर तै न्यारौ।

जब स्वाति नक्षत्र के समय बारिश की बूंद सीप में गिरती है, तो उसी जल से मोती पैदा हो जाता है।

कहि रविदास मोह मद त्यागो,

राम चरण मन संत बिचारौ ॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे भाई! मोह-अहंकार त्यागकर, संतों की संगत में जा कर, अपने मन को प्रभु के चरणों में लगा अर्थात् संतजनों की संगत कर।

राग - केदारा

शब्द - 107

रे मन राम नाम संभारि।

माया कै भ्रम कहा भूल्यौ, जाहिगे कर झारि ॥ टेक ॥

देखि धौं इहां कौण तेरो, सगा सुत नहि सार।

तेरि तंग सब दूरि करिहै, दैहिंगे तन जारि ॥१॥

प्रान गये कहो कौण तेरा, देखि सोच बिचारि।
 बहुरि येहि कलि काल माही, जीति भावै हारि ॥२॥
 यह माया सब थोथरी रे, भगति को प्रतिपारि।
 कहि रविदास सति बचन गुर कै, सो न जीअ तै बिसारि ॥३॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी जीवों को अपने हृदय में प्रभु का सिमरण करने का पावन उपदेश देते हैं कि जीवों को प्रभु के साथ मिलाने वाले, गुरु के अमृतमयी वचनों को अपने हृदय में धारण कर, प्रभु की सच्ची भक्ति कर, संसार की झूठी माया से, मुक्त होकर जीवन सफल करना चाहिए।

रे मन राम नाम संभारि।

माया कै भ्रम कहा भूल्यौ, जाहिगे कर झारि ॥ टेक ॥

हे भाई! अपने मन में प्रभु के नाम की संभाल कर अर्थात् प्रभु को याद कर। यदि तू प्रभु का नाम नहीं लेगा तो माया के भ्रम में फँसकर, अंत समय में, तुझे इस संसार से, खाली हाथ ही जाना पड़ेगा।

देखि धौं इहां कौण तेरो, सगा सुत नहिं सार।

तोरि तंग सब दूरि करिहै, दैहिगे तन जारि ॥१॥

तू देख तो सही, तेरा इस संसार में कौन अपना है? यहां तक कि तेरा पुत्र एवं स्त्री भी अंत समय में सहायी नहीं होंगे। तेरे सभी संगी साथी, तेरी मृत्यु के समय, तुझसे संबंध विच्छेद कर लेंगे तथा तेरे शरीर को अग्नि भेंट कर देंगे।

प्रान गये कहो कौण तेरा, देखि सोच बिचारि।

बहुरि येहि कलि काल माही, जीति भावै हारि ॥२॥

हे भाई! तू अपने भीतर इस बात की सोच विचार करके देख कि जिस समय तू अपने प्राण त्याग देगा, उस समय तेरे साथ कौन जाएगा? अर्थात् उस समय प्रभु के नाम के बिना तेरे साथ कोई नहीं जाएगा। इस कल्युग में, जीवन सफल करने के लिए तुझे अनेक प्रकार से समझा दिया है, अब तू प्रभु का नाम जपकर, इस संसार का खेल जीतो, चाहे प्रभु के नाम को भुलाकर इसे हारो, यह सब अब तुम्हारे हाथ में है।

यह माया सब थोथरी रे, भगति को प्रतिपारि।

कहि रविदास सति बचन गुर कै, सो न जीअ तै बिसारि ॥३॥

हे भाई! प्रभु नाम के सामने इस संसार की माया झूठी है, इसलिए हे भाई! तू प्रभु की प्रेमा-भक्ति को अपने हृदय में बसा ले। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे जीव! प्रभु से मिलाने वाले गुरु के वचनों को अपने भीतर से मत भुला, बल्कि उन पर चलकर अपना जीवन सफल कर।

शब्द - 108

हो बनिजारौ राम को, हरि जू को टांडो लादो जायि रे।
 राम नाम धन पायो, ता ते सहज करूँ व्योपार रे ॥ टेक ॥
 औघट घाट घनो घना रे, निरगुन बैल हमार रे।
 राम नाम हम लादियो, ताथै बिष लादियो संसार रे ॥१॥
 अनतहिं धन धर्यो रे, अनतहिं ढूँढ़न जायि रे।
 अनत को धर्यो न पाइये, ताथै चाल्यो मूल गमाई रे ॥२॥
 रैन गँवाई सोइ करि, दिवस गँवायो खाइ रे।
 हीरा यह तन पायि करि, कौड़ी बदले जायि रे ॥३॥
 साधु संगति पूँजी भई रे, बसुत लई निर्मोल रे।
 सहजै बलदिया लादि करि चहुं दिसि टांडो मेलि रे ॥४॥
 जैसा रंग कसुंभ का, तैसा यह संसार रे।
 रमइया रंग मजीठ का, भणै रविदास बिचार रे ॥५॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी समस्त मानवता को उपदेश देते हैं कि प्रभु प्राप्ति का मार्ग, अज्ञानता एवं सांसारिक झूठे बंधनों के कारण, उलझनों भरा व कठिन है। जीव का मन रूपी बैल उस अकाल पुरख की कृपा से, यह कठिन मंजिल तय कर, प्रभु के मजीठी रंग में रंग होकर, अपना जीवन सफल कर सकता है।

हो बनिजारौ राम को, हरि जू को टांडो लादो जायि रे।

राम नाम धन पायो, ता ते सहज करूँ व्योपार रे ॥ टेक ॥

यदि राम नाम का व्यापार करने वाला कोई व्यापारी है, तो मेरे पास आकर प्रभु के राम नाम का व्यापार कर ले। मेरा टांडा, हरि के नाम के साथ लदा हुआ है। मैं संसार में तुरियावस्था का व्यापार करता हूँ, जो कि संसार में, भेदभाव से ऊपर उठकर, नौ द्वारों से ऊपर दशम द्वार पहुँच कर प्राप्त होता है।

औघट घाट घनो घना रे, निरगुन बैल हमार रे।

राम नाम हम लादियो, ताथै बिष लादियो संसार रे ॥१॥

जिस प्रकार एक निर्गुन बैल के लिए, पहाड़ी का दुर्गम व सघन मार्ग तय कर, अपनी मंजिल को प्राप्त करना कठिन है, उसी प्रकार सांसारिक जीव के लिए, दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर, प्रभु प्राप्ति का मार्ग, अज्ञानता व सांसारिक झूठे बंधनों के कारण, खतरनाक पहाड़ी की भांति कठिन तथा जंगल की भांति घना है। इस मार्ग से गुज़रने वाले जीव, का मन रूपी बैल, बहुत कमजोर है। मैंने शरीर रूपी बैल पर प्रभु के नाम का धन लादा हुआ है परन्तु सांसारिक लोगों ने इस पर विकारों रूपी विष लादा हुआ है।

अनतहिं धन धर्यो रे, अनतहिं ढूँढ़न जायि रे।

अनत को धर्यो न पाइये, ताथै चाल्यो मूल गमाई रे ॥२॥

प्रभु का अनन्त धन प्राप्त करने के लिए, प्रभु को भीतर से खोजा जाता है।

परन्तु यदि जीव प्रभु को प्राप्त नहीं करता, तो वह अपना मूल गंवा लेता है।

रैन गँवाई सोइ करि, दिवस गँवायो खाइ रे।

हीरा यह तन पायि करि, कौड़ी बदले जायि रे ॥३॥

प्रभु को भूलकर, यह जीव रात्रि सोकर तथा दिन खाकर व्यर्थ व्यतीत कर लेता है। इस प्रकार वह इस हीरे की भांति दुर्लभ, तन को कौड़ियों के मोल गंवा लेता है।

साधु संगति पूँजी भई रे, बसुत लई निर्मोल रे।

सहजै बलदिया लादि करि चहुं दिसि टाँडो मेलि रे ॥४॥

संतों की संगत में ही, प्रभु के नाम की पूँजी है और वह निर्मोल प्रभु के नाम रूपी वस्तु, संत जनों से ही प्राप्त होती है। अपने शरीर रूपी बैल पर, प्रभु के नाम रूपी धन को लादकर, चारों ओर अर्थात् हर तरफ जीव प्रभु के नाम रूपी धन का व्यापार करता है।

जैसा रंग कसुंभ का, तैसा यह संसार रे।

रमइया रंग मजीठ का, भणै रविदास बिचार रे ॥५॥

जिस प्रकार कसुंभ का रंग कच्चा व अस्थिर है, उसी प्रकार यह संसार भी अस्थिर एवं नश्वर है। सतगुरु रविदास महाराज जी आगे कहते हैं कि मेरे प्रभु का रंग मजीठ की भांति पक्का, स्थिर एवं सदीव है, मैं यह सब विचार कर कहता हूँ।

शब्द - 109

प्रीति सुधामनि आव।

तेज सरूपी सकल सिरोमनि, अलख निरंजन राव ॥टेक॥

पीव संग प्रेम कबहुँ नहि पायो, करनी कवन बिसारी।

चक को ध्यान दधि सुत सो होत है, यों तुम तै मैं न्यारी ॥१॥

भोर भयौ मोहिं इक टक जोवत, तलफल रजनी जाई।

पीव बिन सेजइ का सुख सोऊँ, बिरह बिथा तन खाई ॥२॥

मेटि दुहाग सुहागिन कीजै, अपने अंग लगाई।

कहै रविदास प्रभु तुमहरे बिछोहे, एक पलक जुग जाई ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को पति प्रभु से सच्ची प्रीति करके, सच्ची सुहागिनें बनकर, प्रभु परमात्मा से एक रूप होकर अपना अमूल्य जीवन सफल करने

का पावन उपदेश देते हैं।

प्रीति सुधामनि आव।

तेज सरूपी सकल सिरोमनि अलख निरंजन राव ॥टेक॥

हे जीव! तू उस प्रभु से सच्ची प्रीति कर अपना जीवन सुधार जो प्रभु

शक्तिवान, सर्व-श्रेष्ठ, कला मुक्त और निर्लेप है।

पीव संग प्रेम कबहुँ नहि पायो, करनी कवन बिसारी।

चक को ध्यान दधि सुत सो होत है, यों तुम तै मैं न्यारी ॥१॥

प्रभु प्रियतम से जीव रूपी स्त्री ने, सच्ची प्रीति नहीं की और अपना अमूल्य जीवन परमात्मा को भूलकर व्यर्थ ही गँवा लिया। परन्तु जैसी चकोर की प्रीति चन्द्रमा से है, ऐसी ही अनोखी प्रीति, जीव की प्रभु से होनी चाहिए।

भोर भयौ मोहिं इक टक जोवत, तलफल रजनी जाई।

पीव बिन सेजइ का सुख सोऊँ, बिरह बिथा तन खाई ॥२॥

जीव रूपी स्त्री की संसार में जीवन रूपी रात प्रभु के मिलन के लिए तड़पती हुई बीत रही है, पर उसका अभी तक प्रभु से मिलन नहीं हुआ। प्रभु मिलाप के बिना स्त्री सेज पर कैसे सुख से सो सकती है। वियोग का दर्द उसे खाए जा रहा है।

मेटि दुहाग सुहागिन कीजै, अपने अंग लगाई।

कहै रविदास प्रभु तुमहरे बिछोहे, एक पलक जुग जाई ॥३॥

हे प्रभु जी! आप से बिछुड़ी हुई दुहागिन जीव रूपी स्त्री को, अपने दर्शन देकर, अपने गले से लगाकर, सुहागिन बना दो। श्री गुरु रविदास जी महाराज कथन करते हैं, हे संसार के स्वामी! यह जीव रूपी स्त्री आपके वियोग में कैसे जीये क्योंकि एक पलक मात्र भी, जीव रूपी स्त्री आप से बिछुड कर युगों का वियोग अनुभव करती है, भाव बहुत दुःख अनुभव करती है।

राग जैश्री

शब्द - 110

सब कुछ करत न कहीं कुछ कैसे।

गुन निधि बहुत रहत सम जैसे ॥टेक॥

दरपन गगन अनील अलेप जस।

गंग जलधि प्रतिबिंब देखि तस ॥१॥

सब आरंभ अकाम अनेहा।

बिधी निखेध कीयो अनेकेहा ॥२॥

इहे पद कहत सुनत नहीं आवै ।

कहै रविदास सुकृति कै पावै ॥३॥

जगत्गुरु रविदास जी महाराज इस शब्द में, जीवों को नाम सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं ।

सब कुछ करत न कहौं कुछ कैसे ।

गुन निधि बहुत रहत सम जैसे ।टेक॥

हे प्रभु जी! आप संसार में सब कुछ करने वाले हो, मैं आप की उपमा में कुछ नहीं कह सकता । जैसे चन्द्रमा में अनेक गुण होने के बावजूद भी वह हमेशा शीतल और संसार से निष्पक्ष रहता है । वैसे ही प्रभु जी आप सारे संसार में व्याप्त होकर सारे संसार को चलाते हुए भी, संसार से निष्पक्ष रहते हो ।

दरपन गगन अनील अलेप जस ।

गंग जलधि प्रतिबिंब देखि तस ॥१॥

जैसे दर्पण, आकाश, वायु जल निष्पक्ष है भाव दर्पण में जीव जैसा देखता है, वैसा ही नज़र आता है । आकाश के नीचे सभी प्राणी रहते हैं, आकाश किसी से भेद भाव नहीं करता । वायु सब जीवों को एक समान मिलती है, ऐसे ही प्रभु सब जीवों में विद्यमान है । प्रभु का नाम सिमरन करने का, सभी प्राणियों को समान अधिकार है । जैसे गंगा के जल में, जैसी परछाई होगी, वैसी ही दिखाई देगी, ऐसे ही श्रद्धा भाव वाले जीवों को वह प्रभु सर्व-व्याप्त अनुभव होता है ।

सब आरंभ अकाम अनेहा ।

बिधी निखेध कीयो अनेकेहा ॥२॥

प्रभु संसार का आरम्भ कर्ता है, इच्छा और मोह से मुक्त है और अनेक विधियों द्वारा विभिन्न रूपों में व्यक्त किया जाता है, पर वह प्रभु ही अंत में वास्तविक सच्चाई है ।

इहे पद कहत सुनत नहीं आवै ।

कहै रविदास सुकृति कै पावै ॥३॥

मुक्ति की अवस्था, प्रभु की कृपा से ही, प्राप्त होती है । गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि जीव इस संसार में सुकृति भाव प्रभु का ऐसा श्रेष्ठ नाम सिमरन करके ही ऐसे अटल पद को प्राप्त करता है ।

राग गाऊड़ी

शब्द - 111

साधौ! का साश्रण सुनि कीनौ ।

अनपावनी भगति नहीं साधी, भूखै अन्न न दीनौ ॥ टेक ॥

काम न विसरयौ डियंभ न त्यागयो, लौभ न बिसारयो देवा ।

पर निंदा मुख तै नहिं छाडि, निफल भयि सभु सेवा ॥१॥

बाट पाड़ि घर मुसि परायो, उदरि भरयो, अपराधी ।

होवै अपराधी केसो न सिमरियो, अहु अविद्या साधी ॥२॥

हरि अरपन करि भोजन कीनो, कथा कीरत नहीं जानीं ।

राम भगति बिन मुक्ति न पावै, अमर जीव गराबै प्रानीं ॥३॥

चरन कंवल अनराग न उपज्यो, भूत दया नहीं पाली ।

रविदास पलु साध संगति मिलि, पूरन ब्रह्म सदा प्रतिपाली ॥४॥

जगत्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को आडम्बरों से मुक्त होकर संत जनों की संगत कर प्रभु के साथ मिलने का पावन उपदेश बखिंश करते हैं ।

साधौ! का साश्रण सुनि कीनौ ।

अनपावनी भगति नहीं साधी, भूखै अन्न न दीनौ ॥ टेक ॥

हे संतो! आपने शास्त्रों को सुनकर क्या लेना है? प्रभु की प्रेमा-भक्ति नहीं की और भूखे को अन्न दान नहीं किया ।

काम न विसरयौ डियंभ न त्यागयो, लौभ न बिसारयो देवा ।

पर निंदा मुख तै नहिं छाडि, निफल भयि सभु सेवा ॥१॥

कामनाओं का त्याग नहीं किया, आडम्बर नहीं छोड़े और लोभ का त्याग नहीं किया । पराई निन्दा मुख से त्यागी नहीं । इसी लिए तुम्हारी सारी सेवा निष्फल चली गई ।

बाट पाड़ि घर मुसि परायो, उदरि भरयो, अपराधी ।

होवै अपराधी केसो न सिमरियो, अहु अविद्या साधी ॥२॥

प्रभु को मिलने का मार्ग छोड़ कर, संसार रूपी पराए घर में आकर तू व्यस्त हो गया और केवल पेट भरने के लिए अपराधी बन गया । हे भाई! अपराधी होकर तूने प्रभु का सिमरन नहीं किया और अज्ञानता को धारण कर लिया ।

हरि अरपन करि भोजन कीनो, कथा कीरत नहीं जानीं ।

राम भगति बिन मुक्ति न पावै, अमर जीव गराबै प्रानीं ॥३॥

प्रभु को अपना जीवन अर्पण नहीं किया और प्रभु की उपमा को नहीं जाना । प्रभु की प्रेमा-भक्ति के बिना मुक्ति प्राप्त नहीं होगी । इसी लिए यह अमर जीव, प्रभु

के नाम के बिना, योनियों में, भटक रहा है।

चरण कंवल अनराग न उपज्यो, भूत दया नहीं पाली।

रविदास पलु साध संगति मिलि, पूरन ब्रह्म सदा प्रतिपाली ॥४॥

जीव के हृदय में प्रभु के चरण कंवलों का वैराग्य उत्पन्न नहीं हुआ और दया धारण नहीं की। सतगुरु रविदास महाराज जी बख्शिश करते हैं कि यदि यह जीव पल भर के लिए, सच्चे मन से, संतों की संगत करता है, तो इसे पालनहार प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

राग - धनाश्री

शब्द - 112

मेरी प्रीति गोपाल सों जन घटै हो।

मैं मोल महँगै लई तन सटै हो ॥टेक॥

रिदै सुमिरन करूँ नैन अवलोकनो

स्रवना हरि कथा पूरि राखूँ।

मन मधुकर करौं चरना चित्त धरौं

राम रसायन रसन चाखूँ ॥१॥

साधु संगति बिना भाव नहिँ ऊपजै

भाव बिन भगति क्यों होइ तेरी।

बंदत रविदास राज राम सुनु बीनती

गुर प्रसाद कृपा करो न देरी ॥२॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी, मानवता को प्रभु के साथ ऐसी आनन्दपूर्ण प्रीति करने का पावन उपदेश देते हैं, जिस प्रीति में जीव (मन, आँखों, कानों, जिह्वा व चित्त के कारण) प्रभु के नाम में रंग होकर परमात्मा में अभेद्य हो जाता है।

मेरी प्रीति गोपाल सों जनि घटै हो।

मैं मोलि महँगै लई तन सटै हो ॥टेक॥

हे प्रभु जी मेरी प्रीति आप से कभी भी कम न हो क्योंकि यह प्रीति, मैंने अपना जीवन समर्पित कर, महंगे मूल्य पर प्राप्त की है।

रिदै सुमिरन नैन अवलोकनो

स्रवना हरि कथा पूरि राखूँ।

हे प्रभु जी! मैं हृदय में आप जी का सिमरन करता हूँ, आँखों से आपके दर्शन करता हूँ और कान आप जी की पावन कथा श्रवण कर आनंद से भरपूर रखता हूँ।

मन मधुकर करौं चरना चित्त धरौं

राम रसायन रसना चाखूँ ॥१॥

मैं अपने मन को भंवरा बनाकर, आप जी के चरण कंवलों को, अपने हृदय में बसाता हूँ। उस से श्रेष्ठ रस प्राप्त करता हूँ, रसना से आप जी का अमृत राम-नाम चखता हूँ।

साधु संगति बिना भाव नहिँ ऊपजै

भाव भगति क्यों होइ तेरी।

हे प्रभु जी, संतों की संगत के बिना, आप जी के प्रति प्रेम उत्पन्न नहीं होता और प्रेम के बिना, आप जी की भक्ति नहीं होती।

बंदत रविदास राज राम सुनु बीनती

गुरु प्रसाद कृपा करो न देरी ॥२॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी, प्रभु के समक्ष एक निवेदन करते हैं कि हे प्रभु जी! आप कृप्या मुझे दर्शन दो, देरी मत कीजिए।

शब्द - 113

त्राहि त्राहि त्रिभुवनपति पावन।

अतिशय सूल सकल बलि जावन ॥ टेक ॥

काम क्रोध लंपट मन मोरा।

कैसे भजन करुँ मैं तोरा ॥१॥

बिषम बिषाद बहंडनकारी।

असरन सरन सरनि भौहारी ॥२॥

देव देव दरबार दुआरै।

राम राम रविदास पुकारै ॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी जीवों को, तीनों लोकों के स्वामी, प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं। प्रभु का सिमरन करने से, कष्टों की निवृत्ति हो जाती है।

त्राहि त्राहि त्रिभुवनपति पावन।

अतिशय सूल सकल बलि जावन ॥ टेक ॥

हे तीनों लोकों के स्वामी और जीवों को पवित्र करने वाले प्रभु जी, आप मेरी रक्षा करो, ताकि मैं श्वास-श्वास आपका सिमरन करता रहूँ। हे प्रभु जी! आप बड़े-बड़े दुखों का नाश करने वाले हो जी। सब जीव आप से बलिहारे जाते हैं।

काम क्रोध लंपट मन मोरा।

कैसे भजन करुँ मैं तोरा ॥१॥

प्रभु को भूले हुए जीव का मन काम, क्रोध जैसे विकारों में लिप्त होने के कारण भजन किस तरह कर सकता है?

बिषम बिषाद बिहंडनकारी ।
असरन सरन सरनि भौहारी ॥२॥

प्रभु जी आप को भूला हुआ जीव घोर सांसारिक दुखों में घिरा हुआ है। परन्तु जब जीव आपका आश्रय ले लेता है, तो उसके सारे संकट दूर हो जाते हैं।

देव देव दरबार दुआरै ।
राम राम रविदास पुकारै ॥३॥

देवों के देव प्रभु जी! मैं आप के दरबार के द्वार पर खड़ा होकर, पुकार करता हूँ, आपका श्वास-श्वास सिमरन करता हूँ, आप मुझे दर्शन दो जी।

शब्द - 114

दर्शन दीजै राम दर्शन दीजै ।
दर्शन दीजै बिलंब न कीजै ॥टेक॥
दर्शन तोरा जीवन मोरा ।
बिन दर्शन क्यों जिवै चकोरा ॥१॥

माधो सतिगुर सब जग चेला ।
अब के बिछुरे मिलन दुहेला ॥२॥
धन जोवन की झूठी आसा ।
सत सत भाखै जन रविदासा ॥३॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि प्रभु प्रेमी जीव के मन में, हर समय प्रभु के दर्शनों की प्यास रहती है।

दर्शन दीजै राम दर्शन दीजै ।
दर्शन दीजै बिलंब न कीजै ॥टेक॥

हे संसार में रमे हुए प्रभु जी! मुझे दर्शन दो जी, दर्शन दो जी, मुझे शीघ्र दर्शन दो, देर न करो जी क्योंकि मैं आप के दर्शन के बिना जीवित नहीं रह सकता।

दर्शन तोरा जीवन मोरा ।
बिन दर्शन क्यों जिवै चकोरा ॥१॥

हे प्रभु जी! आप का दर्शन ही मेरे जीवन का आधार है। जैसे चकोर चन्द्रमा के दर्शन के बिना जीवित नहीं रह सकता, चकोर के मन में हर समय, चन्द्रमा के दर्शनों की प्यास रहती है और वह चन्द्रमा के दर्शन की आशा में जीता है, ऐसे ही प्रभु जी, मैं आपके दर्शन के बिना कैसे जी सकता हूँ? भाव नहीं जी सकता।

माधो सतिगुर सब जग चेला ।
अब के बिछुरे मिलन दुहेला ॥२॥

हे प्रभु जी! आप सारे संसार के सतगुरु हो, ज्ञान का अंधकार दूर करने वाले हो और संसार के सभी जीव आप के श्रद्धालु हैं पर यदि जीव अमूल्य जीवन प्राप्त कर भी आप से बिछुड़ा रहा तो पुनः जीव का आप से मिलाप होना बहुत कठिन है।

धन जोवन की झूठी आसा ।
सत सत भाखै जन रविदासा ॥३॥

प्रभु को भूला हुआ जीव धन और यौवन की झूठी इच्छाओं में मग्न रहता है। सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैं प्रभु का दास सच उच्चारण करता हूँ कि प्रभु प्रेमी हर पल प्रभु के दर्शनों के लिए व्याकुल रहता है।

शब्द - 115

जन को तारि तारि नाथ रमईया ।
कठिन फँद परियो पंच जमईया ॥टेक॥
तुम बिन सकल देव मुनि ढूँढ़ ।
कहूँ न पाऊँ जम पास छुड़ईया ॥१॥

हम से दीन दयाल न तुमसर ।
चरन सरन रविदास चमईया ॥२॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास महाराज जीवों को प्रभु के समक्ष संसार रूपी भवसागर से पार होने के लिए विनती करने का उपदेश देते हैं।

जन को तारि तारि नाथ रमईया ।
कठिन फँद परियो पंच जमईया ॥टेक॥

हे सर्वव्यापक परमपिता प्रभु जी! अपने दास को पार लगाओ। प्रभु आप के नाम के बिना जीव को बहुत ही कठिन पाँच विषय-विकारों काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी यमदूतों का बंधन व्याप रहा है।

तुम बिन सकल देव मुनि ढूँढ़ ।
कहूँ न पाऊँ जम पास छुड़ईया ॥१॥

प्रभु जी! आप के बिना जीव, चाहे सभी देवताओं के गुण प्राप्त कर ले, परन्तु फिर भी आप के नाम के बिना, कोई भी उसे यमदूतों से छुड़ा नहीं सकता।

हम से दीन दयाल न तुमसर ।
चरन सरन रविदास चमईया ॥२॥

प्रभु जी! मेरे जैसा कोई गरीब नहीं और आप जैसा कोई दयालु नहीं। गुरु

रविदास जी कथन करते हैं कि मैं 'चमार' आपके चरण कंवलों की शरण में आ गया हूँ।

शब्द - 116

जो तुम गोपालहिं नहिं गैहौ।

तो तुम को सुख में दुख उपजै सुखहि कहाँ ते पैहौ ॥टेक ॥

माला नाम सभै जग डहको झूठौ भेख बनैहौ।

झूठे ते साँचि तब होइहौ हरि की सरन जब ऐहौ ॥१ ॥

कन रस बत रस और सबै रस झूठहि मूड़ मँदेहौ।

जब लगि तेल दिया में बाती देखत ही बुझि जैहौ ॥२ ॥

जौ जन राम नाम रँग राते और रँग न सुहैहौ।

कहै रविदास भजो रे कृपा निधि प्रान गये पछितैहौ ॥३ ॥

जगद्गुरु रविदास जी इस शब्द द्वारा, जीवों को प्रभु की शरण प्राप्त कर, परमानंद की प्राप्ति करने का पावन उपदेश देते हैं।

जो तुम गोपालहिं नहिं गैहौ।

तो तुम को सुख में दुख उपजै सुखहि कहाँ ते पैहौ ॥टेक ॥

हे जीव! यदि तू प्रभु की शरण ग्रहण नहीं करेगा, तो तुझे सांसारिक सुखों में भी दुख ही प्राप्त होंगे। तब तू ब्रह्मनंद सुख कैसे प्राप्त करेगा?

माला नाम सभै जग डहको झूठौ भेख बनैहौ।

झूठे ते साँचि तब होइहौ हरि की सरन जब ऐहौ ॥१ ॥

अज्ञानता के कारण, जीव झूठे भ्रमों में भटके हुए हैं, और गले में माला पहन कर, प्रभु की प्राप्ति के लिए, झूठे भेष बनाए हुए हैं। जब जीव प्रभु की शरण लेता है, तो उस समय झूठ को त्याग कर, सच्चे प्रभु से जुड़ जाता है।

कन रस बत रस और सबै रस झूठहि मूड़ मँदेहौ।

जब लगि तेल दिया में बाती देखत ही बुझि जैहौ ॥२ ॥

प्रभु को भूला हुआ जीव, कानों के रस, बातों के रस और झूठे रसों में मग्न हुआ भटकता घूम रहा है। जैसे जितना समय दीये में तेल होता है, उतना समय बाती जलती है और तेल समाप्त होने पर बाती बुझ जाती है। ऐसे ही जितना समय शरीर में, श्वास हैं, जीव जीवित है और श्वासों के समाप्त होने पर, जीवन समाप्त हो जाता है।

जौ जन राम नाम रँग राते और रँग न सुहैहौ।

कहै रविदास भजो रे कृपा निधि प्रान गये पछितैहौ ॥३ ॥

जो जीव प्रभु के नाम में रंगे हुए हैं, उनको संसार के अन्य रंग नहीं भाते। गुरु

रविदास जी प्रभु के आगे विनती करते हैं कि हे कृपा के खजाने! दास पर कृपा करो जी। आप जी के बिना मेरा जीवन निष्फल चला जाएगा और अंत में मुझे पछताना पड़ेगा।

शब्द - 117

प्रभु जी संगति सरन तिहारी।

जग जीवन राम मुरारी ॥टेक ॥

गली गली को जल बहि आयो, सुरसरि जायि समायो।

संगत कै परताप महातम, नाम गंगोदक पायो ॥१ ॥

स्वाँति बूंद बरसैं फनि ऊपर, सीस बिषै बिष होय।

बाही बूंद कै मोती निपजै संगति की अधकाई ॥२ ॥

तुम चंदन हम इरंड बापुरे, निकट तुम्हारे बासा।

नीच बिख तै ऊंच भये है, तुम्हारी बास शुबासा ॥३ ॥

जाति भी ओछी पात भी ओछा, उच्छा कसब हमारा।

तुम्हारी कृपा ते ऊंच भये है, कहै रविदास चमारा ॥४ ॥

सतगुरु रविदास जी महाराज सत्संगत करने का पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव सत्संगत करता है, वह श्रेष्ठ बन जाता है।

प्रभु जी संगति सरन तिहारी।

जग जीवन राम मुरारी ॥टेक ॥

हे प्रभु जी! आप के मिलाप के लिए श्रेष्ठ संगत आप जी की शरण है। आप सारे संसार को जीवन प्रदान करने वाले हो।

गली गली को जल बहि आयो सुरसरि जायि समायो।

संगत कै परताप महातम नाम गंगोदक पायो ॥१ ॥

जब गलियों का पानी गंगा नदी में समा जाता है, तो गंगा का ही रूप हो जाता है। यह अच्छी संगत के प्रताप की महानता है। लोग भ्रम के कारण जिन जीवों को नीच समझते हैं, वे भी प्रभु का नाम सिमरन कर प्रभु का ही रूप हो जाते हैं।

स्वाँति बूंद बरसैं फनि ऊपर सीस बिषै बिष होय।

बाही बूंद कै मोती निपजै संगति की अधकाई ॥२ ॥

जब स्वाँति बूंद, साँप के फन के ऊपर गिरती है, तो वह विष बन जाती है, परन्तु वही बूंद जब सीप में गिरती है, तो मोती बन जाता है। यह संगत का ही फल है।

तुम चंदन हम इरंड बापुरे, निकट तुम्हारे बासा।

नीच बिख तै ऊंच भये है तुम्हारी बास शुबासा ॥३॥

हे प्रभु जी! आप चंदन की तरह श्रेष्ठ हो और हम सांसारिक जीव इरिंड की तरह हैं। जैसे चंदन की संगत कर इरिंड में से भी सुगंधि आने लगती है ऐसे ही प्रभु जी आप का नाम जप कर हम भी श्रेष्ठ गिने जाते हैं।

जाति भी ओछी पात भी ओछा उच्छा कसब हमारा।

तुम्हारी कृपा ते ऊंच भये है, कहै रविदास चमारा ॥४॥

प्रभु को भूले हुए जीव की जाति, कर्म और कार्य भी नीच है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि नीचों से ऊंचा करने वाला प्रभु है, इस लिए जीव को प्रभु का नाम सिमरन करना चाहिए।

शब्द - 118

पांडे कैसी पूजि रची रे।

सति बोलै सोय सतिवादी, झूठी बात बदी रे।टेक॥

जो अबिनासी सबका करता, व्यापि रहिउ सब ठोर रे।

पँच तत्त जिनि कीया पसारा, सो यों ही किछु और रे ॥१॥

तूँ जो कहैत हौ यौ ही करता, याकूँ मानिख करै रे॥

तारणि सकति सही जे या मैं, तौ आपण क्यों न तिरै रे ॥२॥

अंही भरोसे सब जग बूडा, सुण पंडित की बात रे।

या कै दरसि कूण गुणा छूटा, सब जग आया जात रे ॥३॥

या की सेव सूल नहिं भाजै, कटै न संसे पांस रे।

सोचि विचारि देख या मूर्ति, यूँ छांडी रविदास रे ॥४॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज आडम्बरों और वहम-भ्रमों में भूले भटके हुए जीवों को, प्रभु का सिमरन करने का उपदेश देते हैं। इस संसार में सत्यवादी वह जीव है, जो सच पर चलता हुआ मानवता से प्यार करता है।

पांडे कैसी पूजि रची रे।

सति बोलै सोय सतिवादी झूठी बात बदी रे।टेक॥

हे पण्डित! तूने प्रभु की आडम्बर रूपी पूजा किस प्रकार की बनाई है? तुम अपने आप को सत्यवादी कहते हो, सत्यवादी वही है जो केवल सच बोलता है और झूठ बोलना एक बुराई है।

जो अबिनासी सबका करता, व्यापि रहिउ सब ठोर रे।

पँच तत्त जिनि कीया पसारा, सो यों ही किछु और रे ॥१॥

वह प्रभु अमर, अविनाशी, सब कुछ करने वाला और सर्वव्यापक है। प्रभु ने

पाँच तत्त्वों जल, वायु, धरती, अग्नि और आकाश से जीवों की रचना की है। उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है।

तूँ जो कहैत हौ यौ ही करता याकूँ मानिख करै रे॥

तारणि सकति सही जे या मैं, तौ आपण क्यों न तिरै रे ॥२॥

हे पंडित! तू तो कहता है कि यह मूर्ति ही जगत् की कर्ता है, पर इस मूर्ति को तो मनुष्य ने बनाया है। जो वस्तु मनुष्य ने बनाई है, वह कर्तापुरुष कैसे हो सकती है? यदि इस मूर्ति को पार लगाने वाली शक्ति मान लिया जाए, तो यह मूर्ति स्वयं क्यों नहीं तैरती?

अंही भरोसे सब जग बूडा सुण पंडित की बात रे।

या कै दरसि कूण गुणा छूटा सब जग आया जात रे ॥३॥

पंडितों की ऐसी वहमों-भ्रमों की बातें सुन कर और उन बातों पर विश्वास कर, सारा संसार डूब रहा है, परन्तु यह बताओ कि इस मूर्ति के दर्शन करने मात्र से, कौन मुक्त हुआ है? सारा संसार ही आवागमन के चक्र में फँसा हुआ है।

या की सेव सूल नहिं भाजै कटै न संसे पांस रे।

सोचि बिचारि देख या मूर्ति यूँ छांडी रविदास रे ॥४॥

सच्चे प्रेम के बिना मूर्ति पूजा करने से दुख दूर नहीं होता और न ही झूठे भ्रम का नाश होता है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं इस बात को अच्छी तरह से सोच विचार कर और देख कर मूर्ति पूजा से बहुत दूर हूँ।

राग कानडा (दोपाद)

शब्द - 119

जा कै राम जी धनी ता कै काहि की कमी है।

मनसा को नाथ मनोरथ पुरबै सुख निधान की काहा गनी है ॥१॥

कवन काज किरपन की माया करत फिरत अपनी अपनी है ॥

खायि न साकै खरच नहि जावै, ज्यों भुयंग सिर रहत मनी है ॥२॥

जा की रासि थावर नहि आवै, राहा केतकी मुक्त अनी है ॥

रखवारे को चक्र सुदर्शन, विघन न ब्यापै रोक छिनी है ॥३॥

सिव सनकादिक पार न पावै, मैं बपुरै की कौन गिनी है ॥

जा की प्रीत निरंतरि हरि सो, कहै रविदास ताकी सदा बनी है ॥४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी पावन उपदेश देते हैं कि जिस जीव के पास प्रभु का नाम रूपी श्रेष्ठ धन है, उसको किसी वस्तु की कोई कमी नहीं रहती। बड़ा धनी प्रभु सुखों का खजाना है। वह जीव की सभी इच्छाएं पूरी करता है। इस लिए जीव को

उस प्रभु से सच्ची प्रीति करनी चाहिए।
जा कै राम जी धनी ता कै काहि की कमी है।
मनसा को नाथ मनोरथ पुरबै सुख निधान की काहा गनी है ॥१॥
जिस जीव के पास प्रभु का नाम रूपी धन है, उसको अन्य किसी वस्तु की कमी नहीं रहती। वह नाथ जीव की सभी इच्छाएँ और मनोरथ पूरे करता है और उसके सुख रूपी खज़ाने की गिनती नहीं की जा सकती।
कवन काज किरपन की माया करत फिरत अपनी अपनी है ॥
खायी न साकै खरच नहि जावै ज्यों भुयंग सिर रहत मनी है ॥२॥
कंजूस आदमी को माया का क्या लाभ है, जिसको वह दिन रात अपनी-अपनी कह कर खुश होता है। साँप जैसे मणि को संभालता है, ऐसे ही कंजूस आदमी माया को संभालता है, परन्तु वह बेचारा उस माया को न तो खा सकता है और न ही खर्च सकता है। जैसे साँप के सिर पर मणि होने पर भी, साँप को उसका कोई लाभ नहीं, ऐसे ही प्रभु के नाम के बिना जीव द्वारा एकत्र की गई, माया का, जीव को कोई लाभ नहीं।
जा की रासि थावर नहि आवै राहा केतकी मुक्त अनी है ॥
रखवारे को चक्र सुदर्शन विघन न ब्यापै रोक छिनी है ॥३॥
जिसकी पूँजी प्रभु के नाम पर खर्च नहीं होती, उसकी पूँजी को विकार रूपी ग्रह ठग लेते हैं, परन्तु उस प्रभु के भक्तों की नाम रूपी पूँजी को, कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता। प्रभु अपने भक्तों की रक्षा के लिए, अपने पास सुदर्शन चक्र रखता है और कोई भी प्रभु प्रेमियों के मार्ग में रुकावट नहीं बन सकता।
सिव सनकादिक पार न पावै मैं बपुरै की कौन गिनी है ॥
जा की प्रीत निरंतर हरि सो कहै रविदास ताकी सदा बनी है ॥४॥
शिव जी और सनकादिक चारों भाई उस प्रभु की महिमा नहीं जान सकते, तो मैं गरीब बेचारा प्रभु के गुणों को कैसे जान सकता हूँ? गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जिस जीव की प्रभु के साथ निरंतर प्रीति है, उस जीव की सदैव प्रभु के साथ लग्न लगी रहती है।

शब्द - 120

भगति न होय रे न होई, जब लग तन सुध न होय ॥ टेक ॥
भगति नहीं नाँचै अरु गावै, भगति न बहु तप कीन्हा।
भगति नहीं स्वामी अरु सेबग, जब लग परम तत्त नहीं चीन्हा ॥१॥
भगति न ज्ञान जोग बैरागै, भगति न कहै कहावै।

भगति न सुनि मण्डल घर सोधै, भगति न कछु दिखावै ॥२॥
जहां जहां जायि तहां तहां बंधन, त्रिविध ताप न जाई।
कहै रविदास तबै सचु पावै, आपा उलटि समाई ॥३॥
जगत्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को आडम्बरों को त्यागकर प्रभु की सच्ची भक्ति करने का पावन उपदेश देते हैं।
भगति न होय रे न होई, जब लग तन सुध न होय ॥ टेक ॥
जब तक शरीर शुद्ध नहीं होता, तब तक प्रभु की भक्ति नहीं हो सकती।
भगति नहीं नाँचै अरु गावै, भगति न बहु तप कीन्हा।
भगति नहीं स्वामी अरु सेबग, जब लग परम तत्त नहीं चीन्हा ॥१॥
जितनी देर जीव परमतत्त्व को नहीं समझता, वे चाहे नाचे, चाहे गाए, चाहे विभिन्न प्रकार से तप करे और स्वामी-सेवक भक्ति करे, इसका कोई लाभ नहीं है।
भगति न ज्ञान जोग बैरागै, भगति न कहै कहावै।
भगति न सुनि मण्डल घर सोधै, भगति न कछु दिखावै ॥२॥
प्रभु प्रेम के बिना ज्ञान, योग, वैराग्य धारण करना भक्ति नहीं कहलाती।
शून्य मंडल की आशा रखना तथा दिखावा करना भक्ति नहीं है।
जहां जहां जायि तहां तहां बंधन, त्रिविध ताप न जाई।
कहै रविदास तबै सचु पावै, आपा उलटि समाई ॥३॥
प्रभु प्रेम के बिना जीव जो कुछ भी करता है, सब बंधन है और जीव तीनों प्रकार के ताप (आधि, ब्याधि, उपाधि) से मुक्त नहीं होता। सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जीव संसार की ओर से अपना ध्यान हटा कर प्रभु की सच्ची भक्ति करता है, तो प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

शब्द - 121

रे पायो रे राम आमी रस ॥ टेक ॥
रस जिनि मगन ह्वै रहिया,
रंकार राषे नित रसना।
इहु रस पीब राम रस बूड़ौ,
आपु मगन रहि ह्वै दिन रैना ॥१॥
लोक रस लागि विषै विष देही,
भणों राम भौजल नहीं बहना।
अभि अंतर भजौ निज अविगत,
ऐह उपाड़ अतिर भौ तरना ॥२॥
चिन्तामणि लाल हाथै जै चढिय

हुवौ उजाम तिमिर नहीं रहना ।

भजै रविदास राम नित रसना,

दुलभ जनम बिरथ नहीं गवना ॥३॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को प्रभु का नाम सिमरन करके, श्रेष्ठ नाम रूपी रस में मग्न होकर दुर्लभ जन्म सफल करने का उपदेश देते हैं ।

रे पायो रे राम आमी रस ॥ टेक ॥

हे भाई ! मैंने सर्वव्यापक राम का अमृत प्राप्त कर लिया है ।

रस जिनि मगन ह्वै रहिया,

रंकार राषे नित रसना ।

इहु रस पीब राम रस बूड़ौ,

आपु मगन रहि ह्वै दिन रैना ॥१॥

जो जीव प्रभु के नाम रूपी श्रेष्ठ रस में मग्न हो जाता है, उस जीव की रसना पर नित्य-प्रति रंग रूप रहित प्रभु बसता है । इस रस में मग्न होने से नित्य-प्रति यह रस बढ़ता ही जाता है, जिस में जीव दिन रात मग्न रहता है ।

लोक रस लागि विषै विष देही,

भणों राम भौजल नहीं बहना ।

अभि अंतर भजौ निज अविगत,

ऐह उपाड़ अतिरि भौ तरना ॥२॥

संसार के लोग प्रभु के नाम रूपी रस को भूल कर, अपने शरीर को विषय-विकारों के रस में लगा रहे हैं, जिस से जीव संसार रूपी भवसागर से पार नहीं हो सकता । जीव को बाहरी रसों का त्याग करके, अविनाशी प्रभु का अपने भीतर स्मरण करना चाहिए । इस प्रकार अपने अंदर प्रभु के स्मरण का उपाय करके, जीव संसार के भवसागर से पार हो जाता है ।

चिन्तामणि लाल हाथै जै चढ़िय

हुवौ उजाम तिमिर नहीं रहना ।

भजै रविदास राम नित रसना,

दुलभ जनम बिरथ नहीं गवना ॥३॥

जिस जीव के हाथ में प्रभु के नाम रूपी मन इच्छित फल देने वाला चिन्तामणि अनमोल हीरा है, वह संसार के भव सागर से पार हो जाता है । सतगुरु रविदास जी संबोधन करते हैं कि हे जीव ! नित्य-प्रति अपनी रसना से प्रभु का सिमरन कर, जिस से अमूल्य जन्म व्यर्थ नहीं जाएगा ।

शब्द - 122

देखि मूरखता यहु मन की ।

राम नाम कू छाडि अधारौ, गहि ओट छुद त्रिन की ॥ टेक ॥

अभि अंतर रामु नहीं जान्यौ, छानहु धूरि बन बन की ।

जा दिन ऐह हंसा उरि जाये है, छोरि ठठरिया तन की ।

धनु दारा महि रहहु लपटानो, आपहु नहीं सुधि वा छन की ॥१॥

जन रविदास तियागी जग आसा, लहहु ओट हरि चरनन की ॥२॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी इस पावन शब्द में सांसारिक जीवों को प्रभु का आश्रय लेकर संसार रूपी भवसागर पार करने का पावन उपदेश देते हैं ।

देखि मूरखता यहु मन की ।

राम नाम कू छाडि अधारौ, गहि ओट छुद त्रिन की ॥ टेक ॥

हे भाई ! तू इस मन की मूर्खता देख कि यह प्रभु का नाम का आश्रय छोड़कर, अन्य तिल मात्र छोटे आश्रय ढूँढता है ।

अभि अंतर रामु नहीं जान्यौ, छानहु धूरि बन बन की ।

अपने भीतर बैठे प्रभु को तो इसने जाना नहीं और वन-वन में भटकता फिरता है ।

जा दिन ऐह हंसा उरि जाये है, छोरि ठठरिया तन की ।

एक दिन इस आत्मा रूपी हंस ने शरीर रूपी बर्तन को छोड़कर उड़ जाना है ।

धनु दारा महि रहहु लपटानो, आपहु नहीं सुधि वा छन की ॥१॥

धन, स्त्री और सांसारिक पदार्थों में जीव लिप्त है और उसे अपना जीवन संवारने का होश नहीं है ।

जन रविदास तियागी जग आसा, लहहु ओट हरि चरनन की ॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि हे जीव ! तू संसार की झूठी आशा छोड़कर प्रभु के चरण कंवलों का आश्रय लेकर अपना जीवन सफल कर ।

राम मारू (चौपदे)

शब्द - 123

पीआ राम रसु पीआ रे ॥ टेक ॥

भरि भरि देवै सुरति कलाली दरिया दरिया पीना रे ।

पीवत पीवतु आपा जग भुला हरि रस मांहि बौराना रे ॥१॥

दर घरि विसरि गयो रविदासा उनमनि सद मतवारी रे ।

पलु पलु प्रेम पियाला चालै, छूटे नांहि खुमारी रे ॥२॥

इस शब्द में जगद्गुरु रविदास जी महाराज, सांसारिक जीवों को गुरु रूप कलाली के पास जाकर, अमृत पीने का पावन उपदेश देते हैं। जिस अमृत के पीने से जीव सहज अवस्था में पहुँच कर, प्रभु के नाम की खुमारी में मग्न हो जाता है।

पीआ राम रसु पीआ रे।टेक॥

मैंने प्रभु के नाम का अमृत लिया है।

भरि भरि देवै सुरति कलाली दरिया दरिया पीना रे।

पीवत पीवतु आपा जग भुला हरि रस मांहि बौराना रे॥१॥

गुरु रूप कलाली दशम् द्वार में सुरति लगाकर, भर भर कर प्रभु के नाम के प्याले पिला रहे हैं। समुद्र के समान अमृत के प्याले जीव पी रहा है। ऐसा अमृत पीने से, जीव संसार को भूल जाता है और प्रभु के नाम में लीन हो जाता है।

दर घरि विसरि गयो रविदासा उनमनि सद मतवारी रे।

पलु पलु प्रेम पियाला चालै, छूटे नांहि खुमारी रे॥२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव शरीर रूपी घर को भुला कर, उनमनी भाव तुरिया अवस्था में पहुँच कर, मतवाला हो जाता है। दशम् द्वार में वह प्रेम प्याला पल पल निरंतर चल रहा है, जिसका नशा कभी भी नहीं उतरता।

शब्द - 124

मन मोरा माया महि लपटानो॥टेक॥

बिसासवक्त रहियो निसवासर, अजहूँ नहिं अघानो।

कामी कुटिल लबार कुचाली, समझयि नहीं समुझानो॥१॥

सतिसंगत पलु नहीं कीन्ही, मन मूरखि बहु गरवानो।

सोत खात दिन रैन बितायि, ताहि मैं रसना सुख मानो॥२॥

माया मंहि हिल मिलि रहियो, फोकट साटे जनम गंवानो।

कहि रविदास कछु चेत बाबरे, राम नाम विन नहि उबरानो॥३॥

जगद्गुरु रविदास महाराज जी इस पावन शब्द द्वारा, सभी जीवों को प्रभु का नाम सिमरन कर, माया के प्रभाव से मुक्त होने का पावन उपदेश देते हैं।

मन मोरा माया महि लपटानो॥टेक॥

प्रभु को भूलकर, जीव का मन, माया में लिप्त है।

बिसासवक्त रहियो निसवासर, अजहूँ नहिं अघानो।

कामी कुटिल लबार कुचाली, समझयि नहीं समुझानो॥१॥

जीव हर समय विश्वास गंवा रहा है और वह अब तक भी नहीं समझा।

यह जीव कामी, नीच, कुचाली बना हुआ है, जो समझाने पर भी नहीं समझता।

सतिसंगत पलु नहीं कीन्ही, मन मूरखि बहु गरवानो।

सोत खात दिन रैन बितायि, ताहि मैं रसना सुख मानो॥२॥

इस जीव ने क्षण भर के लिए भी सतसंगत नहीं की और मन मूर्ख बहुत अहंकार करता है। यह जीव दिन रात सोने और खाने में व्यतीत कर रहा है, फिर भी इसकी जिह्वा नहीं भरती।

माया मंहि हिल मिलि रहियो, फोकट साटे जनम गंवानो।

कहि रविदास कछु चेत बाबरे, राम नाम विन नहि उबरानो॥३॥

माया में ग्रसित जीव, झूठे कर्मों में अपना जन्म गंवा रहा है। सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे पुरुष, तू प्रभु को याद कर, प्रभु के नाम के बिना तुम्हारा जीवन निरर्थक व्यतीत हो रहा है।

शब्द - 125

बीति आयु भजनु नहीं कीन्हा॥टेक॥

सेत भयो तन थर थर कंपहि, हरि सिमरनु नहीं कीन्हा।

सत संगति नहिं गुर पद सेऊ प्रभ कीरति नहिं गाई॥१॥

नहि मनु रमयो प्रभ चरनन महि, तन सिऊं पीरीत द्विडाई।

कहि रविदास चलन की बरिया, कोउ न होय सहाई॥२॥

इस पावन शब्द में सतगुरु रविदास जी महाराज, जीवों को पावन उपदेश देते हैं कि जीव की आयु व्यतीत होती जा रही है और बुढ़ापा आने से शरीर कांपने लगता है। अन्त समय में प्रभु के बिना, जीव का और कोई साथ नहीं देता। इस लिए गुरु के उपदेश पर चल कर और प्रभु से सच्ची प्रीत करके जीव को अपना जीवन सफल करना चाहिए।

बीति आयु भजनु नहीं कीन्हा॥टेक॥

हे जीव! अमूल्य जन्म की तुम्हारी आयु व्यतीत होती जा रही है, पर तुम ने प्रभु का नाम सिमरन नहीं किया।

सेत भयो तन थर थर कंपहि, हरि सिमरनु नहीं कीन्हा।

जब बुढ़ापा आ जाता है, तब शरीर काँपने लग जाता है और उस समय प्रभु का स्मरण नहीं होता।

सतसंगति नहिं गुर पद सेऊ प्रभ कीरति नहिं गाई॥१॥

गुरु की श्रेष्ठ शिक्षा सत संगत नहीं की और प्रभु की उपमा नहीं गाई।

नहि मनु रमयो प्रभ चरनन महि, तन सिऊं पीरीत द्विडाई।

प्रभु के चरण-कमलों में मन नहीं लगाया, केवल अपने शरीर से ही प्रीति

लगाई रखी।

कहि रविदास चलन की बरिया, कोउ न होय सहाई ॥२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि अन्त समय आने पर प्रभु के बिना तुम्हारा किसी ने भी साथ नहीं देना। इस लिए हे जीव! तू प्रभु का नाम सिमरन किया कर।

शब्द - 126

प्रभु जी तुम औगुन बख्शाणहार।

हऊं बहु नीच उधरौ पातकी, मूरखि निपट गंवार ॥टेक॥

मो सम पतित अधम नहीं कोऊ खीन दुखी विसियार।

नाम सुनहि नरकु भजै है, तुम बिन कवन हमार ॥१॥

पतित पावन विड़द तिहारौ आयि परौ तोहि दुआर।

कहि रविदास ऐहु मन आसा निज कर लेहु उभार ॥२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी इस पावन शब्द में प्रभु के समक्ष विनम्र भाव से विनती करते हैं कि आप सांसारिक जीवों के अवगुणों को क्षमा करने वाले हो, जो जीवों पर कृपा करके पापों का नाश कर उद्धार कर देते हो।

प्रभु जी तुम औगुन बख्शाणहार।

हऊं बहु नीच उधरौ पातकी, मूरखि निपट गंवार ॥टेक॥

हे प्रभु जी! आप जीवों के अवगुणों को क्षमा करने वाले हो। हम सांसारिक जीव आप को भूल जाने के कारण नीच हैं। आप हम संसार रूपी परिवार में लिप्त हुए मूर्ख प्राणियों पर कृपा करके, हमारे पापों का नाश करके हमें क्षमा कर दो।

मो सम पतित अधम नहीं कोऊ खीन दुखी विसियार।

नाम सुनहि नरकु भजै है, तुम बिन कवन हमार ॥१॥

प्रभु जी आपको भूलने के कारण हमारे समान कोई पापी नहीं है। पर आप दुखियों पर कृपा करने वाले हो। आप जी का नाम स्मरण करने से ही नरक का भय दूर हो जाता है। प्रभु आप के बिना हमारा कौन सहारा है?

पतित पावन विड़द तिहारौ आयि परौ तोहि दुआर।

कहि रविदास ऐहु मन आसा निज कर लेहु उभार ॥२॥

हे प्रभु जी! आप का नाम पापियों को पवित्र करने वाला है। मैं आपके द्वार पर खड़ा हूँ, मुझ पर कृपा करो। सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु के आगे विनती करते हैं कि प्रभु जी मेरे मन में केवल यही इच्छा है कि आप मुझ पर कृपा कर, मेरे अवगुणों को क्षमा कर मेरा उद्धार कर दीजिए।

राग - बिलावलु

शब्द - 127

ऐसा ही हरि क्युं पड़वो, मन चंचलु रे भाई।

चपल भयो चहुंदिस धावड़, राख्यो रहाई ॥टेक॥

मैं मेरी छूटइ नहिं कबहुं, मैं मंमता मदु बीध्यो।

लोभ मोह महि रहयो रूझानौ, नित विषया रस रीझयो ॥१॥

डंम कोह मोह माया बसु, कपट कूड़ हूं बंधायौ ॥

काम लुबधु को बसि परयौ, कुलकांनि छांड़ि बिकायो ॥२॥

छापा तिलक छपौ नहीं सोभइ, जौ लौं केसौ नहिं गायो ॥

संजमि रह्यो न हरि हूं सिमरियो, बिरथा भरमयो रू भरमायो ॥३॥

अनिक कौतक कला काछै कछे, बहुरि सांग दिखावौ ॥

मूरख आपन आपु समुझि नहिं, औरनि का समुझावौ ॥४॥

आस करै वैकुण्ठ गवन कउ, चल मन कभउ न थिरायौ ॥

जौ लौं मन बसि नहिं हूंतौ, तौं लगि सभु जूठारियो ॥५॥

कपट कीया रीझय नहिं कैसौ, जगु करता नहिं कांचा ॥

कहि रविदास भजौ हरि माधौ, सेवग होवै मन सांचा ॥६॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को अहंकार को त्यागकर प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं।

ऐसा ही हरि क्युं पड़वो, मन चंचलु रे भाई।

चपल भयो चहुंदिस धावड़, राख्यो रहाई ॥टेक॥

हे भाई! जब तक तुम्हारा मन चंचल है, तब तक तुमहें प्रभु की प्राप्ति कैसे हो सकती है? प्रभु के बिना कोई भी तुम्हारी रक्षा नहीं करेगा, चाहे तुम चारों ओर घूम लो।

मैं मेरी छूटइ नहिं कबहुं, मैं मंमता मदु बीध्यो।

लोभ मोह महि रहयो रूझानौ, नित विषया रस रीझयो ॥१॥

तेरे मन में से 'मेरी' का अहंकार कभी नहीं मिटता और ममता व अहंकार में मन बंधा हुआ है। लोभ और मोह में जीव का मन उलझा हुआ है, वह हर समय विषयों में लिप्त रहता है।

डंम कोह मोह माया बसु, कपट कूड़ हूं बंधायौ ॥

काम लुबधु को बसि परयौ, कुलकांनि छांड़ि बिकायो ॥२॥

आडंबर के कारण जीव माया में ग्रसित है और उसने कूड़-कपट की ओर अपने ध्यान को बढ़ाया हुआ है। वह काम रूपी शिकारी के वश में आकर अपनी कुल

की मर्यादा छोड़कर बिक चुका है।
छापा तिलक छपौ नहीं सोभइ, जौ लौं केसौ नहिं गायो ॥
संजमि रह्यो न हरि हूँ सिमरियो, बिरथा भरमयो रू भरमायो ॥३॥
प्रभु के गुणगान के बगैर बाह्य श्रंगार व तिलक आदि शोभा नहीं देते। जीव
ने संयम न रखकर प्रभु का सिमरन नहीं किया और अपना अमूल्य जन्म निरर्थक भ्रमों
में फंसकर गंवा रहा है।
अनिक कौतुक कला काछै कछे, बहुरि सांग दिखावौ ॥
मूरिख आपन आपु समुझि नहिं, औरनि का समुझावौ ॥४॥
जीव विभिन्न प्रकार के कला-कौतुक करते हुए पाखंड रूपा स्वांग रचता है।
वह मूर्ख मन स्वयं को तो समझ नहीं सका और दूसरों को समझाता है।
आस करै वैकुण्ठ गवन कउ, चल मन कभउ न थिरायौ ॥
जौ लौं मन वसि नहिं हूंतौ, तौं लगि सभु जूठारियो ॥५॥
यह जीव आशा तो बैकुण्ठधाम जाने की करता है परन्तु इसका मन स्थिर नहीं
होता। जब तक जीव का मन उसके वश में नहीं होता तब तक सब कुछ झूठ है।
कपट कीया रीझय नहिं कैसौ, जगु करता नहिं कांचा ॥
कहि रविदास भजौ हरि माधौ, सेवग होवै मन सांचा ॥६॥
कपट करने से प्रभु प्रसन्न नहीं होता, वह प्रभु संसार का कर्ता घट-घट का
ज्ञानी है। सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि प्रभु का सिमरन करने से
जीव का मन सत्य हो जाता है।

शब्द - 128

का गाऊं कछु गायि न होयि, गाऊं रूप सहजै सोयि ॥ टेक ॥
नहिं अकास नहिं धर धरणी, पवन पुर घट चंदा।
नहिं अब राम कृष्ण गुण भाई, बोलत है सुछ छंदा ॥१॥
नहिं अब बेद कतेब पुराननि, सुनि सहज रे भाई ॥
नहिं अब मैं तैं, तैं मैं नांही, का सिउं कहो बताई ॥२॥
भणै रविदास का कहि गाऊं, गायिन गायि हराणा ॥
समुझि बिचारि बोलि कहां घों, आपहि आप समाणा ॥३॥
इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को आडम्बर
मुक्त होकर एकाग्रचित होकर प्रभु का यश-गान करने का पावन उपदेश देते हैं।
का गाऊं कछु गायि न होयि, गाऊं रूप सहजै सोयि ॥ टेक ॥
मैं प्रभु के गुण क्या गाऊँ? उसके गुणों को गाया नहीं जा सकता। सच्चे मन

से उसके गुण गाने वाले सहजावस्था में पहुँच जाते हैं।
नहिं अकास नहिं धर धरणी, पवन पुर घट चंदा।
नहिं अब राम कृष्ण गुण भाई, बोलत है सुछ छंदा ॥१॥
वह प्रभु न केवल आकाश है, न केवल धरती है न केवल वायु है और न ही
केवल चन्द्रमा है। वह प्रभु तो सर्व-व्याप्त है। मैं न ही कृष्ण और राम के गुण गाता हूँ,
यह बात मैं सत्य कहता हूँ।
नहिं अब बेद कतेब पुराननि, सुनि सहज रे भाई ॥
नहिं अब मैं तैं, तैं मैं नांही, का सिउं कहो बताई ॥२॥
हे भाई! मुझे अब वेद, कतेब व पुराणों को पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं
है। क्योंकि मुझे सच्चा आनन्द प्रभु की सुन्न सहजावस्था में पहुँचकर प्राप्त हुआ है।
अब मेरा तेरा और तेरा मेरा का भेद समाप्त हो गया है। यह बात मैं किसे बताऊँ?
भणै रविदास का कहि गाऊं, गायिन गायि हराणा ॥
समुझि बिचारि बोलि कहां घों, आपहि आप समाणा ॥३॥
सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि मैं अब प्रभु के गुण क्या
गाऊँ? प्रभु के गुण अनंत हैं। यह जीव उन्हें गाता गाता हार जाता है। यह जीव प्रभु की
महिमा समझ कर उस पर विचार कर क्या बोल सकता है? सच्चे मन से प्रभु के गुण
विचार कर क्या बोल सकता है? सच्चे मन से प्रभु के गुण गाकर ये उसमें विलीन हो
जाता है।

शब्द - 129

अब का कहि कौन बताऊं।
अब का कहि देबलि देव समाऊं ॥ टेक ॥
का सिउं राम कहौं सुनि भाई, का सिउं कृष्ण करीमां।
का सिउं बेद कतेब कहूँ अब, का सिउं कहूँ लयो लीना।
का सिउं तप तीरथ बरत पूजा, का सिउं नाउं कहाऊं ॥१॥
का सिउं भिस्ति दोजिगु ना सति करि, का सिउं कहूँ कहाई ॥२॥
का सिउं जीव सीव कहौं साधौ, सुनि सहजि घरि भाई।
का सिउं गुणी न गुण कहूँ माधौ, का सिउं कहूँ बताई ॥३॥
जल के तरंग जल मांहि समाई, कहि का कौ नांव धरयीये।
ऐसे एक रूप मैं माधो, आपण ही निरवरिये ॥४॥
भणै रविदास अब का कहि गाऊं, जउ कोई औरहि होई।
जा सिउं गायिये गायि कहत हैं, परम रूप हम सोई ॥५॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को, प्रभु के
 गुण गाने का पावन उपदेश देते हैं।
 अब का कहि कौन बताऊं।
 अब का कहि देबलि देव समाऊं ॥ टेक ॥
 अब मैं प्रभु को क्या कहकर उसके गुण गाऊँ? प्रभु को छोड़कर मैं अन्य
 किस देवी-देवता में विलीन हो जाऊँ?
 का सिऊं राम कहौं सुनि भाई, का सिऊं कृष्ण करीमां।
 का सिऊं बेद कतेब कहूँ अब, का सिऊं कहूँ लयो लीना।
 हे भाई! मैं सर्व-व्याप्त प्रभु के बिना किसे राम कहूँ, किसे कृष्ण-करीम
 कहूँ? अब मैं प्रभु का सिमरन छोड़कर, अन्य कौन से वेद-कतेब पढ़ूँ और किस में
 विलीन हो जाऊँ?
 का सिऊं तप तीरथ बरत पूजा, का सिऊं नाउं कहाऊं ॥१॥
 का सिऊं भिस्ति दोजिगु ना सति करि, का सिऊं कहूँ कहाई ॥२॥
 प्रभु को छोड़कर मैं क्या तप करूँ, क्या तीर्थ-स्नान करूँ, क्या व्रत व पूजा
 करूँ? और किस नाम से पुकारूँ? प्रभु का सिमरन करने के कारण मैंने स्वर्ग और नरक
 को सत्य नहीं समझा और किसी के कहने पर मैं कुछ नहीं कहता।
 का सिऊं जीव सीव कहौं साधौ, सुनि सहजि घरि भाई।
 का सिऊं गुणी न गुण कहूँ माधौ, का सिऊं कहूँ बताई ॥३॥
 हे साधो! आप के अतिरिक्त मैं किस जीव को कल्याणकारी कहूँ? हे भाई,
 उसकी प्राप्ति तो सहज शून्य अवस्था में पहुँचकर होती है। हे प्रभु जी, आपके बिना मैं
 किसे गुणीजन कहूँ। आप मुझे यह बता दीजिए?
 जल के तरंग जल मांहि समाई, कहि का कौ नांव धरयीये।
 ऐसे एक रूप मैं माधो, आपण ही निरवरिये ॥४॥
 तरंग पानी से उत्पन्न होती है और पानी में ही विलीन हो जाती है, इसी
 प्रकार जीव प्रभु से उत्पन्न हुआ है और प्रभु में ही विलीन हो जाता है। फिर इसे कौन
 सा नाम दिया जाए? प्रभु जी, आप जी का सिमरन कर, जीव आप जी का ही, रूप हो
 जाता है। आप स्वयं ही कृपा करने वाले हो।
 भणै रविदास अब का कहि गाऊं, जउ कोई औरहि होई।
 जा सिऊं गायिये गायि कहत हैं, परम रूप हम सोई ॥५॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि अब मैं किस का गुणगान
 करूँ? क्योंकि प्रभु के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। अब मैं किसे उसका गुणगान करने
 के लिए कहूँ क्योंकि मैं प्रभु का सिमरन कर उसका ही रूप हो गया हूँ।

 शब्द - 130
 खोजत किथूं फिरै तेरे घट महि सिरजनहार ॥ टेक ॥
 कस्तूरी मृग पास है रे, दूँढत घास फिरै।
 पाछै लागो काल पारधी छिन महि प्रान हरै ॥१॥
 इड़ा पिंगला सुखमना नाड़ी, जा मैं चित न धरै।
 सहसतार महि भंवर गुफा है, भंवरा गूँज करै ॥२॥
 दिल दरियाव हीरा लाल है गुरुमुख समझ परै।
 मरजी वा की सैन विचारै तउ हीरा हाथ परै ॥३॥
 कहि रविदास समुझि रे सन्तो, एहु पद है निरवान।
 एहु रहसि कोउ खोजै बूझे, सोउ है सन्त सुजान ॥४॥
 इस पावन शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी महाराज सांसारिक जीवों को
 त्रिकुटी में ध्यान लगाकर, अपने भीतर विद्यमान प्रभु की खोज कर, निर्वाण पद प्राप्त
 करने का पावन उपदेश देते हैं।
 खोजत किथूं फिरै तेरे घट महि सिरजनहार ॥ टेक ॥
 हे जीव! तू प्रभु को बाहर कहाँ खोज रहा है? प्रभु तो तुम्हारे भीतर है।
 कस्तूरी मृग पास है रे, दूँढत घास फिरै।
 पाछै लागो काल पारधी छिन महि प्रान हरै ॥१॥
 हिरन की नाभि में कस्तूरी होती है और वह बाहर घास पर उसे दूँढता
 फिरता है। इस तरह ही प्रभु तुम्हारे अंदर है परन्तु तुम अज्ञानता के कारण उस प्रभु को
 बाहर दूँढ रहे हो। परन्तु काल रूपी शिकारी तुम्हारे पीछे लगा हुआ है और अन्त समय
 आने पर वह एक पल में ही तुम्हारे प्राण छीन लेगा।
 इड़ा पिंगला सुखमना नाड़ी, जा मैं चित न धरै।
 सहसतार महि भंवर गुफा है, भंवरा गूँज करै ॥२॥
 हे जीव! तू इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना जहाँ यह तीनों नाड़ियाँ इक्की होती
 हैं, त्रिकुटी में ध्यान लगा कर प्रभु को अपने मन में याद नहीं करता। सहस्रदल कमल
 में भँवर गुफा रूपी चौथी रुहानी मंजिल हैं, जहाँ प्रभु का नाम गूँज रहा है।
 दिल दरियाव हीरा लाल है, गुरुमुख समझ परै।
 मरजी वा की सैन विचारै, तउ हीरा हाथ परै ॥३॥
 इस भँवर गुफा में ही तेरा दिल समुद्र की भांति विशाल है, जहाँ प्रभु का नाम
 रूपी अमूल्य लाल हीरा पड़ा है। पर इस बात की समझ गुरुमुख को ही आती है, जो
 गुरु के सच्चे उपदेश रूपी इशारे पर चलता है और प्रभु के नाम की विचार करता है।
 वही प्रभु के नाम रूपी हीरे को प्राप्त कर लेता है।

कहि रविदास समुझि रे सन्तो, एहु पद है निरवान ।
एहु रहसि कोउ खोजै बूझे सोउ है सन्त सुजान ॥४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी संबोधन करते हैं, हे सन्त जनो! इस प्रकार प्रभु की भक्ति ही निर्वाण पद है। जो जीव अपने भीतर, विराजमान प्रभु के, भेद को, खोज कर, जान लेता है, वही श्रेष्ठ संत है।

शब्द - 131

संतो कुल पखी भगति हैसी कलियुग मे ॥ निपख बिरला निवहैसी ॥
जाणि पिछाणि हरिष मन हुलसे ॥
बिन पिछाणि मिलत मुरझासी ॥टेक ॥
अपसवारथ परमाधि दधयादे ॥ परमारथ न दिड़ासी ॥
बिन बिसवास बांझ सुति जइसै ॥ हरि कारनि क्यों रासी ॥१॥
भाव भगति हिरदै नहि आसी ॥ विषै लागी सुख पासी ॥
कहि रविदास पूरा गुर पावै ॥ सवांग की सवांग दुखासी ॥२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को आडम्बरों से भरी, बाहरी दिखावे की पक्षपाती भक्ति त्याग कर, प्रभु की सच्ची प्रेमा-भक्ति, जो कि पूर्ण गुरु के मिलाप से पैदा होती है, करने का पावन उपदेश देते हैं।

संतो कुल पखी भगति हैसी कलियुग मे ॥ निपख बिरला निवहैसी ॥
हे संत महापुरुषो! कलियुग में जीव अपने स्वार्थ के लिए, बाहरी भक्ति करने का दिखावा करते हैं, पर प्रभु की सच्ची भक्ति कोई विरला जीव ही कर सकता है।
जाणि पिछाणि हरिष मन हुलसे ॥
बिन पिछाणि मिलत मुरझासी ॥टेक ॥

सच्ची भक्ति करने से जीव प्रभु का ज्ञान प्राप्त कर, आनन्द रूपी सुख में रहता है। प्रभु को न जानने के कारण, यह जीव दुखी होता है और ईर्ष्या वश मुरझा जाता है।

अपसवारथ परमाधि दधयादे ॥ परमारथ न दिड़ासी ॥

जो जीव अपने स्वार्थ के लिए आडम्बरों से भरी भक्ति करता है, वह दुखी रहता है और उसे प्रभु के नाम की प्राप्ति नहीं होती।

बिन बिसवास बांझ सुति जइसै ॥ हरि कारनि क्यों रासी ॥१॥

जैसे बांझ स्त्री को संतान होने का विश्वास नहीं हो सकता, ऐसे ही प्रभु के नाम सिमरन के बिना, जीव को संसार रूपी भवसागर से पार होने का, विश्वास नहीं हो सकता।

भाव भगति हिरदै नहि आसी ॥ विषै लागी सुख पासी ॥

प्रभु को भूले हुए जीव के हृदय में प्रभु के प्रेम की इच्छा पैदा नहीं होती क्योंकि वह जीव संसार के झूठे विकारों में ही सुख समझता है।

कहि रविदास पूरा गुर पावै ॥ सवांग की सवांग दुखासी ॥२॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव को पूर्ण गुरु की शरण में जाना चाहिए, अन्यथा तो यह जीव आडम्बरों रूपी पक्षपाती भक्ति करने से दुखी होता है।

शब्द - 132

पांडे! हरि विच अंतर डाढा ॥
मुंड मुंडावै सेवा पूजा भ्रम का बंधन गाढ़ा ॥टेक ॥
माला तिलक मनोहर बानों लागो जम की पासी ॥
जो हरि सेती जोड़यो चाहो तो जग सो रहो उदासी ॥१॥
भुख न भाजै तृष्णा न जाई कहो कौण कवन गुण होई ॥
जो दधि में कांजी को जावण तो घृत न काडै कोई ॥२॥
करनी कथनी ज्ञान अचारा भगति इन्हूँ सो नयारी ॥
दोय घोड़ा चढ़ि कोऊ न पहुँचौ सतिगुरु कहै पुकारी ॥३॥
जो दासा तण कीयो चाहो आस भगति की होई ॥
तो निरमल सांग मगन हवै नाचो लाज सरम सब खोई ॥४॥
कोई दाधौ कई सीधो साचौ कूड़ निति मारया ॥
कहै रविदास हौ न कहत हौ योकादसत पुकारिया ॥५॥

जगत्गुरु रविदास जी महाराज आडम्बरों में फँसे हुए जीवों को, पावन उपदेश देते हैं कि प्रभु भक्ति के बिना जीव भ्रम में फँसा रहता है। प्रभु के नाम में लीन होकर, जीव संसार में रहते हुए भी, संसार से उपराम रहता है। सच्ची भक्ति के पैदा होने से भ्रम का नाश हो जाता है।

पांडे! हरि विच अंतर डाढा ॥

मुंड मुंडावै सेवा पूजा भ्रम का बंधन गाढ़ा ॥टेक ॥

हे कर्मकाण्डो में फँसे पंडित! तेरी कर्मकाण्डी भक्ति और प्रभु की भक्ति में बहुत अन्तर है। जीव प्रभु प्रेम के बिना सिर मुंडवाकर, सेवा पूजा करने से भ्रम के बंधन में बँधा रहता है।

माला तिलक मनोहर बानों लागो जम की पासी ॥

जो हरि सेती जोड़यो चाहो तो जग सो रहो उदासी ॥१॥

प्रभु के नाम के बिना गले में माला पहनना, माथे पर तिलक लगाना, सुंदर

वस्त्र पहनना इत्यादि आडम्बरों से यमदूतों की फांसी लगती है। हे भाई! अगर तुम प्रभु से सच्चा रिश्ता जोड़ना चाहते हो, तो तुम इस संसार में रहते हुए भी उपराम रहो।

भुख न भाजै तृस्ना न जाई कहो कौण कवन गुण होई ॥

जो दधि में कांजी को जावण तो घृत न काढै कोई ॥२॥

हे भाई! प्रभु के नाम के बिना, तुम्हारी भूख और तृष्णा नहीं मिट सकती।

फिर भाई तू ही बता, ऐसे आडम्बर करने में कौन सा गुण है? अगर दही बनाने के लिए, जोड़न लगाने की जगह कांजी से जोड़न लगाया जाए तो उस में से घी कैसे निकल सकता है? भाव नहीं निकलेगा।

करनी कथनी ज्ञान अचारा, भगति इन्हू सो नयारी ॥

दोय घोड़ा चढ़ि कोऊ न पहुँचौ, सतिगुरु कहै पुकारी ॥३॥

हे भाई! तेरी करनी और कथनी, तुम्हारे ज्ञान और व्यवहार आडम्बरों के कारण सच्ची भक्ति से विपरीत हैं, पर भाई, प्रभु भक्ति इन आडम्बरों से न्यारी है। जैसे कोई जीव एक ही समय पर दो घोड़ों पर सवार होकर अपनी मंजिल तक नहीं पहुँच सकता, ऐसे ही सच्चे सतगुरु ने संसार को पुकार कर उपदेश दिया है कि आडम्बरों और प्रेम भक्ति, दोनों पर एक समय नहीं चला जा सकता।

जो दासा तण कीयो चाहो आस भगति की होई ॥

तो निरमल सांग मगन हवै नाचो लाज सरम सब खोई ॥४॥

जो जीव अपने मन में, दास-भाव को धारण कर लेता है, उसके मन में ही भक्ति भावना पैदा होती है। वह जीव प्रभु के निर्मल नाम में लीन होता है और प्रभु के नाम में लीन होकर, संसार की झूठी माया, झूठी लज्जा और शर्म सब का त्याग कर देता है।

कोई दाधो कई सीधौ साचौ कूड़ निति मारया ॥

कहै रविदास हौ न कहत हौ योकादसत पुकारिया ॥५॥

गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि कर्मकाण्डी जीव भिन्न भिन्न प्रकार के कर्म करने के बारे में बताते हैं, परन्तु मैंने हर जगह पर पुकार कर कहा है कि हृदय में प्रेमा-भक्ति आने से, कर्मकाण्ड रूपी कूड़ पासारे का, नाश हो जाता है। भाव प्रभु की प्रेमाभक्ति आने से, अज्ञानता का नाश हो जाता है।

शब्द - 133

मन मेरो थिरु न रहाई,

कोटि कौतिक करि दिखरावै, इत उत जग महि धाई ॥ टेक ॥

माया ममता मोह लपटानो, दिन दिन उरझत जाई।

सुआन पुछ कभु होय न सूधो, कीजहु लाख उपाई ॥

गुरु कौ गियान प्रेम की सांटी, कुबुध कुकरम छुड़ाई।

कहि रविदास मन थिरु हैसी, चलि सब छाडि गुरसरणाई ॥१॥

इस शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी सभी जीवों को बाह्य आडम्बर त्यागकर गुरु की शरण में जाकर प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं।

मन मेरो थिरु न रहाई,

कोटि कौतिक करि दिखरावै, इत उत जग महि धाई ॥ टेक ॥

प्रभु के नाम के बिना जीव का मन स्थिर नहीं रह सकता, चाहे जीव अनेकों प्रकार के बाह्य खेल खेले और संसार में इधर-उधर कहीं भी भटक ले।

माया ममता मोह लपटानो, दिन दिन उरझत जाई।

सुआन पुछ कभु होय न सूधो, कीजहु लाख उपाई ॥

जीव प्रभु के नाम के बिना माया, ममता और मोह में लिप्त होने से, दिन प्रतिदिन उलझ रहा है। जिस प्रकार चाहे कितने भी उपाय कर लिये जाएं, कुत्ते की दुम कभी भी सीधी नहीं हो पाती, इस प्रकार प्रभु नाम के बिना जीव चाहे कितने भी कर्म-काण्ड कर ले परन्तु उसे मुक्ति केवल प्रभु नाम में ही मिलती है।

गुरु कौ गियान प्रेम की सांटी, कुबुध कुकरम छुड़ाई।

कहि रविदास मन थिरु हैसी, चलि सब छाडि गुरसरणाई ॥१॥

गुरु का ज्ञान व प्रेम की छड़ी, दुष्कर्मों को दूर कर देती है और फिर जीव का मन स्थिर हो जाता है और ये सभी कर्मकाण्ड छोड़कर, जीव गुरु की शरण ग्रहण कर लेता है।

शब्द - 134

हम घर आयहु राम भतार, गावहु सखि मिल मंगलाचार।

तन मन रत करहि आपुनो, तौ कहुं पाइहि पिव पिआर ॥१॥

प्रीतम को जो दरसन पायि, मन मन्दिर महि भयो उजियार।

हौं मड़िय तै नौ निधि पाई, कृपा कीन्ही राम करतार ॥२॥

बहुत जनम बिछुरे पिव पायो, जनम जनम तैं बिलयि रार।

कहि रविदास हौं कछु नहिं जानौं, चरण कंवल महिं तुव मुरार ॥३॥

यह पावन शब्द सतगुरु रविदास जी महाराज ने, उस समय उच्चारण किया जब उन के गृह में संत जन पधारे। सतगुरु जी फरमाते हैं कि प्रभु के प्यारे संत महापुरुषों के आने से, मुझे प्रभु के दर्शन हुए हैं और मेरा मन ज्ञान से प्रकाशमान हो गया है।

हम घर आयहु राम भतार, गावहु सखि मिल मंगलाचार।

आज मेरे घर में प्रभु के प्यारे संत आए हैं। उन से मिलकर प्रभु की महिमा का गान करो।

तन मन रत करहि आपुनो, तौ कहुं पाइहिं पिव पिआर ॥१॥

इन के समक्ष तन मन अर्पण करके, इनकी संगत से प्रभु का प्रेम प्राप्त होता है।

प्रीतम को जो दरसन पायि, मन मन्दिर महिं भयो उजियार।

इनकी कृपा से प्रभु प्यारे के दर्शन होते हैं और मन मन्दिर में ज्ञान का प्रकाश होता है।

हौं मड़यि तै नौ निधि पाई, कृपा कीन्ही राम करतार ॥२॥

इनकी कृपा से मैंने नौ निधियां प्राप्त कर ली हैं। प्रभु करतार ने मुझे पर कृपा करके इनके दर्शन करवाए हैं।

बहुत जनम बिछुरे पिव पायो जनम जनम तैं बिलयि रार।

मुझे, प्रभु से बहुत जन्मों से बिछड़े हुए को, प्रभु की प्राप्ति हो गई है, अन्यथा मेरा जन्म व्यर्थ जा रहा था।

कहि रविदास हौं कछु नहिं जानौं, चरण कंवल महिं तुव मुरार ॥३॥

सतगुरु रविदास जी प्रभु के आगे विनती करते हैं कि मैं कुछ भी नहीं जानता, आप की कृपा से, आप के चरण कमलों में, मुझे शरण प्राप्त हुई है।

शब्द - 135

कालहु नायि ताहि पद सीसा,

नहिं बिसराऊं खिन एकहु ईश्वर ॥ टेक ॥

जनम मरुन अरु जग जाला,

नाम परताप न बिआपहिं ब्याला।

अगत विगत अनादि अनूपा,

विसव वियापक ब्रह्म अरूपा ॥

घट घट तिह पेखीयत अयिसे,

जल महिं लहिर, लहिर जल जयिसे।

कहि रविदास हरि सरब वियापक,

सरब चिंतामणि सरब प्रतिपालक ॥१॥

इस पावन शब्द में जगत्गुरु रविदास महाराज जी, सभी जीवों को सर्वव्याप्त

प्रभु का सिमरन करने का, पावन उपदेश देते हैं।

कालहु नायि ताहि पद सीसा,

नहिं बिसराऊं खिन एकहु ईश्वर ॥ टेक ॥

काल के प्रभाव से मुक्त प्रभु के चरणों में, मैं अपना शीश झुकाता हूँ और एक क्षण मात्र भी प्रभु को भुलाता नहीं हूँ।

जनम मरुन अरु जग जाला,

नाम परताप न बिआपहिं ब्याला।

प्रभु नाम के प्रताप के कारण, जन्म-मरण रूपी दुख और संसार के जंजाल नहीं सताते।

अगत विगत अनादि अनूपा,

विसव वियापक ब्रह्म अरूपा ॥

प्रभु की गति को कोई भी नहीं जान सकता, वह घटता-बढ़ता नहीं है, वह अनहद है और अनुपम है। ऐसा प्रभु सारे ब्रह्मण्ड में विद्यमान है, उसका कोई विशेष रूप नहीं है।

घट घट तिह पेखीयत अयिसे,

जल महिं लहिर, लहिर जल जयिसे।

प्रभु सारे संसार में इस प्रकार विद्यमान है, जिस प्रकार पानी में लहरें और लहरों में पानी होता है।

कहि रविदास हरि सरब वियापक,

सरब चिंतामणि सरब प्रतिपालक ॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हरि सर्व-व्यापक है तथा मनवांछित फल देने वाला है। वही सब का पालन करने वाला है।

राग सूही चौपदा

शब्द - 136

दुखियारी दुखियारा जग महिं,

मन जप लै राम पियारा रे ॥ टेक ॥

गढ़ कांचा तस्कर तिह लागा,

तूँ काहे न जाग अभागा रे ॥

नैन उधारि न पेखियो तूने,

मानुष जनम किह लेखा रे ॥

पाऊं पसार किमि सोय परयो,

तैं जनम अकारथ खोया रे।

जन रविदास राम नित भेंटहि,
रहि संजम जागित पहरा रे ॥१॥

इस पावन शब्द में जगद्गुरु रविदास महाराज जी, सभी जीवों को, दुखों को दूर करने वाले, प्रभु का सिमरन करने का, पावन उपदेश देते हैं।

दुखियारी दुखियारा जग मंहि,
मन जप लै राम पियारा रे ॥ टेक ॥

जीव प्रभु के नाम के बिना, सारे संसार में दुखी रहता है, इसलिए हे मन, तू प्रभु प्यारे का नाम जप ले।

गढ़ कांचा तस्कर तिह लागा,
तू काहे न जाग अभागा रे ॥

तेरा शरीर रूपी किला कच्चा है और मृत्यु ने इसे चुरा ले जाना है। हे अभागे पुरुष! तू अज्ञानता रूपी नींद से जागकर, प्रभु का सिमरन क्यों नहीं करता।

नैन उधारि न पेखियो तूने,
मानुष जनम किह लेखा रे ॥

तूने कभी आँखे खोलकर नहीं देखा कि मनुष्य जन्म में तुम्हें अपने किए हुए कर्मों का क्या हिसाब देना पड़ेगा?

पांड पसार किमि सोय परयौ,
तैं जनम अकारथ खोया रे।

प्रभु को भुलाकर, तुम पांव पसार कर कैसे सो रहे हो और अपने अमूल्य जन्म को व्यर्थ गंवा रहे हो।

जन रविदास राम नित भेंटहि,
रहि संजम जागित पहरा रे ॥१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे जीव! नित्यप्रति प्रभु का सिमरन कर और सयंम में रहकर, प्रभु का ज्ञान प्राप्त कर।

शब्द - 137

आरती 1

आरती कहाँ लैं कर जोवै। सेवक दास अचंभो होवै ॥ टेक ॥
बावन कंचन दीप धरावै। जड़ बैराग रे दृष्टि न आवै ॥१॥
कोटि भानु जा की सोभा रोमै। कहा आरती अगनी होमै ॥२॥
पाँच तत यह तिरगुनी माया। जो देखै सो सकल उपाया ॥३॥
कहै रविदास देखा हम माहीं। सकल जोति रोम सम नाहीं ॥४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज, प्रभु की सच्ची आरती का गुणगान करते हैं कि उस प्रभु की ज्योति के प्रकाश की समानता, करोड़ों सूर्यों का प्रकाश भी नहीं कर सकता।

आरती कहाँ लैं कर जोवै। सेवक दास अचंभो होवै ॥ टेक ॥

हे प्रभु जी! आप के नाम सिमरन रूपी आरती के बिना, मैंने संसार में और कोई सच्ची आरती नहीं देखी। आप के नाम के बिना, मेरे, आप के दास के लिए, सभी आडम्बर आश्चर्यजनक हैं।

बावन कंचन दीप धरावै। जड़ बैराग रे दृष्टि न आवै ॥१॥

चाहे कोई जीव आरती के लिए, स्वर्ण के छोटे छोटे दीये बनाए, परन्तु सच्चे वैराग्य के बिना, उस प्रभु के दर्शन नहीं होते।

कोटि भानु जाकी सोभा रोमै। कहा आरती अगनी होमै ॥२॥

जिस प्रभु की आरती की शोभा, करोड़ों सूर्यों से भी अधिक, प्रकाश बढ़ा रही है, तो ऐसी सच्ची आरती के लिए, अग्नि जलाकर यज्ञ करने की क्या आवश्यकता है? भाव कोई आवश्यकता नहीं।

पाँच तत यह तिरगुनी माया। जो देखै सो सकल उपाया ॥३॥

यह संसार पाँच तत्त्वों-जल, वायु, अग्नि, धरती, आकाश और तीन गुण सतो-रजो-तमो से बना है। जो भी दिखाई दे रहा है, उस सब में प्रभु समाया हुआ है।

कहै रविदास देखा हम माहीं। सकल जोति रोम सम नाहीं ॥४॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैंने प्रभु को, अपने भीतर से अनुभव किया है। उस प्रभु की ज्योति के एक रोम के प्रकाश के समान, संसार का सारा प्रकाश भी नहीं हो सकता।

शब्द - 138

आरती 2

संत उतारै आरती देव सिरोमनीये ॥
उर अंतर तहाँ पैसि बिन रसना भणिये ॥ टेक ॥
मनसा मंदिर माहि धूप धुपड़ये ॥
प्रेम प्रीति की माल राम चढ़इये ॥१॥
चहु दिसि दिबला बालि जगमग हैं रहियो रे ॥
जोति जोति सम जोति जोति मिल रहियो रे ॥२॥
तन मन आतम बारि सदा हरि गड़ये ॥
भनत जन रविदास तुम सरना आइये ॥३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी, जीवों को प्रभु का सिमरन करने का पावन उपदेश देते हैं। प्रभु की नाम सिमरन रूपी आरती संत-जन गाते हैं।
संत उतारै आरती देव सिरोमनीये ॥
उर अंतर तहाँ पैसि बिन रसना भणिये ॥ टेक ॥
 हे प्रभु जी ! संत, आप की नाम सिमरन रूपी, श्रेष्ठ आरती गाते हैं। हृदय में बस रहे, प्रभु का नाम संत-जन, रसना के बिना ही, अपने हृदय में उच्चारण करते हैं।
मनसा मंदिर माहिं धूप धुपइये ॥
प्रेम प्रीति की माल राम चढ़इये ॥१॥
 अपने सुंदर मन रूपी मंदिर में, प्रभु को मिलने की आशा का ही धूप जगाते हैं और प्रभु से सच्ची प्रीति करना ही, प्रभु के आगे सच्ची माला चढ़ाना है।
चहु दिसि दिबला बालि जगमग हूँ रहियो रे ॥
जोति जोति सम जोति जोति मिल रहियो रे ॥२॥
 चारों दिशाओं भाव हर जगह प्रभु के नाम रूपी दीपक से सारा संसार जगमगा रहा है। उस प्रभु की नाम रूपी ज्योति, अपने अंदर जगाकर, उस प्रभु की ज्योति से मिलकर (जीव रूपी ज्योति, प्रभु रूपी ज्योति का अंश है) उसका ही रूप हो जाती है।

तन मन आतम बारि सदा हरि गइये ॥

भनत जन रविदास तुम सरना आइये ॥३॥

अपना तन मन, प्रभु के समक्ष अर्पण कर, सदैव उसके गुण गाने चाहिए। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हे प्रभु! मैं आपका दास, आप जी की शरण में आया हूँ।

शब्द - 139

आरती 3

गगन मंडल में आरती कीजै, नाद बिंद इके मेक करीजै।

सुसमन इंदु अमृत कुंभ धरावै, मनसा माला फूल चढ़ावै ॥१॥

घीव अखंडा सोहै बाती, त्रिकुटी जोत जलै दिन राती।

पवन साधना थाल सजीजै, तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥२॥

रवि ससि हाथ गहाँ तिंह माहीं, खिन दहिने खिन बामें लाहीं।

सहस कंवल सिंघासन राजै, अनहद झांजन नित ही बाजै ॥३॥

इंह बिध आरती सांची सेवा, परम पुरिख अलख अभेवा।

कहै रविदास गुरदेव बतावै, ऐसी आरती पार लंघावै ॥४॥

इस पावन शब्द द्वारा सतगुरु रविदास जी महाराजस जीवों को गुरु के

उपदेशानुसार, दशम द्वार में ध्यान लगा कर, अनहद नाद और प्रकाश के दर्शन करने रूपी सच्ची आरती करने का, पावन उपदेश देते हैं।
गगन मंडल में आरती कीजै, नाद बिंद इके मेक करीजै।
सुसमन इंदु अमृत कुंभ धरावै, मनसा माला फूल चढ़ावै ॥१॥
 दशम द्वार रूपी गगन मंडल में, ध्यान लगा कर, प्रभु की सच्ची आरती करो, जहाँ प्रभु का अनहद नाद सुनकर, जीव प्रभु से एक रूप हो जाता है। दशम द्वार रूपी सुष्मना नाड़ी में, प्रभु के अमृत का कुंभ भरा पड़ा है, जहाँ प्रभु मिलाप रूपी फूलों की माला चढ़ाई जाती है।
घीव अखंडा सोहै बाती, त्रिकुटी जोत जलै दिन राती।
पवन साधना थाल सजीजै, तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥२॥
 जहाँ प्रभु के नाम का दीया बनाकर, प्रभु के नाम का घी डाल कर, बाती दीये में डाली जाती है और त्रिकुटी में, प्रभु के नाम की ज्योति निरंतर जगमगा रही है। दशम द्वार पर, ध्यान को टिकाने रूपी साधना के लिए थाल सजाया जाता है। जहाँ सभी ओर से ध्यान हटा कर, प्रभु में लगाया जाता है।

रवि ससि हाथ गहाँ तिंह माहीं, खिन दहिने खिन बामें लाहीं।

सहस कंवल सिंघासन राजै, अनहद झांजन नित ही बाजै ॥३॥

उस दशम द्वार में सूर्य और चन्द्रमा से असंख्य गुना अधिक प्रकाश हो रहा है। जहाँ शंख के बिना ही, अनहद नाद सुनाई देता है। सहस्रदल कंवलों में प्रभु पातिशाह का सिंहासन है। जहाँ प्रभु के अनहद नाद के बाजे बज रहे हैं।

इंह बिध आरती सांची सेवा, परम पुरिख अलख अभेवा।

कहै रविदास गुरदेव बतावै, ऐसी आरती पार लंघावै ॥४॥

इस प्रकार प्रभु की आरती करना ही, प्रभु की सच्ची सेवा है। आरती करना ही परम पुरुष अलख और भेद रहित प्रभु की सच्ची सेवा है। सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि प्रभु की ऐसी आरती करने का, ज्ञान गुरु ही करवा सकता है। ऐसी आरती करने से, जीव संसार के भव-सागर से पार हो जाता है।

शब्द - 140

आरती 4

आरती करत हरषै मन मेरो, आवत चित तुव रुप घनेरो ॥टेक॥

अजर अमर अडोल अभेस, निरगुन रहित रुप नहि रेखा।

चेतन सत चित घन आनन्दा, निरविकार तेज अमित अभेदा ॥१॥

अनुभ अजन्मा सरबग्य अनन्ता, अभेद अदैश अविगत सुछंदा।

नाम की बाती घीव अखंडा, इक ही जोत जलै ब्रह्मंडा ॥२॥

अनत बार तोहि धियान लगावा, मुनि जनि पै पार नहि पावा ।
 मन बच क्रम रविदास धियावा, घंटा झालर मनहि बजावा ॥३॥
 इस पावन शब्द में, सतगुरु रविदास जी महाराज, सांसारिक जीवों को, नाम
 जपने रूपी सच्ची आरती करने का पावन उपदेश देते हैं ।
 आरती करत हरषै मन मेरो, आवत चित तुव रुप घनेरो ।टेक ॥
 हे प्रभु जी! आप जी का नाम जपने रूपी सच्ची आरती करके, मेरा मन
 आनन्द से परिपूर्ण हो रहा है, जिससे मेरे हृदय में, आप जी के अनेकों रूप अनुभव हो
 रहे हैं ।
 अजर अमर अडोल अभेस, निरगुन रहित रुप नहि रेखा ।
 प्रभु कभी बूढ़ा नहीं होता, हमेशा अमर है, कभी डोलता नहीं । वह प्रभु
 निर्गुण है, जिसका कोई रूप रंग नहीं है ।
 चेतन सत चित घन आनन्दा, निरविकार तेज अमित अभेदा ॥१॥
 हे प्रभु जी! आप चेतन, सत स्वरूप, आनन्द से भरपूर, विकार रहित, अमिट
 और भेद रहित हैं ।
 अनुभ अजन्मा सरबग्य अनन्ता, अभेद अदैश अबिगत सुछंदा ।
 हे प्रभु जी! आप अनूप, जन्म रहित, सब कुछ करने योग्य, अनंत, भेद
 रहित, अदृश्य, अविनाशी और निर्मल स्वरूप हो ।
 नाम की बाती घीव अखंडा, इक ही जोत जलै ब्रह्मंडा ॥२॥
 हे प्रभु जी! आपकी सच्ची आरती के लिए, आप के नाम की बाती और आप
 के नाम का घी दीये में डाला है और आप के नाम की ज्योति जगाई है, जो सारे
 ब्रह्माण्ड को रोशन कर रही है ।
 अनत बार तोहि धियान लगावा, मुनि जनि पै पार नहि पावा ।
 ऋषि-मुनियों ने अनेकों बार ध्यान लगाया, परन्तु आप के आदि-अन्त को
 नहीं पा सके ।
 मन बच क्रम रविदास धियावा, घंटा झालर मनहि बजावा ॥३॥
 सतगुरु रविदास जी प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु जी! मन, वचन और कर्म
 करके, आपका ध्यान लगाने रूपी सच्ची आरती करता हूँ । जिस से मुझे अपने अन्दर ही,
 अनहद नाद सुनाई देता है ।

भाग - 2

1.

सोहंग ओंकार निरविकार आनादि, आखंड ध्यान सारूप ॥ अजर अमर
आदि करना, पुरष अटल अनूप ॥ कृपा करते दयाल जी, काटे बंधन करूप ॥ साहिब
बखशीश सत सुण, दास कर निज रूप ॥ सच नाम को सिमर कर, जीव भये तत रूप ॥
रविदास कहे भज नाम को, पावे शुद्ध सवरूप ॥

2.

गुर की मूरति मन विखे, धरो सो हर दम ध्यान ॥ नाम दान इश्नान कर,
दवारे पावे मान ॥ मंतर जप गुर हिरदे में, मिले सो निश्चल ज्ञान ॥ भूख, प्यास ना उतरे,
नाम बिना भगवान ॥ सतगुर सो नहीं पावई, जो दिल मांहे सुआन ॥ मन सच्चा कित
बिध भयो, कर है किया बियान ॥ झूठा पालन पालते, कहो कैसे कल्याण ॥ आज्ञा गुर
की चित्त धर, कहे रविदास बिखान ॥

3.

कर एकागर बरित को, सिमरे नित करतार ॥ साहिब की बात रीति का, कौण
कथे विसतार ॥ तिस की कुदरत अति बड़ी, जानै कौण विचार ॥ सदगुण नित हिरदे
बसे, मिलसी ठौर आपार ॥ गुर की लखो दिआलत, सतगुर कीयो पसार ॥ कहे रविदास
भगवान ने, दास दीये जग तार ॥

4.

प्रथमें सत सवरूप था, वहि अबिनाशी आप ॥ मदय विआपक हो रहा, तिस
को तूं मन जाप ॥ अन्त समय भी रहोगे, निरंकार परताप ॥ मन बाणी कर के भजे,
मुंचित किल विष पाप ॥ दाता करता आप है, धरति आकाश वियाप ॥ महिमा बहुत
बेअंत है, सतगुर ते होऐ थाप ॥ सोहं नाम की धुन लगी, दिल के अन्दर आप ॥ कहे
रविदास विचार के, जानो गुर प्रताप ॥

5.

जाप जपो तुम नाम का, कर सतगुर की सेव ॥ गावत हिरदे नाम के, बूझत
निज गुरदेव ॥ नाम सत्य संसार में, पदारथ झूठ स नेव ॥ दुबधा अन्तर की तजे, नित
सतसंग करेव ॥ आचार धरो गुर रीत के, मंगल नितय वधेव ॥ कहे रविदास विचार के,
साहिब देवन देव ॥

6.

अंतर कर गावे सदा, हृदय कर भरपूर ॥ खोटे कर्म तिआगसी, पाप भय सब
दूर ॥ काग रूप तज हंस हो, विकार ना करहो भूर ॥ देव देह तुझ को दई, प्रतखश जान
जरूर ॥ कथना कथे ना हरि मिले, पावे खोजन नूर ॥ कहे रविदास विचार के, रहो
भगवान हजूर ॥

7.

देवन वाला देत है, तिस की कर मन आस ॥ सर्व युगी प्रति पालीया, तेरी
मिटी ना खाहश ॥ अंतरयामी जानता, लेखे सास गरास ॥ आज्ञा गुर की चित्त धर,
साधन को रख पास ॥ बखशण हारा बखशसी, प्रभु का होऐ दास ॥ भाषण कर गुर नाम
को, अंतर रख प्यास ॥ अमृत वेला नाम सत, चार युगों में भास ॥ सत संतोष धारण
धरो, कहत भये रविदास ॥

8.

तन मन धन अर्पण करो, बाणी जप हरि मीत ॥ सत संगति कर संत की, दुष्ट
त्यागो रीत ॥ सवास सवास सिमरन करो, जनम आमोलक जीत ॥ सोहं नाम के भजन
से, दूर होऐ भ्रम भीत ॥ तूही तूही रटता रहे, और ना लावे चीत ॥ मान पाए जिन
सेविया, प्रभ सो पाए प्रीत ॥ नाम निशान प्राप्ते, जो गावत हरि के गीत ॥ रविदास कहे
सतसंग में, अवय पद सतगुर दीत ॥

9.

गुरमुख सेती प्रीत रख, कुकरम से मन बंद ॥ सत गोविन्द गोपाल गुर, और
जावन जान सन्बंध ॥ अन्धेर मचयो सरब जगत में, परकाश ना बिन गुर चंद ॥ नितय
पड़न गुरमुख सत, जानत भय सरब संद ॥ गुर ही धारे रूप सब, खेले खेल आनन्द ॥
जन रविदास पुकारते, जपो ओअं कर बंद ॥

11.

सरब ही साहिब एक है, दूसर कौन कहाए ॥ मुक्ति ना पावे भजन बिन, जो
उत्तम आप सदाए ॥ ठाकर नदर ना आवही, कबहू ना लेखै लाए ॥ जो चाहे कल्याण
को, सतगुर लए मनाए ॥ गुण वंतिआं संग गुण वसे, जो तूं ध्यान लगाए ॥ रविदास कहे
संसार में, बहुरि ना जन्में धाए ॥

11.

नाम धियावे देव मुनि, करता पुरष आगंम ॥ सीस दान कर हरि मिले, तूं ना
जान सहंम ॥ ठाकर सदा समीप है, तिस बिन निहफल और ॥ गुर गोपाल धियय तूं,
मन आपणा कर भौर ॥ बन्धन कौन छुड़ावसी, कीए बिना मन धर्म ॥ काटे गोबिन्द
जन्म, मरन दूर होए सभ भरम ॥ साहिब दीन दियाल सदा, सोई मनो पुकार ॥ कहे
रविदास प्रीति हरि, मन में राख विचार ॥

12.

तिस जेवड दाता नांहि को, गुर आपरंपर सोए ॥ गुर बिन सुरत ना सतय है,
भरम थक्के सब लोए ॥ देव नाथ और सिद्ध सर्व गुर माने ते होए ॥ धरती वयोम
विचारिया, तिस ते भिन्न ना कोए ॥ पाताल पुरी जयकार धुन, कच्छ मच्छ भी जोए ॥
दाना, दाता, शीलवन्त, उपकारी जग होए ॥ इंद्र ब्रहमा महेश गण, पवन बसंतर तोए ॥

यह सब बपुरे कीट सम, लखे ना साहिब जोए ॥ कहे रविदास पुकार कर, भरम भीत मन खोए ॥

13.

अठ सठ तीर्थ पुन फल, होवत जो सच जाग ॥ ध्यान धरो प्रभू भजन में, तो होवे बड भाग ॥ मन का मणका फेर लए, विरती का कर ताग ॥ शरवण कर के ही भयो, ऐ जग सगरो बाग ॥ साहिब के सतसंग में, रहो मन सद ही लाग ॥ जन रविदास सोहं गुण भज, मन मत अपनी त्याग ॥

14.

गुणों का होवे सागरा, ध्याय निरंजन नाम ॥ नाम गुर का वोहिथा, तेरे आवै काम ॥ करता चित्त ना आवही, भूल गया तूं नाम ॥ प्रभू का सिमरन छोड के, खोटे करता काम ॥ औगुण तेरे दूर हो, पर तूं गुर की शाम ॥ आठ पहिर भगवान भज, निकट ना आवे जाम ॥ सवास सवास मन भजन करो, सिमरो श्री गुर नाम ॥ रविदास कहे गुर शरण में, पावे सुख विश्राम ॥

15.

गुरदेव दोवारे तेरा मान हो, निधआसन करे निहाल ॥ जहां बैठे तहां सोभ हो, कबहू ना होए बिहाल ॥ गुरमुख की रीति धरो, गुरमुख की चलो चाल ॥ एक ध्याना एक में, कर तूं यह संभाल ॥ कारण करते अंत ना, तिस की प्रीति निहाल ॥ पूरा सतगुर मिलत है, प्राप्त होवे घाल ॥ वसतु नाम प्राप्ते, हृदय, कर लै थाल ॥ शोभा पावे देह में, कहे रविदास विशाल ॥

16.

कुदरत कौन विचार है, कोई ना जाने भेत ॥ सर्व ही शक्तिमान गुर, भूले मन लए चेत ॥ गुर बिन आदि वियादि में, तीनों ताप जरेत ॥ गुरु गोबिन्द प्रताप से, होत जात सर्व सेत ॥ नाम लीए अघ जाएंगे, पापा मूल हरेत ॥ जन रविदास अधीन हो, करो स्वामी हेत ॥

17.

तिस बिन दूसर अवर ना, निरंकार को देख ॥ अमर अजर भरपूर गुर, घटि घटि मांहि सुलेख ॥ निरंकार सद सदीव सोए, साहिब सर्व विशेष ॥ शरधा से प्रीतम मिले, पावत सर्व ही भेख ॥ ताप तपे मन मार के, होत जात है शीव ॥ उदास रहे संसार में, बहु बिअंत ही जीव ॥ आतम देर बसाया, हृदय में कर वास ॥ जग में आया सुफल है, कहत भयो रविदास ॥

18.

नाम धनी का सत सदा, गुरदेव राख मन टेक ॥ अन्तर धरी ध्यान तूं, ब्रिति को कर एक ॥ अंत करण सुधार के, सोहंग मनि करो पाठ ॥ सतगुर की दरगाह में,

सुंदर होवे ठाठ ॥ गुर की किया उपमा कथो, अदभुत लीला रीत ॥ प्रेम बिछोरा ना जरे, मीन समान है प्रीति ॥ ओअं ओअं ध्यान धर, सोहं भेद विचार ॥ तत रूप होए जनमनां, कहे रविदास आचार ॥

19.

दुरमति का त्यागन करो, लेहो गुरमत खोज ॥ खोटन की संगत तजो, किऊं सिर पर उठाओ बोज ॥ गुर शरण में मन लागे, छूटे माया बंध ॥ आगे मुश्किल ना बणे, होए नाम सनबंध ॥ झूठ बोल, झूठा बणे, झूठ तियागो गैल ॥ जन रविदास विचारिया, गली, गली कर सैल ॥

20.

भगवान आतम देव का, करो मन अपने जाप ॥ नाम बडाई मनन कर सब तापन सिर ताप ॥ गति रीति ना कहि सको, जो माने गुर वाक ॥ कागज मिले ना प्रेम को, कलम लिखे नहीं साख ॥ बैठ विचारो मन विखे, सतगुर ध्यान लगाए ॥ संगत का फल पाव है, पाप नरंचक लाए ॥ बाणी रटो गुर, गुर सदा, अंतर लए सुख भास ॥ मार्ग पावत लाभ हो, कहत सतय रविदास ॥

21.

जीभा कांती मन करो, सान चड़ावो तेज ॥ सच खंड में जा मिले, सतगुर देवे भेज ॥ धर्म साथ संबंध जो, कुल तारन की चाल ॥ प्रात कमाई अपनी, पाए मुशक्कत घाल ॥ मुक्ति दवारा पाव है, चिंतन नाम हमेश ॥ गुर सेवक की रीति लख, सतगुर जान नरेश ॥ जोन, जोन भरमत नहीं, मनन के संग साथ ॥ जन रविदास पुकारते साहिब कीनी दात ॥

22.

वेराग विवेक ततीखशा, सम दम आदि ले खोज ॥ मोमोखश बन सतसंग में, लेह परमातम मौज ॥ तत तवं साधन भने, मुनिवर मति सुधीर ॥ कथने मातर ना मिले, सोधन करो सरीर ॥ मन इंद्रिय मलकर भरे, ततव मसी कहे आप ॥ अंतशकरण भी शुद्ध नहीं, लागत सर्व ही पाप ॥ पापी कर्म कमावना, सो सतसंग में नास ॥ कलि के दोष सब दूर हो, कथन करे रविदास ॥

23.

आपणा बीज तूं आप ही, खावत है बहु बार ॥ तेरा ही तुझे सौंपता, वह दाता करतार ॥ जो गुर शरणी परत है, तिल भर भी बेअंत ॥ शोभा पावे लोक में, कहित मुनी जन संत ॥ नरकन के अधिकार को, शीघर मन दे त्याग ॥ भजन करो भगवान का, मिले रविदास बेराग ॥

24.

गुण आवे गुण उचारे, गुण में रहे समाए ॥ गोविंद गुरू, गोपाल गुरू, करता

पुरुष बसाय ॥ भगवान भजन में सुख सदा, हो है सुख ना काए ॥ कर विश्वास मन आपणे, सतगुर चरनी धाए ॥ सत सुन्दर अति, अगंम अपारा ॥ खेल साहिब का, सभ से नियारा ॥ निरमल आतम सवरूप, लखि सरीर होऐ पवीत ॥ सच्च खंड में जा बसे, कहे रविदास तूं मीत ॥

25.

नारायण रंग करे जग, धारे रूप अजैब ॥ दीन दिआल कृपाल प्रभू, धन सिरजनहार सुसाहिब ॥ सुण सुण के उपमा भने, कवी ग्रंथ कुरान ॥ काजी, मुल्ला कहित है, अप अपणी सभ मान ॥ भेष, पंथ, योगी, यती, लखे ना सो अनजाण ॥ आप हो उतपत प्रपंच कर, आप करत भय हानि ॥ घड़ी महरत जाणते, वह अपरंपर देव ॥ देव, दनुज, मानुष, सभी, लागे तिस की सेव ॥ अमर पहिचाने गुरु का, सो दास जाने निज भेव ॥ जन रविदास विचारिया, सुख पावत नित सेव ॥

26.

नाम ध्यावे सिद्ध भये, जपन जपो बहु बार ॥ सतगुर के संग लाग कर, लोहा होवे पार ॥ गुरु गोपाल जहाज जुगम, गुर मनसा पूरन हार ॥ साहिब की उपमा भनो, मुख से लख लख वार ॥ मितर तेरा और नहीं को, तूं देखी नदर पसार ॥ नदरी नदर सुधार मन, कहे रविदास विचार ॥

27.

वरनण कर के को कहे, जग पालक परशंस ॥ अंतर करो मिलाप गुरु, सुभ गुण की बसे बंस ॥ सतगुर के उपदेश कर, निर्मल होवे हंस ॥ सतिगुरु दाता अति बड़ा, ब्रहम जानीए अंस ॥ ऐसा नाम निरंजनी, अंतर लए बसाए ॥ हाथ जोड़ उसतति करो, गुर राखे सत भाए ॥ ब्रहंम वकता, ब्रहम सोत्री, ब्रहंम निसठा गुरु असंस ॥ सतगुर संग प्यार कर, कहे रविदास बडहंस ॥

28.

दाता सब गुण बड़ा है, किरत ना मेटे कोए ॥ समुंदर सागर से जी तरे, किरपा करता सोए ॥ वेद कथे, शास्तर कथे, तिस बिन अवर ना कोए ॥ ना हूआ, ना होएगा, जानत है जग लोए ॥ नाम जपो तिस धनी का, मात गर्भ नहि पोहि ॥ सतगुर की कर बंदगी, संशय सकल मिटोए ॥ गिर, पृथ्वी, चंद, सूर, सभ, धारत है भगवंत ॥ रविदास कहे अलपग यह, जानत है किआ जंत ॥

29.

गुरुमुख दवारा नाद सुण हृदय मांह ले बूझ ॥ सुरत धरो मत उपजै, नेतरीं होवे सूझ ॥ मिले ना सतगुर शब्द तोहि, अंतर भरी है दूज ॥ अमर होवे सतसंग में, मन अपने से झूज ॥ श्रेष्ठ पुरुष का संग कर, मान करो सभ चूर ॥ मन हसती सकल जरो, पापन को जो मूर ॥ साहिब सेती प्रेम कर, रसातल से जा बच ॥ गुर, गुर मन में रटन कर, मुख

से बोल तूं सच ॥ संतन के दवारे परो, होवे परम आनन्द ॥ कहे रविदास भगवान के, गावो मन में छंद ॥

30.

पताल रसातल आनन्त है, खोजन हारे लोक ॥ प्रभु माया को अंत ना, दूंडत करते शोक ॥ जीव वितल है, जीव में, जीव सुतल सो जीव ॥ जीव तलातल, महातल, साहिब लख लै सीव ॥ अतल सात पाताल यह, जीव ईश लखि लेव ॥ इस बिधि अंत ना आवे है, खै पताला भेव ॥ बुद्धि कितने बल धारे, लागत ना कोई ताण ॥ गुरुमुख मन बसाईए, मानक नाम निशाण ॥ चींटी के सम बल नहीं, चाले तेरा जोर ॥ नाम बिना भगवान के, लाख मचावे शोर ॥ उतरे आवरण दिले का, मन आपण ले साध ॥ कहे रविदास पुकार के, दूर करो सब वयाध ॥

31.

नदियां लहिरीं बस रहा, सागर अति गंभीर ॥ चौदह रतन उपाया, सत गुरु गुणी गहीर ॥ ऊठत, बैठत नाम भज, सो पावत सत सीर ॥ मन अपणे गुरु गुरु रटो, कभी ना होवे भीर ॥ मुख पवितर होत है, गुण गावत दीन दिआल ॥ सरब घटा भरपूर है, अंतरयामी पाल ॥ तुझे भरोसा ना पड़े, इस कारण कंगाल ॥ रविदास कहे संसार में, अब भी कर तूं भाल ॥

32.

एक घड़ी सिमरन करो, नहीं लागे कलू कलेश ॥ प्रभू के दरबार में, होवे उज्जल भेष ॥ पतित उधारण पारब्रहम, गुरु अविनाशी आप ॥ श्रेष्ठ पुरुष का संग करो, शुभ गुण मन में थाप ॥ अथाह प्रभू हर धनी है, गुर का नाम अतो ल ॥ सवास आमोलक सुफल कर, जिस का ना कोई मोल ॥ रविदास कहे आश्चर्य वह, हरि मिलने की रीति ॥ सवासा बिरथा न तजो, मन कर करो प्रीति ॥

33.

निहाल, निहाल, निहाल है, वह करतार निहाल ॥ कल्याण तेरा कल्याण हो, चरणी परो विसाल ॥ ऐसी मनो प्रीति कर, जैसी चकवी सूर ॥ जन रविदास ब्रहम रंग राता, औगुण हो सभ दूर ॥

34.

साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना परे आकार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना सिफत शुमार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना कहे उचार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना करे विचार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत नहीं कछु लेस ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत नहीं कछु भेस ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत नहीं करतार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना पारावार ॥ साहिब सच्चा बेअंत है, अंत ना सतगुर धाम ॥ कहे रविदास पुकार के, सिध भये सभ काम ॥

35.

सतगुरु उंचा अत बड़ा, सत उंचा वड नांओ ॥ नाम निरंजन गुर सदा, मन
माना फल पाओ ॥ कितने ही योधे भय, शूर हुए आपार ॥ सोहं नाम का मेल हो, नौका
बने आधार ॥ काम, क्रोध, ठग ठगत है, राखो चित्त संभाल ॥ सत परमात्म वेधिया,
सभी करे प्रतिपाल ॥ कितने प्रभू के भगत भये, कितने हुए अवतार ॥ कितने पंडित,
ज्योतिषी, वेदां करे विचार ॥ कितने ही ब्रह्मिंड हैं, करता गुरु समरथ ॥ कितने ही
उसतति करे, दीन दयाल अकथ ॥ कितने मूरख जगत में, रूप भय विकराल ॥ कितने
देवी, देवते, कितने काल, कराल ॥ यह सभ खेल गोविंद के, अंत ना आवे कोए ॥ कहे
रविदास विचार के, प्रभु में रहो समोए ॥

36.

सतगुरु का धर ध्यान तूं, सतगुरु संग निवास ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, गुर का
नाम प्यास ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, गुरु निरंजन लाल ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं,
लिखत लेख सो भाल ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, साधू मत विचार ॥ सतगुरु का धर
ध्यान तूं, अंत कर लै सार ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, लोभ विकार तियाग ॥ सतगुरु का
धर ध्यान तूं, कर्तव्य नीच विहाग ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, गर्भ ना आवे मूल ॥ सतगुरु
का धर ध्यान तूं, विषय रस जा भूल ॥ सतगुरु का धर ध्यान तूं, केवल होवे मुक्ति ॥
कहे रविदास विचारिया, ऐहो सार है युक्त ॥

37.

सोहंग, सोहंग उचारीये, श्रेष्ठ पुरुष संग प्यार ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये,
कबहू न आवे हार ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये, गुर का नाम गहीर ॥ सोहंग, सोहंग
उचारीये, खोजे मत सुधीर ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये, भजन करो गुरदेव ॥ सोहंग,
सोहंग उचारीये, ता जाने निज भेव ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये, संध्या समय ध्यान ॥
सोहंग, सोहंग उचारीये, साकत संग न होय ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये, निर्मल होवे
सोय ॥ सोहंग, सोहंग उचारीये, करन कारन अलेख ॥ कहे रविदास पुकार के, मन
नीवां कर देख ॥

38.

सतगुरु साहिब अति बड़ा, पावत ना कोई पार ॥ सतगुरु साहिब अति बड़ा,
जानत विरला सार ॥ सतगुरु साहिब अति बड़ा, अंधयारे में दीप ॥ सतगुरु साहिब अति
बड़ा, सुंदर मोती सीप ॥ सतगुरु साहिब अति बड़ा, अवर ना जाने भेत ॥ सतगुरु साहिब
अति बड़ा, भूले मन तूं चेत ॥ सतगुरु साहिब अति बड़ा, नाम जपो मन मांहे ॥ सतगुरु
साहिब अति बड़ा, दास उधारे तांहे ॥ सतगुरु साहिब अति बड़ा, रोम रोम में वास ॥
सतगुरु साहिब अति बड़ा, निसचे कहे रविदास ॥

39.

231

निरंजन निरंकार प्रताप, मन कर जपे गुरु, गुरु आप ॥ निरंजन निरंकार सभ
दात, गुणी विचारो मन सभ भात ॥ निरंजन निरंकार भगवान, आठ पहिर धर तांका
ध्यान ॥ निरंजन निरंकार अविनासी, जनम, मरण की काटे फांसी ॥ निरंजन निरंकार
करतार, सर्व दुःखों का उतरे भार ॥ निरंजन निरंकार भवज्योती, दुरमत दुबिधा अंतर ना
होती ॥ निरंजन निरंकार नारायण भज, सर्व सुखों का होए आयण ॥ निरंजन निरंकार
गोपाल, जीव जंत की करे प्रतिपाल ॥ निरंजन निरंकार नर नाथ, सर्व पदार्थ तिस के
हाथ ॥ निरंजन निरंकार प्रकाश, भज हृदय कहो रविदास ॥

40.

ओअं, ओअं, ओअं नीत, मन धर सच भगवान प्रीत ॥ ओअं, ओअं, ओअं
ध्यान, सच सच सभ सच ही मान ॥ ओअं, ओअं, ओअं पूजा, देवी देवा तिस बिन
दूजा ॥ ओअं, ओअं, ओअं सतसंग, नाम ध्याये मन कर रंग ॥ ओअं, ओअं, ओअं जप
लीजे, मुग्ध पत्थर भव नरि तरीजे ॥ ओअं, ओअं, अमर कल्याण, अंतर हृदय चड़े हर
भान ॥ ओअं, ओअं, गुण विख्यान, पवित्तर गुणों की होवे कान ॥ ओअं, ओअं, तेरा
अधिकार, पाप रोग सभ उतरे भार ॥ ओअं, ओअं, ओअं दिन रैन, सोहं भज मन होवे
चैन ॥ कहे रविदास लखख गुर की करनी, सवास, सवास पर हर की चरणी ॥

232

श्री गुरु रविदास जी महाराज की उच्चारण की गई पैंतीस अक्षरी

उसत्त करो इक ओंकार। तीन लोक जिन किया पसारा।
अलख को लखे जो भाई। देहें ढंढोरा संत सिपाही।
ईश्वर काया घट में। आकाश रमइयो जैसे सब मट में।
शीश महल में स्वामि दर्शें। जहां प्रेम अमी रस बरसे।
हरि का सिमरण कीजै। कहे रविदास अमी रस पीजै।
काया कोटि में रम रहयो प्यारा। सीस महल में दे दीदारा।
ख्याल से करो विचारा। सर्वव्यापी सब से न्यारा।
गोबिन्द ऐसे ज्ञानी। न कुछ भूले न कुछ जानी।
घन नहीं अहरण सहे चोटों। सतगुरु शब्द घड़या है अनोठा।
डयानत सोई सार। रहे रविदास बात विचार।
चाम का चोला भाई। नाम बिना कुछ काम न आई।
छिन में भया ममोला। अमी सरोवर दिया झकोला।
जीव है, जनेऊ जाति का। दया की धोती तिलक सत्य का।
झिलमिल जोत जगाई। अलख पुरुष तहां पहुंचे आई।
जयानत सोई ध्यानी। दास रविदास कहे ब्रह्म ज्ञानी।
टैका टेर का एक राखो। एक बिना दूजा मत आखो।
ठाकुर शीला तर गए भाई। पंडित बैठे मन मुरझाई।
डर नहीं हरि संग प्रीत। भगत जन बैठे मन को जीत।
ढा दीनी बुर्जीपापन। सिमरण कीना अजपा जपन।
णम की लाई डोरी। कहे रविदास लगी लिव मोरी।
तृगुण माया रचदी भाई। ऋषि मुनि लीने भरमाई।
स्थिर नहीं यह संसारा। राव रंक सब काल नगारा।
दो इक दिन यहां मन्दिर सारा, फिर ठाठ छोड़ लद जाये बंजारा।
धनी जिन ध्यान लगाइ। काल फांस के बीच न आइ।
न नाम की नाव बनाई। कहे रविदास चढ़ो रे भाई।
पार ब्रह्म परमेश्वर स्वामी। सब घट-घट के अन्तरयामि।
फिकर कर छोड़ जगसंसा। जा मिल बैठे अविनाशी पासा।
ब्रह्म सो ब्रह्म का वेता। गगन मंडल में राखो चेता।
भ्रम मिटे जो पंचम सीजे, जाये त्रिवैणी मजन कीजे।
मन को गगन समाओ। केह रविदास परम पद पाओ।

याद करो, वाह के गुण गाओ। पार ब्रह्म के दर्शन पाओ।
राम रमे सो राम प्यारा। फिर न देखया जम का द्वारा।
लिव लगा ले भाई। जम का त्रास निकट न आई।
विविध सिमरण कीजै। सोंहग नाम अमी रस पीजै।
ड़ मिटि जब हुआ नबेड़ा, कहे रविदास किया अमर घर डेरा
सोहंग शब्द मन किया बसेरा। मेट दिया चौरासी का फेरा।

ओंकार बावन का पैंतीस में जपयो है सार।
सर्व देव संतन को करें हैं नमस्कार।
पैंतीस मात्रा प्रेम से सिमरें हैं निज दास।
जिन सिमरियो सो मुक्त हैं कहे सद रविदास।
ओंकार पैंतीस मात्रा प्रेम से निसवासर कर जाप।
रविदास कहे जो सिमरते, मिट गये तीनों ताप।
ओंकार पैंती मात्रा प्रेम से सिमरण कीयो मन वैराग।
रविदास कहे जो सिमरते, तिन के पूरण भाग।
पैंतीस मात्रा प्रेम से सिमरते रवि प्रकाश।
रविदास कहे जो सिमरते, मिट गये जम के त्रास।
रविदास सिमरत रमते राम में, सत शब्द प्रतीत।
अमर लोक जाये वसियो, काल कष्ट को जीत।
ओंकार सप्त सलोकी मात्रा, सत कीयो जगदीश।
अमर लोक वासा कीया, काल नमावें शीश।

॥श्री गुरु रविदास बाणी हफ़तावार ॥

सोहंग सतिनाम धियाओ ॥ ऐतवार अमृत दा भरिआ बोले अमृत बैन ॥ गुरु का शब्द जपो दिन राती ता आवे सुख चैन ॥ ऐतवार वी सफल है हरि का सिमरन ॥ सार ॥ रविदास जो नाम उचारिए पाया मुख दुआर ॥१॥ टेक ॥ सोमवार सभ ठोर में जले थले भगवान ॥ महिमा प्रभु गाईए तब होवे कलियाण ॥ गोबिन्द गोबिन्द जाप से आवै सदा अनंद ॥ सोमवार सुख दा जपो जपो रविदास मुकंद ॥२॥ टेक ॥ मंगलवार आवै सदा होवे मंगलचार ॥ रल मिल सखीआं सिमरलो हरि हरि नाम अधार ॥ प्रीतम चरनी लागिया कभी न आवै हार ॥ मंगलवार सुलखणा कहि रविदास विचार ॥३॥ टेक ॥ बुधवार बोध सदा होवै ज्ञान प्रकाश ॥ गुरु प्रेम पूरे जो मिलै टूटे जम की फास ॥ अंत सहाई प्रभू भये करम कमाए सोई ॥ बुधवार बुध सफल है रविदास जो भगत होय ॥४॥ टेक ॥ वीरवार विदिया बड़ै पुत्र पुना अभियास ॥ सतिगुरु पूरे मिलन से होवे आतम प्रकाश ॥ गुरु ज्ञान का मूल है धरम मूल का हितकार ॥ वीरवार बिचारी नसै पाप हजार ॥५॥ टेक ॥ शुक्रवार सुहावना छिन छिन भजे करतार ॥ विछै बाशना झूठीयां देवै नरकां डार ॥ गति करमां अनुसरा है जैसा जैसा होवै ॥ शुक्रवार सुहावणा रविदासी नाम जपेवै ॥६॥ टेक ॥ शनीवार भजन श्रृष्ट सत सत सभ वार ॥ शुभ करमां से सफल है आवण जाण संसार ॥ बिन भजन बिरथा सभ जानते जो जो आवतवार ॥ बारम वार हरि सिमरीए कहि रविदास बिचार ॥७॥ टेक ॥

श्री गुरु रविदास बाणी पन्दरां तिथी

सोहंग सतिनाम धियाओ ॥ अमावस जो है भाखिया जानो मीत ॥ श्रृष्ट मुनी सभ गावदे गीत ॥ अमावस है छूत सदा बसै है जग जीत ॥ बिरलै बिरलै पीवगे सोहंग रस सुरजीत ॥१॥ भगता सेती गोष्ठी जाए सभी बिहाय ॥ आउना उसका सफल है जो जाते लाभ उठाय ॥ अमावस है जो आंउदिआ आवन जावन रीत ॥ कहि रविदास विचारके राखो हरि से प्रीति ॥२॥ टेक ॥ एकम एक परमात्मा संसार है प्रकाश ॥ सवास सवास तू सिमरलै तोड़े जम की फास ॥३॥ दीन बंधू दिआल जो सोय है सिमरन सार ॥ जगत सदा जो सुख देवे अंतर होय आधार ॥४॥ हसती चीटी आदि लै जीवन हुकम अनुसार ॥ भजन करो जन पालका होना जेकर पार ॥५॥ एकम एक परमात्मा रखवणी उसकी आस ॥ सति सति प्रभू सिमरते सच कहै रविदास ॥६॥ टेक ॥ दूजी दुरमति दूर कर रखणा गुरु से नेऊ ॥ सफल करम तब होणगे गती पावै इह देहू ॥७॥ दूजी दुरमति दूर कर दया धरम किरपाल ॥ सति से कर गोष्ठी हिरदिया बसै गोपाल ॥८॥ सुभ करमा फल सुभ है करमां संदणा खेत ॥ पाप करम दे कीतिक सदा

हार नहीं जीत ॥९॥ दूजी दुरमति त्याग कर लीला अजब पहिचान ॥ कहि रविदास बिचारके भगत भजन कलियाण ॥१०॥ टेक ॥ संसारी तृष्णा त्याग के तन मन धन गुरुदेव ॥ मिथिया सभ को जानके रख नाम सनेह ॥११॥ करमी भगती करन से होवै जगत अधार ॥ वहि सोभा अति घनी अगे मिलै भंडार ॥१२॥ तीरथ फल ना बरत फल नहीं जग कोई पाया ॥ मन महि हऊमै अहंकार जोय बिरथा सभही जाय ॥१३॥ तृतीय त्यागीये मान को खोटे करम हंकार ॥ हरि हरि नाम उचारिए कहि रविदास पुकार ॥१४॥ टेक ॥ चौथ चारो तरफ महि दसों दिसा चोगिरद ॥ जलै थलै प्रभू आप है राखो नाम की विरद ॥१५॥ चमन जो तुझै दिख रहा रहिना नहीं हमेश ॥ छण मंगूर शरीर है बदन रहित ना केस ॥१६॥ सहायता कोई ना कर सके जिन सो लाया हेत ॥ अंत समें छड जाइगे मुख सेवन प्रेत ॥१७॥ चौथ चोरी ना करो त्यागो विषै बिकार ॥ गोबिन्द सिमरनि सार है कहि रविदास विचार ॥१८॥ टेक ॥ पंचमी प्रीतम जान लउ सभना है भगवंत ॥ ब्राह्मण आदिक सिमरते कोई ना पाया अंत ॥१९॥ पंच ततव की रचना है जो दिखै आकार ॥ तिसमे होवै लीन सभ लीला प्रभ अपार ॥२०॥ विषै वाशना झूठ है राह भला बीच नीत ॥ बिना भजन संगी नहीं सरब सुखा का मीत ॥२१॥ पंचमे पती परमात्मा सरब सृष्टि जान ॥ गुरु की सरनी धियावते होवै रविदास ज्ञान ॥२२॥ टेक ॥ शिष्टमी बित विखीयानीए षट रस भोजन आदि ॥ जिसने सभ पैदा कीए कर तूं उसकी याद ॥२३॥ जो देखत सभ बिनसता बापर शाही आदि ॥ सिमरन कर तूं प्रभू का जो है आदि जुगादि ॥२४॥ उलटे निजमां कीतिया आवत तुझको हार ॥ सुभ करम के करन से पावै सति दरबार ॥२५॥ शिष्टमी शुद करम करावै जोवै ॥ गुरु मिल जीवन मुक्त है सखा रविदासी होवै ॥२६॥ टेक ॥ सतमी सारे रम रहा आप हरी सिरजनहार ॥ तूं ना भूले पराणीयां सिमरन बारमबार ॥२७॥ हरि पूरन परमात्मा निरधन अधार ॥ सरब वियापी प्रभू है तूं ना कभी बिसार ॥२८॥ दुखीयां के दुख दूर कर कष्ट निवारो आप ॥ सदा सहाई प्रभू है करै जो उसका जाप ॥२९॥ निंद का हंकारी पाठ का भगत है तास ॥ हरि भजन संग मुकती पावै जन रविदास ॥३०॥ टेक ॥ अठमी आठो आम जो सिमरन कर हरिनाम ॥ सुध तेरा प्रलोक जो होवै अंत कलियाण ॥३१॥ होवै ज्ञान की रोशनी गुरु ज्ञान का मूल ॥ गुरु सेवा बहि संत की करम कमाय असलू ॥ भूलन अंदर सभ को अभुल्ल प्रभू है आप ॥ भुल्ला रहे जो पाप से मिटत सकल संताप ॥३२॥ अठमी अटक ना होवसी जिस का रिदा सुफाय ॥ रविदास अटक है उसको पाप पोटरी उठाय ॥३३॥ टेक ॥ नौमी नौध भगत जो है भगता मनजूर ॥ पुरश भला जो करेगे सभना पूरन पूर ॥३४॥ पद सेवन कीरतन जस चोथे अरपण जान ॥ दास सखा ने अरपना आठो बंदना मान ॥३५॥ नौमी डंडाउत कही जो कहे कराए जाय ॥ रविदास भजन अमोल है बिरला पाए कोय ॥३६॥ टेक ॥ दसमी दरद निवार लै सचे सतिगुरु संग ॥ समां विअरथ जाइगा हंकारी दुष्ट भुजंग ॥३७॥

मैं मेरी नूं मार लै मन महि शांत होवै ॥ क्रोध बुरा है काल से इसको लेउ समावै ॥२॥
 श्रृष्ट मुनी सभ समझते करदे नाम अधार ॥ सरब ठोर में बस रहा सच्चा सिरजणहार ॥३॥
 दसमी दिशो दिश बस रहा सारे है करतार ॥ हरि हरि तुल ना प्रानीआं कहि रविदास
 बिचार ॥४॥११॥ टेक ॥ एकादसी एक दा दास रहू फूरने तजो अनेक ॥ भगत होत तर
 जावगे सदा मानीए टेक ॥११॥ अंबा गुवाही निंदा बास ऐह जान ॥ ऐह सब जोहर सुमन
 है छाडो इनका ध्यान ॥२॥ जूआ मास मधर बेषिया हिंसा चोरी कार ॥ जिह खोटे करम
 है डोबन नरक मझार ॥३॥ मनुख जून सुलक्खणी गत करमां अनुसार ॥ बिना भजन
 बिरथा जनम जाय कहि रविदास बिचार ॥४॥१२॥ टेक ॥ दुरादसी दे दरबार डिठा
 अजब अंध ॥ बड़े क्रोध से पाप है बास खिमा मुकंद ॥१॥ सति संगति महि धरम है
 बड़े नाम का रंग ॥ बैकुंठ भी उसे आखदे जहा होते संत संग ॥२॥ धन के भागी चार
 है धरम चोर नरप आग ॥ धरम हेत जो लाएगा तिन कहे बडभाग ॥३॥ धरम हेत ना
 लामदे लैदे तीनों नाय ॥ चोर नरप ओर आग जो कहि रविदास बताय ॥४॥१३॥ टेक ॥
 तरैदसी तारन हार है सदा सदा तूं ध्याय ॥ लखख चुरासी जून से उतम दीया बनाय ॥१॥
 बंदे बुरज बना दीयां ऐसा अजब बनाय ॥ ऐसा बने ना ओर से मन तन सीस लगाय ॥२॥
 उस को ना तूं भूलणा पिआ पट के भाय ॥ तूझै अहार पहुँचावता उदर मात के जाय ॥३॥
 तेरस तेरा कलपना झूठा दिखता भास ॥ झूठा सच्चे पेट का सच कहे रविदास ॥४॥१४॥
 टेक ॥ चांद चौदा भए जब दिखता सरब अकार ॥ सरब बियापी प्रभू है सूरज चंद अते
 तार ॥१॥ हरि से प्रीत करो मन मेरे जैसे चंद चकोर ॥ बालक प्रीति खीर से बादल घटा
 से मोर ॥२॥ छिछ बिन सूनी रैन जो हिरदै ज्ञान बिन मान ॥ गुरु ज्ञान अमुल है उतम
 भगत हरि जान ॥३॥ चौदा चौदा रतन सम इच्छा पूरन होवै ॥ रविदास संसै सभ मिटै
 प्रभू प्रेम बस होवै ॥४॥१४॥ टेक ॥ पुन्या पूरन चंदरमा सारे हा परकास ॥ लोचन ज्ञानी
 तरैगे हिरदै नाम परकाश ॥१॥ गुरु सुख अमृत पीवगे मनमुख अंध गवार ॥ प्रेम लाई
 लड़ फड़ैगे मिलत पदारथ चार ॥२॥ रविदास जिह ग्रंथ है पड़ै सुणै मन लाय ॥ सभ ही
 पदारथ मिलेगे इससे सभ बर पाय ॥३॥ पंदरां तिथी संपूरन है पूरन पाठ कराय ॥ सरब
 इछिआ संपूरन है सभना रविदास सहाय ॥४॥१६॥ टेक ॥

साहिब सतिगुरू रविदास महाराज जी का 'बारह मास' उपदेश "चेत"

चढ़या चेत सुलक्खना, कर संतन संग प्रीत ॥ गुरु चरनन चित्त लाए कर, राम
 नाम जप्प नीत ॥ गुरु गोबिंद जहि गाईए, कर सरवण नित नीत ॥ गुरु के चरनन प्रेम कर,
 हिरदे धरो गुरु मीत ॥ बचन गुरु के सुनत ही, मिटत भरम सभ भीत ॥ मन मुखख संग
 ना कीजीए, गुरुमुख संगत याहर ॥ मनमुख संगत बिघन है, गुरुमुख संगत सार ॥
 मनमुख संगत डूबणो, गुरुमुख संगत पार ॥ गुरुमुख रिदै प्रगास है, मनमुख अंध
 गुवार ॥ गुरु के अमृत वचन सुण, शरधा हिरदे धार ॥ रविदास भगती एही है, हिरदे
 खूब विचार ॥ चेत सुहाणां तिनां नूं, जिनां सोहंग नाम प्यार ॥

"वैसाख"

वैसाख सुहावा सर्व सुख, गुरु के वचन विचार ॥ अंतर ध्यान लगाए कर,
 समझो सार आसार ॥ गुरुदेव को ग्रहन कर, तज सब झूठ बिकार ॥ हिरदे हरि, हरि हरी
 को, सिमरो वारं वार ॥ दुष्टा संग त्याग कर, संतां संग प्यार ॥ दृढ़ कर राम ध्याए तूं, भव
 निधि उतरे पार ॥ हरि, हरि नाम जपंदिया, कदी ना आवे हार ॥ भगत बिना गुरुदेव की,
 होवत नहीं कल्याण ॥ गुरु बिना जन्म विअर्थ ऐह, जावत साची मान ॥ गुरु हरि भगत
 कहंदिया, निहचल मिल है ज्ञान ॥ कहे रविदास लग चरन गुरु, मन का हर अभिमान ॥
 वैसाख सुहावा तिनां है, हरि, हरि जपे सुजान ॥

"जेठ"

जेठ तपत बहु घाम कर, शांत ना होवत मीत ॥ क्रोध अगनि कर तपत, मन
 लोभी लोभ परीत ॥ सोहंग नाम मुखख जपत, जन कीरत करैह नीत ॥ संतां संग निवास
 कर, शांत भयो तिन चीत ॥ उतपत करे आप सभि, करे पालणा नीत ॥ प्रभू बिन दूजा
 नाहि को, कर निहचे परतीत ॥ तिस प्रभू को तूं जप सदा, होकर मनो नाचीत ॥ प्रभू
 सिमरन गुरु दया ते, नष्ट होत जम भीत ॥ सतगुरु के प्रताप ते, गावहु प्रभू गुण वाद ॥ सो
 किरण नेतर रसना नाम का, करण दीए सुण नाद ॥ सुंदर साजिया जाहि प्रभ, राख सदा
 तिस याद ॥ जो जन भगत बिहीन है, जनम जाए तिस बाद ॥ गुरु चरनी लग भगत कर,
 मिटह पाप अगाद ॥ कीरतन भगती तीसरी, रक्खो इन को याद ॥ जन रविदास गुरू
 सिमरिया, जो जन सदा आनाद ॥ जेठ तापंदा ना लग्गे, जिन चाखिया नाम सुआद ॥

“हाड़”

हाड़ अवध है घाम की, शांत अवध सुख जान ॥ लोभ अवध है पाप की,
कर भगत मिले हरि धाम ॥ गुर के चरन सु कंवल की, करहि सेव सुजान ॥ सगल
सृष्टि जैसे मलत है, चरण कंवल भगवान ॥ आठ पहिर गुर चरन मल, दृढ़ कर निहचे
ध्यान ॥ अन्तःकरण कर शुद्ध, तब होत पाप की हान ॥ पाप नष्ट गुर भगत ते, दर्शन
करहो नीत ॥ कारण भगत है मुक्त का, कर निहचे प्रतीत ॥ चरन भगत कर लछमी,
शक्ति भई सु मीत ॥ जगत चरन की शक्त तिस, भई सु जानो मीत ॥ भगति सु गुर के
चरन की, कर निहचे धर चीत ॥ गुर बिन और ना ध्यान धर, ऐह रविदास की रीत ॥
हाड़ शान्त सुख तिन जनां, जिन गुर भगत प्रीत ॥

“सावन”

सावण शान्त भई जगत में, बारश होए बशेस ॥ घर घर मंगलाचार है, नासे
सभी कलेश ॥ अन्न धन बहुता उपजिआ, गऊआं घास हमेश ॥ सुहागणि सदा आनन्द
है, दुहागणि मैला भेस ॥ कर पूजन गुर चरन की, शरधा साथ हमेश ॥ पान, सुपारी,
पुष्पकर पूजन करो हमेश ॥ अर्चना भगती पंचमी, गुर पूजा में ध्यान ॥ बिना इष्ट गुरुदेव
ते, पूजो देव ना आन ॥ गुरू हरि में ना भेद कुझ, कहयो आप सुजान ॥ निहचे कर गुर
चरन भज, होवत है कल्याण ॥ गुर समान नहीं और जग, जानत संत सुजान ॥ कहि
रविदास गुर चरन को, करत सदा ही ध्यान ॥

“भादरों” (भादों)

भादरों भरम भुलाइया, माया संग प्यार ॥ गुर बिन शांत ना पाए है, जनम मरन
में बारंबार ॥ जिन्हां विसारिया राम नाम, गुर चरनी नहीं प्यार ॥ धृग तिन का जीवणा,
कांहू आए संसार ॥ भवि जल मांहि भवदियां, ना उरवार न पार ॥ गुर चरन का आसरा,
जिन मन लीना धार ॥ कर डंडोत गुर चरन में, भवनिध उतरे पार ॥ गुरुदेव गुरु समझ
के, करीं शुकर विचार ॥ बन्दना भगती छठी ऐह, करे शिश वडभाग ॥ अवर करम सभ
त्याग कर, गुर की चरनी लाग ॥ गुर के चरन बहु प्रेम कर, माया मोह त्याग ॥ बिन गुर
भगत न थिर कछू, जगत पसारा बाग ॥ पूरन पुत्र प्रताप ते, जागियो इसो बराग ॥ सोएयो
मोह की नींद में, गुर किरपा भयो सुजाग ॥ रविदास गुरु चरन को, तू कभी नहीं त्याग ॥

“अस्सू”

अस्सू आसां पूरीयां, जब गुर भये दियाल ॥ चरनी लावो दास को, करो प्रभू
प्रतिपाल ॥ प्रेम तार गुरनाम मन, गल पावो माल ॥ दर्शन कर गुर चरन को, तब ही भये
निहाल ॥ गुर चरनी लग भगत कर, त्याग मोह का जाल ॥ गुर भगती तब पाईए, जो
होवे लिखिया भाग ॥ दासा भगती ऐही है, सपतम जानो लाल ॥ करो अभी पछताओगे,

“कतक”

कतक कर्म त्याग कर, भगत करो गुरुदेव ॥ सोहंग सोहंग जपंदिया, कर
संतन की सेव ॥ मात, तात और भ्रात ते, प्रिय जान गुरुदेव ॥ और सखा नहि जगत में,
जैसे है गुरुदेव ॥ सखा भगत ऐह अशटमी, कीती अर्जन देव ॥ सखा जान गुर भगत कर,
त्याग करो अहंमेव ॥ काम क्रोध हंकार तज्ज, तब्ब कछू पावै भेव ॥ सखा भगत सुभाव
यह, जिम जल्ल, दूध मलेव ॥ सरब करम को त्याग कर, हरि गुर जप दिन रैन ॥
बाझ नीर जिम मीन को, आवत नांही चैन ॥ चकवी करे विलाम जिम, कब ऐह जावे
रैन ॥ चंद चकोर को प्रीत जिम, मोर मुगध घन बैन ॥ सवास, सवास नहीं बिसरे, जिऊं
बच्छे को थैन ॥ जिम कामणि प्रसन्न अति, पती को देखत नैन ॥ कतक सवेर काम
सभ, जब गुर करना ऐन ॥ रविदास गुरुदेव चरन को, धोए धोए कर पैन ॥

“मध्वर”

चड़िया मध्वर हे सखी, गावो प्रभ के गीत ॥ संता संगत पाए कर, गुरुदेव
सिमरो नीत ॥ तन, मन, धन सभ अरप कर, ऐसी करो प्रीत ॥ त्याग लोभ मोह अहंकार
सभ, गुरुदेव की करो प्रीत ॥ गौण वाक सभ त्याग कर, संत वचन धर चीत ॥ तन मन
धन ऐह हंकार, आपणे कछहु ना मान ॥ गर्भ करत जो इनसे, सो नर है अनजाण ॥ आप
कछहु ना होत है, देणहार हरि धाम ॥ मैं कीया मैं करत हूँ, कूड़ा करहि माण ॥ हरि
का दीया सो गुर दीया, तैं की दीया आन ॥ तेरा इक हंकार है, अर्पण तिस को मान ॥
नव प्रकार दी भगत ऐह, सत गुरुदेव बिखान ॥ जन रविदास करे भगत जो, शुद्ध भयो
तिस मान ॥

“पोह”

मध्वर पूरा भया जब, तब चड़िया पोह मास ॥ सोहंग नाम तूं सिमर नित,
जग ते होए उदास ॥ अवर कामना सर्व तज्ज, सतगुर की कर आस ॥ सतगुर शरणी
लगियां, पाप होत सब नास ॥ सरवण करत गुरां ते, साधन ज्ञान बिलास ॥ वचन धार
गुरुदेव उर, सभ संसे होवन नास ॥ सतनाम उपदेश गुर, कर तूं दृढ़ अभ्यास ॥ वचन
गुरू परकाश कर, होत भरम सभ नास ॥ सरवण इस का नाम है, सुण सतनाम विचार ॥
सत सरूप परमात्मा, मिथिया जगत आसार ॥ तिस प्रभ को तूं सिमर मन, जो है सरब
आधार ॥ सतगुर शरनी लग कर, समझो सार आसार ॥ प्रभ बिन अवर ना जाण कछहु,

सब इक ब्रह्म पसार ॥ असथावर जंगम आदि सभ, जीया जंत निरधार ॥ जन रविदास
को बीतिआ अब सुन माघ विचार ॥ जन गुरुदेव हरि भेटिया, भवजल उतरे पार ॥

“माघ”

माघ महीना धर्म का, दृढ़ कर तू सतसंग ॥ संतां संग प्रीत कर, कदी ना होवे
भंग ॥ धूड़ संत के चरन की, सोई श्रेष्ठ है गंग ॥ पापां की मल्ल उतरे, चढ़े नाम का
रंग ॥ मनमुख संग ना कीजीए, पडत भजन में भंग ॥ दुःख बिनसे सुख लाभ होवे,
गुरुमुख जिन के संग ॥ नाम जपो मिल गुरुमुखां, जो है सदा आसंग ॥ तू वी प्रभ ते
भिन्न नहीं, जिऊं जल मांहि तारंग ॥ सोहंग नाम रग रग रचे, नाम का चढ़े जब रंग ॥
पंचो वैरी त्याग कर, तब होए निसंग ॥ गुरु प्रेमी गुरु की शरण गहि, करत खूब
विचार ॥ गुरुदेव के प्रताप बिन, समझे न सार असार ॥ करके दृढ़ उपदेश गुरु, भवनिधि
उतरे पार ॥ मन्द भाग बिन सतगुरां, डुब्बण भव निध धार ॥ सतगुरु के प्रसादि हम,
जानिया आत्म राम ॥ जानण जोग सु जानिया, जो आत्म निज धाम ॥ मिटिया गुमान गुरु
दया ते, पाया अब विसराम ॥ पुनने सगल मनोरथां, रहियो ना बाकी काम ॥ अनेक जन्म
दुःख पाए कर, आए गुरु की साम ॥ जिहड़े विच्छड़े तिह मिले, भये अभ आत्म राम ॥
सतगुरु के भजन बिन, नही अवर कुछ काम ॥ इको सोहंग सतनाम जीयो, सिमरो
आठो जाम ॥ सरवण कर गुरु वचन को, निसचे कर उपदेश ॥ निसवासर अभ्यास कर,
तज्ज कर सगल कलेश ॥ बुद्धबुदा फेन तरंग का, जल्ल ते भिन्न ना लेस ॥ सब भूखण
जिन कनक के, कंचन बिन ना शेष ॥ घटि मिट माटी रूप सब, और ना कछहु विशेष ॥
अनिक भांति पट जो भये, सूतर तिस का वेस ॥ रविदास गुरु चरन के, करहूं सदा
आदेश ॥

“फगन”

चड़िया फागण मास जब, फूली सभ गुलजार ॥ धरती सब हरियावली, सुंदर
बाग बहार ॥ बुल्लबुल्ल मसत बहार पर, भंवरा भई गुलजार ॥ निवण फल्ल बहु बाग
में, गलगल, आम, आनार ॥ गुरुमुख गुरु की शरण गहि, करते खूब विचार ॥ सतगुरु
के परताप कर, समजे सार आसार ॥ कर के दृढ़ उपदेश गुरु, भव निध उतरे पार ॥ मंद
भाग बिन सतगुरां, डुब्बण भव निध धार ॥ सतगुरु के प्रसादि हम, जानिया आत्म
राम ॥ जानण योग सो जानिया, जो आत्म निज धाम ॥ मिटिया गमन गुरु दया ते, पाया
अब बिसराम ॥ आनेक जन्म दुःख पाए कर, आए गुरु की शाम ॥ जिहड़े विच्छड़े तिह
मिलो, भये सो आत्म राम ॥ जन रविदास गुरु भजन बिन, नहीं अवर कछहु काम ॥
गुरु चरनों का ध्यान कर, सुण बारां मासक उपदेश ॥ पढ़े सुणे जो प्रेम कर, होवे
कल्याण हमेश ॥

“दोहरा”

धरत अकाश को थापिया, रैन दिवस नित पाल ॥ सर्व जीव के करम जो,
साहिब करे ख्याल ॥ आप अपना सभ पावते, किरत धुर परवान ॥ पवन पानी सवंतर के,
रखशक भये भगवान ॥ रविदास कहे भज नाम को, निरभै पावै वास ॥ तेरा फल तुझ को
मिले, होवे बंद खलास ॥

साहिब सतिगुरु रविदास महाराज जी दी

“सांद बाणी”

सोहंग सांद सोलकखिआ, सरब घटि । मिल गुरु नाम लगाइयो रट ॥ चौक
चतर जग जाण महान । पूरन हार जगत सो प्राण ॥ नानके, मापे, साक सोहेले । कर
किरपा सतगुरु प्रभ मेले ॥ हस्थ गाना, गणियो सो माल । किया पुत्र दान रचन आकाल ॥
कुंभ कमाल जनम, जन पाइयो । सुरत शब्द आनाज मिलाइयो ॥ भर जल, कुंभ कारज में
धरियो । तिव कारज सोपूरण करियो ॥ दीपक दिल, हंग तेल बिठाई । सुरत मिला, उते
जोत जगाई ॥ गुरु भरवासे, सो संधूर । नौं दर तों, नौं ग्रहि सभ दूर ॥ गुरुमुख सांद,
समझ सच सोई । सभ कारज, प्रभ ओट लै होई ॥ खोपा कारज, समगरी घिओ । इक
दर खतम सोगंदी भयो ॥ अब अंब, पत जगन जग जाग । सुरत शब्द मिल मंगल राग ॥
सब मिल प्रण, प्राण बिठाओ । संग गुरु सति विश्वास जमाओ ॥ कहे रविदास भज हरि
नाम । प्रभ सो ध्यान, सफल सब काम ॥

“अनमोल वचन”

(मिलनी के समय)

मेल मिलाइया दाते, मिलिया मिलणे के योग ॥ दिल जे मिलावे दाता, जांदे विछोड़े वाले रोग ॥ खुशीयां सतगुर बख्खो, उमरां दे जांदे ने वियोग ॥ तन, मन वारिया जावे, मिलणी आदर संग होग ॥ किरपा पग मसतक राखो, सतगुर सरब सिर योग ॥ प्रभ तों मिल के मांगो, पवे ना विछोड़े वाला भोग ॥ कहि रविदास पुकारै, जनमां दे जांदे सारे सोग ॥

साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज के मुखार बिंद से उच्चारण की हुई

लावों की विधि :-

“शादी उपदेश”

॥ एक ओंकार सोहंग सतनाम जीओ ॥

॥ दवैइया छंद ॥

“पहिलड़ी लांव”

पहिलड़ी लांव हरि दर्शन गुरां दा, जावे दूर बुलाई ॥ दीआ मेल हरि दया धार के, गुज्झी रंमझ चलाई ॥ अनहद शब्द सुणे मन थिर कर, मिट गए सरब अंधेसे ॥ किरपा सिंध गुर मिलिया पूरा, लिव लागी हरि भेसे ॥ पूरे गुर ते शब्द सच्च पाऐआ, रतन अमोलक मीता ॥ सुणदिआं ही मन मसत दीवाना, शब्द गुरां ने कीता ॥ महांवाक सुण, सुण के गुरु दे, शरधा प्रीत मन आवै ॥ कहि रविदास ऐह है लांव पहिलड़ी, चौंसठ तीरथ नहावै ॥

“दूजड़ी लांव”

दूजड़ी लांव प्रेम परीती, सुरत शब्द मिलाई ॥ सतगुर कीती परम परीती, दरगह में सुख पाई ॥ सरब मनोरथ तिस दर ते पाउ, शरण परै को तारै ॥ हुकम अन्दर है चार पदार्थ, तन, मन जेकर वारे ॥ सतगुर शरण रहि वडभागी, सहिसे सगल गुआए ॥ सतगुर दाता प्रभ संग राता, निस दिन हरि लिव लाए ॥ भरम भुलावा मिटिया दावा, चाल गुरां दी चाली ॥ कहि रविदास ऐह लांव दूजड़ी, बचन गुरां दे पाली ॥

“तीजड़ी लांव”

तीजड़ी लांव अवरन दोष ते, रहित भया मन मेरा ॥ हरि घटि दे विच ऐक समाना, सो घर पाया डेरा ॥ परम प्रभू परमेश्वर जाना, तां सुख मिले उपारै ॥ मन में

सच्च मंगल सुख होए, जो लोचा मन धारै ॥ मंगल दे मंगल नित गावां, ऐहो अमृत धारा ॥ हरि, हरि संग लिव जुड़ी जुड़ंदी, साचा ऐह सहारा ॥ सुंदर शब्द आमोलक दर्शन, जो सतगुर दर आवै ॥ कहि रविदास सो लांव तीसरी, सुरत गगन चढ़ जावे ॥

“चौथड़ी लांव”

चौथड़ी लांव रतन हरि जाना, सुख संपति घर आए ॥ आसा, मनसा सतगुर पूरे, जै, जै शब्द अलायि ॥ धीरे, धीरे गई पहुँच हुण, हो सतगुर दी दासी ॥ ना आवे, ना जावे कित वल, मिलिआ पुरख अविनाशी ॥ सति संतोख भया मन मेरे, सतगुर वचन सुनावै ॥ आया बेराग, मिलिया अविनाशी, जोड़ी जूड़ी सुहावै ॥ मन मंदर माँहैं चों उपजिया, प्रीत प्रभू संग लाई ॥ कहि रविदास सति लांव चौथड़ी, पुरखे पुरख मिलाई ॥

“सुहाग उसतत”

॥ एक ओंकार सोहंग सतनाम जीओ ॥

सुरत सुहागण गुरु देव प्यारी, सोहंग नाम संग खेली ॥ बहुत जनम दे विच्छड़िआं नूं, आण गुरां ने मेली ॥ झूठी खेड बिसर गई तन ते, बाजीगर सिऊं मेली ॥ सच्चा पुरख मिलाया परमेश्वर, तिस संग लाड लडेली ॥ आप समान आपणे कीती, आज्ञान नींद ते जागी ॥ भुल्ली चुक्की रसते पै गई, आतम सिऊं लिव लागी ॥ सरब विआपी सतगुर मेरा, सब दा करे सुधार ॥ कहे रविदास मन भया दीवाना, मिलिया अमृत धार ॥

साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज के मुखार बिंद से उच्चरित :-

“मंगलाचार”

“मंगलाचार पहिला”

हरि, हरि नाम धियाओ, सदा मन प्रेम कर ॥ लोभ, मोह, हंकार, दूत, जंम दूर हरि ॥ सच, शील, संतोख, सदा दृढ़ कीजीए ॥ अमृत हरि का नाम, प्रेम कर पीजीए ॥ संतां संग निवास, सदा चित्त लोड़ीए ॥ मनमुख दुष्टा संगत, तों मन मोड़ीए ॥ मनमुख चित्त कठोर, पत्थर सम जानीए ॥ भीजत नाहन कभी, रहे विच पानीए ॥ तजि कठोर का संग, सदा गुर शरण गहु ॥ गुर चरनन में ध्यान, सदा मुख्ख राम कहु ॥ निज पती साथ प्रीत, सदा मन कीजीए ॥ तन, मन अरपे तांह, सदा सुख लीजीए ॥ निज पती साथ प्रीत, साई सोहागणी ॥ पती बिन आन ना हेरे, सा बडिभागणी ॥ जिन धन पती परमेश्वर, जानयो, है सही ॥ सदा सुहागण नार, पाए दुःख ना कही ॥ कहि रविदास पुकारे, जपयो नाम दोए ॥ हरि कारज सो एक, सदा सुख माणो दोए ॥

“मंगलाचार दूसरा”

दूजा भाओ मिटाओ, मंगल दूसरा ॥ बण, तृण परबत, पूर रहयो, प्रभ हूंसरा ॥ घटि, घटि ऐको, अलख, पसारा पसरिया ॥ गुरमुख जाने ज्ञान, ना जाने असरिया ॥ सभ घटि पूरण ब्रह्म, जान गुर पाएके ॥ रहे सदा आनन्द, तास गुण गाए के ॥ जो हरि ते बे-मुख, सदा दुःख पायि है ॥ मानस जनम आमोल, बिअरथ गुआयि है ॥ गुर बिन लहे ना धीर, पीर बहु पायि है ॥ लहे अनादर सरब, ठऊर जहा जायि है ॥ जब गुर भये दियाल, सो चरनी लाया ॥ सतगुर काटे बंधन, नाम जपाया ॥ साध संग प्रताप, सदा सुख पाइए ॥ संतन के प्रताप, नाम हरि ध्याइये ॥ संतन के प्रताप, पती प्रभ पाइए ॥ मिलिया अटल सुहाग, वियोग गवाइए ॥ संगत तों आशीर्वाद, इस जोड़ीए ॥ कहि रविदास इन संग, सदा सुख लोड़ीए ॥

“मंगलाचार तीसरा”

रलि मिल सखीयां, मंगल गाया तीसरा ॥ सदा जपो हरि नाम, ना कबहू बीसरा ॥ सतगुर के लग चरन, सदा हरि गाइए ॥ रिद्ध सिद्ध नौ निद्ध, सभी कछहू पाईए ॥ सतगुर के प्रसाद, अटल सुहाग है ॥ सतगुर भये दिआल, तां जागियो भाग है ॥ सतगुर दर्शन पायि, मिटे अघ सरब ही ॥ पाइयो शील निधान, मिटाए गरब ही ॥ रहिया ना संसा मूल, जिन्ही गुर पाया ॥ हिरदे भया प्रकाश, अज्ञान मिटाया ॥ बिन हरि नाम ना सार, कछहू संसार है ॥ हरि का नाम ध्यावै, भवि निद्धि पार है ॥ मंगल महान सो मंगल, हरि हरि नाम है ॥ आठ पहिर मुख जपो, ऐही शुभ काम है ॥ सच रविदास बतावे, नाम

ना छोडीए ॥ गुर चरनन में ध्यान, सदा मन जोड़ीए ॥

“मंगलाचार चौथा”

मंगल चार आनन्द, सुखी मुख गाया ॥ कारज भया सुहेला, हरि हरि ध्याया ॥ धन और पिर की, प्रीत बणी इक सार है ॥ घटा, छटा सम मिली, मीन जिम वार है ॥ पिर संग पाए आनन्द, ना दुःख की लेस है ॥ पती की आज्ञा में, जो रहे हमेश है ॥ पती परमेश्वर करके, जिन धन जाणिया ॥ सदा सुखी बहु नार, सरब सुख माणिया ॥ जिन पर सतगुर दयाल, सुखी बहु गाइए ॥ महिमा अपर अपार, ना कीमत पाइए ॥ सतगुर के संग, तरे अवर वी केतड़े ॥ कर के दृढ़ प्रीत, प्रेम करो जेतड़े ॥ कारज सब ही पूरे, सतगुर कर दीए ॥ पूरब पुत्र अनेक फल तिस अब लीए ॥ जन रविदास प्यास, सदा गुर नाम की ॥ हरि संग रहे प्रीत, ओट इक नाम की ॥

“अनमोल वचन”

(लड़की और लड़के के लिए)

प्रणवंते प्रण घड़ी, सोहाई जीओ ॥ प्रभ कृपा ते आण, मिलाई जीओ ॥ प्रण प्रणवंते प्रण, धारन की जीओ ॥ प्रण में एक नाम, सो ली जीओ ॥ पती घर पतनी, एक रसायण जीओ ॥ मात बड़ी, छोटी सम, भैण जीओ ॥ पती परमेश्वर, सम नहीं देव जीओ ॥ पूजन, सेवन सम, नहीं मेव जीओ ॥ पवन अगन, जल, जन हमराई जीओ ॥ सूरज, धरत, संगत, चंन अगवाई जीओ ॥ बहुत जनम विछड़त, वियोग जीओ ॥ सुरत शब्द वियोग, संजोग जीओ ॥ प्रण करते, प्रण तोड़, निभाओ जीओ ॥ लोक कुसंग फरक, नहीं पाओ जीओ ॥ जन रविदास निभउ संग, सोई जीओ ॥ गुर किरपा ते, प्राप्त होए जीओ ॥

भाग - 3

1. सर्वव्यापक राम

रविदास हमारे राम जी दसरथ करि सुत नांहि ॥

राम हंमि मंहि रमि रह्यो बिसब कुटंबह मांहि ॥१॥

गुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि जिस राम का मैं नाम सिमरन करता हूँ

वह दसरथ का पुत्र राम नहीं है। मेरा राम तो सर्वव्यापक है। ऐसा राम मेरे हृदय और संसार रूपी परिवार में समाया हुआ है।

रविदास हमारो राम तो सकल रह्यो भरपूरि।

रोम रोम मंहि रमि रह्यो राम मसूक न दूरि ॥२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि मेरा राम तो सारे ब्रह्माण्ड के कण-कण में समाया हुआ है। राम रूपी पति अपनी साधिका रूपी सुहागिन स्त्री से कभी दूर नहीं होता।

सर्व बिआपक राम हइ नांह कोउ इक ठांम।

सतगुरु साहिब सखा भयो रविदास हमारो राम ॥३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि प्रभु राम सर्वव्यापक है, उसके रहने का कोई एक ठिकाना नहीं है। सतिगुरु की कृपा से सर्व-व्यापक राम जीव का सहायक बन जाता है।

सर्व निवासी राम जू सब घट रह्यो समाइ।

रविदास नाम चकमक बिना हक नूर अद्रिस्टाइ ॥४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि राम तो सर्व-निवासी है और संसार के कण-कण में समाया हुआ है। पर प्रभु की सत्य ज्योति का प्रकाश उस समय तक न तो देखा जा सकता है और न ही अनुभव किया जा सकता है जब तक प्रभु के सिमरन के बिना जीव उसके नाम रूपी सच्चे प्रकाश की अनुभूति नहीं कर सकता।

सब घट मेरा सांझ्यां जलवा रह्यो दिखाइ ॥

रविदास नगर मंहि रम रह्यो कबहु न इत उत जाइ ॥५॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि मेरा स्वामी प्रभु कण-कण में व्यापक होकर अपना चमत्कार दिखा रहा है। मेरा प्रभु संसार रूपी नगर में बसा हुआ है। वह कभी भी अलग होकर इधर-उधर नहीं जा सकता।

सब घट माहिं रमि रह्यो रविदास हमारो राम।

सोइ बूझै राम कूं जो होइ राम गुलाम ॥६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरा सर्व-व्यापी राम संसार के सारे जीवों में रमा हुआ है। पर उस सर्व-व्यापक राम को वही जीव जान सकता है जो उसका सेवक (गुलाम) बन जाता है।

घट घट बिआपक राम है रामहि बूझै कोय ।

रविदास बूझै सोइ राम कूं जउ राम सनेही होय ॥७॥

श्री गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि राम तो सर्वव्याप्त है पर उसकी पहचान तो कोई विरला जीव ही कर सकता है। उस प्रभु को तो केवल वही जीव जानता है जो उस प्रभु से सच्चा प्रेम करता है।

रविदास हों खालिक देखिआ सकल रह्या भरपूर ।

सब दिसि देखहुं बिआपिआ खालिक का ही नूर ॥८॥

गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं प्रभु को सारे संसार में रमा हुआ अनुभव करता हूँ एवं मैं सब दिशाओं में उस प्रभु के नूर को व्यापक देख रहा हूँ।

मुकुर मांह परछांइ ज्युं पुहुप मधे ज्यो बास ।

तैसउ ही श्रीहरि बसै हिरदै मधे रविदास ॥९॥

श्री गुरु रविदास जी महाराज उच्चारण करते हैं कि जैसे दर्पण में परछाई रहती है और फूलों में सुगंधि बास करती है ऐसे ही प्रभु सदैव ही सब के मन रूपी मंदिर में निवास करता है।

रविदास पीव इक सकल घट बाहर भीतर सोइ ।

सब दिस देखऊ पीव पीव दूसर नांहि कोइ ॥१०॥

गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि मेरा प्रीतम कण कण में समाया हुआ है। जीव के भीतर और बाहर वह प्रभु बसा हुआ है। मुझे चारों ओर उस प्रभु ही अनुभव हो रहा है। उसके समान कोई दूसरा नहीं है।

एकै ब्रह्म है सकल मांहि अर सकल ब्रह्म मांहि ।

रविदास ब्रह्म सब बेष मांहि ब्रह्म बिना कछु नांहि ॥११॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सारे संसार में केवल एक ही ब्रह्म बसा हुआ है और सारा संसार उस ब्रह्म में समाया हुआ है। जो कुछ इस संसार में है वह सब प्रभु का ही रूप है, उस एक प्रभु के बिना और कुछ भी नहीं है।

गगन मंडल पिअ रूप सों कोट भान उजियार ।

रविदास मगन मनुआ भया पिआ निहार निहार ॥१२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि अकाल पुरुष के प्रकाश से सारा गगन मंडल जगमगा रहा है। उस स्वामी का करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश है। उस प्रीतम के दर्शन करके आनन्दित हो गए हैं और मन मग्न हो गया है।

रविदास पिअ बिनु जगत मंह सूनी सेज न कोइ ।

जिन देखूं तित पिअ कर प्रगट मोजरा होइ ॥१३॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु प्रीतम के बिना संसार में सूनी सेज कोई भी नहीं है भाव प्रभु सारे ब्रह्माण्ड के कण कण में विराजमान है। मैं जहाँ भी देखता हूँ

वहीं परमात्मा के दर्शन होते हैं।

सभ नूरन कर नूर जउ सब तेजन मंह तेज ।

रविदास हमारे पीव करि सब सों अदभुत सेज ॥१४॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरा प्रभु प्यारा सारे नूरों का नूर है, सभी ज्योतियों को जगाने वाली ज्योति है और महान तेजस्वी है। मेरे प्रीतम के मिलने का स्थान भाव प्रकाशमयी रूपी सेज संसार की सभी सेजों से अद्भुत और आनन्दमय है।

रविदास जगत मंह राम सम कोउ नांहि उदार ।

गनी गरीब नवाज प्रभु दीनन के रखवार ॥१५॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरे प्रभु के समान सब का भला करने वाला संसार में कोई दूसरा नहीं है। वह बड़ा दयालु और धनी है, गरीबों को निवाजने (मान देने) वाला और रक्षक है।

2. मन मन्दिर में पी बसै

काबे अरु कैलास मांहि जिह कूं दूढण जांह ।

रविदास पिआरा राम तउ बैठ रहा मन मांह ॥१६॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि हे जीव! जिस प्रभु को तू काबे और कैलाश पर दूढने के लिए जाता है, वह प्रभु प्यारा तेरे मन रूपी मन्दिर में विद्यमान है। तुम उसकी खोज बाहर भटकने की बजाए अपने भीतर ही करो।

बाहर खोजत का फिरइ घट भीतर ही खोज ।

रविदास उनमनि साधिकर देखहु पिआ कूं ओज ॥१७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! तू प्रभु को बाहर क्यों खोज रहा है? वह तो तेरे मन रूपी मन्दिर में विद्यमान है। इस लिए उस प्रभु की तू अपने भीतर ही खोज कर। जिस समय समाधि लगा कर उस प्रभु की खोज करेगा तो तू तुरिया अवस्था में पहुँच कर उस प्रभु के प्रकाश का दर्शन कर लेगा।

बन खोजइ पिअ न मिलहिं बन मंह प्रीतम नांह ।

रविदास पिअ है बसि रह्यो मानव प्रेमहि मांह ॥१८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जंगल में दूँढने से प्रभु की प्राप्ति नहीं होती क्योंकि वह प्रभु जंगलों में नहीं मिलता वह प्रभु तो हर जीव में बस रहा है। इस लिए जीवों से प्रेम करके ही उसकी प्राप्ति होती है।

बन खोजन का जाइ रे राम अलोपा नांह ।

सर्व बिआपी राम तौ रविदास सभन कै मांह ॥१९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! जंगल में प्रभु को दूँढने के लिए क्यों जाते हो, वह प्रभु केवल जंगल में अलोप नहीं हुआ। प्रभु तो सर्वव्याप्त है और वह कण-कण में विद्यमान है।

राघो किस्त्र करीम हरि राम रहीम खुदाय ।

रविदास मेरे मन बसहिं का खोजहूँ बन जाय ॥२०॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु को राघव, करीम, रहीम, कृष्ण, राम, खुदाय आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है। पर सर्वव्यापी प्रभु मेरे मन में ही बसता है। प्रभु को जंगलों में जाकर खोजने की आवश्यकता नहीं है। उस प्रभु की खोज अपने भीतर ही करनी चाहिए।

3. ओंकार सत्तनाम

ओंकार है सत्त नाम आदि जुगादि सभ सति ।

रविदास सत्त कहि सामुंहे टिकवै नांहि असति ॥२१॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि एक प्रभु का नाम ही सत्य नाम है जो कि आदि से और युगों-युगान्तरों से सत्य है। उस सत्य प्रभु के सामने असत्य टिक नहीं सकता भाव उस सत्य प्रभु के नाम के आगे असत्य रूपी माया का नाश हो जाता है।

जौ लौ घट मंहि परान हैं तौ लों जपउ सत्तनाम ।

रविदास परम पद पाइहि जिन्ह घटि बसियो राम ॥२२॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! जब तक तेरे शरीर में प्राण है तब तक तू सत्य नाम का जाप कर। सत्य नाम का जाप करने से तुम्हारे भीतर जो परमात्मा निवास करता है उसकी प्राप्ति कर तू परम पद को प्राप्त कर ले।

सति ईश कहुं रूप है ता सकति अत अपार ।

रविदास सत्त कूं धारणा देइहि पाप निबार ॥२३॥

सत्य तो प्रभु का ही रूप है और सत्य की शक्ति अनंत है। सत्य को धारण करने से ही सब पापों का नाश हो जाता है।

सत्त सक्ति सों होत है सभ पापन का नास ।

बधिरा सत्त सों बोध लेइ सत्त भाषै रविदास ॥२४॥

सत्य एक महान् शक्ति है जो पापों का नाश कर देती है। हे प्रभु को भूले हुए बहरे जीव! तू सत्य की पहचान कर उस प्रभु से जुड़ कर ज्ञान प्राप्त कर ले। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं यह सत्य कहता हूँ।

रविदास सत्त इक नाम है आदि अंत सच्चु नाम ।

हनन करेइ सब पाप ताप सत्त सुखन करि खान ॥२५॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं सत्य प्रभु का एक नाम है। आदि से लेकर अंत तक सत्तनाम है। यह जीवों के सारे पापों और तीन तापों को नष्ट कर देता है और सुखों की खान है।

जिन्ह नर सत्त तिआगिया तिन्ह जीवन मिरत समान ।

रविदास सोई जीवन भला जहं सभ सत्त परधान ॥२६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जिस जीव ने सत्य को त्याग दिया है वह जीते जी ही मरे हुए के समान है। उस जीव का जीवन ही श्रेष्ठ है जो सभी तरह सत्य को प्रमुख मानता हुआ प्रभु का सिमरन करता है।

रविदास सत्त मति तिआगिए जौ लौं घट मंहि प्रान ।

सत्त भ्रिस्ट करि जगत मंहि सदा होत अपमान ॥२७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! जब तक तेरे शरीर में प्राण है तब तक सत्य को नहीं त्यागना चाहिए। सत्य को त्याग करने वाले जीव का संसार में सदा अपमान होता है।

कायम दायम राम इक दायम सत्त इमान ।

रविदास राम अरु सत्त बिन बिरथा सभ कछु जान ॥२८॥

एक प्रभु ही सदैव रहने वाला है और दूसरा सच्चाई और ईमान। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु और सच्चाई के बिना सब कुछ व्यर्थ है।

रविदास सत्त करि आसरे सदा सत्त सुख पाय ।

सत्त इमान नहिं छांडिए जग जाय तउ जाय ॥२९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सच्चे प्रभु के सहारे जीव हमेशा सच्चा सुख पाता है। जीव को सच्चा ईमान नहीं छोड़ना चाहिए चाहे संसार के सभी प्राणी नाराज क्यों न हो जाए भाव चाहे सारा संसार नाराज हो जाए जीव को सच्चाई का रास्ता नहीं छोड़ना चाहिए।

रविदास सत्त मत छाड़िए जौ लौं घट में प्रान ।

दूसर कोउ धरम नांहि जग मंहि सत्त समान ॥३०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव को कभी भी सच का त्याग नहीं करना चाहिए, जब तक जीव के अंदर प्राण है। सत्य के बिना संसार में कोई दूसरा धर्म नहीं जो सच के समान हो।

अंतकरन अनभउ करहि तउ मानहु सब सत्त ।

रविदास निज अनुभउ मंहि सत्त मंहि जानिहं सत्त ॥३१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब जीव अपने अंतःकरण में प्रभु को अनुभव करता है तो जीव को परम -सत्य का ज्ञान होता है। जीव उस निज से ही सत्य में जो परम -शक्ति है उसे जान लेता है।

जहं अंध विश्वास है सत् परख तंह नाहिं ।

रविदास सत् सोई जानिहं जौ अनभउ होइ मन मांहि ॥३२॥

जिस जीव के मन में अंधविश्वास होता है वह सत्य को परख नहीं सकता।

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सत्य की परख तो मन में सत्य का अनुभव करने से ही होती है।

जो नर सत्य न भाषहिं करहिं बिश्वासघात।
तिन्हहुं सो कबहुं भुलिहि रविदास न कीजहि बात ॥३३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव सच नहीं बोलते और दूसरों के साथ विश्वास घात करते हैं ऐसे जीवों के साथ कभी भूलकर भी नहीं बोलना चाहिए।

जउ नाहीं था सरिस्टि मांहि सोउ होइहि नांह।
रविदास इस्ट सर्वत है रहइ सरिस्टिहि मांह ॥३४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि अगर प्रभु सृष्टि के आरम्भ में नहीं था तो उसकी उपस्थिति अब भी नहीं होनी चाहिए पर वह सब का इष्ट प्रभु सृष्टि के आदि में भी था, अब भी है, और आगे भी रहेगा भाव वह सृष्टि में सदैव विद्यमान है।

अंतर्मुखी भइ जउ करहिं सत्तनाम करि जाप।
रविदास तिन्ह सौं भजहुहिं भागहि तीन्हहु ताप ॥३५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव अंतर्मुखी होकर अपने मन में सत्य नाम का जाप करता है, उससे संसार के तीन ताप आधि, व्याधि और उपाधि दूर चले जाते हैं।

इड़ा पिंगला सुखम्णा बिध चक्र प्रणायाम।
रविदास हौं सबहि छांड़ियों जबहि पाइहु सत्तनाम ॥३६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव इड़ा, पिंगला, सुषमना नसों और प्राणायाम द्वारा विधि चक्रों के घेरे को छोड़ कर सत्य नाम का सिमरन करता है उसको प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

इक चिंता सत्त नाम की दरसाइहु परम तत्त।
सहज परम भगति भई रविदास पाइहि ब्रह्म सत्त ॥३७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मुझे चिंता केवल सत्य नाम के सिमरन करने की है जो परम तत्त्व प्रभु से मिलाता है। ऐसी सहज अवस्था रूपी भक्ति को प्राप्त कर मुझे पारमब्रह्म की प्राप्ति हो गई है।

रविदास अराधहु देवकूं इकमन हुइ धरि ध्यान।
आजपा जाप जपत रहहु सत्तनाम सत्तनाम ॥३८॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि हे जीव! परमात्मा की आराधना करो। एक चित्त होकर उसका ध्यान धरो। उस प्रभु के सच्चे नाम का सिमरन करने से तुम में अजपा भाव सत्य नाम का जाप करने की धुन हर समय चलती रहेगी।

जा देख्या धिन ऊपजै नरक कुंड मंहि बास।

प्रभु भगति सों ऊधरै प्रगटत जन रविदास ॥३९॥

जिस जीव के छोटे कर्मों को केवल देखने से ही घृणा पैदा होती है उस जीव का नरक कुण्ड में निवास होता है। पर प्रभु की प्रेमा-भक्ति करने से बुरे कर्मों का नाश होता है और जीव का कल्याण होता है। गुरु जी फरमाते हैं कि प्रभु के प्रेमी संसार में उजागर हो जाते हैं।

हरि सो हीरा छांडि कै करै आन की आस।
ते नर जमपुर जांहिगे सत भाषै रविदास ॥४०॥

जो जीव संसार में सबसे अमूल्य हीरे से भी श्रेष्ठ प्रभु के नाम रूपी हीरे को छोड़कर कोई और इच्छा रखता है तो वह जीव नरक में जाता है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं यह सत्य कहता हूँ।

रविदास मानुष जन्म मंह हौं चितंतु गुरु एक।
आदि अंत जो सतगुरु राखै सभन की टेक ॥४१॥

सतगुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं मनुष्य जन्म में एक प्रभु (गुरु) का ही सिमरन करता हूँ। सृष्टि के आदि से लेकर अंत तक सदैव रहने वाला प्रभु ही मेरा सतगुरु है और वह सभी का रक्षक है।

4. नशे का त्याग

रविदास मदुरा का पीजियै जो चढ़ै चढ़ै उतराय।
नाम महारस पीजियै जौ चढ़ै नांहि उतराय ॥४२॥

गुरु रविदास जी जीवों को झूठे नशे मदिरा इत्यादि का त्याग करने का उपदेश देते हैं कि हे जीवो! मदिरा का क्या पीना? जिसके बार बार पीने से नशा चढ़ कर उतर जाता है। प्रभु के नाम रूपी महा-रस भाव श्रेष्ठ रस को पीना चाहिए जो एक बार चढ़ जाता है तो उतरना ही नहीं।

5. ब्रह्म बूंद

रविदास लोरै जिस बूंद कूं सो बूंद समुंद समान।
अंतर खोजी कूं मिलइ ब्रह्म बूंद कौ ग्यान ॥४३॥

सतगुरु रविदास जी जीवों को पावन उपदेश देते हैं कि हे जीव! जिस प्रभु के नाम रूपी अमृत बूंद के लिए तू खोज करता है उस प्रभु के नाम की एक बूंद समुद्र के तुल्य है। जिसकी कोई सीमा नहीं है, अपने अंदर प्रभु की खोज करने से ब्रह्मनन्द रूपी बूंद का ज्ञान होता है।

इक बूंद सौं बुझ गई जनम जनम की प्यास।
जनम मरन बंधन टूटई बये रविदास खलास ॥४४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ब्रह्म आनन्द रूपी अमृत की एक बूँद से ही जीव के जन्म जन्मांतरों की प्यास बुझ जाती है, जिस से जीव के जन्म-मरण रूपी बँधन टूट जाते हैं और जीव मुक्त हो जाता है।

अमरित रस इक बूँद कूँ तलफत हों दिन रैन।

रविदास अमीरस बिन पियै जियरा न पावै चैन ॥४५॥

प्रभु के ब्रह्म आनन्द रूपी अमृत के रस की एक बूँद के लिए मेरा मन दिन रात व्याकुल रहता है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब तक वह अमृत रस की बूँद मुझे प्राप्त नहीं हो जाती तब तक मेरे मन को सुख नहीं मिलेगा। भाव मेरा मन बेचैन रहता है।

6. एकै माटी के सब भांडे

एकै माटी के सभ भांडे एकौ सिरजनहार।

रविदास व्यापै एकौ घट भीतर एकै घड़े कुम्हार ॥४६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जैसे एक कुम्हार एक ही मिट्टी से अनेक तरह के बर्तन तैयार करता है, ऐसे ही संसार के सब जीवों को एक ही मिट्टी भाव पाँच तत्त्वों वायु, जल, धरती, अग्नि और आकाश से एक प्रभु ने पैदा किया है। सब जीवों को एक ही मिट्टी भाव पाँच तत्त्वों वायु, जल, धरती, अग्नि और आकाश से एक प्रभु ने पैदा किया है। सब जीवों में प्रभु विद्यमान है। सब जीवों को बनाने वाला एक ही प्रभु है, इस लिए संसार के सभी जीव एक समान हैं।

रविदास उपिजेइ इक बूँद ते का ब्राह्मन का सूद।

मूरिख जन न जानइ सभ मंहि राम मजूद ॥४७॥

श्री गुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि सारे संसार के जीव प्रभु की एक बूँद से पैदा हुए हैं चाहे वह ब्राह्मण है या शुद्र, पर मूर्ख जीव इस बात को नहीं जानते कि संसार के सब जीवों में प्रभु का अंश-आत्मा विद्यमान है। इस लिए सब जीव समान हैं।

रविदास इक ही बूँद सों सब ही भयो वित्थार।

मूरिख है जो करत हैं बरन अबरन बिचार ॥४८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि एक ही ब्रह्म बूँद से सारे संसार की रचना हुई है। सारा ब्रह्माण्ड उस प्रभु का विस्तार है। इस लिए संसार के सभी जीव समान हैं, पर वह जीव मूर्ख हैं जो वर्ण-ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, क्षत्रिय और अवर्ण भाव डोम, चंडाल, मलेश इत्यादि भेद-भाव और ऊँच-नीच की विचार करते हैं।

इक जोति से जउसभ उपजैं तउ ऊँच नीच किस मान।

रविदास नाम कत धरैं कहुं को नाद बिंद है समान ॥४९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु की एक ज्योति से संसार के सब जीव पैदा हुए हैं तो जीवों को ऊँचा-नीचा क्यों समझा जाए? जीव से ऊँच-नीच का भेद-भाव क्यों किया जाता है जबकि सभी जीव नाद और बिंद से पैदा हुए एक समान हैं।

रविदास एकै ब्रह्म का होइ रहो सगल पसार।

एकै माटी सब घट सृजै एकै सभ कूं सरजनहार ॥५०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि एक ब्रह्म का सारे संसार में विस्तार हो रहा है। एक ही मिट्टी से सब बर्तन बने हैं भाव संसार के सभी जीव पाँच तत्त्वों से बने हैं। सब जीवों की रचना करने वाला एक ही सृजक अर्थात् प्रभु है।

रविदास एक ही नूर ते जिमि उपज्यो संसार।

ऊँच नीच किह बिध भये बाह्यन अरु चमार ॥५१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु के एक ही नूर से सारे संसार की उत्पत्ति हुई है और सभी प्राणियों में उस प्रभु की ज्योति है तो किस प्रकार से ब्राह्मण और चमार में भेद हो सकता है? भाव ब्राह्मण और चमार अर्थात् सभी जीव एक समान हैं।

रविदास एकै ब्रह्म बूँद सों सगल पसारा जान।

सभ उपज्यो इक बूँद सों सब ही एक समान ॥५२॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! एक प्रभु की बूँद से सारे संसार के पासारे को जान क्योंकि सब जीव प्रभु की एक ज्योति से पैदा हुए हैं और सब जीव एक समान हैं।

ब्राह्मन अरु चंडाल मंहि रविदास न अंतर जान।

सभ मेहि एक ही जोति है सभ घट एक भगवान ॥५३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ब्राह्मण और चण्डाल में कोई भेद नहीं है। सब जीवों में एक ही प्रभु की ज्योति समाई हुई है और सभी में उसका वास है।

इक नजिर सों सभकूं देखे सरिस्टि का सिरजनहार।

सब घट व्यापक अलख निरंजन कहि रविदास चमारा ॥५४॥

सृष्टि का सृजक प्रभु सब जीवों को समान दृष्टि से देखता है भाव सब को एक समान देखता है। वह प्रभु अलिख जो लिखा नहीं जा सकता, निरंजन-माया से मुक्त कण-कण में व्यापक है। सतगुरु रविदास जी महाराज जी फरमाते हैं कि मैं चमार यह कथन करता हूँ।

7. सब में नूर है एक प्रभु का

सभ मंहि एक रामह जोति एकहि सिरजनहार ॥

रविदास रामहि सभन मंहि बाह्यन हुई क चमारा ॥५५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सब जीवों में एक प्रभु की ज्योति है और सभी की सृजना करने वाला भी एक प्रभु ही है। वह प्रभु सब जीवों में बसा हुआ है चाहे कोई ब्राह्मण हो या चमार भाव सभी मानव समान है।

रविदास जो करता सरिस्टि का वह तो करता एक।

सभ मंहि जोति सरूप एक काहे कहूँ अनेक ॥५६॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि सारी सृष्टि की रचना करने वाला प्रभु एक ही है और केवल उसी की ज्योति का स्वरूप ही सभी में विद्यमान है। फिर उसको अनेक कैसे कहा जा सकता है भाव प्रभु एक से अनेक रूप धारण कर सारे संसार में समाया हुआ है।

रविदास हों देख्या सोधि कर साहिब भेष अनंत।

एकै आतम घट घट रमै सब दिसि एकउ भगवंत ॥५७॥

श्री गुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैंने पूरी तरह जाँच-परख कर देखा है कि उस साहिब के रूप अनंत है और वह एक प्रभु अनेक रूप धारण कर कण-कण में रमा हुआ है। सब दिशाएँ भाव हर तरफ वह एक प्रभु ही विराजमान है।

8. एक प्रभु के नाम अनेक

आद अंत जिह कर नहीं जिह कर नाम अनंत।

सभ करि पालन हार है रविदास अबिगत भगवंत ॥५८॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि उस प्रभु का आदि और अंत नहीं जाना जा सकता। उसके अनेकों नाम हैं। सब की पालना करने वाला प्रभु है और उसका आदि-अंत नहीं जाना जा सकता।

रविदास एक जगदीस कर धरै अनंतह नाम।

मोरे मन में बसि रह्यो अधिमन पावन राम ॥५९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं एक जगदीश प्रभु को अनेक नामों से याद किया जाता है। मेरे मन में पापों को पवित्र करने वाले ऐसे प्रभु का नाम बस रहा है।

रविदास हमारो सांझ्यां राघव राम रहीम।

सभ ही राम को रूप हैं केसो क्रिस्न करीम ॥६०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह प्रभु हमारा स्वामी है जिस को राघव, राम और रहीम भी कहा जाता है। संसार के सभी जीवों में प्रभु के रूप विद्यमान हैं। ऐसे प्रभु को केसो, कृष्ण, करीम इत्यादि अनेक नामों से याद किया जाता है।

रविदास कोउ अल्लह कहइ कोउ पुकारइ राम।

केसउ क्रिस्न करीम सभ माधउ मुकंदहु नाम ॥६१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि उस प्रभु को कोई अल्लाह और कोई राम कह कर पुकारता है और उसको कृष्ण, करीम, माधो, मुकुंद इत्यादि सभी नामों से स्मरण किया जाता है।

सामी सिरजन हार है राम रहीम खुदाय।

रविदास हमारो मोहना पावन केसो राय ॥६२॥

प्रभु ही सारे संसार का सृजक है। उसको राम, रहीम, खुदाय इत्यादि नामों से स्मरण किया जाता है। गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि हमारा सुंदर प्रभु पापियों को पवित्र करने वाला है।

अलख अलह खालिक खुदा क्रिस्न करीम करतार।

रामह नाउ अनेक हैं कहै रविदास बिचार ॥६३॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैंने विचार करके यह जाना है कि उस प्रभु को अलख, अल्लाह, कृष्ण, करीम, करतार और राम इत्यादि अनेक नामों से याद किया जाता है। उस प्रभु के नाम अनेक हैं।

9. संकट में सहारा प्रभु

जब जब फैलेइ जगत मंहि कुड़ पाप अंधिकार

तब तब राखै हथ देई रविदास इक राम हमार ॥६४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब भी संसार में झूठ, पाप और अंधकार फैल जाता है, तब तब ही झूठ, कपट, पाप और अंधकार को दूर करने के लिए मेरा सर्वव्यापक प्रभु संसार की रक्षा करता है।

रविदास आस इक राम की अरु न करहु कोउ आस।

राम छांड़ि औरन रमिहँइ रहंइ सदा निरास ॥६५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरा भरोसा तो केवल एक प्रभु पर ही है और उसके अलावा और किसी पर भी मुझे भरोसा नहीं है। जो जीव प्रभु को छोड़कर किसी दूसरे देवी-देवते की उपासना करते हैं वे सदा निराश रहते हैं।

10. प्रभु मिलन की जुगती

माथे तिलक हाथ जप माला जग ठकने कूं स्वांग बनाया।

मारग छांड़ि कुमारग डहिकै सांची प्रीत बिन राम न पाया ॥६६॥

सतगुरु रविदास जी महाराज आडम्बरों का विरोध करते हुए पावन उपदेश देते हैं कि अगर कोई जीव माथे ऊपर तिलक लगाकर और हाथ में माला पकड़ कर संसार के लोगों को ठगने का ढोंग रचाये तो वह जीव प्रभु के सच्चे मार्ग को छोड़ कर कुमार्ग पर चल कर भटकता रहता है। उसको सच्ची प्रीति के बिना आडम्बरों से प्रभु की प्राप्ति नहीं होती।

देहरा अरु मसीत मंहि रविदास न सीस निवाय ।

जिह लौं सीस निवावना सो ठाकुर सभ थाय ॥६७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मन्दिर और मस्जिद में जाकर प्रभु भक्ति के लिए शीश झुकाना आवश्यक नहीं है। जिस प्रभु या अल्लाह को मन्दिर या मस्जिद में विद्यमान समझ कर शीश झुकाया जाता है वह प्रभु या खुदा तो सर्व-व्यापक है भाव कण-कण में विराजमान है।

रविदास न पुजइ देहरा और न मसजिद जाय ।

जंह तंह इस का बास है तंह तंह सीस निवाय ॥६८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं न मन्दिर में बैठ कर पूजा करता हूँ और न ही मस्जिद में जाकर शीश झुकाता हूँ। जहाँ-जहाँ प्रभु या अल्लाह का वास है वहाँ वहाँ मैं शीश झुकाता हूँ भाव प्रभु का वास हर तरफ है, मैं उसके हर तरफ दर्शन करता हूँ।

हिंदू पूजइ देहरा मुसलमान मसीति ।

रविदास पूजइ राम कूं जिह निरंतर प्रीति ॥६९॥

हिन्दू मन्दिर में जाकर पूजा करते हैं और मुस्लमान मस्जिद में जाकर निमाज़ गुज़ारते हैं लेकिन गुरु रविदास जी कहते हैं कि मैं उस प्रभु की पूजा करता हूँ जो सब जगह व्यापक है। उसके साथ मेरा निरन्तर प्रेम है। उस प्रभु को केवल मन्दिर और मस्जिद तक सीमित नहीं किया जा सकता।

प्रेम पंथ की पालकी रविदास बैठियो आय ।

सांचे सामी मिलन कूं आनंद कह्यो न जाय ॥७०॥

श्री गुरु रविदास जी कथन करते हैं कि मैं प्रभु की प्रेम रूपी पालकी में आकर बैठ गया हूँ और उस प्रभु मिलन रूपी परमानन्द का मैं ब्यान नहीं कर सकता।

रविदास मेरो मन लागिओ राम प्रेम को तीर ।

राम रसायन जउ मिलहिं तउ हारै हमारी पीर ॥७१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मेरे मन में प्रभु का प्रेम रूप तीक्ष्ण तीर लगा हुआ है भाव मेरे मन में प्रभु को मिलने की तीव्र इच्छा है। जब मुझे राम रसायन भाव प्रभु की नाम रूपी दवाई मिल गई तो उस से मेरी वियोग रूपी पीड़ा खत्म हो गई।

का मथुरा का द्वारिका का कासी हरिद्वार ।

रविदास खोजा दिल आपना तउ मिलिया दिलदार ॥७२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सच्चे प्रेम के बिना चाहे जीव क्या मथुरा, क्या द्वारिका, क्या काशी, क्या हरिद्वार चाहे सभी तीर्थों का भ्रमण कर ले पर प्रभु की

प्राप्ति नहीं होती। जब जीव श्वास-श्वास प्रभु का सिमरन करता हुआ अपने हृदय में प्रभु की खोज करता है तब इसे दिलदार प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

तुरुक मसीति अल्लह दूढइ हिंदु देहरे गुसांई ।

रविदास दूढिया राम कूं जंह मसीत देहरा नांही ॥७३॥

मुस्लमान अपने अल्लाह की तलाश मस्जिद में करते हैं और हिन्दू अपने राम की तलाश मन्दिर में करते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैंने उस राम रहीम प्रभु को अपने मन में ही खोजा है जहां मन्दिर और मस्जिद नहीं है।

देता रहे हज्जार बरस मुल्ला चाहे अजान ।

रविदास खुदा नंह मिल सकइ जौ लौं मन शैतान ॥७४॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि खुदा से सच्ची प्रीति के बिना चाहे मुल्ला हज़ारों साल बांग देता रहे वह अज्ञानी ही है। जब तक उसके मन में शैतान है तब तक उसको खुदा की प्राप्ति नहीं हो सकती।

जउ अल्लाह बसहिं मसीत मंह मंदिर मंह भगवान ।

रविदास खोजियो दिल आपनो तिन्ह पायो रहमान ॥७५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि यदि खुदा मस्जिद में बसता है तो फिर मन्दिर में भगवान् क्यों नहीं? भाव अल्लाह एक है और सर्वव्यापक है। वह हर जीव के भीतर है। जब जीव प्रभु की खोज अपने भीतर से करता है, तब उसको प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

जौ खुदा पच्छिम बसै तो पूरब बसत है राम ।

रविदास सेवौं जिह ठाकुरो तिह का ठांव न नाम ॥७६॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि अगर मुस्लिम का खुदा पश्चिम दिशा भाव काबा में है तो हिन्दुओं का राम पूर्व में बसता है। परन्तु गुरु रविदास जी जिस ठाकुर की पूजा करते हैं उसका कोई विशेष स्थान (पूर्व या पश्चिम) नहीं है। वह प्रभु हर जगह विद्यमान है और सर्व व्यापक है। उसके अनेकों नाम हैं।

11. शब्द-सुरत जब मिल गये

सुरत शब्द जउ एक हों तउ पाइहिं परमानंद ।

रविदास अंतर दीपक जरई घट उपजई ब्रह्मनंद ॥७७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब दसमें द्वार पर ध्यान टिका कर प्रभु के नाम भाव शब्द का सिमरन किया जाता है तो शब्द और सुरति का मिलन हो जाता है, तब जीव को ब्रह्मनन्द की प्राप्ति होती है। जिस जीव के अंदर ब्रह्म ज्ञान का दीपक जल उठता है तो उसको अपने अंदर में से ही ब्रह्मनन्द की प्राप्ति हो जाती है।

रविदास सब्दह सह जबहिं सुखिह इकमिक होई ।

अनुभूति सत्तनाम स्वयं देतहिं लोई ॥७८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब प्रभु के नाम का जाप और ध्यान एक हो जाते हैं तब उस ध्यान में लीन अवस्था में सतनाम् का अनुभव होने लगता है। फिर जीव के अंदर प्रभु की ज्योति अपने आप जल पड़ती है।

ओंकार को ध्यान मंहि जौ लौं सुरति न होय।

तौ लौं सांचे ब्रह्म कूं रविदास न बूझइ कोय ॥७९॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब तक प्रभु के ध्यान में जीव की सुरति नहीं जुड़ती तब तक वह उस सच्चे ब्रह्म को जान नहीं सकता भाव उस प्रभु की प्राप्ति सुरति-शब्द के मेल से होती है। जब जीव की सुरति प्रभु से जुड़ जाती है तब जीव को उसकी प्राप्ति हो जाती है।

रविदास दिआ जगमग जरई बिन बाती बिन तेल।

सुरत साधि कर हिय मंहि देख पिया के खेल ॥८०॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु का नाम रुप दीया बाती और तेल के बिना सारी सृष्टि में जगमगा रहा है। सुरति को सोध कर प्रभु के नाम से जोड़ कर अपने अंदर ही उस प्रभु के अद्भुत खेल को देख भाव उस प्रभु की ज्योति के दर्शन कर।

रविदास सुरत कूं साधि कर मोहन सों कर पिआर।

भौ जल कर संकट कटंहि छुटंहि बिघन बिकार ॥८१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! तू अपनी सुरति को सोध कर उस प्रभु से जोड़ कर उस प्यारे प्रभु से सच्चा प्यार कर। संसार रूपी भवसागर में तेरा जन्म मरण रूपी संकट कट जाएगा और रास्ते में आने वाले विघ्नों और विकारों का नाश हो जाएगा।

12. जीवन-मरन

जीवन जोति कैसे जगि कैसे होइ अंत।

रविदास मनुष न जानहि जानत हैं भगवंत ॥८२॥

जीवन रूपी ज्योति किस प्रकार जगी है और किस प्रकार यह बुझेगी भाव किस प्रकार जीव को जीवन मिला है और किस तरह इसका अंत होगा? गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि इस रहस्य के बारे में मनुष्य नहीं जानता, केवल प्रभु ही इस रहस्य को जानता है।

रविदास जन्मे कउ हरस का मरने कउ का सोक।

बाजीगर के खेल कूं समझत नाहीं लोक ॥८३॥

श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि किसी के जन्म की क्या खुशी और किसी

के मरने का शोक क्या? जन्म और मृत्यु तो उस बाजीगर अर्थात् प्रभु का खेल है पर अज्ञानी लोग इस बात को नहीं जानते।

13. सोइ साधु भलो

रविदास सोइ साधु भलो जउ जग मंहि लिपत न होय।

गोबिंद सों रांचा रहइ अरु जानहि नंहि कोय ॥८४॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि वह साधु उत्तम है जो संसार में रहता हुआ भी संसार में लिप्त नहीं होता। प्रभु के नाम में लीन रहता है और उस प्रभु के बिना और किसी को भी संसार में नहीं जानता भाव सब प्राणियों में प्रभु को अनुभव करता है।

रविदास सोइ साधु भलो जउ मन अभिमान न लाय।

औगुन छांडहि गुन गहइ सिमरइ गोविंद राय ॥८५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु उत्तम है जो मन में अहंकार नहीं करता। जो अवगुणों को छोड़कर गुणों को ग्रहण करता हुआ केवल प्रभु का स्मरण करता है।

रविदास सोइ साधु भलो जउ रहइ सदा निरबैर।

सुखदाई समता गहइ सभनह मांगहि खैर ॥८६॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि साधु तो वही उत्तम है जो हमेशा द्वेष मुक्त रहता है। सब के लिए सुख और समानता चाहता है और प्रभु से सभी का सुख माँगता है।

रविदास सोइ साधु भलो जउ अपन न जताय।

सत्तवादी सांचा रहइ मन हरि चरनन मंह लाय ॥८७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु उत्तम और सत्यवादी है जो अपनी प्रशंसा न कर प्रभु की प्रशंसा करता है। अपने मन को प्रभु के चरणों से जोड़कर रखता है।

रविदास सोइ साधु भलो जिह मन निर्मल होय।

राम भजहि विषया तजहि मिथ भाषी न होय ॥८८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु श्रेष्ठ है जिसका मन माया से मुक्त है। वो साधु विकारों को त्याग कर हर समय प्रभु के सिमरन में लीन रहता हुआ झूठे संसार में लिप्त नहीं होता और झूठ नहीं बोलता।

रविदास सोइ साधु भलो जउ जानहि पर पीर।

पर पीरा कहुं पेखि के रहवे सदहि अधीर ॥८९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु उत्तम है जो दूसरों की पीड़ा

को अनुभव करता है, दूसरों की पीड़ा को देख कर बेचैन हो जाता है और उस पीड़ा को दूर करने के लिए व्याकुल रहता है।

रविदास सोइ साधु भलो जो पर उपकार कमाय।
जइसोइ कहहि वइसोइ करहि आपा नांहि जताय ॥९०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु उत्तम है जो हमेशा दूसरों पर उपकार करता है, जिसकी कथनी और करनी में कोई अंतर न हो और जो स्वयं को प्रदर्शित न करे कि मैं साधु हूँ।

रविदास सोइ साधु भलो जो निहकपट निरपच्छ।
छमासील अरु सरल मनह बाहर भीतर स्वच्छ ॥९१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु उत्तम है जो अपने मन में कपट और पक्षपात की भावना न रखता हो। जो क्षमा करने वाला और सरल स्वभाव का हो, जो बाहर और भीतर से निर्मल हो।

रविदास सोइ साधु भलो निर्मल जाके बैन।
जिह करि दरस औ परस सों मन उपजहि सुख चैन ॥९२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु ही उत्तम है जिसके वचन निर्मल हैं। जिसके दर्शन और चरण स्पर्श करने से ही जीव को मन में सच्चा सुख प्राप्त हो।

रविदास सोइ साधु भलो जउ हंसा गति होय।
काम करम सभ छांड़ि कर राम भजन में खोय ॥९३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु उत्तम है जिसका व्यवहार हंस जैसा हो। जैसे हंस मानसरोवर में से मोती चुन कर खाता है और पानी एवं दूध में अंतर करना जानता है, वैसे ही साधु प्रभु के आनन्द रूप सच्चे मोती को ग्रहण करता है और असत्य को छोड़कर सदैव प्रभु में लीन रहता है।

रविदास सोइ साधु भलो जिह मन बसइ जगदीस।
रहइ ओट ओंकार की बुरो भलो सहइ सीस ॥९४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु उत्तम है जो केवल एक प्रभु को ही अपना आश्रय मानता है। चाहे उसको कोई भी बुरा कहे पर वह उसका ध्यान किये बिना प्रभु के नाम में लीन रहता है।

रविदास सोइ साधु भलो जौ मनह दोष मिटाय।
उर मंह आप न थापइ तृस्ना आस जलाय ॥९५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह साधु ही उत्तम है जो अपने मन में से विकार रूपी दोष को मिटा देता है और अपने मन से 'मैं' भाव को खत्म कर देता है।

और तृष्णाओं को खत्म कर प्रभु में लीन रहता है।

रविदास सोइ साधु भलो जौ साहिब हाथ बिकाय।
साहिब भेंट चढ़ान कउ अपनह सीस कटाय ॥९६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु उत्तम है जिसने प्रभु को सब कुछ सौंप दिया है। जिसने प्रभु के आगे सर्वस्व अपर्ण कर अपना शीश प्रभु के चरणों में रख दिया है।

रविदास सोइ साधु भलो जिह मन नांहि अभिमान।
हरस सोक जानइ नहिं सुख दुख एक समान ॥९७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही साधु उत्तम है जिसके मन में अहंकार नहीं है। वह खुशी और गम को अनुभव ही नहीं करता भाव दुख और सुख को एक समान समझता हुआ हर समय प्रभु में लीन रहता है।

रविदास कहै जाके रिदै रहै रैन दिन राम।
सो भगता भगवंत सम क्रोध न ब्यापै काम ॥९८॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि जिस जीव के हृदय में रात-दिन भाव हर पल प्रभु बसता है वह प्रभु का भक्त प्रभु के समान है और उसको क्रोध और संसार की झूठी इच्छाओं में कोई रूचि नहीं रहती।

14. किरत कमाइ करते हुए परमात्मा का सिमरन करना

जिहवा सों ओंकार जप हथ्यन सों कर कार
राम मिलहि घर आइ कर कहि रविदास बिचार ॥९९॥

सतगुरु रविदास जी महाराज सुकृत करने का पावन उपदेश देते हैं कि हे जीव! तू रसना से प्रभु का जाप करते हुए हाथों से किरत कमाई कर ताकि तुझे इस शरीर रूपी घर में ही प्रभु आकर मिले। यह बात मैं विचार कर करता हूँ।

नेक कमाइ जउ करहि ग्रह तजि बन नहिं जाय।
रविदास हमारो राम राय ग्रह महि मिलिह आय ॥१००॥

जो जीव घर छोड़ कर प्रभु की खोज के लिए जंगल में नहीं जाता बल्कि सच्ची किरत कमाई करता हुआ अपने भीतर से ही प्रभु की खोज करता है, गुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि उसको मेरा प्रभु घर में आकर ही मिल जाता है।

ग्रहहिं रहहु सति करम करहु हरदम चिंतहु ओंकार।
रविदास हमारो बांधला हइ केवल नाम अधार ॥१०१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव घर में रहते हुए नेक कर्म करता है और हर समय प्रभु को याद करता है, उसको संसार रूपी समुद्र से पार करने वाला केवल नाम रूपी आश्रय प्राप्त हो जाता है।

एक भरोसो राम को अरु भरोसो सत्त कार ।

सफल होइहु जीवना कहि रविदास बिचार ॥१०२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मुझे एक भरोसा प्रभु पर है और दूसरा सच्ची किरत करने का है। इस से मेरा जीवन सफल हो गया है। यह बात मैं विचार करके कहता हूँ।

15. निष्काम कर्म भावना

कर्म बंधन मंह रमि रह्यो फल कौ तज्यो आस ।

कर्म मनुष कौ धरम है सत भाषै रविदास ॥१०३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव कर्मों के बंधन में फँसा रहता है और फल की आशा नहीं त्यागता भाव निष्काम कर्म नहीं करता। पर श्रेष्ठ कर्म करना ही मनुष्य का धर्म है। मैं यह सच उच्चारण करता हूँ।

सौ बरस लौं जगत मंहि जीवत रहि करु काम ।

रविदास कर्म ही धरम है कर्म करौ निहकाम ॥१०४॥

यदि सौ वर्ष की आयु भी जीव को संसार में रहने के लिए मिल जाए तो जीव को संसार में रहकर श्रेष्ठ कर्म करने चाहिए। श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि कर्म ही जीव का धर्म है, इस लिए जीव को निष्काम कर्म करने चाहिए।

धरम हेतहिं कीजिये सौ बरस लौं कार ।

रविदास कर्महि धरम है फल मंहि नहि अधिकार ॥१०५॥

सौ वर्ष के जीवन में भी जीव को श्रेष्ठ कर्म करने चाहिए। श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि कर्म ही श्रेष्ठ धर्म है और ऐसे कर्म करते हुए जीव को फल की इच्छा नहीं करनी चाहिए।

धरम समुझि जो कार होइ उह कर फल होइ इस्ट ।

रविदास कोउ भी कर्म फल होहि नांहि अनिस्ट ॥१०६॥

जो जीव अपना धर्म समझ कर निष्काम कर्म करता है उस को मन इच्छुक फल की प्राप्ति होती है। श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि निष्काम भावना से किया गया कर्म निष्फल नहीं जाता।

रविदास मनुष कर धरम है कर्म करहि दिन रात ।

कर्मनहि फल पावना नहीं काहु के हाथ ॥१०७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि दिन-रात जीव शुभ कर्म करता रहे, यही उसका धर्म है। कर्म करने वाले जीव को यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि कर्म के फल की प्राप्ति किसी भी जीव के अपने हाथों में नहीं है बल्कि प्रभु के हाथ में है।

परकिरती परभाउ बस मानुष करत है कार ।

मानुष तउ है निमित रुप कहि रविदास बिचार ॥१०८॥

स्वभाव के अनुसार ही जीव कर्म करता है। श्री गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव का संसार में आना ही कर्म के निमित्त है।

कर्मन ही परभाउ तजि निहकर्मि होइ कर काम ।

रविदास निहकर्मि कर्म ही मेल कराए राम ॥१०९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव को बुरे कर्मों के प्रभाव को छोड़कर निष्काम भाव से कर्म करने चाहिए। निष्काम भाव से किये हुए कर्म ही जीव को प्रभु से मिला देते हैं।

सुख दुख हानि लाभ कउ जउ समझहि इक समान ।

रविदास तिन्हहिं जानिए जोगी पुरुष सुजान ॥११०॥

जो जीव सुख-दुख, लाभ-हानि सब को एक समान समझता हुआ प्रभु का सिमरन करता है सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि उस जीव को ही ज्ञानवान् योगी मानना चाहिए।

कर्म जोग की साध सों आतम राम सुध होय ।

रविदास बिजेता सो भया कर्म करै जउ कोय ॥१११॥

जो जीव शुभ कर्म करने की योग साधना करता हुआ प्रभु का सिमरन करता है उसको शरीर के भीतर बैठे हुए प्रभु का ज्ञान हो जाता है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ऐसा जीव ही संसार में विजय प्राप्त करता है जो शुभ कर्म करता हुआ प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

साधक भांति जोग जुगत कर्म करहु रविदास ।

धरम बोधि कीजहु कर्म फल की त्यागहु आस ॥११२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव को सच्चे साधक की तरह श्रेष्ठ कर्मों को अपना धर्म समझकर करना चाहिए और धर्म के द्वारा श्रेष्ठ कर्म करते हुए फल की इच्छा त्याग देनी चाहिए।

राग द्वेष कूं छांड़ि कर निहकर्म करहु रे मीत ।

सुख दुख सभ मंहि थिर रहि रविदास सदा मन मीत ॥११३॥

हे मित्र जीव! तू द्वेष भावना को छोड़कर निष्काम कर्म करता हुआ दुख और सुख दोनों अवस्थाओं में अपने मन को स्थिर रखता हुआ प्रभु का सिमरन करेगा तो मेरा मन हमेशा तेरा मित्र बनकर रहेगा।

जिहवा भजै हरि नाम नित हृथ करंहि नित काम ।

रविदास भए निहचिंत हम मम चिंत करेंगे राम ॥११४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि जो जीव नित्य प्रति जिह्वा से हरि नाम सिमरन करता हुआ हाथों से सदा कमाई सुकृत करता है वह जीव निश्चिन्त (चिन्ता-मुक्त) हो जाता है और उसकी चिन्ता प्रभु स्वयं करते हैं।

16. श्रम साधना (नेक कमाई)

रविदास श्रम करि खाइहि जौ लौं पार बसाय ।
नेक कमाई जउ करइ कबहुं न निहफल जाय ॥११५॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि जीव को मेहनत करके जीवन का गुजारा करना चाहिए, जो सफल होता है। जो जीव नेक कमाई करता है उसकी नेक कमाई कभी भी निष्फल नहीं जाती।

श्रम कउ ईसर जानि कै जउ पूजहि दिन रैन ।
रविदास तिन्हहि संसार मंह सदा मिलहि सुख चैन ॥११६॥

जो जीव सच्ची किरत कमाई को, प्रभु की पूजा जानकर दिन रात करता है और प्रभु का सिमरन करता है सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि उस जीव को हमेशा संसार में सुख और शांति प्राप्त होती है।

रविदास हौं निज हथहिं राखौं रांबी आर ।
सुकिरित ही मम धरम है तारैगा भव पार ॥११७॥

सतगुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैं सच्ची किरत कमाई करने के लिए हर समय अपने हाथों में रम्बी और आर रखता हूँ और हर समय उस प्रभु का सिमरन करता हूँ क्योंकि नेक कमाई करना ही मेरा धर्म है। इससे ही मैं भवसागर से पार हो गया हूँ।

प्रभ भगति स्त्रम साधना जग मंह जिन्हहि पास ।
तिन्हहि जीवन सफल भयो सत्त भाषै रविदास ॥११८॥

संसार में जिस जीव के पास प्रभु भक्ति और मेहनत रूपी साधना है उसका जीवन सफल हो जाता है। गुरु रविदास जी उच्चारण करते हैं कि मैं यह सच कह रहा हूँ।

धरम करम दुइ एक हैं समुझि लेहु मन मांहि ।
धरम बिना जौ करम है रविदास न सुख तिस मांहि ॥११९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! तू अपने मन में यह समझ ले धर्म और धर्म के अनुसार किये गए कर्म दोनों एक समान हैं परन्तु जो कर्म धर्म के बिना है उन कर्मों को करने में कभी भी सुख की प्राप्ति नहीं होती। इस लिए जीव को शुभ कर्म करते हुए प्रभु का नाम सिमरन कर अपना जीवन सफल करना चाहिए।

17. जात-पाति का खंडन

जन्म जात मत पूछिए का जात अरु पात ।
रविदास पूत सभ प्रभ के कोउ नहिं जात कुजात ॥१२०॥

संसार के सभी जीव समान हैं इस लिए किसी भी जीव की जाति नहीं पूछनी चाहिए क्योंकि जीव का जाति-पाति से कोई सम्बन्ध नहीं है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि संसार में सभी जीव एक ही प्रभु के पुत्र हैं। इस लिए कोई भी जीव ऊँची नीची जाति का नहीं।

जात पात के फेर मंहि उरझि रहइ सब लोग ।
मानुषता कूं खात हइ रविदास जात कर रोग ॥१२१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि भ्रम के कारण लोग जाति-पाति के चक्र में फँसे हुए भटक रहे हैं। जाति-पाति का रोग मानवता को खा रहा है भाव जाति-पाति के भेद के कारण ही संसार के सभी लोग बँटे हुए हैं।

जनम जात कूं छाडि करि करनी जात प्रधान ।
इहयौ साचा धर्म है कहै रविदास बखान ॥१२२॥

जन्म के आधार पर किसी की जाति को नियत करने के सिद्धांत को छोड़ देना चाहिए क्योंकि जीव के कर्म की ही प्रधानता है भाव जीव अच्छे कर्म करने से ही श्रेष्ठ बनता है। सतगुरु रविदास जी बताते हैं कि यही सचा धर्म है कि जीव जन्म या जाति के कारण नहीं बल्कि कर्म के कारण ऊँचा होता है।

ब्राह्मन खत्तरी बैस सूद रविदास जनम ते नांहि ।
जौ चाहइ सुबरन कउ पावई करमन मांहि ॥१२३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि कोई भी जीव जन्म के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र नहीं होता भाव सभी जीव समान हैं, पर जो जीव शुभ कर्म करता है वह श्रेष्ठ माना जाता है।

बेद पढ़ई पंडित बन्यो गांठ पन्ही तउ चमार ।
रविदास मानुष इक हइ नाम धरै हइ चार ॥१२४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि संसार में जो जीव वेद पढ़ता है उसको पंडित कहा जाता है और जो जूते गांठता है उसको चमार कहा जाता है। वास्तव में सारे मनुष्य एक समान हैं पर मानव-विरोधियों ने जीवों को चार हिस्सों में बांट दिया है।

नीच नीच कर मारहिं जानत नहीं नदान ।
सभ का सिरजनहार है रविदास ऐके भगवान ॥१२५॥

अज्ञानी निम्न जीवन स्तर के जीवों को नीच-नीच कह कर मारते हैं और

उनका अपमान करते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ऐसे लोग अज्ञानी और न समझ हैं जो यह नहीं जानते कि सब जीवों का सृजनहार एक ही प्रभु है।

रविदास जनम के कारनै होत न कोउ नीच।

नर कूं नीच करि डारि है ओछे करम की कीच ॥१२६॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि कोई जीव नीच समझी जाती श्रेणी में जन्म लेने से नीच नहीं होता बल्कि नीच कर्मों के कारण ही कोई नीच होता है। जीव नीच तब ही बनता है जब उस पर बुरे कर्मों का कीचड़ पड़ता है।

रविदास जाति मत पूछइ का जात का पात।

ब्राह्मन खत्री बैस सृद सभन की इक जात ॥१२७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे संसार के जीवो! तुम जीव की जाति-पाति क्यों पूछते हो? क्योंकि जाति-पाति कुछ भी नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी एक समान हैं।

जात जात में जात है ज्यों केलन में पात।

रविदास न मानुष जुड़ सकैं जाँ लौं जात न जात ॥१२८॥

एक मानव जाति में अनेक जातियां ऐसे पाई जाती हैं जैसे केले के पत्तों के अंदर और पत्ते होते हैं। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जब तक जाति-पाति खत्म नहीं होती और भेद-भाव दूर नहीं होता तब तक सभी मानव एक समान नहीं हो सकते। इस लिए जाति-पाति को समाप्त करना चाहिए।

रविदास ब्राह्मन मति पूजिये जउ होवै गुनहीन।

पूजिहि चरन चंडाल के जउ होवै गुन परवीन ॥१२९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि यदि ब्राह्मण गुणहीन है तो उसकी कभी भी पूजा नहीं करनी चाहिए। इसके विपरीत चंडाल समझे जाते जीव में यदि अच्छे गुण हैं तो उसके चरण पूजने चाहिए भाव जो जीव संसार में श्रेष्ठ कर्म करता है वह पूज्य बन जाता है।

18. ऊँच और नीच कौन?

रविदास सुकरमन करन सों नीच ऊँच हो जाय।

करइ कुकरम जौ ऊँच भी तौ महा नीच कहलाय ॥१३०॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि संसार में जाति के कारण कोई ऊँचा या नीचा नहीं है बल्कि कर्मों के कारण है। जिस जीव को सांसारिक लोग भ्रम के कारण नीच जाति में पैदा हुआ समझते हैं जब वह पवित्र कर्म करता है तो वह ऊँचा हो जाता है। अगर कोई ऊँची समझी जाती श्रेणी में जन्म लेकर बुरे कर्म करता है तो वह महानीच कहलाता है।

दया धर्म जिन्ह में नहिं हिरदै पाप को कीच।

रविदास तिन्हिं जानि हो महा पातकी नीच ॥१३१॥

जिन लोगों के मन में दया और धर्म नहीं है उनके मन में पाप का कीचड़ भरा पड़ा है। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वह लोग महापापी और नीच समझे जाते हैं।

जिन्ह करिहिरदै सत बसई पंच दोष बसि नांहि।

रविदास तौ नर ऊच भये समुझि लेहु मन मांहि ॥१३२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जिन जीवों के मन में सत्य निवास करता है और पांच विकार नहीं हैं, हे भाई! तू अपने मन में इस बात को समझ ले कि वो जीव ही इस संसार में श्रेष्ठ हैं।

पंच दोष तजि जो रहई संत चरन लव लीन।

रविदास ते नर जानई ऊँचह अरु कुलीन ॥१३३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही जीव इस संसार में ऊँचा और श्रेष्ठ कुल में पैदा हुआ समझा जाता है जो पाँच विकारों को त्याग कर संत महापुरुषों के चरण कंवलों ध्यान लगाकर रखता है भाव जो संतों से सच्ची प्रीति करता है।

19. ब्राह्मण कौन?

ऊँचे कुल के कारणै ब्राह्मन कोय न होय।

जउ जानहि ब्रह्म आत्मा रविदास ब्राह्मन सोय ॥१३४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि इस संसार में कोई भी जीव जाति या जन्म के कारण ब्राह्मण नहीं है क्योंकि केवल ऊँची कुल में जन्म लेने के कारण कोई ब्राह्मण नहीं कहला सकता। वास्तविक ब्राह्मण तो वह है जो सभी जीवों में ब्रह्म की आत्मा को मानता है।

काम क्रोध मद लोभ तजि जउ करइ धरम कर कार।

सोई बाह्यन जानिहि कहि रविदास बिचार ॥१३५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव काम क्रोध, लोभ और अहंकार को त्याग देता है और धर्म के अनुसार कर्म करता है उसको ही इस संसार में ब्राह्मण जाना जाता है।

रविदास जी वेत्ता ब्रह्म का सोइ ब्राह्मन जान।

ब्रह्म न जउ जानिहि तउ न ब्राह्मन मान ॥१३६॥

वह जीव इस संसार में ब्राह्मण है जो ब्रह्म को जान लेता है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव ब्रह्म को नहीं जानता वह ब्राह्मण नहीं है। इस लिए इस संसार में कोई भी जीव जाति या जन्म के कारण ब्राह्मण नहीं है।

धरम करम जानै नहीं मन मंह जाति अभिमान ।

ऐसउ ब्राह्मन सों भलो रविदास श्रमुक हुं जान ॥१३७॥

जो जीव धर्म के अनुसार श्रेष्ठ कर्म करने नहीं जानता और अपनी जाति का अहंकार करता है, सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ऐसे ब्राह्मण से तो किरत कमाई करके खाने वाले जीव को ही श्रेष्ठ समझना चाहिए ।

20. क्षत्रिय कौन?

दीन दुखी के हेत जउ बारै अपने प्रान ।

रविदास उह नरसूर कौं सांचा छत्री जान ॥१३८॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि कोई भी जीव जन्म और जाति के आधार पर क्षत्रिय नहीं है बल्कि कर्म करने से क्षत्रिय है । जो जीव दीन दुखियों की रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर देता है उस शूरवीर को ही सच्चा क्षत्रिय जानना चाहिए ।

अंग अंग कटवाहि जउ दीनन करि हेत ।

रविदास छत्री सोइ जानिए जौ छाड़ै नांहि खेत ॥१३९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव दुखियों और गरीबों के लिए अपना अंग अंग कटवा देता है और मैदान को कभी नहीं छोड़ता ऐसे जीव को ही सच्चा क्षत्रिय समझना चाहिए ।

21. वैश्य कौन?

रविदास वैस सोइ जानिये जउ सत्त कार कमाय ।

पुंन कमाई सदा लहै लोरै सर्वत्त सुखाय ॥१४०॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि कोई भी जीव जन्म और जाति के कारण वैश्य नहीं बल्कि उस जीव को वैश्य समझना चाहिए जो सच्चाई के साथ व्यापार करता है, सदा नेक किरत कमाई करता है और सर्वस्व का भला चाहता है ।

सांची हाटी बैठि कर सौदा सांचा देइ ।

तकड़ी तोलै सांच की रविदास वैस है सोइ ॥१४१॥

जो जीव सच्चाई रूप दुकान पर बैठ कर सच की सौदा बेचता, सच के तराजू के साथ तोलता है, सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि वही सच्चा वैश्य है ।

22. शूद्र कौन?

रविदास जउ अति पवित्र है सोई सूदर जान ।

जउ कुकरमी असुध जन जिन्हें न सूदर मान ॥१४२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव बहुत ही

पवित्र जीवन व्यतीत करता है उसको शूद्र भाव शुद्ध जानना चाहिए । जिसके कर्म भी बुरे हों और जीव भी अपवित्र हो उसको शूद्र भाव शुद्ध नहीं जानना चाहिए ।

हरिजनन करि सेवा लागे मन अहंकार न राखै ।

रविदास सूद सोइ धन है जउ असत्त बचन न भाखै ॥१४३॥

प्रभु को जानने वाला जीव मानवता की सेवा करता है और मन में अहंकार नहीं रखता और असत्य वचन नहीं बोलता, गुरु रविदास जी फरमाते हैं ऐसे शूद्र समझा जाने वाला जीव धन्य है ।

23. मन्दिर-मस्जिद एक

मंदिर मसजिद दोउ एक हैं इन मंह अंतर नांहि ।

रविदास राम रहमान का झगड़ा कोउ नांहि ॥१४४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मन्दिर और मस्जिद दोनों एक ही हैं । इन में कोई भी अंतर नहीं है । इन में केवल नाम का ही भेद है । इस लिए राम और रहमान दोनों नाम एक ही प्रभु के हैं ।

रविदास हमारे राम जोई सोई है रहमान ।

काबा काशी जानीयहि दोउ एक समान ॥१४५॥

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो मेरा सर्वव्याप्त राम है वही रहमान है । मुस्लमानों के लिए काबा पवित्र स्थान है और हिन्दुओं के लिए काशी पवित्र स्थल है, दोनों ही एक समान हैं इन दोनों में कोई भेद नहीं समझना चाहिए ।

मसजिद सों कछु धिन नहीं मंदिर सो नहीं पिआर ।

दोउ मंह अल्लह राम नहीं कह रविदास चमार ॥१४६॥

मुझे न तो मस्जिद से घृणा है और न ही किसी मन्दिर से प्रेम भाव मेरे लिए दोनों ही समान हैं । सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मन्दिर और मस्जिद में राम अल्लाह नहीं है भाव वह सर्व-व्यापक है ।

24. हिन्दू मुसलमान एक

मुसलमान सों दोसती हिंदुअन सों कर प्रीत ।

रविदास जोति सभ राम की सभ हैं अपने मीत ॥१४७॥

सतगुरु रविदास जी महाराज पावन उपदेश देते हैं कि सब जीव समान हैं इस लिए सब को आपस में मिल-जुल कर रहना चाहिए । मुस्लमानों के साथ दोस्ती और हिन्दुओं के साथ प्रेम करना चाहिए भाव सभी को आपस में प्रेम प्यार के साथ रहना चाहिए क्योंकि सभी जीवों में एक ही प्रभु की ज्योति है और सभी जीव अपने मित्र हैं ।

जब सभ करि दोउ हाथ पग दोउ नैन दोउ कान ।

रविदास पृथक कैसे भये हिंदू मुसलमान ॥१४८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे भाई! सब जीवों के समान अंग हैं।

सभी के दो हाथ, दो पैर, दो आँखें और दो कान हैं तो यह समान अंगों वाले जीव भिन्न भिन्न कैसे हो सकते हैं? चाहे कोई हिन्दू हो चाहे मुसलमान सब एक समान हैं।

रविदास पेखिया सोध करि आदम सभी समान ।

हिंदू मुसलमान कउ सिष्टा एक भगवान ॥१४९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैंने यह अच्छी तरह से परख लिया है कि सब जीव एक समान हैं क्योंकि सभी का सृजनहार प्रभु एक है, चाहे कोई हिन्दू है चाहे मुसलमान।

कहन सुनन कूं दुड़ करि खालिक कीयों तमासा ।

हिंदू तुरक दोउ एक है सत्त भाषै रविदासा ॥१५०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि कहने और सुनने को चाहे हिन्दू और मुसलमान दोनों भिन्न-भिन्न हैं पर सच तो यह है कि संसार की रचना प्रभु का अद्भुत तमाशा है। इस लिए सब जीव समान हैं चाहे हिन्दू है या मुसलमान।

रविदास कंगन कनक मंहि जिमि अंतर कछु मांहि ।

तैसउ ही अंतर नहीं हिंदुअन तुरकन मांहि ॥१५१॥

जिस प्रकार स्वर्ण और स्वर्ण से बने हुए आभूषणों में अंतर नहीं है ऐसे ही हिन्दुओ और मुसलमानों में कोई अंतर नहीं है।

हिंदू तुरक मंहि भेद नहीं सभ में रक्त अरु मास ।

दोउ एकह दूजा को नहीं पेख्यो सोध रविदास ॥१५२॥

हिन्दू और मुसलमान दोनों में कोई अंतर नहीं, दोनों में ही एक जैसा लहू और मास है। दोनों एक समान है और दोनों में कोई भिन्नता नहीं है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं यह सोच विचार कर उच्चारण कर रहा हूँ।

हिंदू तुरक मंहि नहीं भेद दुड़ आयहु इक द्वार ।

प्राण पिंड लोहु मांस एकइ कहि रविदास बिचार ॥१५३॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हिन्दू और मुसलमान में कोई अंतर नहीं है, दोनों का जन्म एक ही ढंग से हुआ है, दोनों की आत्मा, दोनों का शरीर, शरीर का लहू और मास एक समान है।

रविदास उपजइ इक नूर ते ब्राह्मन मुल्ला सेख ।

सभ को करता एक है सभ कुं एक ही पेख ॥१५४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सभी जीव प्रभु के नूर से पैदा हुए हैं चाहे

कोई ब्राह्मण है, चाहे मुल्ला और चाहे शेख। सभी का सृजक एक प्रभु है। इस लिए सभी में एक ही प्रभु का बांस देखना चाहिए।

25. सच्चा शूरवीर

रविदास सोइ सूरु भला जउ लरै धरम के हेत ।

अंग अंग कटि भुइं गिरै तउ न छाड़ै खेत ॥१५५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि सच्चा शूरवीर तो वह है जो धर्म की रक्षा के लिए रणभूमि में लड़ता है चाहे उसका अंग अंग कट जाए और गिर पड़े तो भी वह सच्चा शूरवीर मैदान नहीं छोड़ता और अन्तिम श्वास तक लड़ता है।

धरम हेत संग्राम महं जौ कटाए काटे सीस ।

सो जीवन सफला भया रविदास मिलंहि जगदीस ॥१५६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव धर्म की रक्षा के लिए संग्राम में लड़ता हुआ अपना शीश कटवा देता है उसका जीवन सफल हो जाता है। उसको प्रभु की प्राप्ति हो जाती है।

26. सत्य-वचन

बचन गयो नंह आत है सीस कटा फिर आय ।

रविदास बचन कूं राखिए सिर जाइहि तउ जाय ॥१५७॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि जीव को सत्य वचन बोलने चाहिए। जैसे यदि एक बार सिर कट जाए तो वह सिर दोबारा नहीं जुड़ता ऐसे ही मुँह से निकला हुआ वचन कभी भी वापिस नहीं आता। इस लिए जीव को अपने वचन का पालन करना चाहिए चाहे सिर कट जाए।

रविदास बचन जौ दे दियौ वह न जाने पाय ।

बचन हरै को जगत मंहि कछु न सेस रहाय ॥१५८॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि अगर एक बार जीव ने किसी को वचन दे दिया तो दिये हुए वचन का पालन करना चाहिए। परन्तु जो जीव दिये हुए वचन का पालन नहीं करता वह अपना मान-सम्मान सब कुछ गँवा लेता है और उसके पास कुछ भी बाकी नहीं रहता।

27. वासनाओं का त्याग

सत्त संतोष अरु सदाचार जीवन को आधार ।

रविदास भये नर देवते जिन तिआगो पंच बिकार ॥१५९॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि जीव को हमेशा सच बोलना, संतोष धारण करना और सदाचार को अपने जीवन का आधार बनाना चाहिए। जो जीव

इन को धारण कर पाँच विकारों का त्याग कर देता है वह जीव श्रेष्ठ बन जाता है।
जो बस राखे इंद्रियां सुख दुख समझि समान।
सोउ अमरित पद पाइगो कहि रविदास बखान ॥१६०॥
 सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव अपनी इन्द्रियों को वश में कर संयम का जीवन व्यतीत करते हैं और सुख दुख को एक समान समझते हैं ऐसे जीव प्रभु का नाम सिमरन कर परम पद को प्राप्त कर लेते हैं।
बुद्धि अरु बिबेकहिं जउ राखन चाहौ पास।
इंदरियां संग निरत कौ तजि देहु रविदास ॥१६१॥
 अगर जीव बुद्धिमान और विवेकशील बनना चाहता है तो उसको अपनी इन्द्रियों पर काबू रखना चाहिए। जो जीव इन्द्रियों के इशारे पर नाचता है भाव इन्द्रियों के अधीन हो जाता है वो अपना सब कुछ गंवा लेता है।
रविदास इच्छाएं आपुनी भोगन से रख दूर।
मन बुद्धि रहंहि सांत नित घट मंहि रहिवै नूर ॥१६२॥
 सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव अपनी इच्छाओं और वासनाओं पर काबू रखता हुआ अपनी इन्द्रियों को विकार रूप भोगों में फँसने नहीं देता उस जीव का मन और बुद्धि सदैव ही शांत रहते हैं और शारीरिक तेज बना रहता है।
कुरमे भांति जउ रहहिं मन इंदिरिया रविदास।
सांत रहइ नित आतमा बड़हि आत्म बिसास ॥१६३॥
 जो जीव अपने मन और इन्द्रियों को बाह्यमुखी न कर कछुए की तरह समेट कर अंतर्मुखी करता है और अंतर्मुखी होकर प्रभु की खोज करता है, सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि उसकी आत्मा हमेशा शांत रहती है और उसका आत्मविश्वास हमेशा बढ़ता है।

28. संतोष और त्याग

जो कोउ लोरै परम सुख तउ राखै मन संतोष।
रविदास जहां संतोष है तहां न लागै दोष ॥१६४॥
 सतगुरु रविदास जी जीवों को संतोष धारण कर परम सुख प्राप्त करने का पावन उपदेश देते हैं कि जो जीव परम सुख की प्राप्ति चाहता है उसको अपने मन में संतोष धारण करना चाहिए। जिस जीव के मन में संतोष है उसके मन में कोई दोष टिक नहीं सकता।
धन संचय दुख देत है धन त्यागे सुख होय।

रविदास सीख गुरुदेव की धन मति जोरे कोय ॥१६५॥
 जो जीव प्रभु को भूल कर केवल धन इक्ठ्ठा करता है उस को दुख मिलता है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि गुरुदेव परमेश्वर की यही शिक्षा है कि जीव को केवल धन ही नहीं एकत्र करना चाहिए।
सच्चा सुख सत धरम मंहि धन संचय सुख नांहि।
धन संचय दुख खान है रविदास समुझि मन मांहि ॥१६६॥
 जीव को यह समझ लेना चाहिए कि सच्चा सुख सच्चे धर्म की पालना करने में है पर केवल धन एकत्र करने में सुख नहीं है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! तू अपने मन में यह समझ ले कि केवल धन एकत्र करना दुखों की खान है।

29. सुख-दुख

सुख सरिता मंह बूड़ि करि सूझ बूझ मति खोय।
दुख की बदरी पेखि कै रविदास नह दीजिये रोय ॥१६७॥
 सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि सांसारिक सुख में उलझ कर जीव को प्रभु को नहीं भूलना चाहिए। सांसारिक सुख रूपी नदी में डूब कर जीव को अपनी सोच और समझ नहीं गंवानी चाहिए और दुखों के बादल सिर पर मंडराने से जीव को रोना नहीं चाहिए क्योंकि सुख दुख जीवन के अंग हैं।
सुख दुख सम करि जानहु तउ दुखह सुख होय।
रविदास जो सुखहि दुख कहै तउ सुख भी दुख होय ॥१६८॥
 जब जीव सुख और दुख को एक समान जानता है तो उसको दुख में भी सुख अनुभव होता है। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव मंगलमय जीवन के समय कहता है कि मैं बहुत दुखी हूँ तो उसके सुख भी दुख में बदल जाते हैं और वह सुख को भी दुख ही अनुभव करता है।

30. सच्चा प्रेम

रविदास प्रेम नहि छिप सकई लाख छिपाए कोय।
प्रेम न मुख खोलै कभउं नैन देत हैं रोय ॥१६९॥
 सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि सच्चा प्रेम कभी भी नहीं छिपता, जीव चाहे लाखों उपाय कर ले। सच्चे प्रेम का सुख कभी भी बोल कर व्यान नहीं किया जा सकता। सच्चा प्रेम आँखों में से आँसू बनकर प्रकट हो जाता है।

31. श्रेष्ठ मार्ग

रविदास सदा ही राखिए मन मंहि सहज सभाओ।

राखे नहीं कुपंथ पग जौ लोरों सुख चाओ ॥१७०॥

सतगुरु रविदास जी महाराज प्रभु के नाम सिमरन रूपी श्रेष्ठ मार्ग पर चलने का उपदेश देते हैं कि जीव को सदा ही सहज स्वभाव अपने हृदय में प्रभु का नाम बसाना चाहिए। जिस जीव को परमानन्द की चाहत है उसको कभी भी बुरे मार्ग पर पांव नहीं रखना चाहिए।

जो जन दुष्ट कुमारगी बड़ठहि नंहि तिंह पास।

जो जन संत सुमारगी तिन पाय लागो रविदास ॥१७१॥

जो प्राणी बुरे स्वभाव के हैं और बुरे मार्ग पर चलते हैं, कभी भी उनके पास नहीं बैठना चाहिए। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो प्रभु का सिमरन करते हैं और जीवों को भी प्रभु के सिमरन से जोड़ते हैं, ऐसे श्रेष्ठ मार्ग पर चलने वाले संत महापुरुषों के चरणों में जीव को हमेशा रहना चाहिए।

32. बेगमपुरा वतन

रविदास जु है बेगमपुरा उह पूरन सुख धाम।

दुख अंदोह अरु द्वेष भाव नाहि बसहि तिहिं ठाम ॥१७२॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि जब जीव प्रभु का सिमरन करके प्रभु से जहाँ मिल जाता है वह बेगमपुरा है, जहाँ पहुँचने से हर जीव गम से मुक्त हो जाता है। जहाँ प्रभु के परमानन्द रूपी सुख की प्राप्ति होती है, और जहाँ कोई दुख, शोक एवं द्वेष भाव नहीं है।

दूसरा अर्थ:- सतगुरु रविदास जी महाराज ने समस्त विश्व में बेगमपुरा वतन को स्थापित करने का पावन संकल्प दिया है। जिसमें रहने वाला हर जीव भेद-भाव रूपी गम से मुक्त हो और सब जीवों के लिए पूर्ण सुख का स्थान हो। जहाँ किसी को भेद-भाव का दुख, शोक और दूसरे दर्जे का नागरिक न समझा जाता हो।

रविदास मनुष करि बसन कूं सुख कर हैं दुड़ ठांव।

इक सुख है स्वराज मंहि दूसर मरघट गांव ॥१७३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जी ऐसे स्वराज्य की स्थापना पर जोर देते हैं जहाँ जीव को सब मानवीय अधिकार प्राप्त हों। इस संसार में मनुष्य के सुख प्राप्त करने के दो ही स्थान हैं पहला सुख स्वराज्य में है जहाँ जीव को समान अधिकार प्राप्त हों जिससे जीव इस संसार में रह कर प्रभु का सिमरन कर अपना जीवन सफल कर सकता है। दूसरा सुख जीव को प्रभु का सिमरन करके अपना जीवन सफल कर संसार में मरने के बाद प्राप्त होता है।

ऐसा चाहूं राज मैं जहां मिलै सबन कौ अन्न।

छोट बढ़ो सभ सम बसैं रविदास रहे प्रसन्न ॥१७४॥

सतगुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि मैं ऐसा राज्य चाहता हूँ जहाँ सब जीवों को समान अधिकार प्राप्त हो और जीवन की सभी आवश्यकताएं पूरी हों। सभी को खाने के लिए अन्न प्राप्त हो भाव कोई भी जीव भूखा न रहे। छोटे और बड़े का कोई भेद-भाव न हो, सब जीव मानवीय स्तर पर बराबर हों। मैं ऐसे राज्य को देख कर प्रसन्न रहूँगा।

33. सच्ची सेवा

मन मंहि सत्त संतोष रखहु सभ करि सेवा लाग।

सेवा सब कछु देत है रविदास सेवंहि मति त्याग ॥१७५॥

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता की सच्ची सेवा करने का उपदेश देते हैं कि जीव को मन में सत्य-संतोष रख कर सब की सेवा करनी चाहिए। सेवा से ही जीव को सब सुखों की प्राप्ति होती है। इस लिए जीव को कभी भी सेवा का त्याग नहीं करना चाहिए।

दीन दुखी करि सेव मंहि लागि रह्यो रविदास।

निसि बासर की सेव सौं प्रभु मिलन की आस ॥१७६॥

जीव को दीन दुखियों की सेवा में लगे रहना चाहिए। रात-दिन सच्ची सेवा के कारण ही जीव के मन में प्रभु मिलन की आशा होती है।

धुआं तपन मंहि का धरा धूम तपन ही त्याग।

रविदास मिलि है मोष धाम सेवा ही तप आग ॥१७७॥

यदि जीव के हृदय में प्रभु और मानवता के लिए प्रेम नहीं है तो धूनी तपा कर तप करने का उसको कोई लाभ नहीं है, इस लिए ऐसे तप का त्याग करना चाहिए। सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जीव को मानवता की सेवा करने रूपी श्रेष्ठ तप करने से ही मुक्ति प्राप्त होती है।

34. सच्चा उपदेश

रविदास रात न सोइये दिवस न करिये स्वाद।

अह निसि हरि जी सुमिरिये छांडि सकल प्रतिवाद ॥१७८॥

सतगुरु रविदास जी पावन उपदेश देते हैं कि जीव को रात सो कर नहीं व्यतीत करनी चाहिए और दिन संसार के स्वादों में नहीं व्यतीत करना चाहिए बल्कि रात-दिन प्रभु का सिमरन करते हुए वाद-विवाद के सारे झगड़ों को खत्म कर अपना मनुष्य जन्म सफल करना चाहिए।

रविदास तूं कावच फली तुझे न छीवै कोय।

मैं निज नांम न जानियां भल। कहां ते होय ॥१७९॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! अगर तू प्रभु का सिमरन नहीं करता तो तेरा जीवन कौंच फली के समान है। जैसे कौंच फली को छूने से शरीर में जलन पैदा होती है वैसे ही परमात्मा को भूल कर जीव में दूषण पैदा हो जाता है और कौंच फली की भांति ही जीव को कोई छूना भी नहीं चाहेगा। हे जीव! तूने निज नाम को नहीं जाना तो फिर तेरा भला कैसे हो सकता है? भाव प्रभु के नाम के बिना जीव का जीवन व्यर्थ है।

अंतर गति रांचै नहीं बाहर करै उजास।

ते नर जमपुर जांहिगे सत भाषै रविदास ॥१८०॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं यह सत्य उच्चारण करता हूँ कि जो जीव अपने मन में प्रभु का सिमरन नहीं करता और बाहरी प्रभु प्रेम का दिखावा करता है वह जीव जरूर ही यमलोक जाएगा।

सब सुख पावै जासु तें सो हरि जू को दास।

कोउ दुख पावै जासु तें सो न दास रविदास ॥१८१॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु का दास वह जीव है जिस से मिलने से सब को सुख प्राप्त होता है। जिसके मिलने से जीव को दुख प्राप्त होता है वह प्रभु का दास नहीं है।

हरि गुरु साध समान चित नित आगम तत मूल।

इन बिच अंतर जिन परौ करवत सहन कबूल ॥१८२॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभु, गुरु और संतों में अंतर नहीं है, इन सब को एक समान समझना चाहिए। यह ही धार्मिक ग्रंथों का मूल तत्त्व है। इस मूल तत्त्व में जो अंतर करेगा उसको करवत आरे के समान दुख झेलना पड़ेगा।

35. जीव हत्या का खंडन

रविदास जीव कूं मारि कर कैसो मिलंहि खुदाय।

पीर पैगंबर औलिया कोउ न कहइ समुझाय ॥१८३॥

सतगुरु रविदास जी जीव हत्या का खंडन करते हुए पावन उपदेश देते हैं कि मानव को कभी भी जीव हत्या नहीं करना चाहिए। जीवों को मार कर खुदा की प्राप्ति कैसे हो सकती है? किसी भी पीर, पैगम्बर और औलिए ने यह नहीं समझाया कि जीव हत्या करने से खुदा की प्राप्ति होती है।

रविदास जो पोषण हेत गउ बकरी नित खाय।

पढ़ई नमाजैं रात दिन तबहुं भिस्त न पाय ॥१८४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव अपने शरीर का पालन पोषण करने के लिए गाय, बकरी इत्यादि खाते हैं वो चाहे अल्ला की प्राप्ति के लिए दिन रात

निमाज गुजारे पर उनको कभी भी बैकुंठ धाम की प्राप्ति नहीं होती।

रविदास मूंडह काटि करि मूरख कहत हलाल ॥

गला कटावहु आपना तउ का होइहि हाल ॥१८५॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मूर्ख जीव! तुम धीरे धीरे जानवर का गला काटने को हलाल कहते हैं, पर तुम ऐसे ही अपना गला काट कर देखो तो तुम्हें पता चलेगा कि ऐसा करने से क्या दशा होती है?

रविदास जो आपन हेत ही पर कूं मारन जाई।

मालिक के दर जाइ करि भोगहि कड़ी सजाई ॥१८६॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव अपने लिए दूसरे को मारता है उसको ईश्वर के दरबार में जाकर बड़ी कठिन सजा मिलती है।

प्राणी बध नहिं कीजियहि जीवह ब्रह्म समान।

रविदास पाप नंह छूटइ करोर गउन करि दान ॥१८७॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मनुष्य को कभी भी जीव हत्या नहीं करनी चाहिए क्योंकि सब जीवों में प्रभु की अंश आत्मा समाई हुई है। जीव हत्या करने वाले जीव के पापों की कभी भी निवृत्ति नहीं होती चाहे वह करोड़ों गाय दान कर दे।

रविदास जिभ्या स्वाद बस जउ मांस मछरिया खाय।

नाहक जीव मारन बदल आपन सीस कटाय ॥१८८॥

श्री गुरु रविदास जी सत्य उपदेश सुनाते हैं कि जो लोग अपनी जिह्वा के स्वाद के लिए मांस-मछली इत्यादि खाते हैं उन को निर्दोष जीव मारने के बदले सजा मिलेगी और उन का अपना सिर भी एक दिन काटा जाएगा।

रविदास जीव मत मारहिं इक साहिब सभ मांहि।

सभ मांहि एकउ आतमा दूसरह कोउ नांहि ॥१८९॥

सतगुरु रविदास जी समझाते हैं कि मानव को कभी भी जीवों को मारना नहीं चाहिए क्योंकि सभी जीवों में प्रभु ही समाया हुआ है। इस लिए सभी जीवों में एक ही आत्मा है दूसरी कोई नहीं।

36. मांसाहारी - नरक अधिकारी

अपनह गीव कटाइहिं जौ मांस पराया खांय।

रविदास मांस जौ खात हैं ते नर नरकहिं जांय ॥१९०॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जीवों को शाकाहारी जीवन व्यतीत करने का उपदेश देते हैं कि जो जीव मांस खाते हैं वह अपना ही गला कटवा लेते हैं और नरक में जाते हैं।

दया भाव हिरदै नहीं भखहिं पराया मास।

ते नर नरक मंह जाइहि सत्त भाषै रविदास ॥१९१॥

जिन जीवों के हृदय में दया नहीं वही जीव मांस खाते हैं, ऐसे जीव नरक को जाते हैं। सतगुरु रविदास जी कथन करते हैं कि यह मैं सत्य उच्चारण करता हूं।

जीवत कूं मुरदा करहिं अरु खाइहिं मुरदार।

मुरदा सम सभ होइहिं कहि रविदास बिचार ॥१९२॥

सतगुरु रविदास जी कथन करते हैं कि यह मैं विचार करके कहता हूं कि जो जीव, जीवों को मार कर उनका मांस खाते हैं, वे सारे जीव मरे हुए जीवों के समान हैं।

37. पराधीनता पाप है

पराधीनता पाप है जान लेहु रे मीत।

रविदास दास प्राधीन सों कौन करै है प्रीत ॥१९३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज मानवता को पावन उपदेश देते हैं कि पराधीनता का जीवन पाप के समान है इस लिए पराधीनता से मुक्त होकर जीव को स्वाधीनता वाला जीवन अर्थात् आजादी से जीना चाहिए। मेरे मित्रो! पराए के अधीन रह कर जुल्म सहन करना पाप है, तुम इस बात को अच्छी तरह से जान लो भाव गुलामी वाला जीवन पाप है। जो जीव गुलाम है उसको सब धिक्कारते हैं और उस से कोई भी प्रीति नहीं करता।

पराधीन कौ दीन क्या पराधीन बेदीन।

रविदास दास प्राधीन कौ सबही समझै हीन ॥१९४॥

सतगुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव पराए के अधीन है, उसका अपना धर्म क्या है? पराए के अधीन जीव का जीवन तो दीन धर्म से मुक्त है। ऐसे गुलाम जीव को सभी नीच समझकर उसका अपमान करते हैं।

रविदास संसा जीव महिं, साखी सौं बिलगाय।

जीवन मरन रहिस कूं, साखी कहै समुझाय ॥१९५॥

सतगुरु रविदास महाराज जी फरमाते हैं कि जीव के मन में जो भ्रम है, वह साक्षी गुरु ही दूर कर सकता है तथा जन्म मरण के रहस्य को साक्षी गुरु ही समझाता है।

रविदास रात न सोविये, दिवस न करिये सुआद।

अहि निसि हरि जी सिमरिए, छाडि सकल प्रतिवाद ॥१९६॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जीव को रात्रि केवल सो कर नहीं व्यतीत करनी चाहिए और दिन केवल खा कर व्यतीत नहीं करना चाहिए। हर समय प्रभु का सिमरण करना चाहिए तथा अन्य विवादों को त्याग देना चाहिए।

साध संगति पूंजी भइ, हौं वस्त लई निरमोल।

सहिज बलदिया लादि करि, चलियो लहन पिव मोल ॥१९७॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि संतों की संगत में प्रभु के नाम रूपी निर्मोल वस्तु, पूंजी पड़ी है। सहजावस्था में पहुँचकर इस पूंजी को अपने मन रूपी बैल पर लादकर, प्रभु को प्राप्त करना चाहिए।

जैसा रंग सैंबल करि, ह्वै तैसा यहि संसार।

हौं रंग रंगौ राम महिं, भणै रविदास बिचार ॥१९८॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जिस प्रकार सैंबल का रंग कच्चा है, उसी प्रकार इस संसार का रंग है। परन्तु मैं प्रभु के रंग में रंगा गया हूँ।

भौ सागर रा तरन कूं, एकौ नाम अधार।

रविदास कभउं नहिं छाडिये, राम नाम पतवार ॥१९९॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि संसार रूपी भवसागर से पार जाने के लिए, केवल प्रभु का नाम ही आधार है। अतः जीव को कभी प्रभु का नाम छोड़ना नहीं चाहिए।

सुमिरन कोटि अघन की, होवै समन रविदास।

ज्युं कि अघ निरमूलिये, परम जोत परगास ॥२००॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि प्रभु का सिमरण करोड़ों पापों का नाश करने वाला है। प्रभु की परम ज्योति के प्रकाश के समय, सारे अवगुण व दुख नष्ट हो जाते हैं।

राम नाम जिह रम्यो, सोइ तनु आपु उजास।

अन्त छार ह्वै जाइये, वेगि चेतु रविदास ॥२०१॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जो जीव प्रभु के नाम में रंग गया, वही संसार में श्रेष्ठ है। हमने अंत समय में एक प्रभु के नाम के बिना सब कुछ छोड़ कर चले जाना है। अतः तू शीघ्र अति शीघ्र, प्रभु को याद कर।

गुर ज्ञान दीपक दिया, बाती दइ जलायि।

रविदास हरि भगति कारनै, जनम मरन बिलमाये ॥२०२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जब गुरु ने ज्ञान रूपी दीपक दिया तथा उसमें ज्ञान की बाती जला दी, तब उस प्रभु की भक्ति करके जन्म-मरण रूपी दुख दूर हो जाता है।

अंधला जौ गुरु पाइहि, तौ शिष भयौ निरंख।

रविदास ज्ञान चाषू बिना, किमि मिटयि भ्रम फंद ॥२०३॥

सतगुरु रविदास जी महाराज जी उपदेश देते हैं कि अज्ञानी गुरु को प्राप्त कर, शिष्य भी अज्ञानी बन जाता है। प्रभु के ज्ञान के दीपक के बगैर जीव का भ्रम दूर नहीं हो सकता।

माया दीपकु पेखि करि, नर पतंग अंधियाये।

रविदास गुरु रा ज्ञान जिनु, बिरला को बचि जाय ॥२०४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि माया रूपी दीपक को देखकर जीव रूपी पतंगा उसकी ओर आकर्षित होकर मारा जाता है। कोई बिरला जीव ही गुरु के ज्ञान के साथ माया के प्रभाव से बच पाता है।

निहचल आनन्द निधि मिलि, बिलगौ आधि अपार।

रविदास सुमिरण सार सौं पायो दरस मुरार ॥२०५॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जो प्रभु निष्चल, आनन्दपूर्ण तथा सभी खजानों का स्वामी है, उसका सिमरण कर जीव उपाधियों से मुक्त हो जाता है और प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

पलु पलु छिनु छिनु सिमरीये, जौ लौरे हरि दुआर।

हरि मजनु विन सिव नहीं, भणै रविदास चमार ॥२०६॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि यदि कोई जीव हरि का निज घर प्राप्त करना चाहता है, तो वह हर पल हर क्षण हरि का सिमरण करे। हरि के नाम रूपी स्नान के बिना, किसी भी जीव का कल्याण नहीं होता।

भौ सागर दुतर अति, किधुं मुरिख यहु जान।

रविदास गुरु पतवार है, नाम नाव करि जान ॥२०७॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि हे मूर्ख जीव! प्रभु के नाम के बिना, संसार रूपी भवसागर बहुत कठिन है, केवल गुरु ही है, जो जीव को प्रभु के नाम नाव रूपी में बैठा कर पार लगाता है।

रविदास तनु पियरौ पातरा, झरत न लागयि बार।

जरा मीचु ज्यों आवयि, जात न लागहिं वार ॥२०८॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि प्रभु के नाम के बिना यह शरीर पतझड़ के समान है और इसको झड़ने में जरा भी देर नहीं लगती। बुढ़ापा आने पर संसार छोड़ने में देरी नहीं लगती।

सोई तन कंचन जानइ, जिह तन नाम परगास।

रविदास राम चिंतामणि, चहुं दिस औज उजास ॥२०९॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि वही शरीर सोने की भांति

शुद्ध है, जिसमें प्रभु के नाम का प्रकाश है। प्रभु का नाम मनवांछित फल देने वाली मणि है, जिसकी सिमरण करने से, जीव की हर ओर शोभा होती है।

निस दिन हरि जु सिमरिये, त्यागि जगत करि धंद।

रविदास संत सहेलड़ा, विचरत होवै निरदंद ॥२१०॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि हर समय प्रभु का सिमरण करना चाहिए तथा संसार के झूठे धंधों का त्याग करना चाहिए। संत जन इस संसार में जीव के सहायक हैं, जो उसे प्रभु के साथ मिलाप करवाते हैं।

जो लोहा पारस मणि, हिरन किरन दमकाये।

रविदास राम पारस मणि, ओह दरस मंहि बौराये ॥२११॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जैसे लोहा पारस को छूकर शुद्ध सोना बन जाता है, उसी प्रकार यह जीव रूपी लोहा, प्रभु के नाम रूपी पारस के साथ लगकर पवित्र हो जाता है।

समाधि थिति हवै संत जन, अपनहु अप्प मिटाहिं।

जिमि गंग समुंद मिलि, रविदास समुंदहिं बिलांहि ॥२१२॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जो संत स्वयं को मिटा देते हैं, वे समाधि लगाकर प्रभु के साथ जुड़ जाते हैं। जिस प्रकार गंगा समुद्र में गिरकर उसी का ही रूप हो जाती है। उसी प्रकार वे संत भी प्रभु का रूप हो जाते हैं।

अन भावत नियरा बसै, मन भावतां परदेस।

अन देखे उन दरस बिन, होवै दुख बढ़त घनेस ॥२१३॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि अनहोनी सदैव ही जीव के समीप रहती है तथा मन की भावना जीव से दूर रहती है। प्रभु के दर्शनों के बिना जीव को सभी दुख-कष्ट सताते हैं।

ज्युं सुधि आबत पीव की, बिरह उठत तन आगि।

ज्युं चूने की कांकरी, ज्यों छिरके त्यों आगि ॥२१४॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जब जीव को प्रभु प्राप्ति की सुध आती है, तब इसके तन को वियोग रूपी आग उठती है। जिस प्रकार चूने की काकड़ी को शीघ्रता से आग लग जाती है, इसी प्रकार प्रभु प्रेमी जीव को सदैव वियोग की पीड़ा सताती है।

जिह नित देखन चाहि हों, तें नैनन ते दूरि।

रविदास कहि अनभावते, रहहिं निकट भरपूरि ॥२१५॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जो प्रभु नेत्रों से दूर है, यदि

 तुम नित्य-प्रति अपने भीतर देखना चाहता है, तो उसका सिमरन करो, तब वह भरपूर
 परमात्मा तुम्हें अपने भीतर अनुभव होगा।
कामधेनि पारस पोलि, कलप रूप रा बाड़ि।
रविदास हरि रा भगति बिन, ग्रिह तैं भलि उजाड़ि ॥२१६॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि कामधेनु गाय तथा पारस की
 प्राप्ति प्रभु के नाम के बिना व्यर्थ है और जीव की कल्पनाएं प्रभु के मार्ग में रुकावटें हैं।
 प्रभु की भक्ति के बिना शरीर रूपी घर उजाड़ के समान है।
तुहि मुहि हमु एक हैं, तुझ लौं मोरि दौर।
रविदास पंखी जिहाज कौ, नहिं आनत कोउ ठौर ॥२१७॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि प्रभु जी आप और मैं दोनों
 एक हैं। आप के बिना मैं चाहे जहाँ दौड़ लूँ, मुझे आपके चरणों में ही वापिस लौटना
 है। जैसे समुद्री जहाज का पंखी, जहाज से उड़ जाता है, उसे अन्य कोई आश्रय नहीं
 मिलता। वह वापिस जहाज पर ही लौटता है।
रविदास पीतम इक तुहि, तुमरे मित अनेक।
ससि कौ कमोद हैं बहु, कुमोद कौ ससि एक ॥२१८॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि मेरे केवल आप एक प्रिय
 मित्र हो परन्तु आप के प्रिय अनेक हैं। जैसे चन्द्रमा से प्रेम करने वाले चकोर अनेक हैं
 परन्तु चकोरों के लिए चन्द्रमा केवल एक है। इसी प्रकार प्रभु जी आप मेरे एक प्रिय
 हो।
कोटि कलप जीवन अलप, बिच हरि भगति बिलास।
हरि सिमरण सफल जनम, दुह फल लहि रविदास ॥२१९॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि करोड़ों कल्पों में एक
 अमूल्य जीव का जीवन है। प्रभु की भक्ति आने से यह जीवन सफल हो जाता है और
 लोक-परलोक सुखी हो जाता है।
अनन्द मूरति मित्र की, रहइ सदा सदा चित पूरि।
नैनन ही समुहे रहत, रविदास नियरे का दूरि ॥२२०॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि प्रभु रूपी सच्चे मित्र की
 आनन्दमूर्ति सदैव ही हृदय में रहनी चाहिए। वह प्रभु सदैव ही आँखों के सामने रहना
 चाहिए, फिर वह कभी भी दूर नहीं जाता।
कोयल तरसै अंब को चात्रिक तरसत नीर।
रविदास लौचै दरस को, प्रान परत नहीं धीर ॥२२१॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जैसे कोयल आम के लिए

 तरसती है, पपीहा स्वाति बूँद के लिए तरसता है। इसी प्रकार प्रभु जी, मेरा मन आप
 जी के दर्शनों के लिए तरसता है, आप जी के बिना मेरे मन को धैर्य नहीं मिलता।
ससि चकोर सूरज कंवल, चात्रिक घन की रीति।
रविदास इवि मुहि राखियो, हित चित पूरण परीति ॥२२२॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि जिस प्रकार चकोर की
 चन्द्रमा के साथ कंवल फूल की सूर्य के साथ तथा पपीहे की स्वाति बूँद के साथ सच्ची
 प्रीति है, उसी प्रकार मेरे मन में, प्रभु जी, आपके साथ सच्ची प्रीति है।
चलत हलत बैठत उठत, धरि हूं तुमरो ध्यान।
रविदास तू मुहि मन बसइ, चरण कंवल की आन ॥२२३॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उच्चारण करते हैं कि हे प्रभु जी मैं चलते,
 फिरते, बैठते, उठते केवल आप जी का ध्यान लगाता हूँ। इस प्रकार प्रभु जी मेरे हृदय
 में आप जी के चरण कंवल बसते हैं।
मूरखि मुख कमान है, कटुक वचन भयो तीर।
सांचरी मारे कानं महिं, साले सगल सरीर ॥२२४॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि मूर्ख का मन कमान की भांति
 है और उसके वचन तीर की भांति चुभते हैं, जब वे कानों में लगते हैं, तो सुनने वाले
 का पूरा शरीर जलने लग जाता है।
रविदास मूरख समुझयि नहिं बिना बिचार।
हने परायि आतमा, जीभ लियां तरवार ॥२२५॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि मूर्ख का जीवन विचारहीण
 है और वह कभी नहीं समझता, जैसे मुख जीभ के बिना होता है, उसी प्रकार जीव की
 आत्मा परमात्मा के बिना होती है।
राम प्रेम हौं बरजि किमि, अब बरजत नहिं काज।
रोम राम अमी रमि गयो, ताहि म होत इलाज ॥२२६॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि मैं प्रभु के प्रेम के बिना कैसे
 रह सकता हूँ क्योंकि उसके बिना मेरा कोई कार्य नहीं होता। प्रभु संसार के कण-कण
 में व्याप्त है। प्रभु का नाम सभी रोगों का उपचार है।
नाम मूल है ज्ञान कौ, नाम मुक्ति कौ दबार।
जा हिरदै हरि बसै, परहिं न जग विउपार ॥२२७॥
 सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि प्रभु का नाम ज्ञान का मूल है
 और उसका नाम मुक्ति का द्वार है। जिसके हृदय में प्रभु का नाम बसता है, वह संसार
 के झूठे व्यापार में नहीं लगता।

इहु जग दुख की खेतरी, इहु जानत सब कोय।

ज्ञानी काटहि हरि नाम सों, मूरिख काटहि रोय ॥२२८॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि यह संसार दुख की खेती है, जिसे हर कोई जानता है। जो ज्ञानी पुरुष है, प्रभु का नाम स्मरण कर, इस खेती को काटता है और मूर्ख इसे रोकर काटता है।

कटुक बचन नहीं बोलिए, सब घट हरि को बास।

इहु ज्ञान कौ दवार है, कहै रविदास विचार ॥२२९॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जीव को कभी भी कड़वे वचन नहीं बोलने चाहिए, क्योंकि सभी में प्रभु का वास है, यही ज्ञान का द्वार है।

सत विद्या को पढ़े प्राप्त करे सदा ज्ञान।

रविदास कहे बिन विद्या नर को जान अजान ॥२३०॥

सतगुरु रविदास महाराज जी उपदेश देते हैं कि जीव को सदैव सत विद्या पढ़नी चाहिए और ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। गुरु जी फरमाते हैं कि विद्या के बिना जीव अज्ञानी समझा जाना चाहिए।

भाग - 4

श्री गुरु रविदास महाराज की जय ॥

जगत् गुरु रविदास जी के प्रति सूर्यकान्त त्रिपाठी जी हिन्दी अणिमा नामक ग्रन्थ में लिखते हैं :

सन्त कवि रविदास जी के प्रति

ज्ञान के आकर मुनीश्वर थे परम
धर्म के ध्वज, उनमें अन्यतम,
पूज्य अग्रज भक्त कवियों के प्रखर
कल्पना की किरण नीरज पर सुधर
पड़ी ज्यों अँगड़ाईयां ले कर खड़ी
जाति को देखा सभी ने मींच कर
दृग तुम्हें, श्रद्धा सलिल से सींच कर।

रानियां अवरोध की घेरी हुई।

वाणियां ज्यों बनी जब चेरी हुई।

छुआ, पारस भी नहीं तुमने रहे

कर्म के अभ्यास में अविरत वहे।

ज्ञान गंगा में, समुज्ज्वल चर्मकार,

चरण छू कर रहा मैं नमस्कार। (1942 ई.)

संत पलटूदास जी गुरु रविदास जी के प्रति अपने विचार व्यक्त करते हुए

कहते हैं कि संत श्री रविदास जी ने जहाँ कहीं भी प्रभु को बुलाया उन के प्रेम भाव को देख कर भगवान उस स्थान पर ही प्रकट हो गये। इस पद में गुरु रविदास साहिब जी के विचित्र का वर्णन किया गया है। आप लिखते हैं :

नहाते त्रिकाल रोज पंडित अचारी बड़े

सदा पट बसतर खूब अंगन लगाई है।

पूजा नैवेद आरती करते हम बिधि बिधान

चंदन औ तुलसी भली भांति से चढ़ाई है

हारे हम कुलीन सब कोटि कोटि कै उपाय

कैसे तुम ठाकुर हम अपने हूँ न पाई है।

पलटू दास देखो रीझ मेरे, साहिब की

गयै है वहां जब रविदास जी बुलाई है।

श्री गुरु रविदास जी का आगमन

जब जब इस संसार में मानवता पर जुल्म और अत्याचार होता है तब तब प्रभु स्वयं प्रकट होकर भूली-भटकी मानवता का मार्ग दर्शन करते हैं। इतिहास साक्षी है कि समय-समय पर प्रभु ने स्वयं प्रकट हो कर मानवता का कल्याण किया है। भारत के मध्यकालीन युग में सतिगुरु नामदेव जी, सतिगुरु कबीर जी, सतिगुरु सैण जी, सतिगुरु रविदास जी, सतिगुरु नानक देव जी और अनेक महापुरुषों ने संसार में आकर मानवता को भेद-भाव से मुक्त कर प्रभु भक्ति से जुड़ने का पवित्र उपदेश दिया।

भारत के इतिहास में तेरहवीं, चौदहवीं सदी का ऐसा भयानक समय था जब भारत के लोग विदेशी राजाओं के अत्याचारों से दुखी थे और भारतीय समाज भी जाति-भेद के आधार पर बाँटा हुआ था। उस समय भारत में मुख्य रूप से दो धर्म थे - इस्लाम और हिन्दू धर्म। ऐसी स्थिति में भारत के मूल निवासी, समाज के मानवीय अधिकारों से वंचित थे। उनको शिक्षा प्राप्त करने, अच्छे कपड़े पहनने और अच्छे ढंग से जीवन व्यतीत करने का अधिकार नहीं था, यहां तक कि उनकी छाया को भी बुरा माना जाता था। धरती माता और दुखी मानवता की पुकार सुनकर श्री गुरु रविदास जी महाराज के रूप में मानवता को सच का उपदेश देने के लिए प्रभु ने इस धरती पर अवतार धारण किया। महाराज सतिगुरु रविदास जी के आगमन के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है :

चौदह सौ तैतीस की माघ सुदी पन्द्रास।

दुखियों के कल्याण हित प्रकटे श्री रविदास ॥

(संत कर्म दास)

गुरु जी ने भारत के प्रसिद्ध शहर बनारस के नजदीक माघ सुदी 15 पूर्णिमा संवत् 1433 (1377 ई.) पिता संतोख के घर और माता कलसी देवी जी की पावन कोख से गाँव सीर गोबर्धनपुर में दुखियों का कल्याण करने के लिए आगमन हुआ। आपके दादा का नाम श्री मान कालू राम जस्सल था और दादी का नाम श्रीमती लखपती था। गुरु जी का आगमन होना दुनिया के इतिहास में एक आलौकिक कौतुक था, जिसका उद्देश्य जहाँ सदियों से जाति-भेद का शिकार हुई मानवता को मुक्ति प्रदान करना था, वहीं मानवता के विरोधियों को मानवता का पाठ पढ़ा कर स्मस्त दुनिया को एकता, समानता, आपसी मेल-जोल और प्रभु के नाम का पवित्र उपदेश देना था। आप जी ने जब आगमन हुआ तो उस समय अदभुत प्रकाश हुआ जिसके साथ सारे ब्रह्माण्ड में रौशनी ही रौशनी फैल गई। बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों और तपस्वियों ने इस रौशनी में

को देख कर शीश झुकाया और अपने मन को सान्तवना देते हुए कहा कि यह परोपकारी, दीन-दयालु प्रभु के जीवों को जुल्म की आग से बचाने के लिए प्रकट हुए हैं।

श्री गुरु रविदास जी के जन्म समय ऐसा प्रकाश हुआ कि दाई जिसकी आँखों की रौशनी कम थी, ठीक हो गई। उस दाई ने गुरु जी की माता और पिता जी को बधाई देते हुए कहा कि उसके हाथों में अनेक बच्चों ने जन्म लिया परन्तु आज तक ऐसा बालक नहीं देखा। इस बच्चे के सभी अंग नूर से भरपूर हैं। यह बालक आप के नाम को दुनिया में रोशन करेगा। बालक का नाम रविदास रखा गया। जिसका अर्थ है—जैसे सूर्य अंधेरे को दूर कर सारी दुनिया को रौशनी देता है वैसे ही यह बालक अंधकार में घिरी हुई मानवता को सच की रौशनी दिखाएगा। आप जी पारिवारिक कार्यों में निपुण थे। आप की अर्धांगिनी का नाम लोना था जो पति की सेवा करने के साथ साथ प्रभु के नाम सिमरन में जुड़ी रहती थीं। आप के सपुत्र का नाम विजय दास था।

लगभग छः सदियों के व्यतीत होने के बाद डेरा संत सरवण दास जी सच्च खण्ड बल्लां के महापुरुषों ब्रह्मलीन श्री 108 संत सरवण दास जी, ब्रह्मलीन श्री 108 संत हरी दास जी और ब्रह्मलीन श्री 108 संत गरीब दास जी को महान् पुरुषार्थ कर गुरु रविदास जी के जन्म स्थान की खोज कर श्री गरु रविदास जन्म स्थान पर मन्दिर का निर्माण किरने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह मन्दिर पूरी दुनिया के श्रद्धालुओं के लिए महान् तीर्थ स्थान है। इस महान् स्थान के पास वह इमली का पेड़ भी सुशोभित है, जिसके नीचे बैठकर श्री गुरु रविदास जी लोगों को सत्य का उपदेश देते थे। जब संत हरी दास महाराज जी ने श्री गुरु रविदास जन्म स्थान के मन्दिर का नींव पत्थर रखा तो यह इमली का पेड़ सूखा हुआ था। जब संत हरी दास जी ने अपने कर-कमलों द्वारा इस पेड़ को पानी देना शुरू किया तो इमली का यह पेड़ फिर से हरा होना शुरू हो गया, जो आज भी इस महान् स्थान के पास सुशोभित है। यहां संगत् आदरपूर्ण नतमस्तक होती है। संसार के कोने कोने से लोग इस महान् स्थान पर आकर श्रद्धा के फूल भेंट करते हैं और अपना जीवन सफल करते हैं।

बालपन

एक बार गुरु जी की भूआ, जब आप से मिलने के लिए आई तो वे आप जी के लिए एक सुन्दर चमड़े का खरगोश ले आई। उस खिलौने को पकड़कर, चारपाई पर बैठकर, गुरु जी खेल रहे थे। खेलते-खेलते अपने चरण कंवलों से, वे उस खरगोश को दूर धकेलने लगे, जैसे उसे दौड़ने का संकेत दे रहे हों। इस दृश्य को

देखकर, आप जी को मिलने के लिए रिश्तेदार एवं घरवाले देखकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे। जब आप जी ने तीसरी बार पुनः उस चमड़े के बेजान खरगोश को, अपने चरणों से दूर धकेला, तो वह जीवंत हो उठा और वह सचमुच का खरगोश बनकर आगे की ओर भागा। गुरु जी यह दृश्य देखकर बहुत प्रसन्न हुए, परन्तु उनके घरवाले इस दृश्य को देखकर अत्यंत आश्चर्यचकित हुए। फिर वह खरगोश उछल-कूद करते हुए गुरु जी के समीप ही बैठ गया। गुरु जी उस खरगोश को देखकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे। उन्होंने पुनः उसे अपने चरणकंवलों से धकेला, परन्तु फिर वह खरगोश घरवालों के समीप से उछल कूद करते हुए, बाहर की ओर दौड़ गया। इसी बीच जब आपके फूफा जी बाहर से आए, तो वे सारा वृत्तांत सुनकर आश्चर्यचकित रह गए। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था क्योंकि उन्होंने स्वयं, अपने हाथों से गुरु जी के लिए, वह चमड़े का खिलौना बनाया था। तत्पश्चात् सारे परिवार ने गुरु जी के कोमल चरणकंवलों को चूमा तथा उन्हें प्रतीत हुआ कि हम गरीबों में भी गुरु जी ऐसे ही जान डालेंगे। इस घटना को कवि मंगू राम सरोया बाहड़वाल ने इस प्रकार अंकित किया है -

उमर गुरां दी होई इक साल दी,

शक्ति बेअंत जो है अलाही।

भूआ आप जी दी जो मिलण है आई,

चमड़े दा खलौणा सैहां लियाई है।

हत्थ विच गुरु जी खड़ौणा फड़के,

खेलदे है बैठे मंजे उते चढ़के।

चरनां ते फेरके सी परे सुट्टिया,

चम्म दा खड़ौणा बण सैहा नट्टिया। (जन्म साखी, पृष्ठ 16)

श्री गुरु रविदास जी अभी केवल 5 वर्ष के ही थे कि उनकी माता कलसी देवी जी प्रभु चरणों में जा बिराजे। इस दुख के कारण, उनके पिता संतोखदास जी के मन को बहुत ठेस लगी।

समय का चक्र घूमता रहा। गुरु रविदास जी जैसे-जैसे बड़े होते गए, उनके कोमल स्वभाव व सुन्दर व्यक्तित्व से सभी प्रभावित हुए।

करमावती नाम की एक औरत, जिसकी आयु 60-65 वर्ष की थी, सीरगोवर्धनपुर में ही रहती थी। उसका गुरु जी की दादी लखपती के साथ बहुत प्रेम था। दादी लखपती प्रायः अपने प्रिय पौत्र को साथ लेकर, उसे मिलने जाया करती थी। करमावती स्वयं लखपती को मिलने के लिए नहीं आती थी क्योंकि उसकी आँखों की रौशनी गए, 30 वर्ष बीत चुके थे, परन्तु फिर भी वह सारा दिन-चरखा

चलाती थी। जब दादी लखपती, करमावती के साथ गुजरे समय की बातें करती तो गुरु जी उनके पास बैठकर सुनते तथा करमावती के साथ हंसते-खेलते। लखपती जब उससे अंधेपन में, चरखा कातने का कारण पूछती, तो करमावती रो पड़ती और अपनी निर्धनता का वृत्तान्त व घरेलू विवशता खोल कर सुनाती। गुरु रविदास जी यह सब सुनते, तो उनका कोमल हृदय पिघल जाता।

एक दिन सुबह के समय, करमावती चरखा कात रही थी। गुरु रविदास जी अकेले ही उसके घर पहुँच गए। उन्होंने चुपचाप आकर, उसकी धागे की टोकरी उठा ली और निकट ही खड़े हो गए। बीबी करमावती ने हाथ से टटोलकर, धागे की टोकरी को देखा, परन्तु उसे वह नहीं मिली। कुछ देर बाद, गुरु रविदास जी ने, जब वह टोकरी उसी स्थान पर वापिस रख दी, जहाँ से उठायी थी, तब माता का हाथ उस टोकरी को लग गया। वह बहुत हैरान हुई क्योंकि उसने पहले भी तो वहाँ हाथ लगाकर देखा था। करमावती को, वहाँ किसी की उपस्थिति का अहसास हुआ, परन्तु वह घबरायी नहीं क्योंकि प्रायः बालक उसे सताया करते थे। फिर जब टोकरी में से धागा उठाकर वह कातने लगी, इतने में गुरु जी ने तकले में से गलोटा खींच लिया। करमावती को झटपट पता चल गया। जब गुरु जी ने चरखा खींचा तो करमावती को क्रोध आया और उसने अपने दोनों बाजू फैलाकर गुरु जी को पकड़ लिया और कहा, “तू कौन है?” गुरु जी ने अपने दोनों हाथ, करमावती की दोनों आखों पर रखे तथा कहा “लो माता, तुम स्वयं देख लो, मैं कौन हूँ।” करमावती शांत हो गई। जब करमावती ने आँखें खोलीं, तो उसे दिखाई देने लगा। उसने गुरु रविदास जी के सुन्दर आलौकिक स्वरूप के दर्शन किए। फिर माता करमावती ने, दोनों हाथ जोड़कर, गुरु जी को प्रणाम किया और कहने लगी, “हे महाराज! आपने मुझ पर बहुत कृपा की है। धन्य है वह माता, जिसने तुम्हें जन्म दिया है, धन्य है वह कुटुम्ब, जिसमें तुमने जन्म लिया है।” तदोपरान्त माता करमावती ने घर की प्रत्येक वस्तु की ओर देखा ओर मन ही मन अति प्रसन्न हुई। इतने में गुरु जी ने वहाँ से प्रस्थान किया।

माता करमावती का मन, अभी गुरु रविदास जी के, दर्शन करके नहीं भरा था, वह झटपट, गुरु जी के पीछे-पीछे, गुरु जी के घर पहुँच गई। उसने सारे परिवार को सारी कहानी बताई, तो सारे परिवार को यह चमत्कार सुनकर, अत्यंत आश्चर्य हुआ। उसने सभी को बताया कि यह सब आपके पुत्र की कृपा से हुआ है। आप सभी धन्य हो क्योंकि आपके घर परमात्मा ने जन्म लिया है। वह, सारे नगर में, गुरु जी की उपमा करने लगी।

पारिवारिक जीवन

श्री गुरु रविदास जी द्वारा दिए जा रहे, सत्य उपदेशों के कारण, मानव विरोधी, आप जी से ईर्ष्या करने लगे। आप जी के परिजन, इन बातों से काफ़ी चिंतित थे, परन्तु गुरु रविदास जी को, इन बातों की तनिक भी चिंता नहीं थी। गुरु जी सदैव ही, साधू संतों की संगत में, प्रसन्न रहते थे तथा अपने पिता संतोख दास जी के काम-काज में, हाथ बंटाय़ा करते थे। आप जी के पिता जी, जूते बनाने के कार्य में, बहुत व्यस्त रहते थे। पिता संतोख दास जी, गुरु जी के काम-धंधे के विषय में, बहुत चिंतित रहते थे। उनकी मनोकामना थी कि उनका पुत्र उनकी भांति ही, काम-काज करे, परन्तु गुरु जी, प्रायः साधू-संतों की संगत में, ज्ञान-ध्यान की बातें करते रहते और प्रभु का गुणगान करते। गुरु जी के ज्ञान की सुगन्धि से, सीरगोर्वधनपुर की सारी बस्ती महकने लगी। गुरु जी के पास, प्रत्येक धर्म के लोग आकर ज्ञान प्राप्त करने लगे।

किशोरावस्था में, प्रारम्भ में, गुरु जी ने पिता पुर्खी व्यवसाय किया। श्री गुरु रविदास जी बनारस जैसे कर्म-काण्डी शहर में, जब विश्व धर्म का संदेश दे रहे थे, तब मानव विरोधियों द्वारा, भ्रमवश, उनकी जाति को निम्न समझकर, परिहास किया जाता था। मानवविरोधियों के अनुसार, गुरु जी को उपदेशक बनने की अपेक्षा, केवल अपने जाति-कर्म (जूते बनाने) पर ही, ध्यान देना चाहिए। परन्तु गुरु जी दृढ़ निश्चयी थे और उन्होंने सारी सृष्टि को सही मार्ग पर लाने का, उत्तरदायित्व ले रखा था। गुरु जी की अटल अवस्था को देखकर, जातिभिमानीयों द्वारा गुरु जी को वेदों-शास्त्रों व मनुस्मृति के उद्धरण देकर, यमदूतों का भय दिया गया। गुरु जी ने मानवविरोधियों को फ़रमाया कि मैं परमात्मा के नाम का सिमरन करता हूँ, मेरा यमदूतों के साथ कोई संबंध नहीं है -

चमरटा गांठि न जनयी ॥

लोग गठावै पनही ॥ रहाऊ ॥

आर नही जिह तोपऊ ॥

नहीं रांबी ठाऊ रोपऊ ॥१॥

लोग गांठि गांठि खरा बिगूचा ॥

हऊ बिनु गांठे जायि पहुँचा ॥२॥

रविदास जपै राम नामा ॥

मोहि जम सिऊ नाही कामा ॥३॥ (पुष्ट 659)

गुरु जी की इच्छा थी कि वे धर्म के प्रसार व प्रचार को अधिक से अधिक

लोगों तक पहुँचाएँ ताकि मनुष्य का जीवन स्तर ऊँचा हो सके। वास्तव में, गुरु जी वह सब कर रहे थे, जो विश्व के इतिहास में कोई अन्य करने में असमर्थ था।

गुरु जी की बढ़ रही ख्याति को देखकर, मानव-विरोधी अति क्रोधित हुए क्योंकि एक शूद्र द्वारा उपदेश देना तथा लोगों को प्रभु-प्रेम का मार्ग समझाना उन्हें अच्छा नहीं लगा। मानवविरोधी गुरु जी को राज-दरबार में बुलाकर राजा द्वारा गुरु जी को दण्डित करवाए जाने की, साजिशें करने लगे। इन बातों का, जब पिता संतोख दास जी को पता चला तो उन्होंने गुरु जी को, विवाह-बंधन में, बांधने का निर्णय लिया। उन्होंने सोचा कि यदि गुरु जी का विवाह कर दिया जाए तो शायद वे प्रभु-भक्ति का मार्ग त्यागकर, गृहस्थ जीवन की ओर रुचित हो जाएंगे।

विचार-विमर्श के बाद, पिता संतोख दास जी ने यह फैसला कर लिया कि गुरु रविदास जी का विवाह कर दिया जाए, ताकि उनका मन तथा ध्यान घर-गृहस्थी की ओर लग जाए। कुछ समय बाद, गुरु रविदास जी की सगाई, मिर्जापुर में एक अच्छे परिवार की लड़की, लोनादेवी के साथ कर दी गई और शीघ्र ही उनका विवाह की तैयारियाँ होने लगीं। लोनादेवी जी भी बहुत ही धार्मिक विचारों वाली स्त्री थीं। विवाह उपरांत, उसने ससुराल जाकर, घर का सारा काम-काज संभाल लिया। उसका चेहरा सदैव फूल की भाँति, खिला रहता था। पुत्री समान बहु पाकर, पिता संतोख दास जी मन ही मन बहुत प्रसन्न रहते थे और परमात्मा को अति आभार प्रकट करते रहते थे। उन्हें अपना घर और भी अच्छा लगने लगा था।

श्रीमती लोनादेवी जी को जल्द ही अनुमान हो गया कि मेरे पति, सभी सांसारिक आत्माओं के पति-परमेश्वर प्रभु रूप हैं। इस लिए वह गुरु रविदास जी की सेवा में हर समय तत्पर रहती थी। वह समझ चुकी थी कि उसके पति गुरु रूप धारण कर, केवल अपने कुटुम्ब का ही नहीं बल्कि सारे ब्रह्मण्ड के पाप व अज्ञानता को दूर करके, सभी जीव-जन्तुओं का उद्धार करेंगे।

श्रीमती लोना जी की कोख से, एक बालक ने जन्म लिया, जिसका नाम विजय दास रखा गया। दस्तावेज पुस्तक 'दी चमार्ज' के लेखक, मि. जी. डबल्यू ब्रिगेस भी लिखते हैं, "आप (गुरु रविदास जी) की सुपत्नी का नाम लोना तथा सुपुत्र का नाम विजय दास था।"

गुरुमुखी अक्षरों की रचना करना

जिस समाज में गुरु रविदास जी का आगमन हुआ, वह सख्त प्रतिबन्धों के अधीन था। अज्ञानता व निर्धनता इस समाज की पहचान बन चुकी थी। गुरु रविदास

जी, अपने गरीब समाज का कायाकल्प करने की इच्छा रखते थे, वे प्रत्येक पक्ष से समाज में परिवर्तन लाना चाहते थे। गुरु जी ने सभी को ज्ञानवान होने के लिए प्रेरित किया :-

माधो अबिदिया हित कीन॥ बिबेक दीप मलीन॥ (पृष्ठ 486)

विवेक के दीपक को जलाने के लिए, आप ने गुरुमुखी के चौतीस अक्षरों की रचना की, जिससे समाज में जागृति आई और ज्ञानवान बनने की, नई किरण फूटी। जिस समाज को पढ़ने-लिखने नहीं दिया जाता था, वही समाज, अब गुरु जी के पास आकर अपना दीपक स्वयं बनने लगा। यहाँ तक कि (देव) नागरी अंकित पत्र पर, यदि किसी शूद्र की दृष्टि पड़ जाती थी, तो उसकी आँखों को निकालकर, उसे अंधा बना दिया जाता था। इन अकथनीय कष्टों के निवारण हेतु, दीन दयाल प्रभु गुरु रविदास जी ने समाज को गुरुमुखी अक्षर प्रदान किए। सतगुरु कबीर साहिब जी के अनुसार "पंडित मुलां जो लिखि दीया। छाड़ि चले हम कछु न लीया।" अब सब कुछ उसी प्रकार हो रहा था, जिस प्रकार गुरु रविदास जी महाराज चाहते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार मैकालिफ लिखता है, "श्री गुरु रविदास जी साहिब का तेज, प्रताप एवं यश एक सूर्य की भाँति, फैल गया।" गुरु जी की नेक व सुहिरद सोच के सामने कपटी, लालची और मानव विरोधियों की क न चली।

पुस्तक 'गुरुमुखी अक्षर भगत रविदास ने बनाए' के लेखक ज्ञानी गुरचरन सिंह वैद लिखते हैं -

(1) "गुरबानी द्वारा भक्त रविदास जी के गुरुमुखी अक्षर बनाना सिद्ध होना, उनकी वाणी द्वारा पूर्ण रूप से समझा जा सकता है।" आप जी लिखते हैं - 'नाना ख्यान पुरान बेद बिध चौतीस अखर माही।' इसका भाव है कि वास्तव में अक्षर चौतीस ही हैं, पण्डितों ने, ज्ञान को कठिन बनाने के लिए देव नागरी के अक्षरों को अकारण ही बढ़ाकर, 52 कर छोड़ा है। इससे सिद्ध हो गया है कि प्रारम्भ में केवल चौतीस अक्षर, गुरुमुखी की आवश्यकतानुसार, जो बताए व सांकेतिक किए गए हैं, वे भक्त रविदास जी की ही देन हैं। श्री गुरु नानक देव जी और श्री गुरु अंगद देव जी ने नहीं बनाए।

(2) अछूत वर्ग के लिए संस्कृति भाषा पढ़ने/पढ़ाने पर पूर्ण प्रतिबन्ध था। अछूत वर्ग की आवश्यकता को पूरा करने हेतु गुरु रविदास जी ने, गुरुमुखी अक्षर बनाए, ताकि यह पिछड़े शूद्रों एवं स्त्रियों का वर्ग विद्या ग्रहण कर, ब्राह्मणवाद की पराधीनता से, मुक्त होकर, सम्मानित जीवन जी सके और उन्नति कर सके। (संदर्भ वही)

भारत-पाकिस्तान के विभाजन से पूर्व, लाहौर की अदालत ने भी यह

फैसला किया था कि 'गुरुमुखी की रचना, श्री गुरु रविदास जी ने की है।' इस प्रकार, गुरु रविदास जी, केवल एक धार्मिक नहीं, बल्कि भारतीय साहित्य के निर्माता भी हैं। गुरु जी ने गुरुमुखी के 34 अक्षरों की रूप-रेखा बनाकर, समाज को, इन अक्षरों से अवगत करवाते हुए फरमाया -

नाना ख्यान पुरान बेद बिधि-चऊतीस अखर माही ॥ (पृष्ठ 658)

गुरु रविदास जी ने जिन 34 अक्षरों की रचना की वे निम्नलिखित अनुसार हैं

“ੴ ਅਣਮੋਹਕ ਖਡਗ ਘੜਚ ਛਜ ਝਵਟ ਠਡ ਢਣ ਤਥ ਦਧ ਨਪ ਥਥ ਭਮ ਭਲ
ਵ”

बहुत से विद्वान, उन्हें गुरुमुखी के 34 अक्षरों के रचयिता मानते हैं और 'ੴ' अक्षर के विषय में उनका मत है कि यह अक्षर बाद में जोड़ा गया है, परन्तु गुरु जी की वाणी - हाड़ मास नाड़ी को पिंजर..., द्वारा यह सिद्ध होता है कि 'ੴ' अक्षर का प्रयोग आप जी ने अपनी वाणी में किया है। इसलिए गुरुमुखी के विस्तार हेतु आप जी ने बाद में 'ੴ' अक्षर की रचना भी कर दी हो सकती है। यह कार्य चौतीस अक्षरों के रचयिता के लिए मामूली था, परन्तु इसकी पंजाबी जगत के लिए अद्वितीय देन है।

पुस्तक “गुरु रविदास कावि-कला” में डॉ. कृष्णा कलसीया ने “गुरु रविदास वाणी विच पंजाबी प्रधानता” शीर्षक के अधीन अपने विचार इस प्रकार अंकित किए हैं -

“श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित गुरु रविदास वाणी में पंजाबी प्रभाव की झलक मिलती है। जैसे :-

पहिले पहरै रैण दे बणिजरिया, तैं जनम लिया संसार वे।
सेवा चूको राम की बणिजरिया, तेरी बालक बुद्धि गंवार वे ॥१॥

बालक बुद्धि गंवार न चेतियो, भूला माया जाल वे।
कहा होय पाछे पछिताये, जल पहिले न बांधी पाल वे ॥२॥

बीस बरस का भया अयाना, थामि न सका भाव वे।
जन रविदास कहै बणिजरिया, जनम लिया संसार वे ॥३॥

दूजे पहरै रैण दे बणिजरिया, तूँ निरखत चालियो छांह वे।
हरि न दमोदर ध्याइया बणिजरिया, तैं लेयी न सका नांव वे ॥४॥

नांव न लीया औगुन कीया, इस जोबन कै तान वे।
अपनी परायी गिनी न कायी, मंद करम कमान वे ॥५॥

साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी, भीर परै तुझ तांह वे।
जन रविदास कहै बणिजरिया, तूँ निरखत चाला छांह वे ॥६॥

तीजै पहरै रैण दे बणिजरिया, तेरे ढिलड़े पड़े प्रान वे।
काया रवानी ना करै बणिजरिया, घट भीतर बसे कुजान वे ॥७॥

एक बसै कुजान कायागढ़ भीतर, पहिला जनम गंवायि वे।
अब की बेर न सुकिरित कीयो, बहुरि न यहि गडि पायि वे ॥८॥

कंपी देह कायागढ़ छीना, फिर लागा पछितान वे।
जन रविदास कहै बणिजरिया, तेरे ढिलड़े पड़े परान वे ॥९॥

चौथे पहरै रैन दे बणिजरिया, तेरी कंपन लागी देह वे।
साहिब लेखा मांगिया बणिजरिया, तू छाड़ि पुरानी थेह वे ॥१०॥

छाड़ि पुरानी जिंद अयाना, बालदि लदि सबेरिया वे।
जम के आये बांधि चलाये, बारी पूगी तेरिया वे ॥११॥

पंथ चले अकेला होय दुहेला, किस को देह सनेह वे।
जन रविदास कहै बणिजरिया, तेरी कंपन लागी देह वे ॥१२॥

उपरोक्त शब्द में बणिजरिया, बालक बुद्धि, जोबन, गंवरा, मंदे करम, थंभि, बरस, निखरे, पिरान, पाल आदि पंजाबी-प्रधान शब्द काव्य भाषा से संबंधित हैं। इसके अतिरिक्त बरन पलटि भयो, धन्नि सो पंथी, घटि घटि बयापि रहयो, संत उतारे आरती देव सिरोमनीये, धूप धूपाइये, तनमन आतम बारि, सदा हरि गाइये, सघन बन विकु, काम कलेश, जब लागि तन मन सुध न होय, भगति न होय बहु गुण कीनै, संतों कुल पखी भगति हवैसी कलियुग मैं, बिन विसवास, निसि बासर दुसकरम कमायी, राम कहत बैकुंठे जायी। मेरी कुचील जाति कुचीला मे बास, बरस सहस दस जुध कराइयो जुगल उधारण राज, निरंजन ध्याऊं, जिस घरि जाऊ हों बहुरि ना आऊं, प्रेम की पाटि सुरति लेखनि, ररा ममा लिखि अंक दिखाऊं ॥ आदि पंजाबी प्रधान लोक-भाषा से संबंधित वाक-वंश हैं।

पंजाबी उच्चारण में, जब दो से अधिक अक्षर दीर्घ स्वर के हों, तो आरंभिक स्वर अपने आप ही लघु हो जाता है, जैसे आधार, अधार में परिवर्तित हो जाता है :-

- कलि केवल नाम अधार ॥

- जीवत मुकन्दे मरत मुकन्दे। ता के सेवक को सदा अनन्दे ॥

चंदा अथवा चांद की तुलना पर चंद शब्द, नाऊं शब्द का प्रयोग, सैर के स्थान पर सैल, घना के स्थान पर घणा ('न' के स्थान पर 'ण' प्रयोग) यूं के स्थान पर इयूं, परचणा शब्द का प्रयोग पंजाबी उच्चारण के अनुसार हुआ है :-

- जऊ तुम चंद तऊ हम भये है चकोरा ॥

- तिऊं तिऊं सैल करहि जिऊं भावे

मरहम महल न को अटकावै ॥

- घट अवघट डूगर घणा ॥

- इयूं गुर प्रसादि नरक नहीं जाता ॥

- फेडे का दुख सहे जीऊ।

- परचै राम रवै जो कोय।

गुरु रविदास वाणी में पंजाबी क्रियाओं का काफी प्रयोग मिलता है, जिससे

उनकी काव्य-भाषा पंजाबी-प्रधान नज़र आती है, जैसे :-

- टांडा लादिया जायि रे ॥

- मेरा मन बिखिया बिमोहिया ॥ (गाऊड़ी पूरबी)

- निमत नामदेऊ दूध पीयाइया ॥

तऊ जग जनम संकट नहीं आया ॥ (राग आसा)

- निंदक सोधि सादि बीचारिया ॥

कहु रविदास पापी नरकि सिधारिया ॥ (राग गोंड)

- होय पुनीत भगवंत भजन ते

आप तारि तारे कुल दोय ॥ (रागु बिलावल)

पंजाबी में परिसर्ग लगने से, शब्द का अंतिम 'अ' बदल कर 'ऐ' हो जाता है,

रमइये सिऊ इक बेनती (राग गाऊड़ी), रमइये रंग मजीठ का (राग गाऊड़ी)।

उपरोक्त अध्ययन के उपरांत हम बिना हिचकिचाहट कह सकते हैं कि गुरु

रविदास वाणी की भाषा, पंजाबी प्रधान, सहज लोक भाषा है।

गुरु रविदास वाणी की काव्य-कला पर, तीक्ष्ण बुद्धिमत्ता के साथ डॉ.

कलसीया ने, जो ब्यान किया है, वह सचमुच ही प्रशंसनीय है। इस प्रकार गुरु रविदास

वाणी की काव्य-कला से भी यह सिद्ध होता है कि गुरु रविदास जी, पंजाबी के ज्ञाता

ही नहीं, बल्कि बहुत बारीकी से पंजाबी भाषा पर पकड़ रखने वाले थे। अतः

निःसंदेह पंजाबी की रचना उन्होंने ही की है।

गुरुमुखी अक्षरों की रचना के उपरांत, गुरु जी न ज्ञान के दीपक जलाने में,

कोई कसर नहीं छोड़ी। गुरु जी ने फ़रमाया -

सति विदिया को पड़े सदा प्राप्त करें गियान।

रविदास कहे बिन विदिया नर को जान अजान ॥

गुरु जी के प्रचार का ढंग बहुत मिठास भरा था। वे अपने तेजस्वी स्वरूप

तथा मधुर वचनों से, सभी का मन मोह लेते थे। वे मानवता को प्रेम-प्यार एवं नेक

कमाई का सबक पढ़ाना चाहते थे। चमार बच्चों को इस प्रकार पढ़ते हुए देखकर

मानव-विरोधी कांप उठे, क्योंकि गुरु रविदास जी का यह कार्य भारत के इतिहास में सबसे बड़ा क्रांतिकारी कदम था। इस कदम से ही, सदियों से पीड़ित, दलित समाज में, सोचने-समझने की शक्ति पैदा हुई।

गुरु जी की पावन वाणी से प्रतीत होता है कि आपको बहुत सी भाषाओं का ज्ञान था। गुरु जी ने अपनी वाणी में, शिक्षित होने तथा विचारशील बनने की शिक्षा ही नहीं दी, बल्कि नियमित रूप से आप अपने शिष्यों को पढ़ाते भी थे। बहुत स विद्वान इस मत से सहमत हैं कि गुरु जी ने अपने घर में ही पाठशाला खोल रखी थी, जहाँ बहुत से लोग, विद्या ग्रहण करने के लिए आते थे। आप जी के ज्ञान का, बड़े-बड़े विद्वान लोहा मानते थे, जो आप जी ने अपनी वाणी में अनेक बार स्पष्ट किया है :-

अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडयुत

तेर नाम सरणायि रविदासु दासा ॥३॥१॥ (पुष्ट 293)

गुरु रविदास जी की पावन वाणी के केवल 40 शब्द ही, श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं। गुरु जी द्वारा इन 40 शब्दों में, प्रयुक्त कई ऐसे शब्द हैं जो संपूर्ण गुरु ग्रंथ साहिब में, अन्य किसी भी गुरु ने, प्रयोग नहीं किए। जैसे - सुभायी, साभा, बिलांबा, अंदोह, तसवीस, आबादान, मामूर, महरम, दादिरा, बिमोहिया, उनमन, असोच, ओलग, ओल्हगणी, बिगूचा, पतीयारू, अविलोकनो, मधुकरू, भाखड, उरसा, अंभुला, अभाखै आदि, जिससे आप जी के विशाल शाब्दिक ज्ञान/भंडार का पता चलता है। केवल यही नहीं, आप जी के विशाल ज्ञान के कारण ही उस समय आध्यात्मिक संगीत पद्धति के निर्माण में, तीव्रता आई थी।

प्रसिद्ध लेखक रतन रीहल अपनी पुस्तक “गुरुआं दे गुरु श्री गुरु रविदास जी” में लिखते हैं : “आप जी ने अपनी वाणी, कई रागों में उच्चारण की है, जिससे प्रतीत होता है कि गुरु रविदास जी संगीत विद्या के महान् विद्वान थे। गुरु रविदास जी ने इलाही वाणी को रागों में उच्चारित किया।” लेखक आगे लिखता है, “प्रत्येक मत में राग-रागनियों के नामों, नेमों एवं स्वरूपों में बहुत सा अंतर पाया जाता था। इस मतभेद तथा अंतर-देश भेद के कारण, श्री गुरु रविदास जी ने, राग-रागिनी पद्धति को, न केवल अवैज्ञानिक समझा, बल्कि रागों को उनकी सही आठ सुरों में, बैठाकर उनके नाम के अनुसार ही, उन्हें राग बनाकर, प्रयोग किया। जिस राग-वर्गीकरण के संबंध में, आधुनिक संगीतकार कुछ विचार करने के लिए सोच रहे हैं, उन रागों की नींव श्री गुरु रविदास जी पाँच सौ वर्ष पूर्व ही रख चुके हैं। उन्होंने अपनी वाणी सोलह रागों में उच्चरित की है। श्री गुरु नानक देव जी ने भी गुरु रविदास जी द्वारा रचित सारे रागों को अपनी वाणी का आधार बनाया है।

इसके साथ ही साथ गुरु रविदास जी ने प्रचलित धर्म में दाखिल हो चुके झूठे कर्म-काण्ड से अवगत ही नहीं करवाया, बल्कि प्रभु-भक्ति का सत्य मार्ग भी दिखाया।

गुरु जी ने, समाज के दुख-कष्ट के कारणों को हल करने के लिए, भक्ति एवं शक्ति का मार्ग अपनाया। उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि हमें आपस में, मधु-मक्खियों की भांति मिल-जुल कर रहना चाहिए, तभी भक्ति पर शक्ति का रंग चढ़ेगा, यह सत्य की संगत से ही संभव है :-

सतसंगति मिलि रहीये माधऊ जैसे मधुप मखीरा ॥ (पृष्ठ 486)

पीरां दित्ता मरासी की ईर्ष्या

गुरु रविदास जी महाराज सब का भला चाहने वाले महापुरुष थे। उन के हृदय में सब के लिए प्यार था। वह पुरुष भले किसी भी जाति का क्यों न हो। वह सब को सत्य का उपदेश देते थे। बुराईयों से हटा कर सत्यमार्ग पर जीवों को लगाना ही गुरु जी के जीवन का लक्ष्य था। गुरु रविदास जी के विचारों से प्रभावित हो कर सभी वर्णों के लोग उन के पास श्रद्धा पूर्वक आने लगे।

पीरां दित्ता मरासी को यह अच्छा न लगा और वह गुरु रविदास जी से ईर्ष्या करने लगा। उस ने एक दिन नगर के बाहर एकांत में एक सभा बुलाई। समाज के कई शिरोमणी लोग वहां आये। सब ने पीरां दित्ता की बात को सुन कर गुरु जी को मार देने का विचार किया और इस विचार से यहाँ उपस्थित लगभग सभी लोग सहमत हो गये। गुरु जी ज्यों ही उस सभा में पहुँचे तो कुछ लोग कटु वचन कहने लगे। गुरु जी ने उन लोगों से कहा कि आप बुरे वचन क्यों बोल रहे हो? जिह्वा से पवित्र वचन बोलने चाहिए, जिन को सुन कर दूसरों का भला हो और अपना कल्याण हो। कटु वचन बोलने से क्या लाभ है?

दूसरा मेरा आप लोगों से कोई विरोध नहीं है, मेरे लिए कोई धर्म अच्छा या बुरा नहीं है। अच्छे कर्म करने से पुरुष अच्छा कहा जाता है और बुरा करने वाला और औरा बुरा सोचने वाला, बुरा माना जाता है। विवेकी आदमी तो गुरु जी के मुख से अमृत सदृश वचन सुन कर गुरु जी की शोभा करने लगे और जो दुष्ट प्रवृत्ति के थे वह आक्रमण पर उतर आये। ऐसा देख कर गुरु जी ने प्रभु की शरण ली और उच्चारण किया :

राम गुसईया जीअ के जीवना ॥

मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥ रहाउ ॥
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥
चरन न छाडओ सरीर कल जाई ॥
कहु रविदास परउ तेरी सांभा ॥
बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥ (राग गउड़ी)
जब गुरु रविदास जी ने यह वाणी उच्चारण की तो एक तेज प्रकाश निकला सब को गुरु रविदास के स्वरूप ही सब तरफ दिखाई देने लगे। सब लोग वहीं देखते रह गये और इधर घर आकर गुरु जी ने फिर शंख नाद किया। समर्थ पुरुष के आगे किसी की कोई चाल नहीं चलती सभी लोग गुरु जी के चरणों में गिर पड़े।
बनारस में, जब संगत गुरु रविदास जी के दरबार में श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मन्दिर में आती है तो वहाँ से आकर लोग बताते हैं। लौटा वीर के पास यह स्थान बताया जाता है और मन्दिर के आगे से जो सड़क जाती है गंगा जी की तरफ उसी रास्ते के बगल में ये स्थान बतलाते हैं।

ठाकुर तारने की कथा

गुरु रविदास जी अपने पवित्र कार्यों एवं पावन चरित्र के प्रभाव से उस काल में अद्वितीय ख्याति प्राप्त कर चुके थे। एक छोटी समझी जाती जाति के महापुरुष का समाज में ऐसा प्रभाव देख कर कुछ लोग उन से ईर्ष्या करने लगे। यह बात उनको अच्छी नहीं लगी। उस समय के अनुरूप यह बात बिल्कुल असहनीय थी।

ब्रह्मज्ञानी के रूप में और सत्य उपदेश देने वाले सच्चे महापुरुष के रूप में वे लोग एक छोटी समझी जाने वाली जाति के आदमी को कैसे सहन कर सकते थे?

यह सब देख कर कुछ लोगों ने आप का विरोध करना शुरू कर दिया। इस विरोध के बारे में कई गाथाएँ प्रचलित हैं, जिस का संकेत गुरु रविदास जी ने अपनी वाणियों में भी किया।

गुरु रविदास जी नित्य-प्रति अपनी कुटिया में सत्संग किया करते थे, धीरे-धीरे बहुत से लोग आप के जीवन व सत्संग से प्रभावित होकर सत्संग में आने लगे। आप के अमृत सदृश वाणियों की चर्चा को सुन कर, अपने जीवन को सफल बनाने लगे। आप के मुख से प्रवचनों को सुन कर जनता को एक नया मार्ग प्राप्त हुआ। आप ने कहा:

जन्म जाति कू छाड़ि कर करनी जात प्रधान

इहयो वेद को धर्म है कहै रविदास बखान ॥
 ब्राह्मण खतरी वैश सूद रविदास जन्म ते नाहिं
 जो चाहे सुबरन कऊ पावई करमन माहिं ॥
 रविदास जन्म के कारनै होत न कोऊ नीच
 नर कू नीच करि डारि है ओछे करम की कीच ॥
 गुरु जी ने समाज को सही दिशा प्रदान करने हेतु सत्य का रास्ता दिखाया ।
 आपका कहना था कि कोई प्राणी जन्म से शूद्र नहीं होता । किसी भी प्राणी की जाति
 को देखने से पहले उस के गुणों को देखना चाहिए ।
 रविदास ब्राह्मण मत पूजिए, जऊ होवे गुन हीन ।
 पुजहिं चरन चंडाल के, जऊ होवे गुन परवीन ॥
 गुरु रविदास जी की तरह और संतों ने भी इस बात पर बल दिया कि जो
 ब्रह्म को जानने वाला है वह ही ब्राह्मण कहलाने योग्य है ।
 गुरु रविदास के सच्चे विचारों से प्रभावित होकर उस काल के बहुत राजे
 और रानियाँ आप के शिष्य बने । यहीं कारण था कि आप को मानव विरोधियों का
 कड़ा विरोध सहना पड़ा ।
 एक बार काशी नरेश वीर सिंह बघेला के पास कुछ लोगों ने शिकायत की
 कि आप के राज्य में एक शूद्र रविदास धर्म गुरु बन कर लोगों को उपदेश देता हैं, यह
 बात ठीक नहीं हैं । यह काम तो ब्राह्मणों का है ।
 यह शिकायत जब राजा ने सुनी तो राजा ने संदेश भेज कर गुरु रविदास जी
 को अपनी सभा में बुलाया और साथ ही विरोधी दल को भी । दोनों पक्षों के बीच
 शास्त्रार्थ करवाया । इस दृश्य को देखने के लिए बहुत बड़ी संख्या में लोग उपस्थित
 हुए । काफी लम्बे समय तक चर्चा चलती रही । गुरु रविदास जी के सामने पंडितों का
 पक्ष निर्बल सिद्ध हुआ । विरोधियों ने जब देखा कि उन का पक्ष निर्बल हो रहा है तो
 उन्होंने प्रयास किया कि कोई निर्णय न होने पाए । ऐसी स्थिति में जनता की इच्छा और
 राजा की आज्ञा के अनुसार फैसला हुआ कि अपने-अपने ठाकुर यहाँ सभा में लाओ ।
 उनको गंगा जी में बहा कर फिर वापिस बुलाने का आदेश हुआ । निर्णय लिया गया कि
 जिसके ठाकुर बुलाने पर ऊपर आ जाएँगे उस को पूजा और उपदेश करने का अधिकार
 होगा । विजेता को सोने की पालकी में बिठा कर पूरे नगर में घुमाया जाएगा ।
 नियत अवसर पर गंगा जी के तट पर बहुत सारे लोग (राजघाट के स्थल
 पर) यह लीला देखने के लिए पहुँचे । पंडित जन काठ के ठाकुर लेकर आए और गुरु
 रविदास जी पत्थर की शिला को उठा लाए जिस पत्थर पर वे अपना दैनिक कार्य किया

करते थे । पंडित जन यह देख कर मन ही मन खुश हो रहे थे कि हम इस मुकाबले में
 जीत जाएँगे और रविदास जी हार जाएँगे, क्योंकि पत्थर पानी में डूब जायेगा ।
 बहुत भीड़ इकट्ठी हो चुकी थी, सब लोग इन्तज़ार में थे कि देखो इस
 मुकाबले में कौन जीतता है । लोगों में उत्सुकता थी कि कब काशी नरेश वीर सिंह
 बघेला का आदेश होगा । समय देखते हुए बादशाह ने पहले पंडितों को आदेश दिया
 कि तुम अपने ठाकुर जी को गंगा जी में बहाओ और फिर वापिस बुलाओ । राजा के
 आदेश को पाकर पंडित जनों ने अपने ठाकुर को गंगा जी प्रवाहित धारा में बहा दीये ।
 इस के पश्चात् मंत्र उच्चारण करके ठाकुरों को वापिस बुलाने लगे । यह सब कुछ दूर दूर
 से आए हुए लोग देख रहे थे । बहुत देर तक बुलाने पर भी जब ठाकुर जी पानी के ऊपर
 नहीं आए, तब काशी नरेश ने गुरु रविदास जी को कहा और कहा कि रविदास जी !
 आप भी अपने ठाकुर जी को गंगा जी में बहा दो और फिर उनको वापिस बुलाओ ।
 गुरु रविदास ने राजा का आदेश सुन कर प्रभु को याद किया कि प्रभु जी मुझे
 केवल आप का ही सहारा है इस मुश्किल में मैंने आप को याद किया है आप आकर
 दर्शन दीजिए और मेरी लाज रखिए । गुरु रविदास जी आँखें बन्द कर गंगा जी के तट
 पर बैठ गये और प्रभु स्तुति में बोलने लगे । कहने लगे कि हे प्रभु जी मैंने आप के साथ
 साँची प्रीति लगाई है ।
 जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ।
 जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥१॥
 माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि ।
 तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ॥१॥ रहाउ ॥
 जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ।
 जउ तुम तीरथ तउ हम जाती ॥२॥
 साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ।
 तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ॥३॥
 जह जह जाउ तहा तेरी सेवा ।
 तुम सो ठाकुर अउरु न देवा ॥४॥
 तुमरे भजन कटहि जम फांसा ।
 भगति हेत गावै रविदासा ॥५॥ ॥५॥
 जैसे पर्वत और मोर, चन्द्रमा और चकोर, तीर्थ और यात्री का प्रेम है ऐसी ही
 मेरी प्रीति आप से है । इस के साथ फिर प्रेम भाव से प्रभु दर्शन के लिए निवेदन करने
 लगे । निम्न पद का आपने उच्चारण करना आरंभ किया :

कृपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ।
 ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सुझ ॥१॥
 सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥१॥ रहाउ ॥
 मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ।
 करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥२॥
 जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार।
 प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥३॥१॥
 उन्होंने बिह्वल हो कर यह पद भी कहा:
 आयो आयो हौं देवाधिदेव तुम सरन आयो।
 सकल सुख का मूल जा को नहीं समतूल
 सो चरन मूल पायो।
 लियो विविध जोनि वास जम को अगम त्रास
 तुम्हारे भजन बिन भ्रमत फिर्यो ॥
 माया मोह विषय लंपट निकाम यह
 अति दुस्तर दूर त्रयो।
 तुम्हारे नाम विसास छाँडिऐ आन आस
 संसारी धर्म मेरो मन न धीजै।
 रविदास की सेवा मानहु देव
 पतित पावन नाम आजु प्रगट कीजै।
 यह पद पूरा कहने के बाद जब श्री गुरु रविदास जी ने अपने नेत्र खोले तो
 क्या देखा कि जल के ऊपर शिला रूप ठाकुर जी तैर रहे हैं। सतिगुरु रविदास जी प्रेम
 भाव से ठाकुर जी को जिस ओर बुलाते हैं उसी तरफ ठाकुर जी दर्शन देते हैं। सारी
 दुनियां यह अदभुत दृश्य देख कर गुरु जी की जय जय कार करने लगी। सब लोग गुरु
 रविदास जी को साक्षात् परमात्मा का रूप समझने लगे। सभी ने गुरु जी के चरणों
 कैवल्यों में दंडवत् प्रणाम किया। गुरु जी ने सबको उपदेश दिया कि हर जीव को
 अपनी इच्छा अनुसार प्रभु की पूजा करने का अधिकार है। राजा बीर सिंह बघेला ने भी
 श्री गुरु रविदास जी को प्रणाम किया और श्री गुरु रविदास जी को विनय की कि आप
 मुझे अपना शिष्य बना लें। राजा ने सब लोगों को कहा कि मेरे गुरु रविदास जी प्रभु का
 स्वरूप हैं। आप लोगों को इनके साथ ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए थी। आज हम सब को
 ठाकुर जी का साक्षात् दर्शन हुआ है हम सब के अहो भाग्य हैं।

सब लोग जब प्रणाम कर चुके तो बनारस शहर में श्री गुरु रविदास जी को
 श्रद्धा पूर्वक हाथी पर सोने की पालकी में बिठा कर और छत्र लगाकर गुरु जी हाथी पर
 सवार आगे-आगे और राजा समेत सभी लोग गुरु जी के पीछे-पीछे चले और शहर
 की परिक्रमा की गई। सभी लोग श्री गुरु रविदास जी के दर्शन करके आनंदित हो रहे
 थे। पालकी जहाँ-जहाँ से गुजरती थी वहाँ-वहाँ सभी नगर निवासी प्रेम भाव से फूलों
 की वर्षा कर रहे थे। शाम को श्री गुरु रविदास जी को उन के स्थान पर पहुँचाया गया।
 गरीब लोगों को आज बहुत बड़ी प्रसन्नता प्राप्त हुई। सभी लोग श्री गुरु रविदास जी
 के आदेश के अनुसार सत्कर्म में लग गये और सभी लोग नित्य प्रति गुरु जी के
 उपदेश को सुन कर जीवन में ग्रहण करके मनुष्य जन्म का लाभ लेने लगे। आओ आज
 हम सब मिल कर गुरु जी के उपदेश को अपने जीवन में धारण करके अपने जीवन को
 पवित्र बनाएं और गुरु जी के जो पावन कल्याणकारी उपदेश हैं उन को पढ़ सुन कर
 और हृदय में धारण करके इस अमूल्य जन्म को सफल करें।

जो बोले सो निर्भय।

श्री गुरु रविदास महाराज की जय ॥

प्रभु का साधू वेश में श्री गुरु रविदास जी को पारस भेंट करना

वरस सात को भयौ है जबही, नौधा भक्ति चलाई तब ही।
 अरु भगतन की सेवा कई। सतगुरु कहो सो सीष न तरई ॥
 श्री गुरु रविदास जी जब सात वर्ष के हुए तो प्रेमी जन गुरु जी के पास आकर
 भक्ति का आनन्द प्राप्त करने लगे। जो अकाल पुरुष सतिगुरु की ओर से जन कल्याण
 की सेवा लगाई गई थी, उस सेवा को श्री गुरु रविदास जी निभाने लगे। प्रतिदिन बड़ी
 से बड़ी संख्या में संगत् दरबार में आने लगी।
 बरस सात और चलि गइआ, बहुत प्रीति केसो सु भइआ।
 एसी ही प्रभु भक्ति में सात बर्ष और व्यतीत हो गए।
 प्रभु से आप की बहुत गहरी प्रीति लग गई। गुरु जी हर रोज अपने सत्य
 कर्म में तत्पर रहते थे। अपने हाथों से मेहनत करके संगत की और घर आए संतों की
 सेवा किया करते थे।
 सीधो चाम मोलि ले आवे। ताकी पनहीं अधिक बनावे।
 टुटे फाटे जरवा जोरे। समकति करे काहू न निहोरे ॥

गुरु जी स्वयं चमड़े के सुन्दर - सुन्दर जूते तैयार करते थे। कई बार सन्तों को तथा जनसाधारण बिना पैसे के ही पनही भेंट कर दिया करते थे। इस ढंग से श्री गुरु रविदास जी ने समझाया की सब को अपनी उपजीविका के लिए पूरे बल के साथ मेहनत करनी चाहिए। संतों की संगत और सेवा करके हरि-भजन का लाभ लेना, यही मनुष्य जीवन का लक्ष्य है।

बरस सात ऐसी विधि गईआ, केसी के मन उपजी दईआ ॥
तब हरि भक्त रूप धरि आयो। जन रविदास बहुत मन भायौ।

अब श्री गुरु रविदास जी 21 वर्ष के हो गए तो एक दिन प्रभु साधू के वेश में गुरु जी के पास आये। श्री गुरु रविदास जी दर्शन करके बहुत प्रसन्न हुये। गुरु जी ने साधू वेश भगवान का बहुत प्रेम पूर्वक आदर किया और श्रद्धा सहित आसन पर बिठाया गुरु जी ने कहा कि आपने बहुत कृपा की, दर्शन दिये, आज मेरे भाग्य धन्य हो गये। इस प्रकार प्रेम वाणी का उच्चारण करके साधू वेश भगवान के चरणों को जल से धोया। इस के साथ ही एक घड़ी तक सत्संग हुआ। फिर भगवान को भोजन करवाया गया। जब हरि भोजन कर चुके तब आपसी चर्चा पुनः प्रारम्भ हुई। हरि कहने लगे कि आप के पास कुछ संपत्ति तो दिखाई नहीं देती, आप आपना निर्वाह किस प्रकार करते हो? तब श्री गुरु रविदास जी ने उत्तर दिया कि मेरी संपत्ति तो परमात्मा का नाम ही है। उस से बड़ी संपत्ति मैं और कोई नहीं समझता हूँ।

कोटि लछमी जाकै चरना। दुष दाखि नहीं तिहि सरना ॥
करोड़ों की गिनती में लक्ष्मी (धन) जी आपके चरणों में निवास करती हैं। उन की शरण में दुःख और गरीबी कैसे हो सकती है। जब इस प्रकार का श्री गुरु रविदास जी ने उत्तर दिया तो ऐसा उत्तर पाकर हरि जी को बहुत प्रसन्नता हुई। प्रभु फिर कहने लगे कि हे रविदास जी मेरा एक वचन मानों तो सब गरीबी आज ही दूर हो जाएगी। मैं बचपन से ही वैरागी हूँ जब मैं आप के घर को आ रहा था तो रास्ते में मुझे एक पारस पत्थर मिला है। यह मेरे तो किसी काम का नहीं है, इस लिए मैं अपने दयालु स्वभाव से यह आप को योग्य अधिकारी समझ कर देना चाहता हूँ। इस पारस पत्थर से जब लोहा स्पर्श होता है तो सोना बन जाता है। इस से सोना बना कर सुन्दर घ बनवाओ और आराम से जीवन व्यतीत करो और घर आई संगत के लिए खूब अच्छी व्यवस्था बनाओ।

श्री गुरु रविदास जी यह वचन सुन कर बिल्कुल चुप रह गये। सोचने लगे कि क्या ये मेरी मत को बिगाड़ने या भक्ति को नष्ट करने आये हैं। श्री गुरु रविदास जी एक घड़ी तक मौन हो गये।

घरी एक रदिवास न बोल्य, हरि जी गांठि ते पारस षोल्य ॥
तु जिनि मानै डहकै हमको। निहचै कीया देत हैं तुम को ॥

तब प्रभु ने पारस गांठ से निकाला और कहा कि आप जैसे भी समझो, हमने आप को योग्य समझा है इसलिए निश्चय यह आप को ही दूँगा। तब भगवान ने एक सूई के साथ पारस को लगाया तो वह सोने की हो गई। यह देखकर श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि इस को लेना तो अलग रहा इस को कभी आँखों से भी नहीं देखूँगा। संत मत ने तो इस को हाथ लगाने से मना किया है। यदि सोने से ही सब काम हो जाएँ तो राजा लोगों ने राज्य क्यों छोड़े हैं? उन्होंने भिक्षा माँग कर अपना जीवन निर्वाह किया है और कामनी को दोष रूप कहा है। (तब भगवान ने कहा कि कंचन को दोष मत दो। कंचन से सुन्दर सुन्दर मंदिर तैयार होते हैं। कंचन से हरि की सेवा की जाती है। कंचन से बैकुण्ठ पुरी बनाई जा सकती है। कंचन से भंडारा आदि किया जा सकता है। तब गुरु जी ने कहा कि कंचन से बहुत पाप होते हैं और जीव नरक में जाता है। कंचन से पुरुष जुआ खेलने वाला, शराब पीने वाला वैश्यागमी, माँस खाने वाला हो जाता है। तो कहो किस प्रकार उद्धार करेगा और यदि महोछे की बात कहो तो तुम स्वयं ही महोछा क्यों नहीं करते, हमें क्यों ये पत्थर दे रहे हो। गुरु जी ने कहा कि हमें आप के ऊपर पूर्ण विश्वास है। श्री गुरु रविदास जी ने इस बात को रंचक मात्र नहीं माना।)

यह देख कर हरि ने पारस अपनी गांठ से खोल कर वहां रख दिया। श्री गुरु रविदास जी पीछे हट गए। तब साधू(हरि)ने कहा कि यह हमारी अमानत तुम अपने पास रख लो। मैं कुछ दिन के लिए आगे जा रहा हूँ और वापिस आकर ले जाऊँगा। श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि इस छपरी में जहां चाहें रख लो और वापिस आ कर वहीं से ले लेना। भगवान सोच रहे थे कि रविदास जी इस पारस को हमारे बाद निकाल कर प्रयोग करेगा।

13 महीने व्यतीत हो गए और श्री गुरु रविदास जी ने उस पत्थर की ओर आँख उठाकर देखा तक नहीं।

जन रविदास न देखै काई। मास तेरुवें बहुटयो आई।
तब भगवान ने कहा कि इस पारस को आप ने क्यों नहीं निकाला, इस में क्या दोष है?

काहे स्वामी काढ़ि न लीना, कौन दोष पारस को दीना ॥
जन रविदास कहे करि जोरे, मैं छाड़ियो पाथर कै मोरे।
श्री गुरु रविदास जी कहा कि ये पत्थर मेरे किसी काम का नहीं है। मेरे पास

हरि के नाम का पारस है जो सर्व श्रेष्ठ है।
 पारस मोरे हरि को नामूं। पत्थर सों मोहि नाहिं कामू॥
 हरि पारस कंचन की रासी। अवरु सकल माया की पासी॥
 हरि पारस ही सब से बड़ी कंचन की राशि है और बाकी सब माया की फांसी है।
 अंगीकार रविदास न कीनौ।
 तब हरि अपनौ पारस लीनौ॥
 ले पारस रमि चले मुरारी॥
 जब श्री गुरु रविदास जी ने पारस को स्वीकार नहीं किया तब हरि पारस लेकर वहां से अन्तर्ध्यान हो गये।
 इस कथा से जो उपदेश हमें प्राप्त होता है इस को सदैव स्मरण रखना चाहिए। श्री गुरु रविदास जी ने समझाया है कि हमें प्रभु मार्ग पर चलना चाहिए। किसी भी प्रलोभन में लग कर प्रभु भक्ति का त्याग नहीं करना चाहिए। प्रभु का नाम सब से उत्तम पारस पत्थर है। इस पारस को गुरु जी से प्राप्त करके इस पारस के साथ अपने जीवन को कंचन रूप बनाना चाहिए। अटल विश्वास के साथ सत्संग, सिमरन और सेवा में लगें रहना चाहिए जी।

प्रभु का संगत की सेवा के लिए मोहरों का वरदान

सुपनांतर नें बिनती करई। मुहर पांच संपुट में धरई।
 लेहु कनक जिन करो कुभाउ। पूजौ भगत रिदै धर भाउ॥
 पिछले प्रसंग में हम ने पढ़ा कि साधू वेश में प्रभु गुरु रविदास जी के पास पारस लेकर गुरु जी की परीक्षा लेने के लिए आए। प्रभु ने श्री गुरु रविदास जी को कहा कि यह पारस आप को अधिकारी जानकर मैं देता हूँ, इस से आप सोना बनाकर सुंदर सुंदर मंदिर तैयार करो और संगत की सेवा में लगाओ। गुरु जी ने इस बात को मानने से बिल्कुल इन्कार कर दिया।
 इस के पश्चात् फिर प्रभु ने दर्शन दिये और कहा कि हे रविदास जी! अब मेरी एक बात आप को जरूर माननी पड़ेगी। आप के यहां संगत और संत समाज जुटता है। इनकी अच्छी सेवा के लिए आप को अच्छा प्रबन्ध करना चाहिए। प्रति दिन आप को यहां दरबार में पांच स्वर्ण मोहरें प्राप्त हुआ करेंगी। आप ने वो मोहरें लेकर संगत की सेवा में खर्च करनी हैं। कहते हैं कि श्री गुरु रविदास जी के दरबार में हर रोज देश

विदेश के बादशाह और संगत सत्संग के लिए आया करती थी। गुरु जी ने बहुत सुंदर सत्संग भवन, निवास स्थान और धर्मशाला का निर्माण करवाया था।
 मंदिर महल किया बहुतेरा। यहां तहां भगतन का डेरा॥
 श्री गुरु रविदास जी के उपदेशों के अनुसार आज भी जीवन में सत्संग की प्राचीन काल के समान ही जरूरत है। हम सब को यह चाहिए कि सत्संग में जुड़ें। सद्गुरुओं के अमृतमय उपदेशों को सुनकर अमूल्य मनुष्य जन्म का लाभ लें।

एक धनवान सेठ द्वारा अमृत का तिरस्कार करना और उस को कुष्ठ की बीमारी हो जाना

संत महापुरुष स्मस्त समाज के होते हैं। उन का सम्बन्ध केवल एक जाति या वर्ण के साथ नहीं होता। वह सर्वहित के लिए और सब को अच्छे मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा देते हैं। श्री गुरु रविदास जी के पवित्र जीवन और साधुता को देखते हुए चारों वर्णों के लोग सत्संग में आने लगे। श्री गुरु रविदास जी पवित्र आहार, पवित्र कर्म और पवित्र विचारों की बार-बार चर्चा करते थे।
 एक दिन की घटना है कि एक धनवान सेठ श्री गुरु रविदास जी के सत्संग में आया। उसने देखा कि बहुत सी संगत सत्संग सुनने को आई हुई हैं। जिस में अमीर गरीब और चारों ही वर्णों के लोग श्री गुरु रविदास जी के उपदेश सुनने की चाह रखे बैठे हुए हैं। सेठ के मन पर यह सब कुछ देख कर बहुत प्रभाव पड़ा और वह भी सत्संग सुनने के लिए बैठ गया। गुरु जी ने कहा कि मनुष्य तन बहुत अनमोल है और यह तन बहुत दुर्लभ है।
 दुलभ जन्म पुंन फल पाइओ विरथा जात अविवेके,
 इस अनमोल जन्म को प्रभु बंदगी में लगाकर सफल बनाना चाहिए।
 प्रभु के नाम के बिना सभी पासारे झूठे हैं।
 हरि के नाम बिन झूठे सगल पसारे॥
 और कहा कि सिमरन का सब जातियों और वर्णों को अधिकार है। कोई किसी भी जाति या वर्ण का आदमी हो, प्रभु भजन द्वारा महान् हो जाता है।
 ब्राहमन बैस सुद अरु ख्यत्री
 डोम चंडार मलेछ मन सोइ।
 होइ पुनीत भगवंत भजन ते
 आपु तारि तारे कुल देइ॥१॥

भजन करने वाला ब्राह्मण, वैश, शुद्र, क्षत्रिय, डोम, चंडाल, और मलेच्छ अथवा किसी भी जाति का हो प्रभु के सिमरन द्वारा भवसागर से पार हो सकता है और अपने कुटुम्बियों को भी उबार लेता है। गुरु जी ने कहा कि सब के लिए सिमरन अनिवार्य है।

सत्संग समाप्त होने पर सब प्रेमियों को कठौती मे से अमृत बांटा गया जिसमें श्री गुरु रविदास जी चमड़ा भिगोते थे। सेठ ने चरणामृत तो लिया। परन्तु उसे पीने की बजाय सिर के पीछे से फेंक दिया। चरणामृत का कुछ अंश उस के कपड़ों पर पड़ गया। सेठ ने घर जा कर कपड़ों को अपिवत्र जानकर एक भंगी को दान कर दिया। भंगी ने ज्यों ही उन कपड़ों को धारण किया उसका शरीर कान्ति से चमकने लगा और सेठ को कुष्ठ रोग हो गया। उधर सेठ ने हकीम और वैद्यों से बहुत दवाई कराई पर कुष्ठ रोग ठीक नहीं हुआ। जब सेठ को ध्यान आया कि उसने किसी संतपुरुष का अनादर किया है, जिसके कारण उसे यह कष्ट उठाना पड़ रहा है, तो दुखी हो कर गुरु जी की शरण में गया। उदार-हृदय, गुरु जी ने सेठ को क्षमा कर दिया और वह फिर से स्वस्थ हो गया।

एक हिरणी की रक्षा

श्री गुरु रविदास जी बहुत कोमल हृदय के महापुरुष थे। एक बार लहरतारा तालाब जो कि श्री गुरु कबीर साहिब जी की प्रकट स्थली है। उन दिनों यहां पर घना वन था। इस एकांत रमणीय स्थान पर श्री गुरु रविदास जी समाधि अवस्था में बैठे प्रभु का सिमरण कर रहे थे। आस पास में कुदरत का बहुत प्यारा दृश्य मन को मोहित कर रहा था।

इसी समय एक हिरणी भागती इधर निकल आई जिस के पीछे शिकारी लगा हुआ था। वह हिरणी को मारने के लिए तैयार था। शिकारी ने हिरणी को अपने काबू में कर लिया था। हिरणी ने सोचा कि अब उसका जीवन मुश्किल में पड़ गया है और शिकारी उसे मार डालेगा। उसने सोचा कि अब वह अपने बच्चों को नहीं मिल सकती, दूध पिलाना तो बहुत दूर की बात है। हिरनी अपने मन में ऐसा सोच कर दुखी हो रही थी और अपने बच्चों को याद कर उसकी आँखों में आसू बहने लगे। यह देख कर शिकारी ने हिरणी से पूछा कि तेरी आँखों में आँसू आने का क्या कारण है? हिरणी ने कहा कि मुझे अपने बच्चों की याद आ रही है, इस लिए मेरी यह हालत है। शिकारी को हिरणी ने कहा हे शिकारी! तू मुझे दो पल के लिए छोड़ दे, मैं अपने बच्चों को दूध पिलाकर तेरे पास आ जाऊँगी। शिकारी ने उत्तर दिया कि यदि कोई तुम्हारी

जमानत देगा तो मैं तुम्हें छोड़ सकता हूँ।

पास ही गुरु रविदास जी थे। उन्होंने शिकारी को कहा कि मैं इसकी जमातन देता हूँ और तेरे पास तब तक रहूँगा जब तक हिरणी वापिस नहीं आ जाती। शिकारी ने दो घड़ी के लिए हिरणी को छोड़ दिया। हिरणी तेजी से भागती हुई अपने बच्चों के पास पहुँची। बच्चों ने जब देखा कि उनकी माता आ गई है तो वह अपनी माता से लिपट गए। जब वह दूध पीने लगे तो उन्होंने देखा कि उनकी माता उदास है। बच्चों ने माता को दुखी देखकर पूछा कि माता जी आपकी उदासी का क्या कारण है? तो हिरणी ने सारी बात सुनाई। बच्चों ने कहा माता जी अब हम दूध नहीं पीएंगे बल्कि आप के साथ जाएंगे। आप से पहले हम अपनी जान देंगे, हमारे बाद ही आपकी बारी आएगी। हिरणी कुछ देर बाद अपने बच्चों के साथ जहाँ शिकारी और गुरु जी बैठे थे वहाँ पहुँच गई। हिरणी ने शिकारी को कहा कि अब इन संत महापुरुषों को छोड़ दो। हम दो घड़ी से पहले आप के पास पहुँच गए हैं। जब शिकारी ने हिरणी को मारने के लिए कटार का बार किया तो शिकारी का कटार वाला हाथ ऊपर ही रह गया। वह जड़ पत्थर के समान हो गया। उसको अपनी आँखों के सामने मृत्यु नाचती हुई दिखाई देने लगी। जब उसको ऐसे आभास हुआ तो वह मन ही मन में पश्चाताप करने लगा और बार-बार गुरु जी के आगे नमस्कार करने लगा। इसने गुरु जी से क्षमा मांगी। गुरु जी ने आगे से उसको ऐसा करने से मना कर दिया और उस को सत्य का उपदेश दिया तथा वह गुरु जी का शिष्य बन गया। इस शिकारी का नाम हीरू लिखा गया है। यह शिकारी गुरु रविदास जी का सच्चा भक्त बन गया और आगे चल यह एक अच्छे आदमी के रूप में समाज के सामने आया।

हिरणी और इसके बच्चे श्री गुरु रविदास जी को धन्यवाद देते हुए, शीश झुका कर, जय जय कार करते हुए जंगल की ओर चले गये।

एक शेख द्वारा प्रेम की याचना करना

श्री गुरु रविदास जी महाराज प्रति दिन सत्संग किया करते थे। आप के भेदभाव रहित विचारों का संगत पर बहुत प्रभाव होता था। हिन्दू, मुसलिम दोनों ही आप के पास परमार्थ लाभ के लिए आते थे।

एक दिन की घटना है। एक शेख ने आ कर कहा कि हे स्वामी जी! हमें भी प्रेम का रंग प्रदान करो जी। श्री गुरु रविदास जी जहाँ पर चमड़ा धो रहे थे उस कुंभ का पानी लिया और उस शेख को दे दिया। शेख ने उस से ग्लानि की और छुपा कर वह

पानी फैंक दिया। उस पानी का उसकी कमीज़ पर दाग पड़ गया। घर जा कर वह कमीज़ उतार कर नौकरानी को धोने के लिए दे दी।

नौकरानी उस कमीज़ को लेकर जब धोने लगी तो पानी का वह दाग नहीं उतर रहा था। बहुत यत्न किया परन्तु दाग नहीं उतरा। इस के बाद नौकरानी उस कपड़े को मुँह में लेकर दाग को चूसने लगी। दाग को चूसते ही नौकरानी में अनेक शक्तियाँ प्रवेश कर गई। वह नौकरानी ज़मीन से ऊँचा-ऊँचा चलने लगी। नौकरानी को इस रंग में देखकर उस से पूछा गया कि आप को यह सिद्धि कहाँ से प्राप्त हुई? दासी ने कहा कि कुर्ते पर लगे दाग को चूसने से मुझे यह सिद्धि प्राप्त हुई है। उस शेख को बहुत आश्चर्य हुआ और पछताने लगा कि मुझ से यह कैसी भूल हो गई। इस के पश्चात् वह शेख दूसरी बार फिर श्री गुरु रविदास जी के पास आया। विनम्रता से गुरु रविदास जी से अमृत की मांग की। गुरु जी ने कहा कि वह तो समय अब बीत गया है। शेख ने बार-बार श्री गुरु रविदास जी से आग्रह किया तो श्री गुरुदेव जी ने दयालु हो कर उस को अपना शिष्य बनाया और उस को प्रभु बंदगी का संदेश सुनाया। गुरु जी का कथन है:

करि बंदिगी छाडि मैं मेरा ॥ हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ॥१॥

जनमु सिरानो पंथु न सवारा ॥ सांझ परी दहदिस अंधिआरा ॥

कहि रविदास निदानि दिवाने ॥ चेतसि नाहीं दुनीआ फरखाने ॥३॥

आज भी यदि कोई अपने जीवन को सफल बनाना चाहता है और प्रेम के रंग की चाह रखता है तो यह अनिवार्य है कि गुरु जी के इन उपदेशों को जीवन में अपनाए। इस से ही जीवन सफल होगा।

मृत बालक को जीवन दान देना

काशी में एक विधवा सेठानी रहती थी। उस सेठानी का पहले बड़ा परिवार था। एक बार ये लोग (सारा परिवार) तीर्थ यात्रा को गये दैवयोग से वहाँ नाव दुर्घटना हो गई जिस से सारा सेठ परिवार पानी में डूब कर मर गया। केवल एक बहु बची रही जो कि गर्भवती थी। रोती चिल्लाती और नाना कष्टों को सहती हुई वह किसी प्रकार अपने घर आई और अकेली रहने लगी। समय पाकर उसकी कोख से एक बच्चे ने जन्म लिया। बच्चे का मुँह देख कर वह बड़ी प्रसन्न हुई, क्योंकि यही एक मात्र उस का सहारा था। बच्चा जब बड़ा होकर खेलने कूदने लगा तो एक बार वह सख्त बीमार हो गया सेठानी ने दवा इलाज और पाठ पूजा में बहुत खर्च किया। किन्तु लाभ

कुछ भी नहीं हुआ। बच्चे का रोग दिन-प्रतिदिन भयंकर रूप धारण करता गया। वह हर एक से रो-रो कर कहती, मेरे बच्चे की जान बचाओ। किसी ने उसे श्री गुरु रविदास जी का परिचय दिया। वह बीमार बच्चे को लेकर श्री गुरु रविदास जी के पास पहुँची। किन्तु वहाँ पहुँचते ही दैवयोग से उस का बच्चा मर गया। फिर क्या था, सेठानी बिलख-बिलख कर रोने लगी। उसका करुण-क्रन्दन हृदय को विदीर्ण करता जा रहा था। कोमल हृदय सतगुरु जी से उस का दुख देखा न गया। वह उस बच्चे के लिए प्रभु से प्रार्थना करने लगे और उन की दयामयी सेविका लोना बाई उस मृत बच्चे को गोद में लेकर बैठ गई और उस के सिर पे हाथ फेरने लगी। गुरु जी ने बच्चे के मुँह में जल डाल दिया। जल के बच्चे के शरीर के भीतर जाते ही बच्चे के श्वास चलने लगे और थोड़ी देर में उसने आंखें खोल दी। सेठानी प्रसन्नता और प्रेम से पुलकित हो गई और बच्चे को लेकर अपने घर गई। बच्चा उस दिन से अच्छा होने लगा और शीघ्र ही अच्छा हो गया। सेठानी गुरु जी की परम भक्त हो गई। उसने बहुत सारा धन श्री गुरु रविदास जी को भेंट करना चाहा, परन्तु गुरु जी ने उस धन स्वयं स्वीकार न करके धन को दीन-दुखियों की सहायता में खर्च करने का उसे उपदेश दिया। पीछे सेठानी ने आग्रह करके गुरु जी के सत्संग भवन में एक अन्न क्षेत्र खोल दिया था। उसके द्वारा साधु संतों और भूखों को भोजन मिलता रहा।

जो बोले सो निर्भय,

श्री गुरु रविदास महाराज की जय ॥

कुंभ के शुभ अवसर पर गुरु जी का गंगा जी के लिए भेंट भेजना

दोहरा

अवर कहो इतिहास को भगवन जस सुख दानि ॥
हरिद्वार यात्री मिल आये, तिन दर्शन जन केरे पाये ॥
तिन को पूछा लखि रविदासा, जाहु कहाँ तुमहीं सुख रासा।
ब्रह्मकुंड गंगा इस्नाना। नहावन चल तहां हम जाना।
तब रविदास बचन अस भाखे। कीजै काज हठी मन राखे।
ऐक छिक्काम हमारा लीजै। भेटा गंगा की वहि दीजै।
हमरे नाम नलेहि पसारी। नहि दीजै तुम ऐसे डारी।

श्री गुरु रविदास जी का नाम बनारस शहर और आस पास के इलाकों में बहुत प्रसिद्ध हो चुका था। एक बार कुछ यात्री पंडित गंगा राम जी के साथ हरिद्वार में कुंभ के पर्व पर ब्रह्मकुंड में स्नान करने जा रहे थे। जब वे बनारस पहुंचे तो उन के मन में प्रेम उमड़ आया कि श्री गुरु रविदास जी से भेंट करके फिर आगे को चलेंगे। श्री गुरु रविदास का निवास स्थान पूछ कर सीरगोवर्धनपुर में पहुंच गए। सामने ही श्री गुरु रविदास जी महाराज बैठे थे। सभी यात्री दर्शन करके बहुत प्रसन्न हुए। तब श्री गुरु रविदास जी ने पूछा कि कहिए आप कहां जा रहे हो? तब पंडित गंगा राम ने बताया कि हम हरिद्वार में कुंभस्नान के लिए जा रहे हैं।

श्री गुरु रविदास जी ने यात्रियों से कहा कि गंगा जी के लिए मेरी ओर से यह कसीरा ले जाओ और यह भेंट, गंगा जी को तब देना जब वह हाथ निकाल कर ले, नहीं तो इसे वैसे ही मत देना। श्री गुरु रविदास जी की भेंट यात्रियों ने प्राप्त की और हरिद्वार को चलते भये।

चलते-चलते कुछ दिनों में यात्री लोग हरिद्वार पहुँच गये। हरिद्वार पहुँच कर क्या देखते हैं कि गंगा जी के तट पर यात्रियों की बहुत भारी भीड़ लगी हुई है। वह यात्री भी गंगा जी के तट पर पहुँचा तो गंगा जी में स्नान किया। इसके पश्चात् पंडित गंगा राम ने कहा कि हे माता गंगा जी! आपके लिए एक कसीरा रविदास जी ने प्रेम भेंट भेजी है। हे माता गंगा जी! अपना हाथ बाहर निकालें और इस भेंट को स्वीकार करें। पंडित गंगा राम जी के मुख से ज्यों ही आवाज़ निकली, ठीक उसी समय जल में से गंगा जी ने प्रकट हो कर दर्शन दिया और कसीरा लेने के लिए अपना हाथ निकाला। पंडित गंगा राम ने कसीरा हाथ पर रख दिया। सभी लोग इस आश्चर्यजनक दृश्य को देख कर हैरान भी हुए और स्वयं को धन्य समझने लगे कि हमें गंगा जी का दर्शन हो गया। मन ही मन श्री गुरु रविदास जी की जय जय कार करने लगे कि उन की कृपा से ही हमें गंगा जी का दर्शन हुआ है।

गंगा जी ने अपने हाथ का एक हीरे जड़ित कंगन श्री गुरु रविदास जी के लिए भेंट किया और गंगा राम से कहा कि यह मेरी भेंटा गुरु रविदास जी को पहुँचा देना जिन्होंने मुझे कसीरा भेंट के रूप में भेजा है और कहा कि मेरी ओर से कहना कि मैं धन्य हो गई जो आप ने मुझे याद किया।

दोहरा - ले कंगन अति हर्ष युत, देखत सब विसमाद॥

अैसे न कबहुँ भयो, गंगा को प्रसादि॥

गंगा राम सहित सभी यात्री बहुत हैरान हुए कि इस प्रकार आज तक किसी को गंगा जी ने इस प्रकार सआदर भेंट नहीं दी। गंगा जी का दर्शन करके और स्नान

पान करके पंडित गंगा राम खुशी-खुशी कुछ दिनों में वापिस घर पहुँच गया। पंडित गंगा राम ने अपनी प्रत्यक्ष दर्शन की सारी गाथा कह सुनाई। जो कंगन गंगा जी ने दिया था वह अपनी पत्नि के हाथ दे दिया। कंगन को घर पर गुप्त रूप में रख लिया गया।

कुछ दिनों के बाद पुरोहित गंगा राम जी की पत्नि ने कहा कि हे पतिदेव इस कंगन को बाज़ार में बेच दिया जाए। यह बड़ी कीमत में बिक जाएगा। पैसे लेकर अपना जीवन मजे से बिताएँगे। हमें किसी प्रकार की कोई कमी नहीं रहेगी।

जब पुरोहित गंगा राम वह कंगन बाज़ार बेचने के लिये गया तो कंगन की जितनी कीमत थी उस की कीमत के बराबर किसी के पास रुपया न था, जो भी सराफ कंगन को देखता था वह हैरान हो जाता था और कहता था कि ऐसा कंगन हम ने पहले कभी नहीं देखा। इस में अनोखे हीरे जवाहरातों की जड़त की हुई है।

दोहरा - तब कुटवारै सुध दई वाकै हाट विकाए।

भुखन कंगन हाथ को बेचत जन इक आए॥

इस बात की खबर पुलिस के पास पहुँच गई कि एक आदमी ऐसा कंगन बेच रहा है। पुलिस के सिपाही पुरोहित को पकड़ कर राजा के पास ले गए। राजा के पूछने पर पुरोहित ने सारी कथा कह सुनाई कि यह कंगन गंगा माता जी के हाथ का है और माता जी ने यह प्रेम भेंट अपने श्रद्धेय गुरु श्री गुरु रविदास साहिब जी को पहुँचाने के लिए कहा था। सारी वार्ता को सुन कर राजा बहुत हैरान हुआ। बादशाह ने कहा कि श्री गुरु रविदास जी को यहां बुलाया जाए और उन से इस बात का पूरा निर्णय किया जाए। तब श्री गुरु रविदास जी को सआदर सभा में बुलाया गया और कंगन की बात पूछी।

श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि हे राजा! यह बात कोई बड़ी बात नहीं है। अभी एक बर्तन में गंगा जल डाल कर और कंगन उस में डाल कर ऊपर से कपड़ा देकर ढांप दें। मन चंगा तो कठौती में गंगा। गंगा जी इस बात का सारा फैसला कर देंगी। जिस प्रकार श्री गुरु रविदास जी ने कहा था सारी सामग्री उसी ढंग से तैयार कर दी गई। तब श्री गुरु रविदास जी ने गंगा जी को यह निर्णय करने के लिए कहा। जब पर्दा बर्तन के ऊपर से उठाया गया तो ये दो कंगन हो गए। राजा और बाकी लोग यह सब देखकर बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुरु रविदास जी ने वह दोनों कंगन उस पुरोहित को दे दिये। जितने लोग श्री गुरु रविदास जी का पहले विरोध करते थे इस समय सब उन के प्रेमी बन गए। इस घटना से श्री गुरु रविदास जी का यश तीनों लोक में फैल गया। सभी लोग श्री गुरु रविदास जी की जय जय कार करने लगे।

कई जगह ऐसा प्रकरण भी लिखा है कि राजा अपनी रानी और वजीरों सहित श्री गुरु रविदास जी के दर्शन के लिए आया। श्री गुरु रविदास जी से राजा ने

उस कंगन के साथ का दूसरा जिसकी रानी मांग कर रही थी, देने के लिए श्री गुरु रविदास जी से प्रार्थना की। गुरु जी ने वह शिला जिस पर जूता बनाने का काम करते थे उस को पीछे हटा कर कहा 'मन चंगा ते कठौती में गंगा' तो राजा देखता है कि शिला के नीचे गंगा जी का प्रवाह बह रहा है। उस कंगन के साथ के असंख्य कंगन गंगा जी की धारा में बहे जा रहे हैं। यह देख कर राजा और रानी गुरु जी के शिष्य बने।

पीछे वाले प्रसंग की कथा कहीं-कहीं कुछ अंतर से दूसरी तरह भी लिखी प्राप्त होती है। जब रानी ने कहा कि मुझे इस कंगन के समान एक और कंगन अवश्य मंगवा कर दो। तब राजा गंगा जी के तट पर आया। अनेक प्रकार से पूजा करके उस कंगन के साथ का दूसरा कंगन मांगा परन्तु गंगा जी की ओर से कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। तब राजा ब्राह्मणों को साथ लेकर श्री गुरु रविदास जी की कुटिया पर आ पहुँचे। बहुत विनम्र भाव से श्री गुरु रविदास जी से दूसरे कंगन की के लिए प्रार्थना की। श्री गुरु रविदास जी ने कहा हे राजन! जितने चाहो कंगन ले लो। तब जिस शिला पर जूते बना रहे थे उस को थोड़ा हटाया और गंगा जी को कहा कि राजा को कंगन दो।

शिला के नीचे गंगा जी का प्रवाह देखकर सभी बहुत आश्चर्य चकित हुए। गंगा जी एक-एक उछाल के साथ उस कंगन के समान कई कंगन बाहर फैंक रही हैं। यह सब चमत्कार देख कर राजा बहुत हैरान हुआ और श्री गुरु रविदास जी के चरणों में गिर कर नमस्कार करने लगा। साथ आए ब्राह्मणों ने भी गुरु जी के चरण पकड़ लिए। राजा श्री गुरु रविदास जी का सेवक बन गया और गुरु जी में बहुत श्रद्धा रखने लगा। राजा ने कहा कि ज्ञानी, भक्त और संत राजाओं के भी राजा हैं।

रानी झाली की कथा

श्री गुरु रविदास जी की महिमा को सुन कर और पवित्र जीवन को देख कर बहुत से राजा और रानियाँ आप के शिष्य बन गए थे। एक बार झाली नाम की रानी चितौड़ से काशी में गंगा स्नान के लिए आई। उसने श्री गुरु रविदास जी का नाम सुना तो दर्शन के लिए उन के स्थान पर गई। श्री गुरु रविदास जी के मुख से सत्संग सुन कर उसका मन शांत हो गया। श्री गुरु रविदास जी की शिष्या बनने की उसमें परमश्रद्धा उत्पन्न हुई।

रानी ने श्री गुरु रविदास जी से प्रार्थना की कि मुझे अपनी शिष्या बना लीजिए। गुरु जी ने रानी को बार-बार मना किया कि मैं चमार हूँ और आप क्षत्रिय वंशी हैं। आप किसी ब्राह्मण की शिष्य बन जाओ। रानी झाली ने बहुत हठ किया और

प्रतिज्ञा की कि आप को ही गुरु बनाऊँगी। ऐसा किये बिना अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगी। श्री गुरु रविदास जी ने फिर कहा कि अपने से ऊँची जाति वाले का शिष्य होना चाहिए। तब झाली ने फिर प्रार्थना की कि गुरु बनाने में जाति को कोई नियम नहीं है। केवल ब्रह्मज्ञानी गुरु का होना नियम है। जैसे शुकदेव स्वामी ने ब्राह्मण और सन्यासी होने पर भी क्षत्रिय और गृहस्थी राजा जनक को गुरु धारण किया और दो बार ब्रह्मवेता जनक जी में ग्लानि करने से आठ कला वैराग्य की कमी हो गई, जब कि एक कला भी वैराग्य की बड़े भाग्य से प्राप्त होती है। जब आठ कला वैराग्य की चली गई तब शुकदेव स्वामी में कोई विरक्ती की दमक न रही। उस के पिता श्री व्यास देव जी यह देखकर पुत्र निमित्त शोक करने लगे। पुत्र को बहुत समझाया परन्तु शुकदेव जी नहीं समझे। आखिर श्री नारद जी आए वे शुकदेव स्वामी जी के सामने नदी में रेत डालने लगे। शुकदेव जी ने पहचान किये बिना कहा, रे मूर्ख! क्या कर रहा है? नारद जी कहने लगे मैं पुल बांध रहा हूँ। तब शुकदेव जी ने कहा रे मूर्ख! क्या रेत से भी पुल बांधा जाता है? नारद जी ने उत्तर में कहा रे मूर्ख! ब्रह्मवेता गुरु में ग्लानि करने वाले को भी कभी ज्ञान, चित शांति प्राप्त होती है। मेरी तो केवल रेत की टोकरियाँ ही व्यर्थ गई हैं और नदी की रेत नदी में ही पड़ गई है। परन्तु ब्रह्मवेता राजा जनक में ग्लानि करने से तुम्हारी आठ कला वैराग्य ही नष्ट हो गई है। इसलिए तू मेरे से भी अधिक महामूर्ख है। नारद जी के वचन सुन कर शुकदेव जी उनके चरणों में गिर पड़े। तब नारद जी ने उन्हें अपना रूप दिखा कर उपदेश किया कि ब्रह्मवेता की जाति चाहे अपनी जाति से नीची हो तो भी उस से ग्लानि नहीं करनी चाहिए। उन से उपदेश लेकर अपना मोक्ष रूप काम सिद्ध करना चाहिए।

शुकदेव जी और राजा जनक का दृष्टान्त देकर ब्रह्मा और व्यास जी का दृष्टान्त देते हैं। ब्रह्मा जी कमल से पैदा हुआ और व्यास जी मछुआरे की पुत्री मछोदरी (सत्यवती) से पैदा हुए तो भी ब्रह्मवेता होने पर सब के पूज्य गुरु बने और जैसे कमल कीचड़ में पैदा होता है और फूल शीश पर चढ़ाये जाते हैं, जैसे चन्दन का वृक्ष छोटा होता है और वह अपनी सुगन्धि से सब को चन्दन बना देता है। बांस बड़ापन के अहंकार से सुगन्धि ग्रहण नहीं करता और वह चंदन नहीं बन पाता है, वैसे ही भक्त और महात्मा लोग उपदेश द्वारा सब की मुक्ति करते हैं। इसलिए ब्रह्मवेता की जाति का विचार नहीं करना चाहिए। इस प्रकार प्रेम भाव के विचार कह कर गुरु रविदास जी को प्रसन्न किया। श्री गुरु रविदास जी ने झाली रानी को उत्तम अधिकारी समझ कर अपनी शिष्य बनाया। गुरु जी के वचन सुन रानी उनके चरणों में गिर पड़ी।

कुछ दिनों के बाद गुरु जी से आज्ञा लेकर वापिस चितौड़ गई और अपने

पति को सब हाल सुनाया। रानी झाली के पति के मन में भी गुरु के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हुई। रानी ने अपने पति से निवेदन किया कि श्री गुरु रविदास जी को अपने राजमहल में बुलाओ। श्री गुरु रविदास जी का सत्संग करवाओ जी।

राजा राणा कुंभा जी ने रानी की बात मानी और अपने वजीरों को श्री गुरु रविदास जी को बुलाने के लिए भेजा। गुरु जी को सम्मान सहित चितौड़ में बुलाया गया। चितौड़ में बहुत सुन्दर सत्संग हुआ और सब का चित शांत हुआ। इस के बाद रानी ने बहुत धन खर्च करके एक भंडारा किया। दूर दूर से ब्राह्मण समाज को आमंत्रित किया। यह भी कहा कि सब को एक-एक स्वर्ण की मोहर दक्षिणा में दी जाएगी। असंख्य लोग भंडारे में पहुंच गये। जब भंडारा तैयार हो गया तो पंक्तियों में सब लोग बैठ गये तब जाति अभिमानी ब्राह्मणों ने सब को सिखाया कि चमार के चेले राजा, रानी का भोजन मत करो। पंक्तियों में से सभी ब्राह्मण उठ कर खड़े हो गए। सबने कहा कि हम चमार के साथ भोजन नहीं करेंगे।

राणा कहे सुनो रे भाई, मोरे तो मन इहै सुहाई।
 करनी हीन सू मधिम सोई, करनी करै सो उत्तम होई ॥
 उत्तिम मधिम करनी माहिं, मानष देह कहूँ उत्तिम नाहिं।
 काम क्रोध लालच नौ द्वारा, ऐठी तन मैं सबै चमारा ॥
 उत्तिम वही जिनुं यो जीता। ब्राह्मण किनै बालमीक कीता ॥
 जाति पांति का नहीं अधिकारा। राम भजै सो उतै पारा ॥
 नाहिं कछु तुम्हारै सारै, उठी विप्र जाहूँ अपनै द्वारै।
 विप्र बहुरि मनि मंह दुषपावै। करोध करै रानी डरपावै ॥
 तब विप्रों ने कहा कि पहले भोजन हम करेंगे। तब इस के पश्चात् जैसी आप की मर्जी हो वैसे करें। तब राणा ने कहा कि राणी कहयो नाहिं मन धीजै, गुरु पहल तुम्ह कौ क्यूं दीजै।
 इस प्रकार बहुत वाद-विवाद होने लगा। तब श्री गुरु रविदास जी ने एक शिष्य को भेजा और कहा:
 हमरे नाहिं हारू अरू जाति। इन्हकी तुम राषो रसनीति ॥
 कि मुझे हार जीत से कोई मतलब नहीं है जैसे इन की रीति है उस के अनुसार ही इन को भोजन करवा दो। गुरु जी की आज्ञा पाकर भोजन परोसा गया। प्रभु की लीला ऐसी भई कि आप (श्री गुरु रविदास जी) जी विराट रूप धारण हो कर एक-एक विप्र के साथ बैठ कर भोजन करने लगे।
 सबहिं कै संग जीमन बैठा, इनि वापै उनि वापै डीठा ॥

सब को अचिरज भयो तमासा। जेते विप्र तेते रविदासा ॥
 जितने विप्र बैठ कर भोजन कर रहे थे श्री गुरु रविदास जी ने अपने उतने ही शरीर धारण किये। यह देख कर जातीय अभिमानी बहुत हैरान हुये और यह सोचा कि यह लीला श्री गुरु रविदास जी की है, जो ईश्वर के साक्षात् स्वरूप हैं।
 सबहिन कै मनि उपजी लाजा, साध सतायौ किया अकाजा।
 जे वे कोप करै हम ऊपरि। तौ अब ही जाहिं सकल जरि बरि ॥
 हम अपराधी वो जन पूरा। उन के साहिब रहत हजूर ॥
 इहै संत हम एसा पापी। भगतन सौ लरि एसी थापी ॥
 साचे हरि सांचै हरि जनां, यौ पश्चाताप कियौ ब्राह्मणां।
 हम ने अज्ञानता वश यह अपराध किया है। श्री गुरु रविदास जी पूर्ण महापुरुष है और परमत्तमा सदैव उन के साथ रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे श्री गुरु रविदास और भगवान में कोई अन्तर नहीं है।
 दोहा- धनि धनि साहिब तू बड़ा अरु बड़े तुम्हारे दास।
 जाति पाति कुल कछु नहीं ब्राह्मण भये उदास ॥
 सब विप्रों ने आपस में विचार करके श्री गुरु रविदास जी का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। रानी झाली जी को साथ लेकर सब ने कहा कि हम से बहुत भूल हुई है। गुरु जी ने सब विप्रों को कहा कि प्रभु जी की भक्ति करो। सिमरन और भक्ति के बिना सारा संसार शूद्र है।
 श्री गुरु रविदास जी की अमृत रूप वाणी को सुन कर विप्र कहने लगे कि:
 विप्र कहें तू गुरु हमारा अपनी तोरि जनेऊ डारा।
 माथै हाथ देहु अब स्वामी, इस सेवग तुम अन्तरजामी।
 आप हमारे गुरु है, आप सर्वज्ञ है, आप अर्न्तयामी है, आप हमारे सिर पर अपना हाथ रखो जी। तब गुरु रविदास जी ने सब को आशीर्वाद दिया। सब संगत को बहुत प्रसन्नता हुई। सब लोगों ने मिल कर श्री गुरु रविदास जी की जय बुलाई और सब ने प्रभु भक्ति का मार्ग अपना लिया और कहा:
 जाति पाति पूछो मति कोई, हरि को भजै सो हरि कै होई ॥

श्री गुरु रविदास जी और उनकी शिष्य मीरा बाई

मीरा जी के जन्म स्थान मेहड़तियो के इतिहास एवं राठौरों के भाटों की बहियों द्वारा मीरा जी का जन्म श्रावण सुदी एकम शुक्रवार सम्वत् 1561 माना गया है। बचपन में मीरा की माता का देहान्त हो गया था। मीरा इकलौती संतान थी। बाल्यकाल

में मीरा को न भाई बहन का साथ मिला न माता पिता का दुलार प्यार । इन के पिता रतन सिंह राणा सांगा के साथ तत्कालीन राजनैतिक उथल पुथल एवं प्रतिदिन के युद्धों में उलझे रहते थे । अतः मीरा का पालण-पोषण दूदा जी रतन सिंह के पिता की देखरेख में हुआ था । स्वभावतः मीरा के मानस पटल पर अपने दादा की भक्ति भावना का प्रभाव पड़ना ही था । सम्वत् 1566 ई० में राणा सांगा चित्तौड़ की गद्दी पर बैठे इनकी पत्नी राणी झाली झालावार के राजा की कन्या रत्नकुंवरी भी प्रभु भक्त थी । सं० 1567- 68 के लगभग इन्होंने काशी जा कर ये श्री गुरु रविदास जी के शिष्य बने । चित्तौड़ के राणा सांगा के परिवार ने आश्रम बना कर श्री गुरु रविदास जी को भेंट किया । इधर मेड़ता से प्रभु भक्त दूदा जी श्री गुरु रविदास जी के चित्तौड़ स्थित आश्रम में आध्यात्मिक सम्मेलनों में सत् उपदेश सुनने के लिए आया करते थे । (संभवतः मीरा जी भी श्री गुरु रविदास जी के सत्संग में चित्तौड़ आई हो) जिस से उसे बचपन में ही प्रभु भक्ति का मार्ग मिला ।

इधर राणी झाली का पुत्र कुंवर भोजराज अपनी माता के समान शांत और निचल प्रकृति का मालिक था । कुंवर भोजराज की आयु उस समय लगभग 18 वर्ष की रही होगी । राणी झाली ने अपने पति राणा सांगा की सहमति एवं अपने गुरु रविदास का आशीर्वाद लेकर कुंवर भोज का मीरां से विवाह का प्रस्ताव दूदा जी के सम्मुख रखा था । उन्हें क्यों कर आपत्ति हो सकती थी । दोनों परिवार सम्बन्ध सूत्र में बन्ध गए । सम्वत् 1573 में सम्भवतः वैसाखी के पर्वोत्सव पर सन्त रविदास की उपस्थिति में कुंवर भोज राज और मीरां का विवाह सम्पन्न हुआ । मीरां की आयु उस समय 12 वर्ष की थी । इस के बाद ही मीरां ने अपने पति एवं सास रानी झाली की अनुमति से सन्त रविदास का शिष्यत्व ग्रहण किया । (डॉ० वी० पी० शर्मा के अनुसार)

चित्तौड़गढ़ की 18 सौ फुट ऊँची पहाड़ी पर विजय स्तम्भ के समीप सात फुट ऊँचे चबूतरे पर राणा कुम्भ द्वारा निर्मित कुम्भ श्याम मन्दिर के खुले प्रांगण में सत्संग चलता था ।

चित्तौड़ के इसी प्रांगण में ही “पद घुंघरु बांध मीरा नाची रे” के अनुसार प्रभु प्रेम में नाचती गाती थी ।

समय परिवर्तनशील है । मीरां के भाग्य में गृहस्थ जीवन भोगना विधाता ने नहीं लिखा था । ऐसा होता भी क्यों? भक्ति के क्षेत्र में दिग् दिगन्त व्यापी यशः सौरभ कैसे फैलता । राजस्थान के शून्याकाश में मीरां के घुंघरुओं की झंकार आज भी झंकृत होती है और उसके विरह रस में सराबोर मधुर गीत आज भी राजस्थान की घाटियों और रेगिस्तान में प्रति ध्वनित हो रहे हैं । सम्वत् 1580 में कुंवर राजा भोज का

अकस्मात् देहान्त हो गया । सम्वत् 1585 (जनवरी 1528) में राणा सांगा का बावर के साथ कानवाहा युद्ध में देहान्त हो गया । राणा सांगा के पुत्रों-रतन सिंह और विक्रमजीत में चित्तौड़ की गद्दी हथियाने के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया । मीरा और राणी झाली विधवा हो गई । रानी झाली पति की मृत्यु के बाद किस अवस्था में रही इतिहास इस विषय में मौन हैं । परन्तु मीरा का अपने श्री गुरु रविदास जी के साथ अटूट सम्बन्ध जुड़ा रहा । कुंभ श्याम से सटे मीरा मंदिर के साथ गुरु रविदास छतरी का निर्माण संभवतः मीरा और राणी झाली के प्रयत्नों से तत्कालीन परिस्थितियों में ही सम्भव हो सका होगा । इस छतरी के नीचे श्री गुरु रविदास जी के चरण चिन्ह है और छत के निचले भाग में श्री गुरु रविदास जी द्वारा बहुचर्चित पंच विकारों की प्रतिमा एक प्रस्तर शिला पर उत्कीर्णित है ।

राणा सांगा की मृत्यु के पश्चात् मीरा को पारिवारिक यात्नाओं का सामना करना पड़ा । ऐसा भी कहा जाता है कि विक्रमजीत ने आधी रात के समय मीरा को चित्तौड़गढ़ के नीचे बहती हुई गांधीरी नदी में गिरवा दिया । परन्तु धन्य श्री गुरु रविदास जी की दया से मीरा का कुछ भई बिगड़ा नहीं । वह नदी के प्रवाह में से इसी प्रकार बाहर निकली जिस प्रकार सोना अग्नि में से शुद्ध हो कर निकलता है ।

मीरा अब भगवत् भजन और साधू सेवा निडर होकर करने लगी । परन्तु राणा विक्रमजीत को इनके यहां साधुओं की भीड़ का लगा रहना न सुहाया । उनके अपने भरोसे की दो सहेलियों चम्पा और चमेली को इन के पास तैनात कर दिया कि वो मीरा को साधुओं के पास बैठने से रोकती रहें । मीरा बाई की संगत् के प्रभाव से उन दोनों पर भी गुरुभक्ति का रंग चढ़ गया और वे दोनों मीरां बाई की सहायक बन गई । यही दशा और सहेलियों और दासियों की हुई जो मीरां जी को वर्जित करने और चौकसी के काम पर नियत की गई । अंत में राणा ने यह कठिन काम अपनी बहिन ऊदाबाई (मीरा बाई की ननद) को सौंपा और वह कुछ समय तक अपने कर्तव्य को बड़ी तनदेही से अंजाम देती रही । दिन में कई बार मीरा बाई के महल में जाकर उस को समझाती और रोकटोक करती थी । अपने इन सम्बन्धियों के व्यवहार का वर्णन मीरा ने अपनी वाणी में भी किया है ।

इस के पश्चात् राणा ने मंत्रियों की सलाह के अनुसार मीरां जी को विष देकर मार देने की योजना बनाई । मीरां बाई जी को एक विष का कटोरा भर कर गुरु रविदास चरणामृत के नाम से भेजा गया । ऊदाबाई इस भेद को जानती थी उन्होंने मोह वश होकर मीरा जी को सब हाल कह दिया और विष पीने से रोकना चाहा परन्तु मीरां जी ने कहा जो पदार्थ श्री गुरु रविदास जी के चरणामृत के नाम पर आया है, उस का

परित्याग करना गुरु भक्ति के विरुद्ध है और उसे माथे को लगा कर बड़े उत्साह के साथ पी गई। इस से मीरा बाई जी को भक्ति का दुगुना रंग चढ़ गया। ऐसी भक्ति का कमाल देखकर ऊदाबाई भी उस की सखी बन गई। एक बार राणा ने एक नाग (सांप) पटारी में बन्द करके मीरा बाई के पास भेजा कि यह तेरे लिये हीरों जड़ित हार है। जब मीरा जी ने श्री गुरु रविदास जी का नाम लेकर उस पिटारी को खोला तो वह नाग हीरों का जड़ित हार बन गया।

कवित

गरल पटायों सो तो सीस लै चढ़ायऔ
संग त्याग विष भारी ताकी घर न संभारी है।
राणां नै लगायो चर, बैठे साधु ढिग ठर,
तब ही खबर कर मारों यहै धारी है।
राजै गिरिधारी लाल, तिन्ही सों रंग जात
बोलत हँसत खयाल कानपरी प्यारी है।
जाय के सुनाई, भई अति चपलाई,
आयों लिये तलवार दे किबार खोलि न्यारी है।

कवित

जाके संगि रंगभीजि, करत प्रसंग नाना,
कहां वह नर गयो, वेग दै बताइयै।
आगे ही बिराजै, कुछ तो सो नाहि लाजै,
अभै देखि सुख साजै, आंखें खोलि दरसाइयै।
भयोई खिसानौ राणा, लिखयौ चित्र भीत मानो,
देख्यौ हूँ प्रभाव एपै भाव मैं न भिद्यौ जाई,
बिनां हरिकृपा कहौ कैसे करि पाईयै।

मीरा जी को राणा ने विष भेजा तो वह सीस पर चढ़ कर पान कर गई। उस के पश्चात् राणा ने प्रतिहारों से कहा कि तुम यह मर्म लो। जब मीरा किसी बैरागी के साथ एकांत में बैठी हो तब शीघ्र आ कर समाचार करो। उसी क्षण आकर उस को मार डालूंगा। एक बार मीरा को गुरु जी का दर्शन हुआ। वह गुरु जी से हँस हँस कर बातचीत कर रही थी। एक प्रतिहारी ने जाकर राणा को कहा कि मीरा किसी से हँसी वार्ता कर रही है। राणा तलवार लेकर आया और आवाज दी कि खोल किवाड़! मीरा ने दरवाजा तत्कालीन खोल दिया। राणा मीरा जी के साथ किसी मनुष्य को न देख कर

कहने लगा तू जिस के संग रंग भीज के अनेक प्रेम प्रसंग करती थी वह मनुष्य कहाँ है? शीघ्र बता। आपने उत्तर दिया कि मनुष्य आप के आगे ही विराजमान है और दरवाजा खुलते ही उस को बिजली के समान तेज प्रकाश दिखाई दिया जिस से राणा बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और होश में आने पर मीरा जी से अपनी भूल की क्षमा मांगी।

कवित

विषई कुटिल एक भेष धरि साधू लियौ,
कियौ यौ प्रसंग मौसौं अंग संग कीजियै।
आज्ञा मोंकी दर्ई आप लाल गिरिधारी,
अहों सीस धरि लाई करि भोजन हूँ लीजियै।
संतनि समाज मैं विछाय सेज बोलि लियौ,
सेत मुख भयौ, विषैभाव सब गयौ
नयौ पायन पै आप, मोकों भक्तिदान दीजियै।

एक दिन की विचित्र वार्ता सुनिये। एक विषई पापी दुष्ट साधु का भेष धारण किये हुए आप के पास आकर कहने लगा कि मुझे परमात्मा ने स्वयं आज्ञा दी है कि तुम जा कर मीरा को पुरुष संग का सुख दो। मीरा ने उत्तर दिया कि आज्ञा मेरे शीश पर है, प्रथम भोजन तो कर लीजिए, मैं सेवा को उपस्थित हूँ।

आप संतों के समाज में सेज विछवा कर उस पुरुष से बोलीं कि आप इस पलंग पर सुखपूर्वक बिराजिये और मुझे भी आज्ञा दीजिये, जब प्रभु की आज्ञा है ही तो अब शंका किस की? आइये निशंक रस रंग में डूब के अंग संग कीजिये। मीरा जी के वचन सुन उस का मुख फीका पड़ गया। उस के तो रही न जान तन में काटो ते न लहू था बदन में॥ वह मीरा जी के चरणों पर गिर कर भक्ति का दान मांगने लगा।

अन्ततः सम्वत् 1603 में द्वारिका स्थित रणछोड़ के मन्दिर में नाचती गाती मीरा बेहोश होकर गिर पड़ी और उठी नहीं सदा के लिए अपने प्रियतम में समा गई।

(भक्त माल टीका प्रियादा संस्कृत के अनुसार)

सतगुरु रविदास महाराज की शिष्या कर्मा बाई

कर्मा बाई जी की प्रसिद्धि दूर दूर तक फैली हुई थी। सारे संत समाज में से महापुरुष उनको मिलने के लिए आते थे। ऐसे ही एक रोज एक महापुरुष आए और कहने लगे कि कर्मा बाई हर रोज भगवान तुम्हारे घर भोजन करने के लिए आते हैं। आप कैसे भगवान के लिए भोजन तैयार करती हो? कर्मा बाई ने अपने सीधे स्वभाव के अनुसार कहा कि मैं परमात्मा का सिमरन करते करते ही भोजन बनाती हूँ, खिचड़ी

बनाती हूँ। जिस समय भोजन तैयार हो जाता है, परोस कर रख देती हूँ। भगवान् आकर भोजन कर जाते हैं। वे महापुरुष कर्मा बाई से कहने लगे कि तुम्हें भोजन तैयार करने से पहले स्नान करना चाहिए, जिन लकड़ियों के साथ आग जलाती होती हो उनको धो कर, सुखा कर और लेप-पोच करके फिर भोजन तैयार करना चाहिए। यह बात सुनकर कर्मा के मन में वियोग लग गया कि मैंने तो कभी ऐसा सोचा ही नहीं।

कर्मा बाई ने दूसरे दिन लकड़ियों को धोकर रख दिया, स्नान किया, चौंके को लेप-पोच किया और भोजन तैयार करने लगी। भगवान् हर रोज़ की तरह नियत समय पर आए और देखा कि कर्मा ने भोजन अभी तैयार नहीं किया था वह वापिस चले गए भगवान् फिर आए लेकिन भोजन अभी भी तैयार नहीं था। कुछ देर बाद कर्मा ने भोजन तैयार कर लिया और परोस दिया। भगवान् आए, भोजन किया और जब हाथ साफ कर रहे थे और उनके हाथों और मुँह पर अभी खिचड़ी लगी हुई थी कि उसी समय स्वामी रामानंद जी के दरबार में भी भोजन तैयार करके भोज लगाने के लिए रख दिया गया और रामानंद ने भगवान् को बुला लिया। अकसर ऐसा होता है कि भोजन तैयार कर कर कपड़े से ढांप दिया जाता है और भगवान् का आह्वान किया जाता है। जब भगवान् जल्दी में आए तो रामानंद जी ने देखा कि भगवान् जी के हाथों और मुँह पर खिचड़ी लगी हुई है। रामानंद जी ने पूछा कि भगवान् जी यह खिचड़ी आप कहाँ से खाकर आए हैं? और आप आज इस रूप में कैसे आ गए? भगवान् जी ने उत्तर दिया कि मैं हर रोज़ कर्मा बाई के पास खिचड़ी खाने जाता हूँ। आज किसी महापुरुष ने उसे बहका दिया जिस कारण उसने खिचड़ी देर से बनाई। उसने अभी हाथ धुलाए भी नहीं थे कि आप ने याद कर लिया। मुझे उसी तरह उठकर आना पड़ा, हाथ साफ करने का समय नहीं मिला। यह सुनकर रामानंद जी हैरान हो गए कि कर्मा बाई के घर हर रोज़ भगवान् खिचड़ी खाने जाते हैं। स्वामी रामानंद जी कर्मा बाई के घर गए और कर्मा बाई से कहा कि आप हर रोज़ भगवान् के लिए भोजन तैयार करती हैं और भगवान् हर रोज़ खिचड़ी खाने आप के घर आते हैं। आप ने ऐसी क्या साधना की है? जिसके कारण भगवान् आप पर इतने दयालु हैं।

कर्मा बाई ने कहा कि मैंने तो ऐसी कोई साधना नहीं की, गुरु देव जी की बताई हुई मर्यादा के अनुसार उनके द्वारा बताया हुआ नाम सिमरन करती हूँ और भगवान् के लिए भोजन तैयार करती हूँ। मेरे सतगुरु रविदास जी बहुत दयालु हैं और उनकी ही कृपा से इस दासी को यह सेवा मिली है। तब कर्मा बाई के चरणों में स्वामी रामानंद जी ने निवेदन किया कि कर्मा जिस तरह तेरे घर आकर खुद भगवान् तुम्हारे पास बैठकर भोजन करते हैं, मेरे लिए भी भगवान् के चरणों में निवेदन करना कि मुझे

भी साक्षात् दर्शन दें, मुझे भगवान् के पूर्ण दर्शन नहीं होते। अगले दिन जब भगवान् कर्मा बाई के घर आए और खिचड़ी खाने लगे तब कर्मा बाई ने स्वामी रामानंद जी की स्नेह भरी बिनती भगवान् के चरणों में की कि स्वामी रामानंद जी ऐसा कहते हैं। भगवान् जी ने कहा कि कर्मा उसके मन में कुछ द्वैत है। तुम्हारा स्वभाव सीधा है और अंतर्मन पवित्र है, तुम्हारे मन में किसी के लिए वैर-विरोध नहीं है, तुम्हारा चित्त शांत है, तुम समदर्शी हो इसी कारण तुम्हें मेरे साक्षात् दर्शन होते हैं।

कर्मा बाई ने निवेदन किया कि महाराज मेरी आपको बिनती है कि आप एक बार स्वामी रामानंद जी को दर्शन जरूर दें। इस तरह स्वामी रामानंद जी को कर्मा बाई के निवेदन से भगवान् के दर्शन हो गए। ऐसा श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने कथन किया है।

कर्मा बाई पर एक दिन भगवान् बहुत खुश हुए और कहने लगे कि कर्मा कुछ वर मांग लो। कर्मा बाई कहने लगी कि प्रभु जी मेरी कोई इच्छा नहीं है और न ही मुझे दुनिया के पदार्थों से मोह है। मैं तो महाराज! आपके चरणों की भक्ति ही माँगती हूँ। दुनिया की कोई भी वस्तु सदा रहने वाली नहीं है। मेरे मन में एक ही विचार है कि आप तो अविनाशी हैं, सदैव रहने वाले हैं। मेरा शरीर तो नाशवान है सदा रहने वाला नहीं है इसी लिए मैं यह चाहती हूँ कि हमेशा के लिए खिचड़ी को भोग इसी तरह से लगता रहे। भगवान् कर्मा बाई से कहने लगे कि हमेशा ऐसा ही होगा।

साध संगत जी! आज भी जगननाथ पुरी में हर रोज़ भगवान् के लिए छत्तीस प्रकार के भोजन तैयार करके भोग लगाए जाते हैं। उसी तरह से स्वादिष्ट खिचड़ी बनाकर कर्मा बाई जी की तरफ से भगवान् को भेंट की जाती है और भोग लगाए जाते हैं। जो भी वहा दर्शनों के लिए जाता है उसे खिचड़ी मिलती है। ज्ञानी ज्ञान सिंह जी जिन्होंने यह कथा लिखी है, गुरु साहिबान के मुखबिंद से सुनी हुई है, लिखते हैं कि जब भी मैं वहाँ गया हूँ मैं खिचड़ी खाकर आया हूँ और वहाँ सबको खिचड़ी मिलती है।

कन्या के रूप में गंगा जी का आना और बारात डुबोना

एक बार श्री गुरु रविदास जी ने एक भंडारा किया। इस भंडारे में कन्या के रूप में स्वयं गंगा जी आईं। कन्या के अलौकिक रूप पर एक राजा मोहित हो गया। उस ने श्री गुरु रविदास जी के पास संदेश भेजा कि इस लड़की की हमारे साथ शादी कर दो, नहीं तो तुम्हें तोपदम करा दिया जाएगा। श्री गुरु रविदास जी ने ज्यों ही यह बात गंगा जी से कही, गंगा जी ने कहा यह राजा है, यह सीधे ढंग से नहीं मानेगा और परेशान करेगा। इस को बारात लाने को कह दीजिए। राजा धूमधाम से बारात लेकर श्री

गुरु रविदास जी के द्वार पर आया।

लड़की के रूप में गंगा जी सोलह श्रृंगार करके बाहर आई और राजा को देखते हुए उसी कुण्ड में कूद पड़ी, जिस से कंगन निकाल कर गुरु रविदास जी ने दिया था। गंगा जी कुण्ड में समा गई। कुण्ड से जल की ऐसी तेजगती धारा निकली जिस में राजा और सारी बरात डूब गई। सब को ज्ञान हो गया कि कन्या के रूप में स्वयं गंगा जी थी, जो श्री गुरु रविदास जी के दर्शनों के लिए आई थी।

उल्टी गंगा का बहाना

समयानुसार श्री गुरु रविदास जी के पिता जी जीवन यात्रा संपूर्ण कर गये तो श्री गुरु रविदास जी उनकी पालकी लेकर गंगा जी के किनारे पहुँचे जहाँ उन के अन्तिम संस्कार करने का विचार किया गया था। वहाँ के पांडे पण्डित इस पर बिगड़ गये और उन्होंने कहा कि यहाँ से पीछे आधे मील पर आप यह क्रिया कर सकते हैं। सब लोग पालकी पीछे आधे मील पर ले गये। गंगा जी के किनारे पर चिखा (चिता) बना कर अग्नि दी गई। इतने में गंगा जी में एक बड़ी लहर उठी और वह चिखा को अपनी लपेट में ले गई। वहाँ से गंगा जी का उल्टा प्रवाह आया था। इसलिए इस स्थान का नाम उल्टी गंगा पड़ गया। आज भी उस स्थान की स्थिति वैसी ही दिखाई देती है। (डा० लेख राज परवाना जी)

सिकंदर लोधी की साखी

(साखी श्री गुरु रविदास जी मिशन में एम० आर० बहाड़वाल ने श्री गुरु रविदास जी और सद्गुरु कबीर साहिब जी की जीवन गाथा सिकंदर लोधी जो उनके समकालीन था) उसके साथ जोड़ा है। सतगुरु कबीर जी को मुस्लिमान बनाने के लिए बहुत प्रयत्न किए गए थे। परन्तु सतगुरु कबीर साहिब जी के ऊपर इस बात का कोई प्रभाव नहीं था। इसके लिए सतगुरु कबीर जी को शराबी हाथी के आगे डाला गया था। लेकिन शराबी हाथी कबीर साहिब को नमस्कार करके वापिस लौट गया। इस के बाद उन्हें जंजीरों से बांध कर गंगा में फेंकवा दिया था। गंगा की लहरों ने उन की बेड़ियों को काट डाला।

इसी प्रकार सिकंदर लोधी ने श्री गुरु रविदास जी को सूनी कोठरी में बंद कर दिया। सब प्रेमियों को ऐसा प्रतीत होता था कि श्री गुरु रविदास जी जैसे कि तख्त पर विराजमान हैं। जेल के अधिकारियों ने जैसे अपनी आंखों से देखा इस से सिकंदर लोधी को यह मालूम हो गया कि दोनों महापुरुष ब्रह्मज्ञानी हैं। बादशाह सिकंदर ने

देखा कि मैंने यह गलत किया है। बादशाह ने श्री गुरु रविदास जी और सतिगुरु कबीर जी से क्षमा याचना की और मुल्ला-मौलवियों को प्रताड़ित किया कि कोई भी इन महापुरुषों के विरोध में कुछ भी न कहे।

एक बार सिकंदर लोधी ने श्री गुरु रविदास जी को ब्राह्मणों और मुस्लिमानों के कहने पर कैद कर लिया। परन्तु जब रात आई तो क्या देखा कि सतगुरु रविदास जी की नूरी शक्ति ने एक जलवा दिखाया। इस दृश्य में बादशाह सिकंदर लोधी ने देखा कि गुरु रविदास जी उन की सहायता करके उनका बचाव कर रहे हैं। इस बात का बादशाह पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। बादशाह को लगा कि उससे यह बड़ी भूल हुई है, जो महान् संत रविदास जी को उसने जेल में बंद करवाया। अगले दिन सुबह जब बादशाह ने न्याय सभा लगाई तो पहले श्री गुरु रविदास जी को जेल से निकाला और गुरु जी से अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी। बादशाह ने जहाँ गुरु जी को जेल में बंद करवाया था उस स्थान को मस्जिद में बदल दिया, जो आज भी बनारस में मौजूद है। श्री गुरु रविदास जी और सिकंदर लोधी की भेंट के बारे में श्री हरभजन रतन जी ने अपने महाकाव्य (गुरु रविदास महान्) में अपने विचार प्रकट किये हैं। जिन के द्वारा सिकंदर लोधी का पश्चाताप प्रकट होता है कि श्री गुरु रविदास जी की महानता के आगे सिकंदर बादशाह को झुकना पड़ा।

डाक्टर धर्मपाल सरिन ने भी लिखा कि जब सिकंदर लोधी बनारस आया था तो उन्होंने गुरु रविदास जी की बहुत महिमा सुनी। उनकी ख्याति से प्रभावित हो कर उसने गुरु जी को सआदर अपने दरबार में बुलाया। गुरु जी की भक्ति, ज्ञान और अलौकिक तेज को देख सिकंदर लोधी बहुत हैरान हुआ।

श्री गुरु रविदास जी की भक्ति और ज्ञान के कारण समकालीन ब्राह्मण उनसे बहुत ईर्ष्या करते थे। सिकंदरलोधी से ब्राह्मणों ने शिकायत की। इस शिकायत के फैसले के लिए एक शराबी हाथी को श्री गुरु रविदास जी को मरवाने के लिए छोड़ा गया। परन्तु हाथी श्री गुरु रविदास जी को प्रणाम करके वापिस चला गया। यह देख कर सिकंदर लोधी और सब लोग बहुत हैरान हुए। बादशाह सिकंदर ने ब्राह्मणों को डाँटा और श्री गुरु रविदास जी से गलती के लिए क्षमा मांगी।

जगद्गुरु रविदास जी की उदासियां/यात्राएं

गुरु रविदास जी ने भारत देश में अज्ञानी मानवता का मार्गदर्शन करने के लिए, कई वर्षों तक यात्राएं की। परन्तु छूआछात का बोलबाला होने के कारण, उनके सभी स्मृति चिह्न मिटा दिये गए। निर्धन व दूसरों की कृपा पर निर्भर, समाज ने, उनकी

स्मृतियों को किस प्रकार संभालना था। गुरु रविदास जी ने, अपने जीवन आदर्श को, भारतीय समाज तक पहुँचाने के लिए, केवल लिखित वाणी द्वारा ही नहीं, बल्कि भारत के कोने-कोने में जाकर, मनुष्य के सुधार का महान् कार्य आरंभ किया।

भारतीय समाज को जात-पात, भेदभाव, निश्चरता, पाखंडवाद, औरत की हो रही अधोगति जैसे भयानक मसलों से मुक्ति दिलाने के लिए, गुरु रविदास जी ने कई यात्राएं की। विद्वान बुद्धिजीवियों के अनुसार वे यात्राएं हैं -

उदासी 1.

1. रानीपुर, मालपी, माधोपुर, भागलपुर, नारायणगढ़, कालपी और नागपुर।
2. बरहानपुर, बीजापुर एवं भोपाल।
3. चंदेही, झांसी, टोड़, बूंदी तथा फिर उदयपुर।
4. जोधपुर, अजमेर तथा फिर बम्बई।
5. अमरकोट, हैदराबाद, काठियावाड़ तथा फिर बम्बई।
6. बम्बई से कराची, जैसलमेर, जोधपुर तथा बहावलपुर।
7. कालाबाग कोहाट, दर्रा खैबर, जलालाबाद।
8. जलालाबाद से काफरस्तान तथा फिर यहां से श्रीनगर।
9. डलहौजी से गोरखपुर (नाथों के साथ वार्तालाप) एवं गोरखपुर से काशीपुर।

उदासी-2.

काशीपुर से गोरखपुर और फिर यहां से प्रतापगढ़, शाहजहानपुर और तत्पश्चात् वे हिमालय पर्वत पर चले गए। उन्होंने अपनी सारी संगत को वापिस लौटा दिया तथा आदेश दिया कि उनका पुत्र, उनके बाद संगत को नाम/गुरुदीक्षा प्रदान करेगा तथा वे स्वयं काफी समय के पश्चात् वापिस लौटेंगे।

इन यात्राओं के दौरान, गुरु जी ने बहुत से क्रांतिकारी परिवर्तन किए। गुरु जी के चरणों में गिरकर, बहुत से पापियों ने, अपने दुष्कर्मों से मुक्ति प्राप्त की, धर्म के अति कट्टर ठेकेदारों ने गुरु जी द्वारा दर्शाये गए मार्ग पर चलकर अपना जीवन सफल किया। इसी दौरान गुरु जी ने बहुत से ला-इलाज रोगियों पर भी कृपा की। गुरु जी ने कई अंधे व्यक्तियों को दृष्टि प्रदान की। जो भी प्राणी उनकी शरण में आया, चाहे वह हिन्दु था या मुस्लिम, चाहे वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र था, सभी को गुरु जी ने अपनी कृपालु दृष्टि से एक समान देखा।

उदासी -3.

गुरु रविदास जी द्वारा अरब देशों की यात्रा:-

गुरु जी ने प्रत्येक धर्म के मुखियों के साथ विचार गोष्ठियां की तथा असंख्य

लोगों को सत उपदेश प्रदान किए।

गुरु रविदास जी की वाणी में प्रयुक्त विभिन्न स्थानों के नाम एवं स्थानों के गहन भेद से यह ज्ञात होता होता है कि आप ने दूर-दूर तक गमन किया। आप जी के एक शब्द 'बेगमपुरा सहर को नाउ' में अंकित 'आबादान' शब्द पर विचार करें, तो आप जी द्वारा, अरब देशों की यात्रा के संकेत मिलते हैं।

मैं जब गुरु रविदास जी की वाणी की व्याख्या के संबंध में, वाणी में प्रयुक्त शब्दों के अर्थों को, गहराई से देख रहा था तो 'आबादान' का अर्थ भाई काह सिंह नाभा के महान् कोष में देखकर हैरान रह गया क्योंकि बहुत से व्याख्याकार 'आबादान' शब्द का अर्थ केवल 'आबाद' ही निकालते आए हैं। 'महान् कोष' में इसका अर्थ 'इराक अरब का एक प्रसिद्ध शहर' है। किन्तु लेखक थोड़ा सा चूक गया, क्योंकि खोज करने के उपरांत पता चला है कि आबादान इराक का नहीं बल्कि ईरान का प्रसिद्ध शहर है।

गुरु रविदास जी की वाणी से यह प्रमाण मिलता है कि गुरु जी ने अपनी वाणी स्वयं, अपने निजी अनुभवों द्वारा ही लिखी है। बाह्य क्रियाओं का आंतरिक अनुभवों से सुमेल कर, श्रोताओं को रूचित करने हेतु एवं जन कल्याण के लिए, अपनी वाणी को अति सुन्दर ढंग से उच्चरित किया है -

घट अवघट डूगर घणा, इक निरगुण बैलु हमार ॥

रमईए सिउ एक बेनती, मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥१॥

को बनजारो राम को, मेरा टांडा लादिया जायि रे ॥१॥ रहाउ ॥

(भाव- यदि राम नाम का, व्यापार करने वाला कोई व्यापारी है, तो वह मेरे पास आकर, परमात्मा के राम नाम का व्यापार कर ले। मेरा टांगा परमात्मा के नाम के साथ लदा हुआ है। जिस प्रकार एक गुणहीन बैल के लिए, पहाड़ों का दुर्गम एवं सघन मार्ग तय कर, अपनी मंजिल को प्राप्त करना कठिन है। उसी प्रकार सांसारिक जीव के लिए, दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर, परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग, अज्ञानता व सांसारिक झूठे बंधनों के कारण अत्यंत खतरनाक पहाड़ी की भांति कठिन एवं जंगल की भांति घना है। इस मार्ग से गुजरने वाले जीव का, मन रूपी बैल बहुत कमजोर है। हे परमात्मा! आप के समक्ष निवेदन है कि सांसारिक जीवों की श्वासों रूपी पूँजी की रक्षा कीजिए जी।)

कूपु भरिउ जैसे दादिरा, कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥

ऐसे मेरा मन बिखिया बिमोहिया, कछु आरा पारु न सूझ ॥१॥

(भाव - हे परमात्मा जी, जिस प्रकार कुँआ में रहने वाला मेढ़क, बाह्य दुनिया से बिल्कुल अनभिज्ञ होता है क्योंकि मेढ़क का मन, अज्ञानतावश विषय-विकारों में

लुप्त होता है। उसी प्रकार की स्थिति इस जीव की है, जिसका मन अज्ञानतावश, भ्रम
 रूपी कुँआ में फँसा हुआ है।)
 रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥
 पारस मानो ताबो छुए, कनक होत नही बार ॥५॥
 परम परस गुरु भेटीऐ, पूरब लिखत लिलाट ।
 उनमन मन मन ही मिले, छुटकत बजर कपाट ॥६॥
 (भाव-जिस प्रकार यह एक महान् सत्य है कि सूर्य के प्रकाश से, रात्रि का अंधकार दूर
 हो जाता है। इस तथ्य से संसार के लोग अत्यंत भली भांति परिचित हैं। इस तरह, जब
 तक जीव के मन में, गुरु के ज्ञान का प्रकाश नहीं होता, तब तक अज्ञानता रूपी अंधकार
 का नाश नहीं होता। जीव के पूर्व कर्मों को, तभी शुभ समझना चाहिए, जब उसका
 परस पारस गुरु के साथ मिलन हो जाता है, जिसके मिलने से जीव के अज्ञानता रूपी
 कठिन द्वार खुल जाते हैं तथा जीव तुरियावस्था में पहुँच जाता है।
 तुम चंदन हम इरंड बापु रे संगि तुमारे बासा ॥
 नीच रुख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा ॥१॥
 (भाव - हे परमात्मा जी! आप इस संसार में चंदन की भांति श्रेष्ठ हो। हम सांसारिक
 जीव विकारों के कारण, अरिंड की भांति गुणहीन हैं। परन्तु जिस प्रकार चंदन के
 समीप अरिंड का वास होता है, उसी प्रकार प्रभु जी, हमारा वास आपके समीप है।
 जिस प्रकार चंदन के समीप रहने के कारण, अरिंड में भी चंदन जैसी सुगन्धि आ जाती
 है तथा नीच कहा जाने वाला अरिंड, चंदन जैसा ही उत्तम बन जाता है। उसी प्रकार
 परमात्मा जी, आपकी संगत करके, हम आप का ही रूप हो गए हैं।)
 तर तारि अपवित्र करि मानीये रे, जैसे कागरा करत बीचारं ॥
 भगति भगऊतु लिखीये तिह ऊपरे, पूजीये करि नमसकारं ॥२॥
 (भाव - जिस प्रकार ताड़ का वृक्ष अपवित्र माना जाता है क्योंकि उसमें नशे के समान
 (जल) पदार्थ होता है। विचारक ताड़ वृक्ष के पत्तों से बने कागज को अपवित्र समझते
 हैं। परन्तु जब उन पर प्रभु का नाम एवं प्रभु की उस्तति लिख दी जाती है, तब उन्हें
 प्रणाम कर पूजा जाता है। उसी प्रकार जिन जीवों को, सांसारिक लोग अज्ञानता के
 कारण नीच समझते थे, जब उन्होंने प्रभु का नाम सिमरन किया, तो वे भी इस संसार
 में पूजनीय हो गए।
 तू कायि गरबहि बावली ॥
 जैसे भादउ खूब राजु तू तिस ते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥
 जैसे कुरंग नहीं पाइयो भेदु ॥

तनि सुगंध दूढै प्रदेसु ॥
 (भाव - हे बावरी! तू झूठा अहंकार क्यों करती है। जिस प्रकार भादो के मास में खूबों
 का जीवन कुछ समय के लिए ही होता है। तुम्हारा तो कोई भरोसा ही नहीं, तुम तो
 उससे भी शीघ्र समाप्त होने वाली हो।
 मैले कपरे कहा लउ धोवउ ॥
 आवैगी नीद कहा लग सोवउ ॥
 (भाव - संतों की संगत के बिना, जीव अंतःकरण रूपी मैले कपड़े को, कहाँ जाकर
 धोयेगा? तथा अज्ञानता रूपी नींद में कब तक सोयेगा?)
 गुरु जी ने अपने समाज के नित्य-प्रति कार्यों के साथ जोड़कर, निम्नलिखित पूरा शब्द
 ही लिख दिया:
 चमरटा गांठि न जनयी ॥
 लोगु गठावै पनही ॥१॥ रहाउ ॥
 आर नही जिह तोपउ ॥
 नही रांबी ठाउ रोपउ ॥१॥
 लोगु गांठि गांठि खरा बिगूचा ॥
 हउ बिनु गांठे जायि पहुँचा ॥२॥
 रविदास जपै राम नामा ॥
 मोहि जम सिउ नाही कामा ॥३॥ ॥७॥
 यहाँ तक कि उन्होंने अपने समकालीन संतों का नाम भी अपनी वाणी में अंकित
 किया-
 नामदेव 'कबीरु' तिलोचनु 'सधना' 'सैनु' तरै ॥

 फल कारन फूली बनरायि ॥
 फलु लागु तब फूलु बिलायि ॥
 (भाव - जिस प्रकार सारी सृष्टि की वनस्पति फल देने के लिए, प्रफुल्लित होती है
 और उसे फल लगते हैं, परन्तु जिस समय फल लग जाते हैं, उस समय फूल झड़ जाते
 हैं।)
 धृत कारन दधि मथै सयान ॥
 जीवन मुक्त सदा निरबान ॥
 (भाव - जिस प्रकार समझदार स्त्री, घी की प्राप्ति के लिए, दही को मथती है, जब
 उसमें से मक्खन निकल आता है, तब वह मथना बंद कर देती है। उसी प्रकार ब्रह्म

ज्ञान की प्राप्ति के लिए, जिज्ञासु श्रेष्ठ कर्म करता है। जिस समय उसे ब्रह्म ज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो वह जीवन में ही, मुक्तावस्था प्राप्त कर, सदैव रहने वाले, निर्वाण-पद को प्राप्त कर लेता है।)

उपरोक्त शब्द पर विचार करने के उपरान्त, हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि गुरु जी ने कितने सुन्दर ढंग से, अपने जीवन के उद्घरणों को प्रस्तुत किया है। संभव है कि गुरु जी ने अपने शिष्य मुस्लिम राजाओं के, निवेदन को स्वीकार करते हुए, धर्म प्रचार हेतु इस प्रसिद्ध शहर 'आबादान' में चरण डाले हों। जिसका पूरा दृश्य उन्होंने अपनी वाणी में चित्रित किया है, जो उनकी उच्च स्तर की काव्य दृष्टि माना जा सकता है। जब कोई कवि कविता लिखता है, तब वह अपने इर्द-गिर्द एवं अपने जीवन में से संकल्प प्रस्तुत करता है। यही संकल्प गुरु रविदास जी की वाणी पर लागू होते हैं। आप जी की उच्च कोटि की काव्य-दृष्टि का ही परिणाम है कि 'बेगमपुरा सहर को नाउ' जैसा मिलता जुलता शब्द, अन्य किसी महापुरुष की वाणी में उपस्थित नहीं है।

गुरु जी ने अरब देशों की यात्रा करने के पश्चात्, वहाँ के सुन्दर शहर 'आबादान' को देखकर बेगमपुरा के संकल्प वाला शब्द उच्चारण किया, आप जी ने बहुत सन्दर ढंग से फरमाया -

बेगमपुरा सहर को नाउ ॥ दूख अंदोह नही तिहि ठाउ ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु ॥ खउफु न खता न तरसु जवालु ॥१॥
अब मोहि खूब बतन गह पाई ॥ ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥ रहाउ ॥
कायमु दायमु सदा पातिसाही ॥ दोम न सेम एक सो आही ॥
आबादानु सदा मसहूर ॥ ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२॥
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥ महरम महल न को अटकावै ॥
कहि रविदास खलास चमारा ॥ जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३॥२॥

(पन्ना ३४५)

उपरोक्त शब्द को पढ़ने, सुनने, परखने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि आप जी ने दूर-दूर तक यात्राएं की थीं। 'आबादान' शहर के लोगों एवं उनके रहन-सहन से संबंधित पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए, और खोज की आवश्यकता है। यहां तो इस शहर की सुंदरता का अनुमान, हम केवल गुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा सहर को नाउ', से ही लगा सकते हैं।

फारसी के प्रसिद्ध लेखक शेख सायदी की रचनाओं में भी, इस शहर का वर्णन मिलता है। यह शहर ईरान में स्थित है, जो अफगानिस्तान के दूसरी ओर है। यह पर्शीयन जुबान वाले लोगों का, क्षेत्र माना जाता है, जिसमें फारसी भाषा का जन्म

हुआ। यहीं से आर्य लोग जार्जीया से होते हुए, भारत में प्रविष्ट हुए थे।

गुरु रविदास जी धर्म प्रचार हेतु, अपने सेवकों को साथ लेकर, उत्तरी भारत से धर्म प्रचार करते हुए ईरान पहुँचे। फिर आप कुवैत से साऊदी अरब, फिर मदीना और मुस्लानों के धार्मिक स्थान मक्का पहुँचे। यह नहीं हो सकता कि गुरु जी बनारस से इतनी अधिक दूर आबादान गए हों और फिर वहाँ से आगे मुस्लिम सेवकों को साथ लेकर मक्का न पहुँचे हों क्योंकि ऐसा करने के लिए उनके मुस्लिम सेवकों ने अवश्य उत्साहित किया होगा। आबादान फारसी जुबान का एक साहित्यिक केन्द्र भी था जिसके साथ फारस की खाड़ी के समुद्र का एक हिस्सा लगता है। फारसी भाषा के कारण ही, ईरान को फारस भी कहते हैं।

(विश्व प्रसिद्ध यात्री 'इबन बतूता' (Ibn Batuta) ने संपूर्ण एशिया की यात्रा की। उसने 1,17,000 किलोमीटर की यात्रा में 40 देश घूमे। इसी दौरान इबन बतूता भी, आबादान में ठहरा हुआ था, जो यहाँ की चहल-पहल से बहुत प्रभावित हुआ। यह शहर ईरान में इराक की सीमा के साथ ही स्थित है। उस समय यह शहर एशिया का एक बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। भारत, ईरान, इराक व अफगानिस्तान और मध्य एशिया से यात्री, आबादान के रास्ते से आवागमन करते थे। आबादान से आगे, इराक में बसरा स्थान आता है, जहाँ आकर पंजाबी सैना ने द्वितीय विश्व युद्ध (1938-45) अंग्रेजों की ओर से लड़ा था।)

गुरु रविदास जी की अरब के इन क्षेत्रों में, मुस्लिम पीर-फकीरों के साथ ज्ञान-गोष्ठियां हुईं। गुरु जी के उच्च व सत्य आध्यात्मिक उपदेशों को सुनकर, यहां बहुसंख्या में लोग, आप जी के पक्के मुरीद बन गए।

गुरु रविदास जी ने अफगानिस्तान की भी यात्रा की। जो इसी दौरान ही की गई होगी। आबादान शहर शाही शहर था, जिसकी सुन्दरता से, गुरु रविदास जी ने, प्रभावित होकर, इसे अपनी वाणी में अंकित कर लिया। संभव है कि आप जी के शिष्यों ने आप की स्मृति में, वहाँ कोई न कोई स्मृतिचिह्न भी बनाया हो, परन्तु बाद में गुरु रविदास समाज की पहुँच से बाहर होने के कारण, उसे संभाला न गया हो।

श्री गुरु रविदास जी की हिमाचल पर्वत व सिरधार पर्वत यात्रा

यह दृष्टान्त श्री गुरु नानक देव जी की साखी पन्ना नं. 182-186 पर अंकित है। जब श्री गुरु नानक देव जी अर्न्तध्यान होकर हिमाचल पर्वत पर पहुँच कर जा खड़े हुए तब भाई मरदाना ने पूछा कि गुरु जी यह कौन सी जगह है। तब श्री गुरु नानक देव

जी ने बताया कि यह बहता हुआ बर्फ है। इसका नाम हिमाचल है। इस में यदि कोई प्राणी पांव रखता है तो वह गल जाता है, यहां पर आदमी के आने के लिए कोई रास्ता नहीं है। तब मरदाना ने कहा कि हम यहां क्यों आये हैं? तब गुरु नानक देव जी ने बताया कि हम उस अकालपुरुष की आज्ञा के अनुसार यहाँ आये हैं। तब मरदाना ने पूछा कि इस से आगे भी कोई जगह है? तब श्री गुरु नानक देव जी ने बताया कि इस से आगे हेम पर्वत है तथा उन्होंने आगे प्रस्थान किया। जब श्री गुरु नानक देव जी सिरधार पर्वत पर पहुँचे और वहाँ खड़े हुए तो भाई बाला जी व मरदाना जी ने पूछा कि इस हेम पर्वत का नाम सिरधार क्यों है? तब श्री गुरु नानक देव जी ने बताया कि यह पर्वत सिर तलवाया है और सिरधार की जगह है। यहां आने का रास्ता कोई नहीं है। यहां पर वही मनुष्य/प्राणी पहुँचता है जो ऊपर स्वर/सहारे चलता है। यहां पर अब से पहले केवल भगत कबीर व रविदास भगत ही पहुँच पाये हैं। इस दृष्टांत से प्रमाण मिलता है कि श्री गुरु रविदास जी महाराज ने सारे भारत का भ्रमण किया है तथा इतने ऊँचे स्थान पर अपनी आत्मिक शक्ति के कारण पहुँचे हैं।

राजा पीपा का गुरु जी का शिष्य बनना

राजा पीपा एक वैभवशाली क्षत्रिय राजा था। किसी कारण उसके मन में परमात्मा के प्रति वैराग्य हुआ। तलाश करते-2 उसे जानकारी प्राप्त हुई कि गुरु रविदास जी एक पहुँचे हुए पूर्ण महापुरुष हैं। परन्तु क्षत्रिय होने के कारण उनमें जाति अभिमान भी था। इसी कारण सबके सामने गुरु रविदास जी के पास जाते हुए उसे शर्म महसूस होती थी। एक दिन अवसर पाकर चुपके से गुरु रविदास जी के पास जा पहुँचे और पहुँचते ही प्रणाम करके श्री गुरु रविदास जी से नाम दान के लिए प्रार्थना की। श्री गुरु रविदास जी उस समय चमड़ा भिगोने वाले कुण्ड में से पानी निकाल रहे थे। बर्तन उनके हाथ में था। उसी पानी के भरे बर्तन को राजा की ओर बढ़ाते हुये गुरु जी ने कहा कि “राजन! लो यह चरणामृत पी लो” राजा के मन ग्लानि हुई कि क्षत्रीय होकर कुण्ड का पानी कैसे पीऊँ परन्तु श्री गुरु रविदास जी के सामने स्पष्ट इन्कार कर पाना भी कठिन था। उसने हाथ आगे करके पुल्लु में पानी ले तो लिया मगर श्री गुरु रविदास जी नज़र बचाकर अपने कुर्ते की खुली बाजू में से अमृत नीचे गिरा दिया। श्री गुरु रविदास जी इस बात को समझ तो गये परन्तु कुछ बोले नहीं।

राजा जल्दी-जल्दी में घर लौटते समय सोच रहा था कि आज तो रविदास मुझे चमार बनाने पर तुला हुआ था। बड़ी मुश्किल से बचकर आया हूँ। महल में आकर धोबी को आदेश दिया कि उस कुरते की बाजू को दाग छुड़ाकर अच्छी तरह

साफ करके लाओ। धोबी ने घर आकर अपनी लड़की कर्मा बाई से कहा कि बेटी मैं चूने का पानी तैयार करता हूँ। इस दाग को चूस कर साफ कर दो। वह लड़की छोटी थी। वह उस दाग को मुँह में रख कर चूसते हुए उसको बाहर थूकने की अपेक्षा अन्दर ही निगलने लग गई। ऐसा करने से उसके ज्ञान का पर्दा खुल गया तथा वह आध्यात्मिक ज्ञान की बातें करने लगी।

धीरे-धीरे शहर में यह चर्चा फैल गई कि धोबी की लड़की कर्मा बाई बहुत बड़ी विदुषी है जो कि अगम्य का ज्ञान जानती है। राजा पीपा को जब यह समाचार मिला तो एक रात चुपके से धोबी के घर पहुँच गया क्योंकि आध्यात्मिक ज्ञान के प्रति खिचाव तो उसके मन में था ही। राजा को देखकर धोबी की लड़की खड़ी हो गई। राजा ने कहा कि बेटी मैं तेरे पास राजा के रूप में नहीं आया बल्कि भिखारी बनकर आया हूँ। उस लड़की ने कहा कि मुझे जो कुछ मिला है आप ही की कृपा से मिला है। आप के कुरते में लगे दाग को चूसने से ही मुझे आन्तरिक ज्ञान की प्राप्ति हुई है। यह सुनकर राजा को समझ आई और अपने आप को कोसने लगा। धिक्कार है मेरे क्षत्रिय होने का, धिक्कार है मेरे राजा होने का, धिक्कार है मेरी लाज को, धिक्कार है इस जाति-पाति के भेद-भाव को जिसके कारण मैं परमार्थ से खाली रह गया हूँ। अब किसी बात की चिन्ता न करते हुए वह सीधे श्री गुरु रविदास जी के पास पहुँचा और विनती की कि हे गुरुदेव! मुझे अमृत पिलाओ। तो श्री गुरु रविदास जी ने अपनी लुटिया माँजकर ठण्डा पानी पिलाया। श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि वह अमृत तो कर्माबाई के पास पहुँच गया। जो अमृत मैं रोज पीता हूँ, वही अमृत उस रोज तुम्हें प्राप्त हुआ था। परन्तु तुमने मुझे नीच जाति का समझकर उस अमृत को नीचे गिरा दिया था। उसी अमृत के दाग को चूसकर कर्मा बाई महात्मा बन गई है। हे राजन! जाति-पाति और ऊँच-नीच का भाव जब तक तुम्हारे मन से निकल नहीं जाता तब तक तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। परमात्मा के भक्त की कोई जाति-पाति नहीं होती। नीच से नीच कही जाने वाली जाति में भी परमात्मा का भक्त पैदा हो जाये तो वह पुरुष ही नहीं बल्कि वह परिवार, वह जाति तथा वह गाँव सब पवित्र हो जाते हैं। भक्त का यशोगान सारे संसार में फैल जाता है। तब राजा पीपा को उपदेश देते हुए श्री गुरु रविदास जी शब्द उच्चारण करते हैं :

जिह कुल साधु बैसनो होइ ॥

बरन अबरन रंकु नही ईसुर

बिमल बासु जानीए जगि सोइ ॥१॥ रहाउ ॥

ब्रह्मन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥

होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥१॥

धनि सु गाउ धनि सो ठाउ धनि पुनीत कुटुंब सभ लोइ ॥

जिन पीआ सार रसु तजे आन रस

होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ॥२॥

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबर अउरु न कोइ ॥

जैसे पुरैन पात रहै जल समीप

भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥३॥ ॥२॥

(पन्ना ८५८)

जिस अमृत की आशा लेकर अब तुम दोबारा आये हो अब वह तुम्हें नहीं

मिलेगा। अब सेवा सिमरण में लगकर परमगति को प्राप्त करो। इस अवसर को आपने

जाति अभिमान के कारण गंवा दिया है। नामदान प्राप्त कर उसी से कमाई करो और

स्वयं अमृत प्राप्त करो। जाति-पाति का भाव और ऊँच-नीच की भावना को त्यागकर

साधना करो तो तुम्हारा जीवन अवश्य सफल होगा।

बोलो श्री गुरु रविदास जी महाराज की जय ॥

चार युगों के जनेऊ दिखाना

जब श्री गुरु रविदास जी महाराज ने देखा कि समाज भेद-भाव का शिकार

है और शूद्र समझे जाते समाज को सदियों से प्रभु-भक्ति के अधिकार से वंचित किया

गया है और केवल कुछ लोगों को ही प्रभु-भक्ति और जनेऊ पहनने का अधिकार है।

ऐसे समय में शूद्र समझे जाते समाज में पैदा होकर गुरु जी द्वारा ब्राह्मणों द्वारा किए जाने

वाले कर्म जैसे माथे पर तिलक लगाना, धोती पहनना और जनेऊ पहनना, इत्यादि कर्म

करना एक क्रांतिकारी कार्य था। गुरु जी को ऐसा करते देख कर जाति अभिमानी लोग

तड़प उठे और उन्होंने राजा नागर मल्ल के दरबार में जाकर गुरु जी के विरोध में

शिकायत की कि एक शूद्र हम लोगों वाले कर्म करता है। ब्राह्मणों की शिकायत पर

राजा नागर मल्ल ने गुरु जी को दरबार में बुलाया और कहा कि ब्राह्मणों की यह

शिकायत है कि आप शूद्र होकर ब्राह्मणों वाले कर्म करते हो। गुरु जी ने उत्तर दिया कि

संसार में सब प्राणी समान हैं और कोई भी जन्म के कारण छोटा एवं बड़ा नहीं है।

सभी प्राणियों में प्रभु की ज्योति निवास करती है और सभी प्राणी चाहे वह शूद्र है और

चाहे ब्राह्मण, पांच तत्वों से बने हुए हैं। इस लिए सभी प्राणियों को अपनी इच्छा के

अनुसार प्रभु की भक्ति करने का एक समान अधिकार है। राजा गुरु जी के वचन

सुनकर बहुत हैरान हुआ पर पंडित गुरु जी से कहने लगे कि आप शूद्र होकर जनेऊ

नहीं पहन सकते इस लिए आप जनेऊ उतार दीजिए। गुरु जी ने कहा कि मैंने यह

जनेऊ अब नहीं पहना, मैं तो इसे चार युगों से पहनता आ रहा हूँ। उस समय ब्राह्मणों

ने कहा कि देखो महाराज! यह कितना झूठ बोल रहा है। अगर ये चार युगों से जनेऊ

पहनते आ रहा है तो ये चारों युगों के जनेऊ दिखाए। उस समय गुरु जी ने रम्बी के

साथ अपना कांधा चीर कर चारों युगों के जनेऊ दिखाते हुए कहा कि सतयुग में मैं

स्वर्ण का, तेते युग में चांदी का और द्वापर युग में कांसे का जनेऊ पहनता रहा हूँ और

आज कल्युग में मैंने सूत का जनेऊ पहना है। गुरु जी का यह चमत्कार देखकर राजा

नागर मल्ल और सभी ब्राह्मणों और उपस्थितगणों ने गुरु जी के चरणों में प्रणाम करके

अपनी गलती के लिए क्षमा माँगी। गुरु जी ने सूत का जनेऊ उतार दिया और सबको

भेद-भाव से ऊपर उठकर सभी प्राणियों से प्रेम करने और प्रभु का सिमरण करने का

उपदेश दिया।

मृत गाय को जीवित करना

जब गुरु रविदास जी की महिमा और आध्यात्मिकता विश्व विख्यात हुई तो

उनके जहाँ संगत का आना-जाना बहुत बढ़ गया। राजा-महाराजा गुरु जी के निवास

पर अकसर आते-जाते रहते। एक दिन गुरु जी राजा नागर मल्ल उर्फ राजा हरदेव सिंह

की विनती पर उनके जहाँ गए हुए थे और पुरोहित लोग किसी कार्य को सम्पन्न कर

रहे थे। मंत्रोच्चारण हो रहा था और सभी लोग अपने-अपने स्थान पर बैठकर इस

धार्मिक कार्य को देख रहे थे गुरु रविदास जी वहाँ समाधि लगाकर बैठे हुए थे। इतने

में बादशाह आया और कहने लगा गुरुदेव जी! विधि-विधान के अनुसार जो सामग्री

दान में देनी है उसको एक बार देख लें। श्री गुरु रविदास जी कहने लगे बादशाह आप

जानते हैं मैं केवल परम पिता परमात्मा का उपासक हूँ। इस लिए वह काम जिन

पुरोहितों ने किया है उन्हीं के निरीक्षण में सम्पन्न किया जाए तो ठीक रहेगा। बादशाह

भी समझ गया कि आज कोई नई लीला होने जा रही है नहीं तो गुरुदेव कभी भी

हमारे आग्रह को टाला नहीं करते। सोच-समझ कर बादशाह ने कहा मेरी विनम्र

विनती को स्वीकार करें और मेरे साथ चले तो हमारे परिवार के लिए बेहतर होगा।

जब गुरु रविदास जी उठने लगे तो सहसा उनके मुख से यह शब्द निकले

कि हे राजन, जैसी आपकी इच्छा और देखते हैं कि मेरे मालिक को क्या मंजूर है?

इतना कह कर गुरुदेव और राना हवन कक्ष में पहुँच गए। सारा कार्य सम्पन्न होने के

बाद बादशाह ने अपने कार्य-सिद्धि के लिए सम्पन्नता पर पुरोहितों को सोने की गायें

दान में दी। यह देखते हुए गुरु रविदास जी कहने लगे, राजन ठहरो! मैं नीति की बात

करना चाहता हूँ यह सोने की गायें आप किस मनोरथ सिद्धि के लिए दे रहे हैं? तो

राजन ने कहा पंडितों और पुरोहितों को सोने की गाथें दान करने से स्वर्ग लोक प्राप्त होता है। गुरु जी कहने लगे हे पंडित जी! आप ही बताएं दान जीवित गाथें का किया जाता है अथवा मृत का। तो पंडितों ने जवाब दिया, सच कहो तो दान हमेशा जीवित गाथ का किया जाता है। तो गुरु जी कहने लगे यदि जो आप कह रहें हैं यह सच है तो आप राजा के साथ छल करने जा रहें हैं। यह बात सुनते ही पुरोहित लोग और राजा झुंझला गए। गुरु रविदास जी कहने लगे कि पंडित जी! आपका विधि, विधान आपके शास्त्र, वेद, और स्मृतियाँ यह जानते हुए भी कि परमात्मा हर जीव में रहता है, जात-पात में विश्वास करते हैं। आप जानते हैं कि परमात्मा की रचना के आधार पर नहीं आप की नीति के आधार पर मैं चमार जाति से सम्बन्धित हूँ। आपकी नीति के अनुसार हर जीवित वस्तु और प्राणी आपका है और मेरे हुए प्राणी हमारे क्योंकि मेरी जाति के लोग शहर के आस पास मेरे हुए पशुओं को उठाने का कार्य करते हैं। मेरे मत के अनुसार मूर्ति और मेरे हुए पशु में कोई अंतर नहीं है। निर्जीव वस्तु सोने की हो या चमड़े की उस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं। क्योंकि यह सभी गाथें निर्जीव है इसलिए इन पर मेरा पैदायशी हक है। स्वाभाविक तौर पर यह बात विवाद का विषय बन गई राजा तो पहले ही उनकी सच्चाई, ईमानदारी, पूजा, पद्धति और प्रभु-ज्ञान का कायल था। इस लिए उसने कहना शुरू कर दिया कि पंडित जी मैं बीच में तो नहीं आना चाहता परन्तु आपको गुरुदेव जी के इस प्रश्न का उत्तर अवश्य देना होगा तो फैसला यह हुआ कि या तो पुरोहित लोग अपनी विद्या शक्ति से इन को जीवत करे और अपने साथ ले जाएँ। नहीं तो इन्हें गुरु जी ले जाएंगे। लालच के कारण पंडित हाथ में आया इतना सोना नहीं छोड़ना चाहते थे और उन्होंने कई प्रकार के मंत्रोंच्चारण किए पर काम न बनता देखकर कहने लगे, “राजन! आप अपने गुरु से कहें कि वह कुछ ऐसा करे जिससे यह सोने की गाथें स्वयं उनके पास चली जाएँ।” इतिहास में लिखा है कि गुरु रविदास जी ने उनके आग्रह को मंजूर किया और समाधि लगाकर बैठ गए। तत्पश्चात् उपस्थित लोगों ने देखा कि सोने की गाथें गुरु रविदास जी की शरण में आकर विराजमान हो गईं ऐसा चमत्कार देखकर गुरु जी की महिमा चारों ओर फैल गई।

केदार पाण्डेय और उसके साथियों द्वारा गुरु जी को समाप्त करने का षड्यन्त्र

राजा नागर मल्ल के दरबार में जब ब्राह्मणों को हार का सामना करना पड़ा

तो विवश होकर श्री गुरु रविदास जी से उस समय हार तो मान ली, परन्तु उनके मन में प्रतिशोध की ज्वाला पहले से ज्यादा बढ़ गई। वे हर समय श्री गुरु रविदास जी से बदला लेने की योजनाएँ सोचने लगे। केदार पाण्डेय जो पाखण्डी पाण्डों का मुखिया था, वह इस बात को भूल नहीं सका। उसने श्री गुरु रविदास जी से बदला लेने की योजना बनाई कि रविदास को धोखे से किसी भी बहाने से बुलाकर समाप्त कर दिया जाए। यह बात उसने अपने साथियों को बता दी कि रविदास हमारे रास्ते में कांटा है। यदि उसको समाप्त कर दें तो यह कांटा हट जायेगा। यह कार्य उसने अपने जिम्मे ले लिया। श्री गुरु रविदास जी के पास आ कर कहा कि महाराज! हमारा एक मसला उलझ गया है आप सत् पुरुष होते हुये जो निर्णय देंगे हमें मान्य होगा। हमें विश्वास है आप गलत निर्णय नहीं देंगे। आप मेरे साथ चलिये। यद्यपि श्री गुरु रविदास जी इस चाल को समझ तो गये परन्तु ईश्वर को साक्षात् निर्णय देने वाला मानकर इन्कार नहीं किया। उनको पूर्ण विश्वास था कि प्रभु ही मेरी सहायता करने वाला है और केदार पाण्डेय के साथ चल दिये। लोहटा वीर ने जंगल में ले जाकर श्री गुरु रविदास जी को कहा कि आप प्रभु भक्ति छोड़ने पर रजामन्द है या नहीं? तो श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि मैं प्रभु-सुमिरन नहीं छोड़ूँगा। चाहे प्राण चले जायें। ज्यों ही पाखण्डी ब्राह्मण आक्रमण पर उतारू हुये उनकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया तो उन्होंने गलती से अपने साथी केदार पाण्डेय को ही मार दिया। ब्राह्मण रविदास जी को मरा हुआ समझकर राजा नागर मल्ल के दरबार में लाश को ले आये तथा राजा को सूचना दे दी कि रविदास को किसी ने मार दिया है। राजा को विश्वास नहीं हुआ। उसने लाश पर से परदा उठा कर देखा तथा ब्राह्मणों को कहा कि पहचानों कौन है? तब उनको अपनी भूल को स्वीकार करना पड़ा।

अलावदी बादशाह के साथ गोष्ठी

यह गोष्ठी एक हस्तलिखित ग्रन्थ जो सिकख रेफरेन्स लाईब्ररी अमृतसर में मौजूद है जो कि सम्मत् 1786 में लिखा है उसके पृष्ठ नं. 463-466, 487 पर अंकित है। पृष्ठ 71 ‘भगत रविदास’ जसवीर सिंह साबर (गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी अमृतसर)। काशी में काजियों ने सुल्तान अलावदी बादशाह से कहा कि रविदास एक चमार है। इस संसार के लोग (हिन्दु-मुसलमान) उसको पूज्य मानते हैं। वह अपने आप को पीर कहता है और सब लोग उसके पास मुरीद बन कर जाते हैं। आप उसको बुलाकर पूछो कि उसने यह क्या ढोंग चलाया हुआ है? तब सुल्तान अलावदी ने गुरु

रविदास जी को अपने दरबार में बुलाया। उसी समय गुरु रविदास जी के भाई बन्धू सिर पर चमड़ा उठाकर गुरु रविदास जी के पक्ष में कहने के लिये सुल्तान के दरबार में आये। जब रविदास जी बादशाह के निकट गये तब अलवदी बादशाह ने रविदास जी को आदर के साथ निकट बैठाया। उस समय बादशाह को कच्चे चमड़े की बदबू आई क्योंकि रविदास जी के साथी सिर पर चमड़ा उठाये हुए थे। तब बादशाह ने रविदास जी के भाई बन्धूओं को बाहर भेज दिया तब सुल्तान अलाबदी ने रविदास जी को कहा कि तू लोगों को मुरीद करता है, कुछ करामात तो दिखा। तब रविदास जी ने कहा कि मैं करामात तो दिखा चुका हूँ, आप समझे नहीं। तब बादशाह कहने लगा कि क्या करामात दिखाई है? तब रविदास जी ने अपनी वाणी में उच्चारण किया : “नागर जना मेरी जाति विख्यात चमार॥ रिदै राम गोबिन्द गुण सार॥ रहाउ॥” बादशाह ने कहा कि इसका अर्थ? तब रविदास जी समझाते हैं कि मेरी जाति विख्याति चमार है जिसमें मैं पैदा हुआ हूँ। मेरे भाई बन्धुओं को आपने बाहर भेज दिया है क्योंकि उनसे आपको बदबू आती थी परन्तु मेरे हृदय में प्रभु के गुण बसे हैं इस लिए आप ने मुझे आदर के साथ निकट बैठाया। नहीं तो मैं अछूत (चमार) आपके पास कैसे आ सकता था। “सुरसरी सलिल किरत वारुणी रे सन्त जन करत नहीं पानं। सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहीं होई आनं॥” बादशाह ने पूछा कि इसका अर्थ? तब गुरु रविदास जी ने कहा कि बादशाह! गंगा में से यदि जल लेकर कोई मदिरा (शराब) बनाता है तो उसको सब कोई अपवित्र कहता है और यदि कोई कूएं का जल लेकर उस से शराब बचा कर गंगा में प्रवाहित कर दें तो वह गंगा से मिलकर गंगा रूप हो जाती है। इसी प्रकार मैं भी मदिरा (शराब) की भांति अछूत जाति समझा जाता था परन्तु जब से मैं परमेश्वर की शरण में आया हूँ तब से मैं भी पवित्र हो गया हूँ। “तर तार अपवित्र कर मानिये रे जैसे कागरा करत विचारं। भगति भगवत लेखीये तिह उपरि, पूजीये करि नमस्कारं।” बादशाह ने कहा इस का अर्थ? तब रविदास जी ने कहा कि बादशाह! कागज सिनी का होता है और सण को अपवित्र लिखा गया है और जब परमेश्वर की भक्ति का विचार उस कागज पर लिखा जाता है तब वह कागज की पूज्य हो जाता है। वैसे ही कागज की भांति मैं भी अपवित्र था पर प्रभु के नाम के कारण मैं पवित्र हो गया हूँ। “मेरी जाति कटुबांढ़ला ढोर ढोवंता नितहि बनारसी आस पासा॥ अब विप्र प्रधान तिह करे डंडौत तेरे नाम शरणाई रविदास दासा॥” बादशाह ने पूछा इस का अर्थ? तब रविदास जी ने कहा कि बादशाह जी मेरी जाति चमड़े को काटने कूटने वाली है और मरे हुये पशुओं के बनारस के पास ढोने वाली है और अब प्रभु नाम के प्रताप से बड़े से बड़ा बादशाह, प्रधान ब्रह्मण और क्षत्रीय भी डंडौत वन्दना

करते हैं। बादशाह गुरु जी की परमार्थ भरी बातें सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। उसने श्री गुरु रविदास जी को बहुत दौलत भेंट की साथ ही सोने से जड़ी हुई सेज भी दान में दी। श्री गुरु रविदास जी ने परमेश्वर के नाम पर सारी दौलत जरूरतमंदों में बाँट दी और सोने जड़ी हुई सेज गंगा जी में डाल दी। तब काजियों ने बादशाह से फिर शिकायत की कि रविदास ने सारी दौलत लुटा दी साथ ही आपकी दी हुई सेज भी गंगा में प्रवाहित कर दी। अब उस पर तो मलेच्छ बैठेंगे या हमारे जैसे लोग ही बैठेंगे यह तो उसने ठीक नहीं किया। यदि किसी कंगाल को दे देता तो भला होता तथा बादशाह का भी भला होता। तब सुल्तान ने श्री गुरु रविदास जी को पास बुलाकर कहा कि हमारी दी हुई सेज वापिस कर दें। मैं आप को दूसरी सेज दूँगा। तब, रविदास जी ने पूछा कि आप वही सेज लेंगे? बादशाह ने कहा कि मैं वहीं अपनी दी हुई सेज लूँगा। श्री गुरु रविदास जी ने बादशाह से कहा कि आप मेरे साथ वहां चले जहाँ मैंने वह सेज रखी है वहां से मैं आपको निकाल कर दे दूँगा। तब तत्काल सुलतान गुरु जी के साथ गंगा के किनारे आया। रविदास जी ने कहा कि हे गंगा मेरी वही अमानत वापिस कर दो। तब गंगा ने अपनी लहर के साथ सात सेजें उसी प्रकार बाहर निकाल दी। श्री गुरु रविदास जी ने बादशाह से कहा कि अपनी सेज पहचान लो? बादशाह ने कहा कि मेरी तो एक ही सेज थी, ये सात सेजें कैसे बन गई। श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि बादशाह! ये एक दिन में ही एक से सात हो गई हैं। यदि और रहने देते तो बहुत बढ़ जाती और तेरे ही काम आती। अब ये सात सेजें तेरी ही हैं आप ले लो। बादशाह ने कहा कि गंगा में वापिस डाल दें ताकि और बढ़ जाए। तब श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि ये तो अब बढ़ेगी नहीं। इनका तो बीज नष्ट हो गया है। यह लीला देखकर बादशाह अलावदी को विश्वास हो गया तथा उठकर चरणों में गिर कर दंडवत् प्रणाम किया।

श्री गुरु रविदास जी महाराज की जय॥

श्री गुरु रविदास जी की गुरु कबीर जी और गुरु नानक देव जी से ज्ञान गोष्ठियां

ऐसा संकेत मिलता है कि श्री गुरु रविदास जी महाराज ‘मण्डूर नगर’, जिसे आजकल ‘सीर गोवर्धनपुर’ कहा जाता है, वहाँ अपना सत्संग किया करते थे। उस समय गुरु जी की आयु लगभग 73 वर्ष की थी। सतगुरु कबीर जी बनारस (आजकल कबीर चौरा) में सत्संग किया करते थे। प्रायः दोनों महात्मा इक्ठे बैठ कर ज्ञान

गोष्ठी करते थे।

डा: लेख राज परवाना अपनी पुस्तक “श्री गुरु रविदास जीवन एवं किरतें” में गुरु रविदास जी की गुरु नानक देव जी के साथ गोष्ठियों के संबंध में लिखते हैं:-

यह तथ्य ऐतिहासिक तौर पर साबित हो चुका है कि गुरु नानक देव जी गुरु रविदास जी से पहले ज्योति ज्योत समा गए थे। “गुरु रविदास जी (संवत् 1433-1584) 151 वर्षों के हो कर ज्योति ज्योत समाए थे।” “गुरु नानक देव जी 70 वर्ष 5 महीने एवं तीन दिनों की (1526-1596) आयु व्यतीत करके अकाल पुरुष के संग स्थाई तौर पर जा मिले थे।” इस समय में गुरु नानक साहिब की गुरु रविदास जी के साथ तीन मुलाकातें हुई बताई जाती हैं। पहली गोष्ठी चूहड़काणे (ननकाणा साहिब) में उस समय हुई, जब गुरु नानक साहिब अभी किशोर अवस्था में थे। पांच संत कबीर, त्रिलोचन, रविदास, सेन और धन्ना धर्म सत्य के प्रचार हित पंजाब आए थे। गुरु नानक साहिब ने जब बीस रुपयों, जो बीस रुपए अपने पिता मेहता कालू जी से व्यापार के लिए प्राप्त किए थे, उन्होंने सब संतों की सेवा में लगा कर ही सच्चा सौदा किया था और संतों का आशीर्वाद प्राप्त किया था। बाबा जी जानी-जान थे। उन्होंने संतों के भीतर जरूर कोई सात्विक एवं आध्यात्मिक शक्ति देखी होगी, जिस से प्रभावित हो कर उन्होंने संतों की सेवा की। पिता कालू जी को जब पता लगा कि इन संतों में नीच जाति के साथ संबंधित संत भी थे तो लोक-लज्जा के मारे उन्होंने गुरु साहिब के थपड़ मारा और डांटा कि “रविदास-कबीर नीच जाति के हैं, तुम उनके साथ शिष्टाचार क्यों बढ़ा रहे हो?” गुरु जी ने अपने पिता को बेझिझक हो कर स्पष्ट उत्तर दिया था और जाति पाति का खंडन करते हुए निर्भीक होकर कहा था :-

नीचा अंदर नीच, जाति नीची हूं अति नीच ॥

नानक तिन के संग साथि वडिआ सो किआ रीस ॥

दूसरी गोष्ठी बाबा जी के साथ संत रविदास जी की उस समय हुई जब संत रविदास जी अपने और संत साथियों के साथ उत्तरी भारत का दौरा करते-करते बारह वर्ष बाद दोबारा पंजाब आए थे। अपने मित्रों, श्रद्धालुओं, संतो, भक्तों से मिलते-मिलते वह सुल्तान पहुंचे। संतघाट गुरुद्वारे वाले स्थान पर संत समागम होना नियत था।

गुरु नानक देव जी के जीजा जै राम जी और बहन बेबे नानकी उनका बहुत ध्यान रखते थे कि वह घर बार छोड़ कर कहीं संन्यासी न हो जाए। सुल्तानपुर का बेर साहिब गुरुद्वारा उस समय अस्तित्व में नहीं था, पर बेंई नदी बहती थी। गुरु नानक साहिब के इस नदी में डुबकी लगाने से इस नदी की शोभा बढ़ गई। इस स्थान से तीन

मील उत्तर दिशा की तरफ कपूरथला-सुल्तानपुर सड़क पर संत घाट गुरुद्वारे वाले स्थान पर, जो बेंई नदी के बिल्कुल किनारे पर स्थित है, और जिस की इमारत अब भी अधूरी पड़ी है। (जहां भाई उधम सिंह तीस साल पहले छोड़ गए थे, उसी हालत में है) जहां पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी सुशोभित हैं, डुबकी लगाने के बाद गुरु नानक देव जी प्रकट हुए थे। यहां पहले गुरुद्वारा नहीं था, समाधियाँ बताई गई हैं। समाधियाँ अभी भी हैं, पर वे थोड़ी दूर सुल्तानपुर शहर की तरफ हैं। बाबा जी को अकेले बाहर कम भेजा जाता था। भाई भागीरथ, जो उनके सहायक थे, हर वक्त गुरु जी के साथ रहते थे। संत समागम वाले दिन बातें करते-करते बहाने से बेर साहिब गुरुद्वारे वाली जगह पर बेंई के तट पर आ गए। कपड़े उतार कर भाई भागीरथ जी को पकड़ा दिए और खुद लंगोटी के साथ बेंई में स्नान करने के बहाने कूद पड़े और अन्धेरे में विलीन हो गए। गुरुद्वारा बेर साहिब से तीन किलोमीटर दूर संत घाट गुरुद्वारा है, जहाँ सत्संग होना तय था, सत्संग के लिए पहुँच गए थे। यह पहले वाले ही संत थे, जो पंजाब में सत्य का प्रचार करने आए थे। इन पांचों संतों में गुरु रविदास जी भी थे। इस संत समागम में, मालूम होता है, सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्व-व्याप्त परमात्मा का संकल्प लिया गया हो। इसी गुरुद्वारे की दीवार पर लगे इन शब्दों “१९ गुरुद्वारा श्री संत घाट साहिब जी।” वहां श्री गुरु नानक देव जी महाराज श्री बेर साहब से बेंई नदी में डुबकी लगा कर तीसरे दिन प्रकट हुए और यहीं मूल मंत्र का उच्चारण किया।” जिस से स्पष्ट है कि निरंकार रूपी परमात्मा की प्रशंसा में ‘पट्टटी’ नामक रचना गुरु नानक साहिब ने इसी समय की थी और सार-तत्व के रूप में इस के बाद मूलमंत्र की सृजना की होगी। मूल मंत्र के साथ-साथ उनका निम्न लिखित शब्द मुक्ति जाप की ओर भी संकेत करते हैं:-

झाड़ मिट्टी आतम दरसाना ॥ प्रगटै गिआन जोत तब भाना ॥

लिव लीन भहै माधउ आतम अैसे ॥ जल तरंग भेद कु कैसे ॥

नानक उअंग सोहंग आतम सोऊ ॥

तीन दिनों के संत समागम में लिये गए निर्णयनुसार गुरु नानक देव जी ने अपनी उदासियों की तैयारी की शुरुआत भी इसी ‘संतघाट’ गुरुद्वारा वाली जगह से ही आरम्भ हुई बताई जाती है। इस तथ्य की पूर्ति संत करतार सिंह जी ने, जो गुरुद्वारों के निर्माण और उनकी मुरम्मत करवाने और सिक्ख इतिहास और वाणी के कुशल वक्ता और तर्जमान माने जाते हैं, ने ही इस संत समागम की संभावना के होने की पुष्टि गुरुद्वारा बेर साहिब सुल्तानपुर तिथि 31-03-1988 को मेरे साथ एक विचार गोष्ठी में की थी। गुरु नानक साहिब की संतो के साथ यह दूसरी मुलाकात थी। सच खंड के संकल्प के विकास इसी समय मिला था। और मूलमंत्र की रचना भी इसी स्थान पर हुई

बताई जाती है।

गुरु नानक देव जी भी भारतीय समाज की दुर्भाग्य व ग्लानि से पूरी तरह परिचित हो चुके थे। जाति-पाति के बंधनों और वर्ग समस्या द्वारा पैदा हुई और कड़वा रूप धारण कर चुकी समस्याओं से भी चेतन हो चुके थे। ब्राह्मणवाद की प्रभुसत्ता और इजारेदारी भी अच्छी तरह जागरूक हो चुके थे। स्त्रियों पर जुल्म और राजाओं के अनुचित व्यवहार से भी वह पूरी तरह वाकिफ़ थे। इस लिए गुरु नानक साहिब ने उत्तरी भारत में अपने दो साथियों भाई बाला और मरदाना समेत उपर्युक्त समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष किया। गुरु साहिबान का उद्देश्य भी वही था, जो गुजरात, राजस्थान, यू.पी. और दक्षिणी भारत में संतो का थी। ब्राह्मणवाद की धार्मिक व सामाजिक अन्यायों भरे व्यवहारों के विरुद्ध गुरु नानक साहिब ने संकल्प लिया था। क्षत्री, वैश्य, शूद्र और नारी चारों को दोहरी मार पड़ रही थी। एक ओर सत्ताधारी इन को दबा रहे थे और दूसरी तरफ ब्राह्मण अपना आजारदारी एवं बौद्धिक राज्य कायम रखने के लिए जाति-पाति, वर्ग-भेद और ऊँच-नीच प्रणालियों के हथकांटे अपनाकर भारतीय समाज को विभाजित कर बैठे थे। उन्होंने संतो के आदर्शों का विवेचन कर यह उचित समझा कि उत्तरी भारत में इन सामाजिक बुराईयों के विरुद्ध आवाज़ उठाई जाए। वह यह समझ चुके थे कि आवाज़ पूरे भारत में उठनी चाहिए। यह आवाज़ उठाना गुरु नानक साहिब का प्रमुख निशाना था।

इस प्रयोजन के लिए गुरु जी ने तीसरी गोष्ठी “काशी में गोपालदास की बगीची में जहां अब गुरु का बाग गुरुद्वारा है, संत कबीर जी और संत रविदास जी के साथ” की और भक्ति आंदोलन को मानवीय हित के लिए और सही मार्ग पर लगाने के लिए योजना भी तैयार की। इस यात्रा के समय गुरु नानक साहिब ने स्वामी रामानंद और स्वामी शंकराचार्य के साथ भी आध्यात्मिक संबंधी गोष्ठियाँ की और निरंकार रुपी परमपिता परमात्मा के अस्तित्व, शक्ति, लीला, और सर्व-व्याप्त पासार जैसे कोमल और नाजुक मामलों पर वाद-विवाद किया। इसके बाद संत गोष्ठी हुई। संत महापुरुषों की गोष्ठी के मुख्य संत जी से धार्मिक और आध्यात्मिक मामलों पर विचार-विमर्श हुआ और आगामी धार्मिक एवं सामाजिक सरगर्मियों की रूप-रेखा इस तीसरे संत समागम, में प्रारूपित की गई।

हज़ारों लोगों को वहम-भ्रमों में से निकाल कर सच्चे निरंकार अकाल पुरुष का ज्ञान दिया गया। उनका मिशन सामाजिक असमानता के विरुद्ध प्रचार करना और ‘एक पिता एकस के हम बारक’ नामक महा-वाक्य के सत्य को साकार करना था और ‘सरबत का भला’ सिद्धांत को प्रयोग में लाकर सीमत सगुण की सीमाओं को

विशाल करना था। यह गोष्ठियां बेहद भाव-मूलक थीं। गुरु रविदास जी का आदर्श पाखंड में फसे हुए विद्वानों, संतों, सिद्धों, महात्माओं और ब्राह्मणों को सही सात्विक मार्ग दिखाना था। इसी मनोरथ की सहभागत और समर्थन की पुष्टि के लिए गुरु नानक साहिब बनारस में तत्कालीन सामाजिक बंधनों को तोड़ कर संत महापुरुषों से मिले और गुरु रविदास जी से “सर्व-सांझे” मसलों पर विचार किया। इस समागम में धार्मिक सामाजिक और राजसी मसलों पर भी विचार विमर्श हुआ। जिस में शूद्रों और स्त्रीवर्ग की आज्ञादी, उच्चता और समाज में समान स्थान देना, सामाजिक असमानता और बेइन्साफी विरुद्ध अंदोलन करने और तत्कालीन राजसत्ता के अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष करने का निर्णय लिया गया था।

राजा चन्द्र प्रताप

उदयपुर महाराणा सांगा के एक भंडारे में गाज़ीपुर का राजा चन्द्र प्रताप भी आया हुआ था।

गाज़ीपुर का राजा चन्द्र प्रताप गुरु जी की महान् शोभा सुनकर दर्शनों के लिए आया। राजा चन्द्रप्रताप जी ने पवित्र चरणों पर अपना सिर झुका कर दोनों हाथ जोड़कर भंडारा कराने के लिए विनती (निवेदन) की।

गुरु जी ने राजा चन्द्र प्रताप की विनती को प्रवान कर लिया। राणा सांगा ने गाज़ीपुर तक जाने की सेवा करने का वचन लिया। मीराबाई और कर्माबाई भी साथ ही गाज़ीपुर आईं।

गुरु जी महाराज के गाज़ीपुर नगरी में चरण पड़ने से पाप की जो आँधी चल रही थी, बन्द हो गई। आप जी की सच्ची ज्योति ने दुनिया में चारों ओर रौशनी कर दी। चन्द्र प्रताप उनकी रानी और प्रजा ने मीरा बाई और कर्माबाई सहित गुरु जी महाराज के गले में फूलों के हार डालकर नमस्कारों की। शाही ढंग से स्वागत करके उन्होंने गुरु जी का शाही किले में निवास कराया। गुरु जी के आगमन एक बहुत बड़ा भंडारा किया गया। राजे, महाराजे एवं रिश्तेदारों को बुलाया गया।

बीबी भानवती का शिष्य होना

बीबी भानमती मुल्तान शहर के एक हिन्दू परिवार की ठाकुर पूजा में मग्न रहने वाली एक बहादुर स्त्री थी, पर फिर भी उसके मन को कहीं चैन न मिलता। एक बार श्री गुरु रविदास जी के शिष्य ने उसे यह बात सुनाई कि अगर वह आत्म संतुष्टि चाहती है और जीवन मुक्ति का अनुभव करती है तो वो काशी में श्री गुरु रविदास जी के पास पहुँच जाए। बीबी भानमती अपने पति को साथ लेकर काशी पहुँची और श्री

गुरु रविदास जी के दर्शन किए। ऐसा बताया जाता है कि जब बीबी भानमती जी काशी पहुँची तो वहाँ गोरख नाथ जी गोष्ठी के लिए गुरु जी के पास आए हुए थे। गोरख नाथ ने अपनी सिद्धि द्वारा श्री गुरु रविदास जी की आध्यात्मिक शक्ति अपनी ओर खींचनी चाही पर वह ऐसा न कर सका। बीबी भानमती जी ने जब अपनी मानसिक और आत्मिक अवस्था श्री गुरु रविदास जी को बताई तो गुरु जी ने निम्न लिखित शब्द पढ़ कर बात स्पष्ट की कि हरि-संगत के बिना मनुष्य आवागम से नहीं बच सकता।

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ॥ हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे ॥१॥ रहाउ ॥

हरि के नाम कबीर उजागर ॥ जनम जनम के काटे कागर ॥१॥

निमत नामदेउ दूधु पीआइआ ॥ तउ जग जनम संकट नही आइआ ॥२॥

जन रविदास राम रंगि राता ॥ इउ गुर परसादि नरक नही जाता ॥३॥ ॥५॥ (राग आसा)

इस शब्द को सुनकर और इसके अर्थों को जानकर बीबी भानमती जी बहुत प्रभावित हुई और गुरु जी की शिष्य बन गई। उसका चंचल चित निश्चल हो गया।

बाजीगरों की बाजी

जब श्री गुरु रविदास जी ने मंदिर की मूर्तियों को शाही दरबार में बुलाकर वापिस कर दिया तो शिकायती पंडितों के मन में गुरु रविदास जी के लिए मान-सम्मान बढ़ने की बजाए घृणा बढ़ गई, पर राजा नागर मल्ल पर गुरु रविदास जी की भक्ति का बहुत प्रभाव पड़ा। राजा नागर मल्ल श्री गुरु रविदास जी का मुरीद बन गया। उसने गुरु जी के सम्मान में एक ब्रह्मभोज किया जिसमें अनेक लोगों को बुलाया गया। श्री गुरु रविदास जी को भी परिवार सहित आमंत्रित किया गया। पंडितों ने षडयन्त्र रचा। बाजीगरों से विचारविमर्श कर काफी पैसा देने का वायदा किया। बाजीगरों ने वहाँ खेल खेलना था और अच्छे पैसे न मिलने की स्थिति में श्री गुरु रविदास जी की उपस्थिति में उनकी बुराई करनी थी। ब्रह्मभोज सफल रहा। बाजीगरों ने बाजी शुरु की और प्रशंसा के तौर पर सबसे पहले श्री गुरु रविदास जी ने दस मोहरें थाल में रख दी। श्री गुरु रविदास जी के सेवकों और श्रद्धालुओं ने मोहरों से थाल भर दिया। जितने पैसे ब्राह्मणों ने देने थे उससे कई गुणा ज्यादा पैसे बाजीगरों को मिल गए। बुराई करने की बजाए बाजीगरों ने श्री गुरु रविदास जी की प्रशंसा और महिमा करनी शुरु कर दी। जहाँ भी वह बाजी डालते श्री गुरु रविदास जी की प्रशंसा करते। गुरु जी की प्रशंसा ने बाजीगरों को धनी कर दिया।

गोष्ठी गोरख नाथ जी के साथ

जब गोरख नाथ जी ने श्री गुरु रविदास जी की उपमा सुनी कि वह एक

चमार होकर प्रभु की भक्ति करते हैं और प्रभु की उनपर अपार कृपा है। तब गोरख नाथ जी ने अपने मन में ही विचार किया कि ऐसा चमार कौन है? उसको देखना चाहिए और उसके आचार, विचार और कर्म को समझना चाहिए।

गोरख नाथ जी ने बनारस आकर लोगों से पूछा कि रविदास कौन है? और किस स्थान पर रहता है? लोगों ने गोरख नाथ जी को बताया कि वह जो झोंपड़ी है, वह वहीं रहते हैं। जब गोरख नाथ ने गुरु जी के द्वार पर आकर अल्ख जगाई तो गुरु जी ने उनको अंदर बुलाकर बैठने के लिए आसन दिया और कहा कि आप जी ने बड़ी कृपा की जो दर्शन दिए। बैठिए और सेवा बताइए। तब गोरख नाथ जी ने कहा कि मेरा जोड़ा टूट गया है। मैंने आपकी बड़ी उपमा सुनी है कि आप परमेश्वर के बहुत बड़े भक्त और प्यारे हैं, इस लिए मैं आपके दर्शन करने आया हूँ।

श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि आप जैसे संतों के दर्शन ईश्वर के दर्शन के समान हैं। जैसे परमात्मा के दर्शन करने से चौरासी लाख योनियों से छुटकारा मिलता है वैसे ही आप संतों के चरण अठसठ तीर्थों से भी ज्यादा फल देने वाले हैं। संतों के चरणों में शीश झुकाने से पापों का नाश होता है। संतों के वचन तीन तापों का नाश करते हैं। संतों के चरणों में अज्ञानता दूर होती है, और ज्ञान का प्रकाश होता है और चारों पदार्थ- काम, अर्थ, धर्म और मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस तरह श्री गुरु रविदास जी ने संतों की महिमा की।

गोरख नाथ जी ने गुरु जी की बातें सुनकर गुरु जी से कहा कि चमार जाति तो मलीन है और आप बड़े प्रवीण भक्त हो, आप पर परमात्मा की बड़ी कृपा है पर मैं एक बात कहता हूँ कि आप टूटे हुए जोड़े क्यों गांठते हो? यह काम तो मलीन है, आप उपजीविका के लिए ऐसा कर्म न करें। मैं आपको उपजीविका के लिए कुछ देता हूँ।

गोरख नाथ जी ने एक जड़ी-बूटी निकाली और गुरु जी से कहा कि यह बहुत मूल्यवान है। इसके भेद को जान लो, अगर इस को गर्म करकर किसी धातु से स्पर्श करोगे वह सोना बन जाएगी। इसे किसी को दिखाना मत और झोंपड़ी की जगह एक सुंदर मंदिर बना लेना। अपने पुराने कपड़े उतार कर नए पहन लेना। अब मैं चलता हूँ, मेरा जोड़ा गाँठ दो। श्री गुरु रविदास जी ने कहा हे नाथ जी! मैंने तो टूटे हुए गांठने के लिए ही जन्म लिया है मेरा कार्य तो जो भी प्राणी प्रभु से टूटा हुआ है उसके मन को शुद्ध कर उसे प्रभु से गांठना है (जोड़ना है)। कुचम्म जो है, उसमें कठोरता लोभ और क्रोध की है इसको सील संतोष की रंबी से सुरूप देकर शुद्ध कर परमेश्वर से जोड़ना है। और ऐसा उपदेश देकर सभी प्राणियों को जन्म-मरण रूप भवसागर से पार

करना है अर्थात् परमेश्वर से मिलाना है। गुरु रविदास जी फरमान करते हैं कि हे नाथ जी! परमात्मा से जोड़ना और गांठना एक ही बात है, इस लिए मेरा और आपका विचार एक है। ऐसे वचनों का उच्चारण करते हुए गुरु जी ने टाकी काट कर जोड़े पर लगाने के लिए तैयार की और धागे को लगाने के लिए मुँह में डाला और जैसे ही धागे का मुँह से स्पर्श हुआ वह धागा सोने का बन गया। गुरु जी उस टूटे हुए जोड़े को सोने के धागे से जोड़ने (गांठने) लगे। गोरख नाथ जी यह चमत्कार देखकर बहुत हैरान हुए। गोरख नाथ जी ने सोचा कि अगर मैं इसको कोई सिद्धि दिखाऊँगा तो यह मेरी शक्ति को देखकर मेरा शिष्य बन जाएगा। गोरख नाथ जी के पास एक छोटी सी तूंबी थी। गोरख नाथ जी ने कहा हे रविदास जी! मेरी तूंबी में देखो कितना जल है, जो भी देखोगे सच कहना। श्री गुरु रविदास जी ने ध्यान लगाकर देखा तो उस तूंबी में हीरे, रत्न, जवाहरात, मणियाँ और सोने का सुमेरु पर्वत दिखाई दिया। यह देखकर गुरु जी ने कहा कि आप धन्य हो, मैं आप पर कुर्बान जाता हूँ, आप महान् सिद्ध हो। फिर गुरु रविदास जी ने गोरख नाथ से कहा कि अब आप इस कुठाली में ध्यान लगाकर देखो। जब गोरख नाथ जी ने देखा तो उस कुठाली के पानी में विराट रूप दिखाई दिया, जड़, चेतन, अस्थावर, जंगम, जीव-पाँच तत्त्व (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) वरुण, कुबेर, इन्द्र, देवते, चंद्र, सूर्य, नक्षत्र, तारे और विष्णु, ब्रह्मा, शिव जो जगत के अधिपति देवते हैं और खण्ड ब्राह्मण्ड दिखाई दिए। यह सारा चमत्कार देखकर गोरख नाथ जी अचम्भित रह गए और उनका अहंकार टूट गया। वह गुरु जी के चरणों में गिर पड़े और कहने लगे कि आप तो धन्य हो, आप की महिमा अनन्त है जिसका कोई अन्त नहीं। तब श्री गुरु रविदास जी ने कहा कि हे नाथ! यह रिधियाँ और सिद्धियाँ प्रभु के नाम के आगे कुछ भी नहीं हैं। परमात्मा का नाम तो सुखों का सागर है, जिसमें सुतर कल्प वृक्ष, चिंता मणि, कामधेनु गाय, चार पदार्थ, अठारह सिद्धियाँ और नौ रिधियाँ हैं। जो भी जीव उस प्रभु से एक रूप हो जाता है यह सब उसकी हथेली पर आ जाता है। ऐसा सत्य उपदेश श्री गुरु रविदास जी ने गोरख नाथ को दिया।

श्री गुरु रविदास जी की सदना से भेंट तथा श्री गुरु रविदास जी को सिकन्दर लोधी द्वारा जेल में बन्द करना

सदना पीर मुसलमान था। वह जीवों का वध कर उनको बेचता था। श्री गुरु रविदास जी संगत को जीव हत्या के विरोध में उपदेश देते थे। सदना जी को गुरु जी द्वारा ऐसा उपदेश देना अच्छा न लगा। एक दिन सदना जी गुरु जी के पास गए और कहा कि सभी धर्म एक ही परमात्मा की देन है इस लिए आप मुसलमान धर्म ग्रहण

कर लो क्योंकि हमारे धर्म में जाति-पाति नहीं है। हमारा धर्म पाक धर्म है। आप इसे अपना कर लाभ में रहोगे। गुरु जी ने सदना जी को उपदेश देते हुए कहा:
रविदास जीव कूँ मारि कर कैसो मिलहि खुदाय।
पीर पैगंबर औलिया कोउ न कहइ समुझाय ॥
गुरु जी ने फिर कहा कि मनुष्य की जाति-धर्म के अभिमान को त्याग कर परमात्मा के नाम का सिमिरन करना चाहिए ताकि मनुष्य जीवन सफल हो सके। मैं और मेरी की भावना का त्याग करना चाहिए। ऐसा उपदेश सुनकर सदना जी गुरु जी के शिष्य बन गए।
सदना जी ने सिकन्दर लोधी के दरबार में जाकर गुरु जी की प्रशंसा की तथा कहा कि मैंने रविदास जी को गुरु धारण कर लिया है। ऐसा करने पर सिकन्दर लोधी बहुत क्रोधित हुआ। बादशाह सिकन्दर लोधी गुरु रविदास जी को दरबार में पेश होने के लिए सदना को चिट्ठी दे दी। सदना जी चिट्ठी लेकर गुरु जी के पास पहुँच गए और राजा का सन्देश दिया। सिकन्दर लोधी एक अत्याचारी राजा था। गुरु जी जब सिकन्दर लोधी के दरबार में उपस्थित हुए तब सिकन्दर लोधी ने कहा कि आप इस्लाम धर्म ग्रहण कर लो, परन्तु गुरु जी ने ऐसा करने से साफ इन्कार कर दिया। सिकन्दर लोधी ने गुरु जी को कैद कर लिया। गुरु जी जेल में प्रभु भक्ति में लीन हो गए। जब सिकन्दर लोधी जेल में आया तो आकाश वाणी हुई कि तुमने मेरे रूप को सताया है। मैं तुम्हारे वंश का नाश कर दूँगा। बादशाह यह सुनकर बहुत हैरान हुआ। गुरु जी उस समय प्रभु भक्ति में लीन थे। बादशाह ने गुरु जी से अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी और आगे के लिए यह प्रतिज्ञा की कि वह आगे से कभी भी किसी प्राणी को नहीं सताएगा।

बाबर पर गुरु रविदास जी की शिक्षाओं का प्रभाव

बाबर एक कट्टड़, सुन्नी मुस्लमान था। वह काफिरों का नाश करना, मूर्ति पूजा को खत्म करना और तलवार की ताकत से, इस्लाम का प्रचार करना, अपना धार्मिक कर्तव्य समझता था। वह इस्लाम जगत् में अपना नाम चमकाना चाहता था। बाबर ने सर्वप्रथम 1519 ई० में, भारत पर, आक्रमण किया। दूसरी बार फिर 1519 ई० में ही, उसने पुनः भारत पर, आक्रमण किया। तीसरी बार 1520 ई० में और चौथा आक्रमण 1524 ई० में किया।

बाबर का पाँचवा आक्रमण 1525 ई० के अंत में हुआ। उसने पंजाब के नवाब दौलत खाँ लोधी को करारी हार दी। परिणामस्वरूप, उसने सारा पंजाब अपने

अधीन कर लिया। पंजाब में किए गए कत्लेआम का वर्णन, श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित “बाबर वाणी” में स्पष्ट रूप से मिलता है। पंजाब में रहकर ही उसने दिल्ली पर आक्रमण करने का निर्णय किया और इब्राहिम लोधी के साथ दो हाथ करने के लिए चल पड़ा। यह लड़ाई, पानीपत के युद्ध के नाम से, भारतीय इतिहास में ही नहीं, बल्कि विश्व के इतिहास में अंकित है। इस युद्ध की तुलना, बिजली की चमक के साथ की जाती है। जिस प्रकार आकाश में बिजली चमक पैदा करती है और अचानक लुप्त हो जाती है, बिल्कुल उसी प्रकार यह युद्ध भी कुछ ही घंटों में, समाप्त हो गया। परन्तु इस युद्ध के परिणाम बहुत निर्णायक थे। परिणामतः दिल्ली सल्तनत और सुल्तान का अंत हो गया। बाबर दिल्ली का शासक बन गया।

पानीपत के युद्ध में इब्राहिम लोधी पराजित हुआ। इस विजय के संबंध में बाबर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा व दया से, दिल्ली की शक्तिशाली सेनायें, आधे दिन में ही धूल में मिल गईं।

अब बाबर, पंजाब और दिल्ली का शासक बन चुका था परन्तु अभी संपूर्ण भारत पर उसका नियंत्रण नहीं हुआ था। भारत में उसके मार्ग में, सबसे बड़ी रुकावट मेवाड़ का राजा राणा सांगा था। वह प्रसिद्ध राजा कुंभा के वंश में से था। राजा सांगा अपनी वीरता के कारण, एक विश्व प्रसिद्ध शासक था। उसके शरीर पर, युद्धों के कारण 80 चोटों के निशान थे। जिसमें वह अपनी एक आँख और एक टांग, युद्धों में गंवा चुका था। उसने दो बार इब्राहिम लोधी, को भी परास्त किया था। इस बात को सभी शासक भली भाँति जानते थे कि यदि कोई भारत को विजय करने का यत्न करेगा, तो उसे पहले, मेवाड़ के इस शक्तिशाली युद्ध प्रेमी राजा के साथ टक्कर लेनी पड़ेगी।

15 मार्च 1527 ई० की सुबह, ठीक 9 बजे, मुगल और राजपूत सेनायें, आपस में भिड़ गईं। इस युद्ध में, बाबर की विजय निश्चित थी क्योंकि उसकी सेना के पीछे उस्ताद अली खां का तोपखाना था। हुमायूँ और मेंहदी ख्वाजा जैसे माहिर सेनापति उसके बाईं ओर थे। दाईं ओर सेना की विशाल टुकड़ियाँ खड़ी थीं।

युद्ध का आरंभ, राजपूतों ने किया। उन्होंने बाबर के बाईं ओर आक्रमण किया। कुछ समय के लिए ऐसा लगा कि राणा सांगा की विजय होगी, परन्तु उस्ताद अली खां के तोपखाने के लगातार बरसते गोलों ने, उसकी सेना में हफड़ा-दफड़ी मचा दी। गोलों से बचने के लिए राणा सांगा की सेना चारों ओर दौड़ गई। राणा सांगा युद्ध क्षेत्र में बुरी तरह ज़ख्मी हो गया और वहाँ से भाग निकला। इस प्रकार बाबर विजयी रहा। युद्धों के दौरान ही, बाबर को भारत के जलवायु और यहाँ की उर्वर

भूमि, धन-दौलत के साथ भरे भण्डारों के साथ-साथ, यहाँ के पीर-पैगम्बरों के बारे में भी जानकारी मिलती रही, फिर वह गुरु रविदास जी महाराज जैसे अवतारी व्यक्तित्व से अपरिचित कैसे रह सकता था। गुरु रविदास जी उस समय, अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर थे। चाहे बाबर पंजाब, दिल्ली, मेवाड़ आदि महाशक्तिशाली शासन को विजय कर चुका था, परन्तु अपनी सफलताओं का श्रेय स्वयं लेने के स्थान पर, उसने सदैव इन्हें ईश्वरीय देन कहा। बाबर का कथन था कि अल्लाह की इच्छा के बिना, कुछ नहीं होता। हमें उसका आश्रय लेकर, आगे बढ़ना चाहिए। बाबर ईश्वरीय नूर गुरु रविदास जी, जैसे महान् संतपुरुष के दर्शन किए बिना रह न सका। जब उसे पता चला कि गुरु रविदास जी, बहुत वृद्ध हो चुके हैं, तो वह हुमायूँ को साथ लेकर, गुरु रविदास जी के पास, उनके दर्शनों के लिए पहुँचा। तब गुरु जी अपने सिंघासन पर बिराजित थे। उन्होंने बाबर को देखकर, उस द्वारा किए गए निर्दोषों के खून-खराबे के लिए उसे डाँटा और समझाया:-

क्यों बाबर हुआ बावरा, मन में अधिक गुमान।

करोड़ों प्राणी मार कर, तूने कीया पाप महान्॥ (गुरु रविदास जी)

धीरे-धीरे जब बाबर को, गुरु रविदास जी की शिक्षाओं एवं समाज पर किए गए, प्रोपकारों के बारे में ज्ञान होता गया, तो उसने अकारण खून-खराबा करना बंद कर दिया। यहाँ तक कि सब बाबर के स्वभाव की दयालुता से दंग रह गए। उसने अपनी उदारता के कारण ही, दिल्ली व आगरा का शाही खजाना, लोगों में बाँट दिया। उसकी इतनी उदारता देखकर, लोग बाबर को, प्यार से कलंदर अथवा मस्त फकीर कहकर बुलाते थे। वर्णनीय है कि मीरा द्वारा गुरु रविदास जी की शिक्षाओं का प्रभाव अकबर पर पड़ा था। संभव है कि गुरु रविदास जी का कोई परम शिष्य, बाबर को भी गुरु रविदास जी की शिक्षाओं से अवगत करवाता रहा हो।

बाबर का साम्राज्य काबुल से लेकर बिहार तक और हिमालय से लेकर ग्वालियर एवं चंदेरी तक फैला हुआ था।

श्री गुरु रविदास जी का सच्च खण्ड पधारना

सतगुरु कबीर जी, सतगुरु नाम देव जी, सतगुरु त्रिलोचन जी तथा सतगुरु धन्ना जी इन सब महापुरुषों को परमब्रह्म अकालपुरुष जी की आज्ञा हुई तथा आदेश दिया कि सब रविदास जी के पास जाओ। उनको कहो कि आपके जगत में आने का उद्देश्य सम्पूर्ण हुआ तथा आपके लिए परमब्रह्म ने सच्चखण्ड से बुलावा भेजा है। सब महापुरुषों को बुलाकर कहा कि इक्कीस दिन का समय बाकी है। तत्पश्चात् गुरु

रविदास जी को यहां ले आए। ये सब महापुरुष गुरु रविदास जी महाराज के पास पहुँच गये और श्री गुरु रविदास जी को सन्देश दिया कि हम आपको लेने आये हैं और इक्कीस दिन का समय दिया है। इस से पहले ही गुरु रविदास जी को खबर हो गई थी कि सतगुरु कबीर जी, त्रिलोचन जी, नामदेव जी, सधना जी, धन्ना जी, आदि मेरे घर आ रहे हैं तो अति प्रसन्न हुये। लीप-पोत कर धर्मशाला में साफ सुथरी सेजें लगाकर सावधान होकर खड़े हो गये तथा कहा कि मैं आपका दास हूँ, आप मेरे घर आये मैं आपके दर्शन करके अति प्रसन्न हूँ उन सन्तों से ऐसे मिले जैसे हरि प्रभु मिल गये हों। चरण वन्दना करके कहते हैं कि त्राहि-त्राहि कर मैं आप की शरण में आया हूँ। मैं बार बार बलिहार जाता हूँ। आप के दर्शन से मेरी दुर्मति दूर हुई और अब मेरी परम गति हुई है। साधुओं का मिलना ऐसे होता है जैसे दीन होकर मिलता है। सन्तों का मिलना ऐसे होता है जैसे एक दूसरे को अच्छी तरह जानते हों ऐसे मिलते हैं—वह उसको परमेश्वर समझे दूसरा उसको ठाकुर समझे। दोनों पक्षों में ऐसी विनम्रता होती है जिस से परमेश्वर खुश होता है।

जो अपने अन्दर बड़प्पन को रखकर दूसरों को दिखाता है वह अपने गुण और सेवा समाप्त कर देता है। परन्तु प्रभु के सेवक वही होते हैं जिन की वृत्ति शुद्ध हो। दूसरी ओर जो अहंकार पूर्वक अपने आप को ऐसे जानता है कि मेरे समान का और कोई साधू नहीं है, वह अपनी भक्ति रूपी कमाई को खो देता है। जैसे रेशम जल कर भस्म हो जाती है ऐसे ही गुणों से भरा हुआ शरीर भी जलकर भक्तिहीन हो जाता है। साधू को साधू नम्रता सहित ऐसे मिलता है जिस प्रकार अपने नाती सम्बन्धी को ही मिलता है। उनमें नम्रता का भाव ऐसा होता है जैसे गरीब के घर में होता है। ऐसा साधू का मिलना समझे। भक्त बनना सहज है, साधू होना कठिन है। साधू भाव को वही प्राप्त करता है जो गरीबों में मिलता है। यही बात विचार कर उपरोक्त महापुरुष श्री गुरु रविदास जी को रिझाने आये कि रविदास जी को परमात्मा का वर्णन करेंगे, जिस से रविदास जी खुश होंगे। तो उन्होंने परमात्मा के महल के प्रति बताया तो गुरु रविदास अति निहाल हुये। जब गुरु रविदास जी के पास गये तो उनको परमात्मा का वही स्वरूप वहां नजर आया जो उन्होंने सच्च खंड में प्रभु का देखा था। तो कहने लगे कि इसी परमात्मा को हम बैकुण्ठ में देख कर आये हैं। यह गुरु रविदास जी के यहां ही है। सम्भवतः रविदास इनको वहीं से लाये हैं। तो श्री गुरु रविदास जी ने सेज लगा दी। सन्तों ने समझा कि रविदास जी का तो बैकुण्ठ में ही निवास है। उपरोक्त सन्त हैरान होकर कहते हैं कि बैकुण्ठ यहीं है। यहीं भगवान है। तब उन्होंने परमब्रह्म की आज्ञा के बारे में बताया कि इक्कीसवें दिन पहुँचना है। इस सन्देश को पाकर रविदास

जी ने अपने सेवकों को बता दिया कि हम बैकुण्ठ को जा रहे हैं। तथा उनको हरि जपने का सन्देश दिया।

अकाल पुरुष की आज्ञा रविदास जी को बताकर कबीर जी, नामदेव जी, सभी सन्त विदा हुये। तब रविदास जी ने अपने सम्बन्धी तथा सेवकों को सच्चखण्ड को जाने का बुलावा बता दिया तथा संगत् को उपदेश देते रहे। सब सेवक उनके चरण स्पर्श करके आर्शीवाद लेकर विदा होते रहे।

जब इक्कीसवां दिन आया, प्रभात समय में तैयार होकर प्रभु ध्यान लगाया। अनहद शब्द बजंत्र बजाते हुये गुरु रविदास जी ब्रह्म में समा गये। तब विश्व नाथ सुखासन पर विराजमान विमान लेकर गुरु रविदास को साथ लेकर गये। सावधान होकर जब ठाकुर वहां आये तो रविदास जी को सुखासन पर बैठा कर सच्चखण्ड बैकुण्ठ में सिधार गये। निर्गुण ब्रह्म में लीन होकर ब्रह्म में समा गये। सभी संगत् जगत्गुरु रविदास जी को प्रेम-सहित याद कर रही थी और सभी तरफ गुरु रविदास जी की जै-जै कार हो रही थी।

इस प्रकार जगत् गुरु रविदास जी महाराज बनारस में आसाढ़ की सक्रांति 1584 विक्रमी सम्मत् सन् 1528 को सच्चखण्ड को पधारें।

जगत् गुरु रविदास जी महाराज ने लगभग 151 वर्ष तक संसार भर के कोने कोने में जाकर, समस्त मानवता को समानता, भाईचारे और प्रभु बंदगी का सत्य उपदेश दिया। जहाँ भी गुरु जी गए, वहाँ वहाँ उनकी पावन स्मृतियाँ किसी न किसी रूप में स्थापित जरूर होंगी। बनारस की धरती जो जगत् गुरु रविदास जी की जन्म स्थली, कर्म-भूमि और तप स्थान के नाम से ऐतिहासिक रूप में जगत् प्रसिद्ध है। बहुत दुख की बात है कि ऐसे परमात्मा स्वरूप रहबर की कोई भी ऐतिहासिक यादगार नहीं थी। लगभग 600 वर्ष व्यतीत होने के बाद ब्रह्मज्ञानी संत स्वामी सरवण दास जी महाराज ने यह अनुभव किया कि मानवता के पुजारी, दुखियों के हमदर्द, समाजवाद के बानी साहिब श्री गुरु रविदास जी महाराज के जन्म स्थान पर एक विशाल मंदिर होना चाहिए। आप जी ने गुरु जी के जन्म स्थान की खोज कर श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर सीरगोर्वधनपुर, वाराणसी का निर्माण करवाया। जिसका प्रबन्ध श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट चला रहा है। यहां प्रत्येक वर्ष विश्व स्तर पर जगत् गुरु रविदास जी महाराज का आगमन पर्व बहुत ही श्रद्धा और धूम-धाम से मनाया जाता है। संसार के कोने कोने से संगत आकर नतमस्तक होती है और गुरु घर की खुशियाँ प्राप्त करके जीवन को सफल करती है।

अन्त में सारी संगत से यह निवेदन है कि जगत् गुरु रविदास जी महाराज के पवित्र चरण-कमलों में जाकर, गुरु चरणों की धूल में स्नान कर और गुरु महाराज जी की पावन वाणी को पढ़ कर और इनके पावन विचारों को जीवन में धारण कर अपने अनमोल जीवन को सफल करना चाहिए। गुरु प्रेमी संगत के मन में यदि यह बात बस जाए तो दास अपने परिश्रम को सफल समझेगा। यह पुस्तक लिखने का कार्य जगत् गुरु रविदास जी महाराज के पवित्र चरणों में प्रार्थना करके और धन्य धन्य ब्रह्मलीन बाबा पिप्पल दास जी, धन्य-धन्य ब्रह्मलीन, ब्रह्मज्ञानी संत सरवण दास जी, ब्रह्मलीन संत हरी दास जी, ब्रह्मलीन संत गरीब दास जी, महापुरुषों के पावन दरबार के वर्तमान गद्दी नशीन श्री 108 संत निरंजन दास जी की आज्ञा से आरंभ किया था। सतगुरु जी की कृपा से यह कार्य संपूर्ण हुआ है। सतगुरु जी के पवित्र चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम करता हुआ, सतगुरुओं का धन्यवाद करता हूँ। जगत् गुरु रविदास जी के 633वें आगमन पर्व पर यह पुस्तक सतगुरुओं की श्रद्धालु संगत को भेंट करते हुए खुशी महसूस करता हूँ।

गुरु चरणों का दास

संत सुरिन्दर दास बाबा
(स्थान) डेरा 108 संत सरवण दास जी
सच्च खण्ड बल्लां जालन्धर, (पंजाब)

- धन्यवाद सहित पुस्तकें**
डेरा सच्चखंड बल्लां की प्रकाशित पुस्तकें
1. जगत्गुरु गुरु रविदास अमृत वाणी (गुटका)
 2. जगत्गुरु गुरु रविदास अमृत वाणी (गुटका) (पंजाबी)
 3. नितनेम अमृत वाणी जगत्गुरु रविदास जी (गुटका)
 4. नितनेम अमृत वाणी जगत्गुरु रविदास जी (गुटका) (पंजाबी)
 5. श्री गुरु रविदास अमृत वाणी —संत रामा नंद जी
 6. श्री गुरु रविदास दर्शन एवं मीरा पदावली —संत रामा नंद जी
 7. श्री गुरु रविदास अमृत वाणी (स्टीक एवं संक्षिप्त जीवन) (पंजाबी) - संत सुरिन्दर दास बाबा
 8. गुरु उपदेश (पंजाबी) - कवि तोता राम पंछी (मुकरीयां)
 9. जन्म साखी श्री गुरु रविदास जी अर्थात् तवारीख (पंजाबी) -
 10. संत उसतत (पंजाबी) - कवि करम चंद प्रेमी (आबादी)
 11. महिमा दरबार सच्चखंड बल्लां (पंजाबी) - कवि करम चंद प्रेमी (आबादी)
 12. डेरा सच्चखंड बल्लां (पंजाबी) - गिआनी बिशना राम विरदी
 13. डेरा सच्चखंड बल्लां दी इतिहासक गाथा (पंजाबी) - श्री कांशी राम कलेर (जंडू सिंघा)
 14. गुरु रविदास चमत्कार (पंजाबी) - श्री चरन सिंह सफरी
 15. अमृत स्रोत श्री गुरु रविदास वाणी (पंजाबी) - श्री अमर नाथ कौसतव
 16. पावन गाथा श्री गुरु रविदास जी (पंजाबी) -डा. जसबीर सिंह साबर
 17. सगल भवन के नाइका (पंजाबी) -डा. कृष्ण कलसीआ
 18. अमर जोतां (पंजाबी) -कवि भगत राम दीवाना
 19. विदेश यात्रा (भाग -1) (पंजाबी) -श्री अजीत कुमार कंवल (यू. के.)
 20. विदेश यात्रा (भाग -2) (पंजाबी) -श्री अजीत कुमार कंवल (यू. के.)
 21. The Holy Hymns and Miracles of Guru Ravidass Ji
-Mr. Satpal Jassi & Mr. Chain Ram Suman
 22. इहु जन्म तुमारे लेखे (पंजाबी) -डा. कुलवंत कौर
 23. सति भाखे रविदास (पंजाबी) - श्री गुरदेव सिंह
 24. सटीक-श्री गुरु रविदास जी - संत वीर सिंह हितकारी, संत सुंदर दास शास्त्री
 25. जगत्गुरु रविदास संप्रदाइ संत ते साधना सथल (पंजाबी) -श्री सोमनाथ भारती

अन्य प्रकाशनों की सहायक पुस्तकें

1. बाणी गुरु रविदास (पंजाबी) - डा. रतन सिंह जग्गी
2. भगत रविदास (पंजाबी) -डा. जसबीर सिंह साबर
3. बाणी श्री गुरु रविदास जी अते तत सिधोंत (पंजाबी) - प्रो. लाल सिंह
4. गुरुआं दे गुरु श्री गुरु रविदास जी (पंजाबी) - श्री रतन रीहल
5. नितकर्तव्य और विवाह की विधि साहिब सतगुरु रविदास जी महाराज -हजूर स्वामी खजान दास गिर जी
6. The Chamars -G.W. Briggs
7. बाणी गुरु रविदास (पंजाबी) -डा. रत्न सिंह जग्गी
8. गुरु रविदास दर्पण (पंजाबी) -डा. धर्मपाल सिंगल
9. रविदास दर्शन -श्री पृथ्वी सिंह आजाद
10. श्री गुरु रविदास (जीवन अते किरतां) (पंजाबी) -डा. लेख राज 'परवाना'
11. श्री गुरु रविदास प्रकाश (पंजाबी) -संत जसवंत सिंह जी
12. श्री गुरु रविदास दीप ग्रंथ (पंजाबी) -संत हीरा दास जी 'फगवाड़ा'
13. संत गुरु रविदास वाणी -डा. बी०पी० शर्मा
14. पावन गाथा जगत्गुरु रविदास जी (पंजाबी) -विजय कुमार 'हजारा'
15. हरि के नामु बिनु झुटे सगल पासारे - विजय कुमार 'हजारा'

नितनेम अमृतबाणी
जगत् गुरु रविदास जी



तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा ॥



नितनेम अमृतबाणी जगत् गुरु रविदास जी

(जय सन्तों की)

श्री गुरु रविदास जी महाराज के
633वें प्रकाशोत्सव पर विशेष

प्रकाशक :

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक
चैरिटेबल ट्रस्ट वाराणसी (यू.पी.)

मुख्य कार्यालय :

डेरा श्री 108 संत सरवण दास जी
सच्चखण्ड बल्लां, जिला जालन्धर (पंजाब)

संस्करण	सन्	संख्या
प्रथम.....	2009.....	10,000

मूल्य: 15 रुपये

रवि प्रकाश प्रिंटिंग प्रैस,
मुहल्ला सुन्दर नगर, जालन्धर।
फोन-0181-2611697

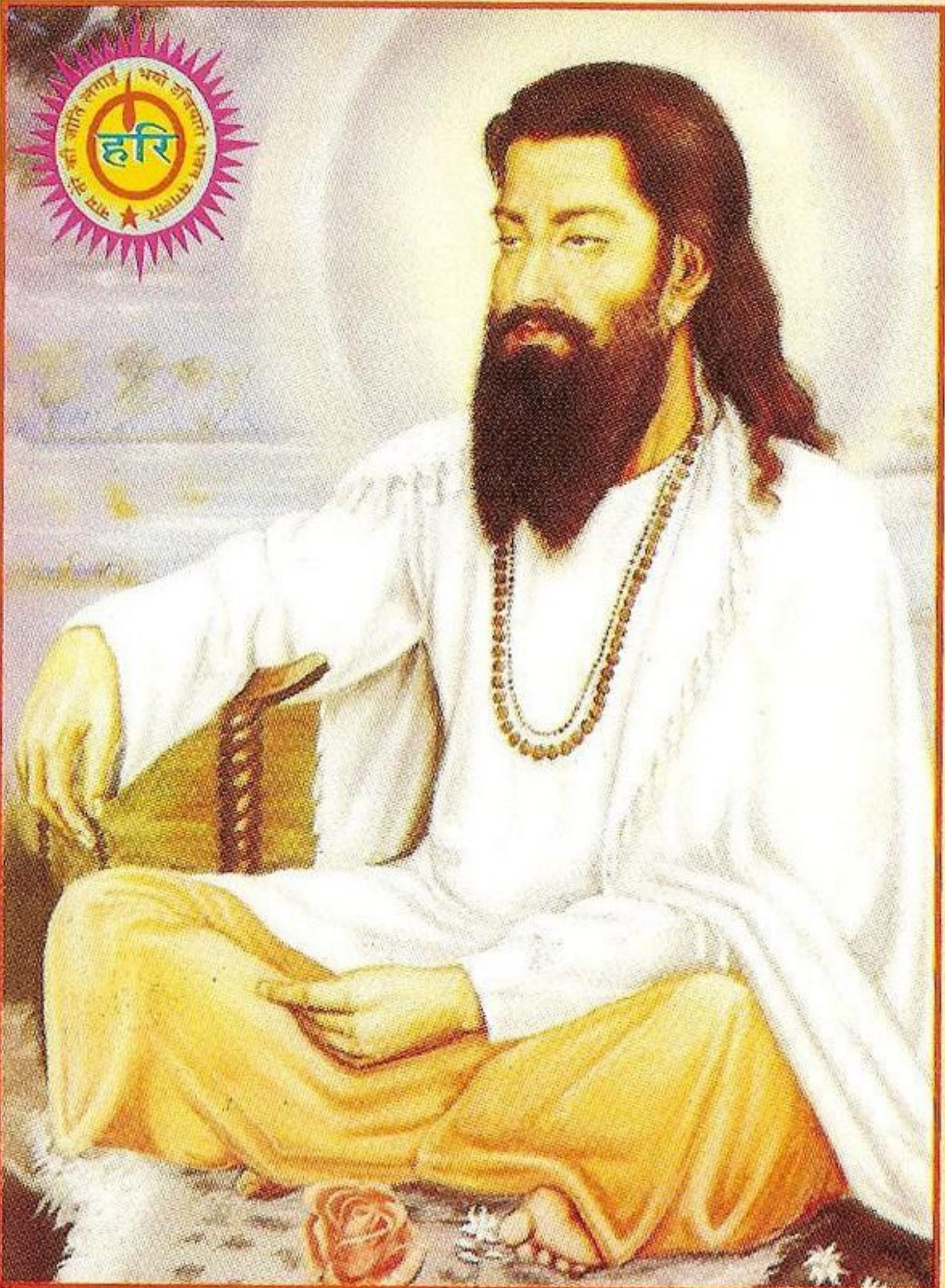
विषय सूची

क्रमांक	शब्द	पृष्ठ
1.	श्री गुरु रविदास जी महाराज की उच्चारण की गई पैंतीस अक्षरी	1
2.	श्री गुरु रविदास बाणी हफ्तावार ॥	8
3.	श्री गुरु रविदास बाणी पन्द्रां तिथी	11
4.	साहिब सतिगुरु रविदास महाराज जी का 'बारह मास' उपदेश	21
5.	दोहरा	37
6.	साहिब सतिगुरु रविदास महाराज जी दी "सांद बाणी"	37
7.	अनमोल वचन (मिलनी के समय)	39
8.	"शादी उपदेश"	40
9.	"सुहाग उसतत"	43
10.	"मंगलाचार"	45
11.	"अनमोल वचन"	50
12.	आरती	52

जगद्गुरु रविदास महाराज जी के जीवन
के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण तथ्य :-
श्री गुरु रविदास सम्प्रदाय का
निशान साहिब



- ★ प्रकाश दिवस-माघ सुदी पंद्रास 1433
विक्रमी सम्वत् सन् 1377 ई०।
- ★ जन्म स्थान : ग्राम-सीर गोवर्धनपुर,
बनारस (यू०पी०)
- ★ पिता जी-पूजनीय संतोख दास जी।
- ★ माता जी-पूजनीय कलसी देवी जी।
- ★ दादा जी-पूजनीय कालू राम जी।
- ★ दादी जी-पूजनीय लखपती जी।
- ★ सुमिनी-आदरणीय लोना जी।
- ★ सपुत्र-आदरणीय विजय दास जी।
- ★ ब्रह्मलीन-आषाढ़ की संक्रांति 1584
विक्रमी सम्वत् (1528 ई०) बनारस।



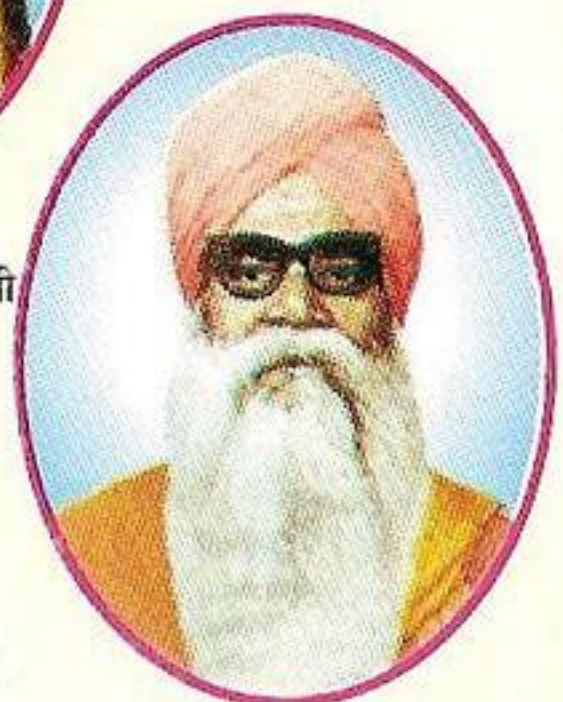
जगद्गुरु रविदास जी महाराज



श्री गुरु रविदास जन्म स्थान म
सीर गोवर्धनपुर (वाराणसी, काशी)



ब्रह्मलीन सत्गुरु
बाबा पिपल दास महाराज जी



ब्रह्मलीन सत्गुरु सरवण दास जी

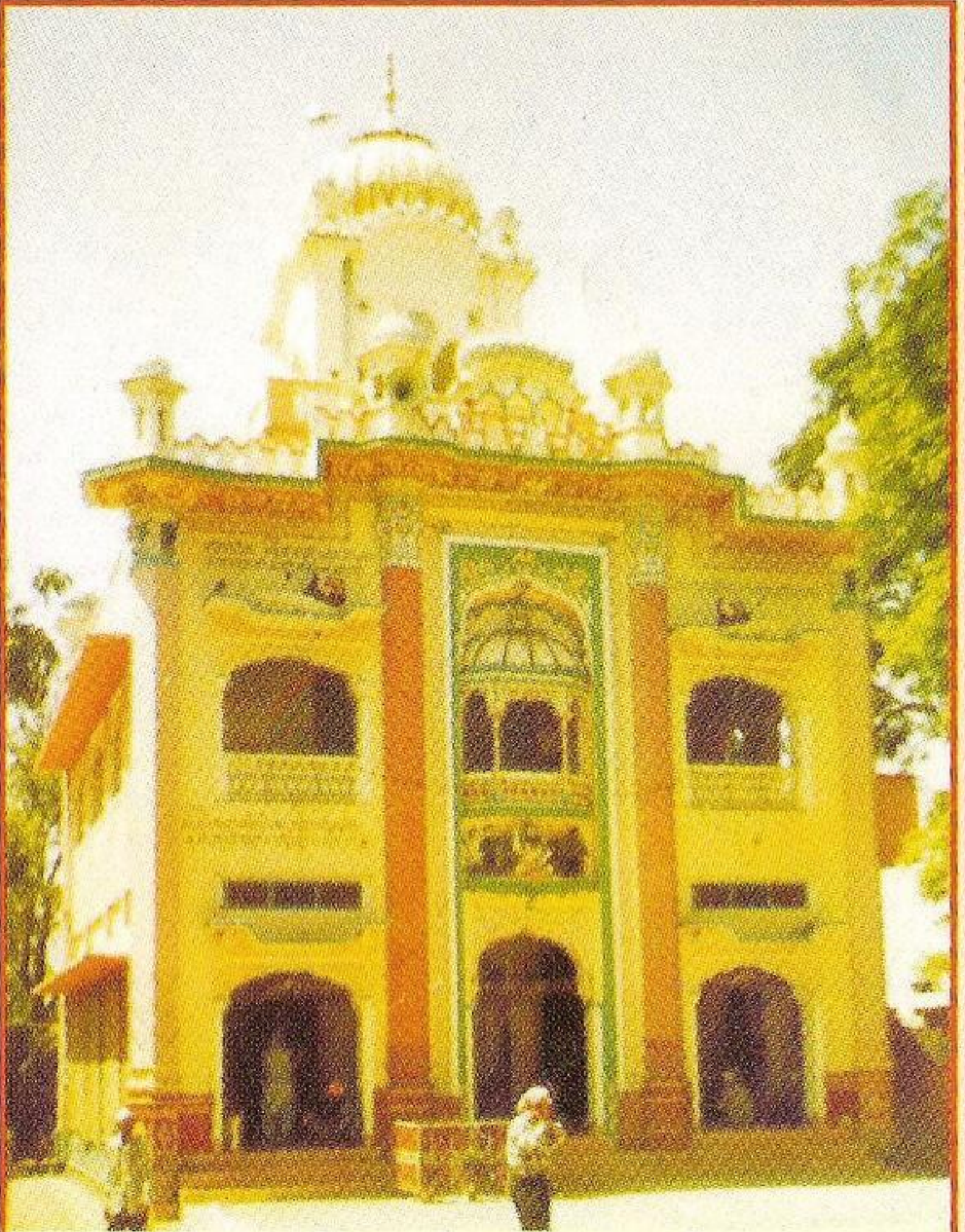
ब्रह्मलीन सत्गुरु हरी दास जी



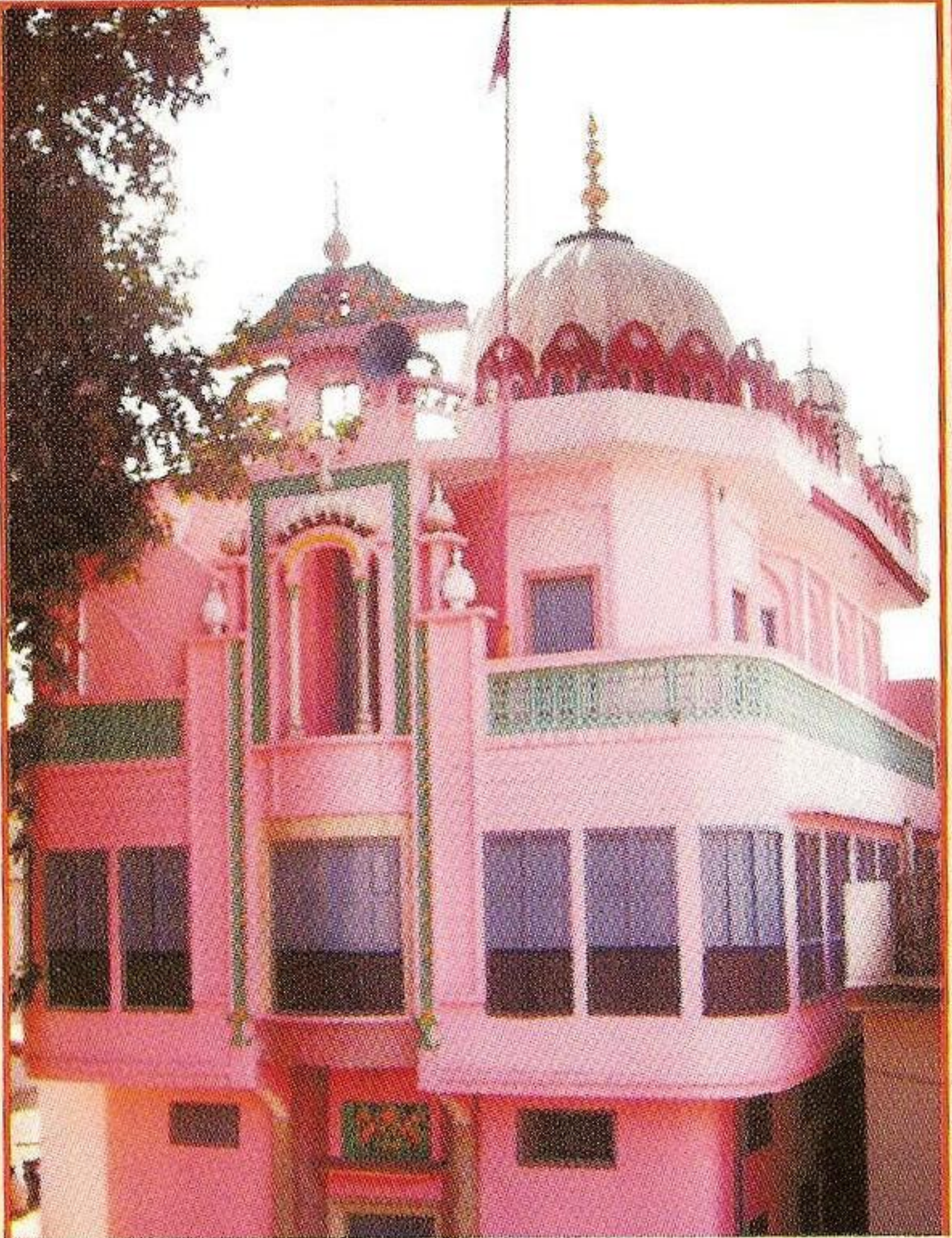
ब्रह्मलीन सत्गुरु गरीब दास जी



गद्दी नशीन
श्री 108 संत निरंजन दास जी



तपोस्थान श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज
डेरा सच्चखंड बल्लाना, जालन्धर।



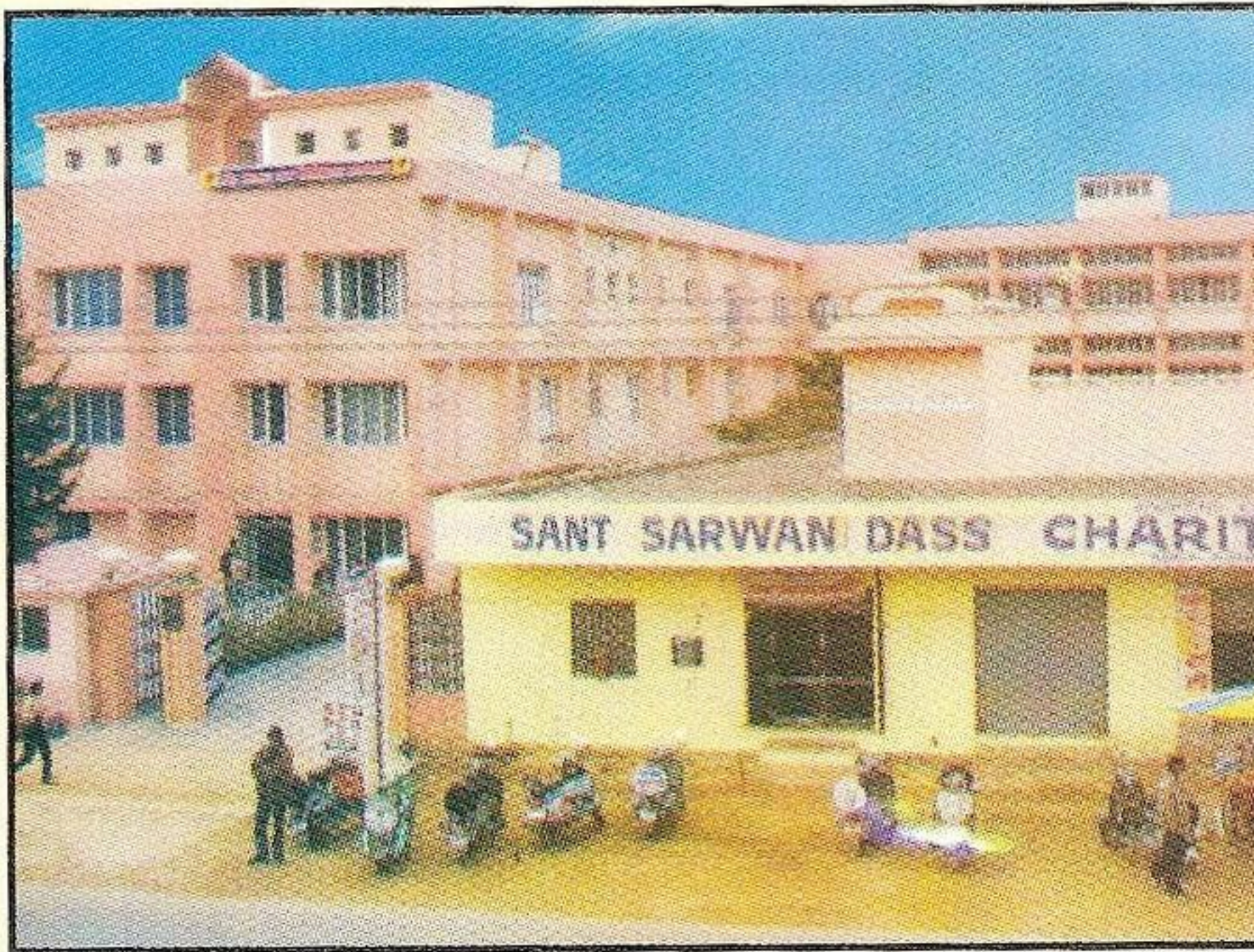
गांव बल्लां में ऐतिहासक तपोस्थान, जिस जगह में संत बाबा पिपल दास जी
और श्री 108 संत सरवण दास जी ने घोर तपस्या की।

श्री गुरु रविदास मन्दिर, हदियाबाद, फगवाड़ा के दर्शन-दीदार

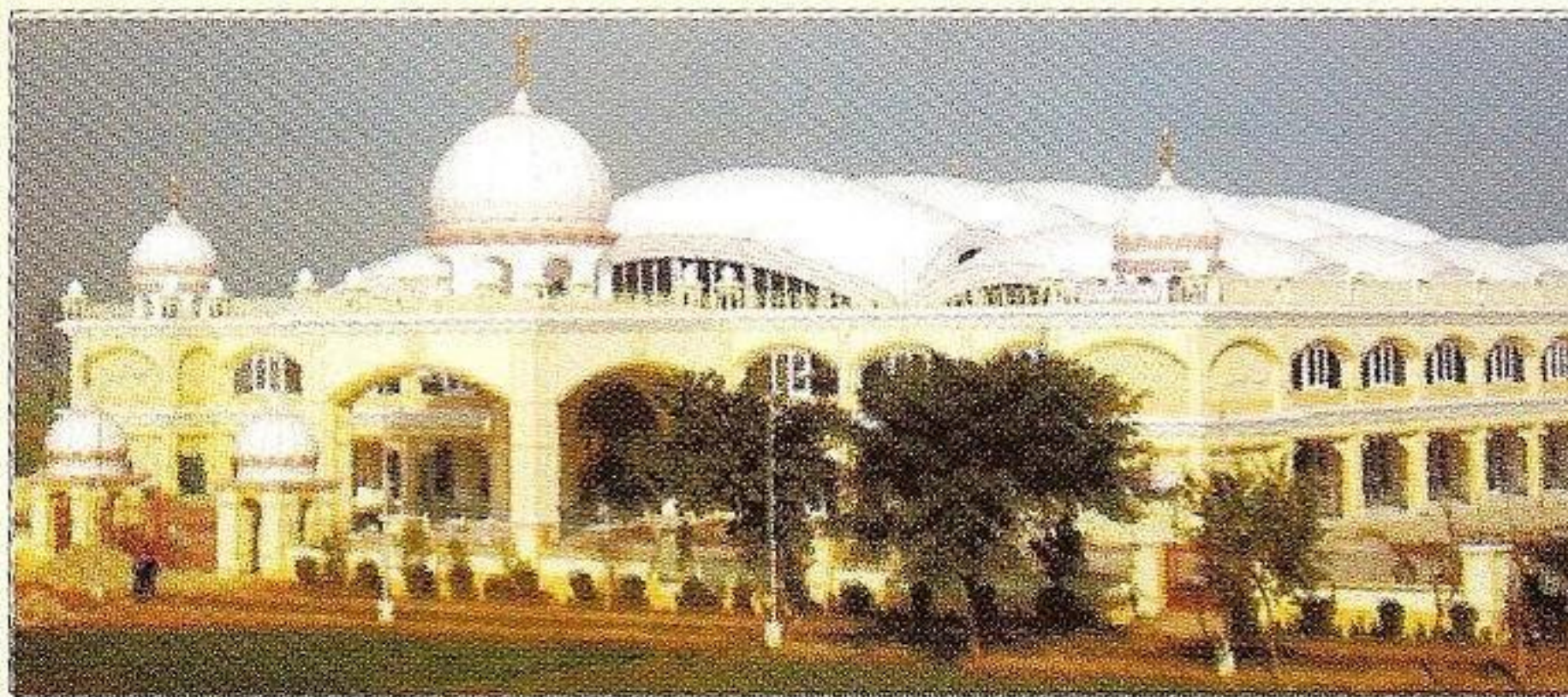


संत सरवण दास मॉडल स्कूल
हदियाबाद, फगवाड़ा।





संत सरवण दास चैरीटेबल अस्पताल, अइडा कठार



श्री गुरु रविदास सत्संग भवन, डेरा सच्चखण्ड बल्लां (जलन्धर) के द



संत सरवण दास चैरिटेबल नेत्र अस्पताल, डेरा सच्चखण्ड बल्लां (ज

समर्पण

“कहि रविदास खलास चमारा”

आदरणीय गुरुप्यारी साधसंगत जी जगत् गुरु रविदास उन चुनिंदा महापुरुषों की श्रेणी में आते हैं जिन्होंने वास्तविक स्वतंत्रता के आनन्द को जाना है। उपरोक्त पंक्ति गुरु जी की स्वतंत्रता का पुख्ता प्रमाण है। गुरु जी अपने मन की स्वतंत्र दशा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मैं इस जगत के मोह रूपी बन्धन से मुक्त हो गया हूँ। मैं मुक्त आकाश में आनन्दपूर्वक विचरण करने वाला हो गया हूँ। इसी मुक्त अवस्था को गुरु जी बेगमपुरा कहते हैं जबकि संसार की दशा बेगमपुरा के बिल्कुल विपरीत है। सांसारिक प्राणी माया के पिंजरे में कैद है तथा उस परमानन्द से बिल्कुल अनभिज्ञ है। गुरु जी का एक-एक कथन इस मोह माया रूपी पिंजरे से मुक्त हो जाने की प्रेरणा है। इस परमावस्था में उच्चारित एक-एक शब्द बेगमपुरा का संकेत है। इस परमावस्था में मुख से निकली एक-एक बात कसौटी पर खरा उतरा सत्य है। इसलिए गुरु जी

की एक-एक बाणी आज भी उतनी ही कल्याणकारी है जितनी कि सदियों पहले थी। जगत् गुरु रविदास जी के इस परोपकारी सन्देश को जन-जन तक पहुँचाने हेतु डेरा सच्चखण्ड बल्लां पूर्णरूपेण वचनबद्ध है। सांस्कृतिक विरासत के रूप में प्राप्त इस गुरुबाणी का प्रचार-प्रसार करने हेतु धन्य धन्य स्वामी ब्रह्मलीन बाबा पिप्पल दास जी, धन्य-धन्य ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन श्री 108 संत सरवण दास जी, धन्य-धन्य ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन श्री 108 संत हरी दास जी, धन्य-धन्य ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मलीन श्री 108 संत गरीब दास जी ने अपना श्वास-श्वास तक अर्पित कर दिया। दास को भी सद्गुरुओं की असीम कृपा द्वारा इस पुनीत सेवा का अवसर प्राप्त हुआ है जी। गुरु जी के 'सर्वजन सुखाय-सर्वजन हिताय' सन्देश को जन-जन तक पहुँचाने हेतु समय-समय पर शुभ पुरुषार्थ किए गए हैं। गुरु जी की अमृतबाणी के गुटके तथा गुरु जी की जीवन-सम्बन्धी घटनाओं एवं बाणी की टीका सहित पुस्तकें भी प्रकाशित की गईं। अनेक प्रसिद्ध गुरुबाणी गायकों द्वारा गायन की गई

एवं संत महापुरुषों व विद्वानों द्वारा गुरु जी की बाणी की व्याख्या की ऑडियो एवं वीडियो कैसेट्स तैयार कर श्रद्धालु संगत में वितरित की गई। इसी गुरुबाणी प्रचार-शृंखला में यह लघुपुस्तिका संगत को समर्पित करते हुए हार्दिक प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूँ। गुरुप्यारी साधसंगत जी, आओ! इस गुरुबाणी रूपी गंगोत्री में डुबकी लगाकर अपना जीवन सार्थक बनाएं। गुरुबाणी को पढ़ना तथा पढ़कर जीवन में धारण करना ही इस पुस्तिका का एकमात्र उद्देश्य है जी।

सर्व शुभाकांक्षी

संत निरंजन दास

चेयरमैन, श्री गुरु रविदास जन्म-स्थान पब्लिक

चैरिटेबल ट्रस्ट, वाराणसी,

वर्तमान संचालक, डेरा सच्चखण्ड बल्लां, (जालन्धर)

भूमिका

आदरणीय गुरुप्रेमियों ईश्वर एक है तथा इस धरातल के कण-कण में वह प्रकाशमान है। सारे जगत का पालनकर्ता केवल वही है। जड़-चेतन पदार्थ में उसी परमसत्ता की अनुभूति है परन्तु गुरु की अनुकम्पा जिस प्राणी पर बरसे केवल वही इसका अनुभव कर सकता है। बहुत जन्मों से हम अपने साहिब से बिछुड़े हुए हैं केवल मानव जन्म ही एकमात्र अवसर है—साहिब से मिलाप का। मानव जन्म में ही प्रभु का साक्षात्कार हो सकता है, परन्तु बड़े अफसोस की बात है कि अभी तक इस दुर्लभ मानव जन्म का मनोरथ हम नहीं जान पाए, इसीलिए दुखी हैं। माया का अनुकरण जीवन को दुख एवं ग्लानि के गर्त में ले गया जिससे इस जीवन के आनन्द को देखने से पूर्व ही हम अंधे हो गए और अंधे को अंधे ही मिलते रहे जिससे कि सही राह का पता चलना और भी कठिन हो गया। जीवन रूपी घट से श्वास रूपी जल रिसता चला गया। एक दिन ऐसा आया कि केवल खाली घट ही शेष रह गया अर्थात् शनैः शनैः जीवन समाप्त हो गया। परन्तु सौभाग्य की बात है कि कुछ आँख वाले महापुरुष भी इस धरातल पर हुए हैं जिनकी कृपा से कई अंधे सुलोचन हुए हैं। इन महापुरुषों के जीवन का मुख्य उद्देश्य सेवा, सिमरण, सत्संग रहा। ये महापुरुष हरि-हरि की रट लगाते हुए स्वयं हरि रूप हो गए, उस परमावस्था को प्राप्त हुए जहाँ सब संदेह तिरोहित हो जाते हैं। जहाँ सदैव बसन्त बहार है,

सदैव मल्हार राग बज रहा है, जहां गम एवं चिंता के लिए कोई स्थान शेष नहीं, जहां आनन्द ही आनन्द है। ऐसी ही महान् आत्माओं में से एक जगत् गुरु रविदास जी है जिनका नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है तथा जिनका जीवन आज भी अध्यात्म जिज्ञासुओं के लिए एक प्रेरणास्त्रोत बना हुआ है। सद्गुरु रविदास जी का जन्म बनारस के सीर-गोवर्धनपुर नामक ग्राम में विक्रमी सम्बत् सन् 1377 ई० को हुआ जो कि माघ सुदी पंद्रास 1433 को पड़ता है। आपके जन्म से सम्बन्धित एक दोहा अति प्रचलित है :-

चौदह सौ तैंतीस की माघ सुदी पंद्रास ॥

दुखियों के कल्याण हित, प्रगटे श्री रविदास ॥

आपके पूज्य पिता जी का नाम पिता संतोख दास जी एवं पूजनीय माता जी का नाम माता कलसी देवी जी था। आपका जीवन बाल्यावस्था से ही विलक्षण गुणों वाला रहा। आपने 'मुकंद मुकंद जपहु संसार', 'हरि हारे हरि हरि हरि हरि हरे' का पावन उपदेश प्रेमीजनों को सुनाया। आपके पवित्र एवं कल्याणकारी उपदेश जंगल की आग की तरह फैलने लगे। देश-देशान्तरो से प्रेमीजन आपके दर्शनार्थ आने लगे। अनेक राजाओं एवं रानियों ने आपका शिष्यत्व स्वीकार करना अपना अहोभाग्य समझा। संत मीराबाई जी, रानी झालाबाई, राजा नागरमल तथा राजा पीपा जैसे अनेक प्राणी गुरु जी के शिष्य बने। आपके समकालीन संतों, सद्गुरु कबीर दास जी,

सद्गुरु दादू जी, संत मीराबाई जी, संत पीपा जी ने अपनी गुरुबाणी में आपका नाम बड़े प्रेम और आदर सहित लिया है। सद्गुरु कबीर साहिब जी आपके प्रति फरमाते हैं-

साधन में रविदास सन्त है सुपच ऋषि सो मानिया।

हिन्दु तुरक दुई दीन बने हैं कुछ नहीं पहचानिया ॥

संतों में महान् संत गुरु रविदास जी है जिनको दुनिया महान् ऋषि मानती है और तत्कालि समय में हिन्दु और मुस्लमान आप जी के चरणों में नतमस्तक हुए और उन्होंने आप को प्रभु माना।

आप के पावन जीवन के बारे में नाभादास जी लिखते हैं:-

“वर्णाश्रम अभिमान तज पद रज बंदहि जास की।

संदेह ग्रंथी खण्डन निपुण बाणी विमल रैदास की ॥”

आपकी बाणी का सम्पूर्ण विश्व में बड़ा ही सम्मान है। विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में सम्मिलित आपकी बाणी धर्मग्रंथों को चार-चाँद लगा रही है। डेरा सच्चखण्ड बल्लां द्वारा गुरु जी की पावन अमृतबाणी को जनता-जनार्दन तक प्रेषित करने हेतु बहुत से प्रयत्न किए गए हैं, जैसे बाणी के गुटके बाणी का अंग्रेजी, हिन्दी एवं पंजाबी में अनुवाद, गुरु जी के जीवन एवं चमत्कार संबंधी अनेक पुस्तकें प्रकाशित की गई हैं। बाणी की ऑडियो तथा डिजीटल वीडियो कैसेट्स संगत में वितरित की गई-

बलिहारी हैं बाबा पिपल दास जी, श्री 108 संत सरवण दास जी, श्री 108 संत हरी दास जी, श्री 108 संत गरीब दास जी के, जिन्होंने गुरु रविदास जी की पावन बाणी को अपने जीवन में धारण किया। इस बाणी के प्रचार हेतु अहर्निश तत्पर रहे। इन महापुरुषों ने गुरु रविदास जी के जन्मस्थान की खोज की तथा प्रतिकूल परिस्थितियों तथा अनेक मुश्किलों का सामना करते हुए, यहां एक अत्यन्त सुंदर, अनुपम, मनोरम, अद्वितीय, अनूठे, अतुलनीय मन्दिर का निर्माण करवाया। इस मन्दिर का शिलान्यास सतगुरु स्वामी सरवण दास जी के आदेशों के अनुसार श्री 108 संत हरी दास जी महाराज ने आषाढ़ की संक्रति 14 जून 1965 ई० को किया और निर्माण का कार्य संत हरी दास जी तथा संत गरीब दास जी ने सम्पूर्ण करवाया। इस मन्दिर में 12 दिसम्बर 1974 ई० को एक बहुत बड़ा संत सम्मेलन हुआ जिसमें जगत् गुरु रविदास जी महाराज और श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज की प्रतिमाएं संत समाज और संगत की उपस्थिति में स्थापित की गई। ब्रह्मलीन सद्गुरु गरीब दास जी ने 7 अप्रैल 1994 को इस मन्दिर पर स्वर्ण कलश सुशोभित किया, जिसका अनावरण तत्कालीन बी०एस०पी० सुप्रीमो, मान्यवर कांशी राम जी ने किया। संगत की सुविधा के लिए मन्दिर के समीप ही 100''x65'' दो मंजिली लंगर हाल का निर्माण किया गया है। संगत की सुविधा के लिए 4 मंजिला 50 कमरों की इमारत का निर्माण किया गया है। डेरे के वर्तमान संचालक सद्गुरु निरंजन

(5) संत सरवण दास चैरिटेबल नेत्र अस्पताल, डेरा सच्चखण्ड बल्लां :- डेरा सच्चखण्ड बल्लां में संत सरवण दास जी की पावन स्मृति में एक बहुत सुन्दर नेत्र अस्पताल का निर्माण किया गया है। इस अस्पताल के निर्माण हेतु एक करोड़ रुपए से अधिक की राशि श्री स्वर्ण दास बंगड़ एवं उनकी सुपत्नी बीबी रेशम कौर एवं परिवार द्वारा दान की गई। इस अस्पताल का नींव पत्थर 11-11-2004 को रखा गया तथा इसका उद्घाटन 15-02-2007 को सद्गुरु निरंजन दास जी ने अपने कर-कमलों द्वारा किया। यहां आधुनिक तकनीक से युक्त विदेशों से आयातित मशीनों द्वारा नेत्र रोगों का अचार किया जाता है। दूर-दूर से नेत्ररोगी यहाँ अचार करवाने के लिए पहुँचते हैं।

(6) श्री गुरु रविदास मन्दिर, सिरसगढ़, हरियाणा :- हरियाणा प्रांत के अम्बाला-जगाधरी रोड पर मुलाना से करीब 2 कि०मी० आगे सिरसगढ़ ग्राम में एक सुन्दर आश्रम का निर्माण किया जा रहा है। इस श्री गुरु रविदास आश्रम का शिलान्यास सद्गुरु निरंजन दास जी द्वारा, दिनांक 31 जुलाई 2004 को किया गया। यह दिन आश्रम के स्थापना दिवस के रूप में बड़ा ही श्रद्धा एवं प्रेम सहित मनाया जाता है। यात्रियों के सुविधा हेतु एक सुन्दर इमारत निर्मित हो चुकी है, जबकि एक भव्य सत्संग भवन निर्माणाधीन है। इस गुरु दरबार के निर्माण हेतु करीब पांच एकड़ ज़मीन श्रीमान गुरबख्श सिंह धीन एवं उनकी पत्नी श्रीमती राजरानी तथा

तीव्रता से सम्पन्न हुए हैं। गत वर्ष 15 फरवरी 2007 को बर्मिधम (यू०के०) की संगत की ओर से डेरा सच्चखण्ड बल्लां में स्थापित करने हेतु एक बड़ी सुन्दर स्वर्ण पालकी भेंट की गई। इस स्वर्ण पालकी को शोभायात्रा के रूप में दिनांक 14-2-2007 को फगवाड़ा से डेरा सच्चखण्ड बल्लां लाया गया। इस शोभायात्रा का प्रत्येक स्थान पर भव्य स्वागत हुआ। 15-2-2007 को इस स्वर्ण पालकी को नवनिर्मित श्री गुरु रविदास सत्संग भवन में स्थापित किया गया। इसी वर्ष गुरु रविदास जी के 631वें पावन जयंती पर्व पर श्री गुरु रविदास जन्मस्थान मन्दिर बनारस में स्थापित करने हेतु एक अनुपम स्वर्ण-पालकी यूरोप की संगत द्वारा भेंट की गई। इस स्वर्ण पालकी को सड़क के रास्ते शोभायात्रा के रूप में डेरा सच्चखण्ड बल्लां से कांशी दरबार तक ले जाया गया। यह शोभायात्रा दिनांक 16-02-08 को डेरा सच्चखण्ड बल्लां से प्रारम्भ होकर लुधियाना, अम्बाला, दिल्ली, आगरा, कानपुर, इलाहाबाद होते हुए दिनांक 20-02-08 को कांशी दरबार में पहुँची। प्रत्येक स्थान पर इस शोभायात्रा का बड़े प्रेम एवं श्रद्धा सहित स्वागत किया गया। 20-02-08 को जब यह स्वर्ण पालकी कांशी दरबार पहुँची तब सद्गुरु निरंजन दास जी ने लाखों श्रद्धालुओं सहित इस स्वर्ण पालकी पर फूल बरसा कर इसका भव्य स्वागत किया। यह स्वर्ण-पालकी शोभायात्रा दलित इतिहास की मुख्य घटना के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगी। श्री गुरु रविदास जी का पावन जयंती समारोह

प्रत्येक वर्ष सद्गुरु निरंजन दास जी (चेयरमैन, श्री गुरु रविदास जन्मस्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट तथा वर्तमान संचालक डेरा सच्चखण्ड बल्लां) की पावन छत्रछाया में बड़ी धूमधाम तथा श्रद्धा और प्रेम सहित मनाया जाता है। इस वर्ष इस पावन जयन्ती समारोह में कु० मायावती जी (माननीया मुख्यमंत्री, उ०प्र०) ने भी शिरकत की। स्वर्ण पालकी का अनावरण बहन जी के कर-कमलों द्वारा किया गया।

डेरा सच्चखण्ड बल्लां की ओर से जगत् गुरु रविदास महाराज जी के मिशन पर कार्य करने वाले 46 विद्वानों को गोल्ड मैडलों से सम्मानित किया गया है।

डेरा संत सरवण दास जी द्वारा किए जा रहे जनहित कार्यों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है :-

(1) संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल, कठार :- डेरा सच्चखण्ड बल्लां की ओर से दीन-दुखियों के उपचार हेतु 200 बिस्तर का अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त अस्पताल चलाया जा रहा है। इस अस्पताल का शिलान्यास 20 अक्टूबर 1982 को किया गया। इस महान् कार्य के लिए सेठ बेली राम जी, श्रीमति पूरो जी, बीबी भजनो जी, सेठ राजमल जी कूपुर-ढेपुर और पंचायत कूपुर ने ज़मीन दान दी। इस अस्पताल का शुभ उद्घाटन 1 जनवरी 1984 ई० को किया गया। जिसका खर्च कई लाख रुपए प्रतिमाह है जो कि डेरे द्वारा अनुदान किए जाते हैं।

(2) साप्ताहिक बेमगपुरा शहर :- डेरे की ओर से साप्ताहिक त्रिभाषीय पत्रिका 1991 से चलाई जा रही है। इस पत्रिका द्वारा मौन समाज को आवाज़ मिली है। इस पत्रिका द्वारा गुरु जी की वाणी तथा उच्चकोटि के लेखकों के लेख तथा रचनाओं का देश-विदेशों में बैठी संगत रसास्वादन कर रही है। गुरु रविदास मिशन को इस पत्रिका द्वारा काफी बढ़ावा मिला है।

(3) श्री गुरु रविदास मन्दिर एवं संत सरवण दास मॉडल स्कूल, हदियाबाद, फगवाड़ा :- श्री गुरु रविदास मन्दिर, हदियाबाद, फगवाड़ा का निर्माण सद्गुरु निरंजन दास जी की देखरेख में बड़ी तीव्रता से हुआ। इस मन्दिर का उद्घाटन एक भव्य समागम आयोजित कर दिनांक 19 फरवरी 2004 को सद्गुरु निरंजन दास जी के कर-कमलों द्वारा हुआ। इस मन्दिर पर सोने के चार कलश सुशोभित हैं।

संत सरवण दास मॉडल स्कूल भी शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणीय भूमिका निभा रहा है। यह विद्यालय कक्षा बारहवीं तक है, जिसको केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (C.B.S.E.+2) द्वारा मान्यता प्राप्त है। यह विद्यालय विद्यार्थियों को 'अप्पो दीपो भव' का पावन संदेश जीवन में बसाने एवं विद्यार्थियों को एक उत्तरदायी नागरिक बनाने हेतु वचनबद्ध है। इस मन्दिर एवं विद्यालय के निर्माण की सेवा

हेतु सेठ बृज लाल जी एवं उनकी सुपत्नी गुरदेव कौर एवं परिवार तथा सेठ देस राज एवं उनकी सुपत्नी कमलेश कौर तथा परिवार धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने 6 एकड़ ज़मीन दान की। जिनकी शुभेच्छा से यह स्थान सेवा का केन्द्र बन सका।

(4) श्री गुरु रविदास सत्संग भवन, डेरा सच्चखण्ड बल्लां :- डेरा सच्चखण्ड बल्लां में संगत की सुविधा हेतु एक अत्यन्त मनोरम सत्संग भवन का निर्माण करवाया गया। इस सत्संग भवन का निर्माण कार्य तिथि 12-3-2000 से प्रारम्भ होकर करीब-करीब सात वर्षों की समय सीमा के पश्चात् सम्पन्न हुआ। इस भवन के सात गुम्बदों पर स्वर्ण कलश सुशोभित हैं। इस भवन का उद्घाटन संत सरवण दास जी के जन्मोत्सव यानि 15 फरवरी 2007 को सद्गुरु निरंजन दास जी ने अपने हस्त-कमलों द्वारा किया। इस भवन के निर्माण हेतु करीब ढाई एकड़ ज़मीन श्री स्वर्ण दास बंगड़ एवं उनकी जीवन साथी बीबी रेशम कौर तथा परिवार (यू०के०) द्वारा दान के रूप में दी गई। इस भवन के निर्माण में समस्त साधसंगत का तन-मन-धन द्वारा किया गया सहयोग सराहनीय है। जो भी इस करोड़ों रुपये की लागत से बने अनूठे सत्संग भवन को एक नज़र निहारता है, वह इसकी सुंदरता के मोहपाश में बंध-सा जाता है तथा बरबस ही उसके मुख से निकल पड़ता है- 'रविदास गुरु तेरी जै होवे'। इस भवन के उद्घाटन के अवसर पर बर्मिधम (यू०के०) की संगत द्वारा भेंट की गई सुन्दर स्वर्ण पालकी इस भवन में स्थापित की गई।

(5) संत सरवण दास चैरिटेबल नेत्र अस्पताल, डेरा सच्चखण्ड बल्लां :- डेरा सच्चखण्ड बल्लां में संत सरवण दास जी की पावन स्मृति में एक बहुत सुन्दर नेत्र अस्पताल का निर्माण किया गया है। इस अस्पताल के निर्माण हेतु एक करोड़ रुपए से अधिक की राशि श्री स्वर्ण दास बंगड़ एवं उनकी सुपत्नी बीबी रेशम कौर एवं परिवार द्वारा दान की गई। इस अस्पताल का नींव पत्थर 11-11-2004 को रखा गया तथा इसका उद्घाटन 15-02-2007 को सद्गुरु निरंजन दास जी ने अपने कर-कमलों द्वारा किया। यहां आधुनिक तकनीक से युक्त विदेशों से आयातित मशीनों द्वारा नेत्र रोगों का अचार किया जाता है। दूर-दूर से नेत्ररोगी यहाँ अचार करवाने के लिए पहुँचते हैं।

(6) श्री गुरु रविदास मन्दिर, सिरसगढ़, हरियाणा :- हरियाणा प्रांत के अम्बाला-जगाधरी रोड पर मुलाना से करीब 2 कि०मी० आगे सिरसगढ़ ग्राम में एक सुन्दर आश्रम का निर्माण किया जा रहा है। इस श्री गुरु रविदास आश्रम का शिलान्यास सद्गुरु निरंजन दास जी द्वारा, दिनांक 31 जुलाई 2004 को किया गया। यह दिन आश्रम के स्थापना दिवस के रूप में बड़ा ही श्रद्धा एवं प्रेम सहित मनाया जाता है। यात्रियों के सुविधा हेतु एक सुन्दर इमारत निर्मित हो चुकी है, जबकि एक भव्य सत्संग भवन निर्माणाधीन है। इस गुरु दरबार के निर्माण हेतु करीब पांच एकड़ ज़मीन श्रीमान गुरबख्श सिंह धीन एवं उनकी पत्नी श्रीमती राजरानी तथा

परिवार द्वारा भेंट की गई। दो मंजिली 40''x114'' विल्डिंग का निर्माण हो चुका है और इस मन्दिर में 100''x180'' बड़े हाल का निर्माण चल रहा है। हर 'रविवार तथा संक्रान्ति' को यहां सत्संग का विशेष आयोजन किया जाता है।

(7) श्री गुरु रविदास मन्दिर कात्रज, पुणे :- गुरु रविदास जी के मिशन के प्रचार-प्रसार हेतु कात्रज-कोंडवा रोड़ पुणे पर सटी पहाड़ी पर एक अत्यन्त मनोरम आश्रम का निर्माणकार्य चल रहा है। श्री सुखदेव वाघमारे तथा उनकी जीवन साथी राधा व परिवार की ओर से करीब दो एकड़ ज़मीन भेंट की गई। यहां मन्दिर का नींव पत्थर सद्गुरु निरंजन दास जी द्वारा 7-12-2003 को रखा गया। इस मन्दिर में 85''x35'' दो मंजिलां गुरु रविदास मंदिर का निर्माण हो चुका है। इसके साथ ही श्री गुरु रविदास गेट तथा श्री गुरु रविदास स्तंभ का निर्माण कार्य चल रहा है। प्रत्येक रविवार यहां सत्संग का आयोजन किया जाता है।

(8) तपोस्थान बाबा पिप्पल दास जी एवं जन्मस्थली सद्गुरु सरवण दास जी, गिलपत्ती, बठिण्डा :- बाबा पिप्पल दास जी तथा उनका परिवार ग्राम, गिलपत्ती के निवासी थे जो कि बठिण्डा जिले में है। परिवार की कुछ अपनी ज़मीन थी, जहां पर कृषि की जाती थी। बाबा पिप्पल दास जी की सुपत्नी माता शोभावन्ती जी थे जो कि एक धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी। बाबा जी को संत मोहन दास जी के पास से नामदान की प्राप्ति हुई व नाम के सतत् अभ्यास

द्वारा बाबा जी प्रभु भक्ति के मजीठी रंग में रंगे गए। बाबा जी ने अपनी खेती वाली ज़मीन में एक बेरी का पौधा भी लगाया था, जो कि आज भी बाबा जी के पावन जीवन की स्मृतियां संजोए खड़ा है। बाबा जी की तपस्थली पर आश्रम निर्माण कार्य प्रारम्भ करने हेतु नींव पत्थर दिनांक 7-12-2003 को रखा गया। संत निरंजन दास जी के पावन कर-कमलों द्वारा गत 5 जुलाई 2008 को बाबा जी की प्रतिमा को आश्रम में स्थापित किया गया तथा इसी उपलक्ष्य पर संत समागम का भी आयोजन किया गया। हर रविवार इस आश्रम में सत्संग का आयोजन किया जाता है। दूर-दूर से प्रेमीजन इस आश्रम में आते हैं तथा गुरु दरबार तथा 'बेरी साहिब' जी के सम्मुख नतमस्तक हो अपना जीवन सफल बनाते हैं जी।

(9) दूरदर्शन द्वारा बाणी का प्रचार :- डेरा सच्चखण्ड बल्लां द्वारा दूरदर्शन के डी०डी० पंजाबी चैनल पर हर वीरवार गुरु जी की अमृतबाणी का प्रसारण किया जाता है। टी०वी० द्वारा संगत दूर-विदेशों में बैठकर भी गुरुबाणी का आनन्द प्राप्त करती है। गुरु रविदास मिशन इस सेवा द्वारा काफी तीव्रता से उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहा है।

इसके अतिरिक्त असंख्य सेवाएं डेरे द्वारा जनहित हेतु की जा रही हैं, जिनका वर्णन करने बैठे तो शायद एक बड़ी पुस्तक तैयार हो जाएं। अंत में आप सर्व संगत के चरणों में प्रार्थना है कि आप श्री गुरु रविदास जन्मस्थान मन्दिर के दर्शन अवश्य करो जी। गुरु प्यारी साधसंगत जी, श्री गुरु रविदास

जन्मस्थान मन्दिर सीर गोवर्धनपुर कांशी, हमारे समाज का केन्द्रीय स्थल है। जिस प्रकार सद्गुरु स्वामी निरंजन दास जी इस स्थान को सर्वोत्कृष्ट धर्म-स्थान बनाने हेतु तन-मन-धन से प्रयत्नशील है, आओ ! हम भी सद्गुरु जी से प्रेरणा प्राप्त कर अपना-अपना सहयोग इस शुभ पुरुषार्थ को पूरा करने हेतु अर्थात् गुरु दरबार को चार चाँद लगाने के लिए करें जी। स्मरण रहे कि श्री गुरु रविदास नामलेवा संगत के लिए यह सर्वोपरि स्थान है। इसके अतिरिक्त यह भी विनम्र प्रार्थना है कि इस श्री गुरु रविदास अमृतबाणी पुस्तिका को बार-बार पढ़ें। सेवा, सिमरण, सत्संग, परोपकार, एकता तथा समानता को जीवन में धारण करें ताकि मानव जन्म का मनोरथ पूर्ण हो सके जी।

नोट :- श्री गुरु रविदास महाराज जी का प्रकाश दिवस श्री 108 संत निरंजन दास जी (चेयरमैन, श्री गुरु रविदास जन्मस्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट तथा वर्तमान संचालक डेरा सच्चखण्ड बल्लां) एवं श्री गुरु रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट के नेतृत्व में प्रत्येक वर्ष बड़े हर्षोल्लास सहित मनाया जाता है। विश्व भर से लाखों की संख्या में प्रेमीजन बड़ी प्रसन्नता पूर्वक गुरु रविदास जी के चरणों में नतमस्तक होने के लिए आते हैं। यह पवित्र स्थान सदैव संगत को खुशियाँ प्रदान करता है। इस बार जगत् गुरु रविदास जी का पावन 633वां जयंती समारोह तिथि 30 जनवरी 2010 को मनाया जा रहा है। सभी गुरुप्रेमी दरबार में सादर आमंत्रित हैं। विनम्र

-संत रामा नन्द

श्री गुरु रविदास जी महाराज की उच्चारण की गई पैंतीस अक्षरी

उ उसत्त करो इक ओंकारा । तीन लोक जिन
किया पसारा ।

अ अलख को लखे जो भाई । देहें ढंढोरा संत
सिपाही ।

इ ईश्वर काया घट में । आकाश रमइयो जैसे
सब मट में ।

स शीश महल में स्वामि दर्शे । जहां प्रेम अमी
रस बरसे ।

ह हरि का सिमरण कीजै । कहे रविदास अमी
रस पीजै ।

क काया कोटि में रम रहयो प्यारा । सीस
महल में दे दीदारा ।

(2)

ख ख्याल से करो विचारा । सर्वव्यापी सब से
न्यारा ।

ग गोबिन्द ऐसे ज्ञानी । न कुछ भूले न कुछ
जानी ।

घ घन नहीं अहरण सहें चोटां । सतगुरु शब्द
घड़या है अनोठा ।

ङ ङयानत सोई सार । रहे रविदास बात विचार ।

च चाम का चोला भाई । नाम बिना कुछ काम
न आई ।

छ छिन में भया ममोला । अमी सरोवर दिया
झकोला ।

ज जीव है, जनेऊ जाति का । दया की धोती
तिलक सत्य का ।

झ झिलमिल जोत जगाई । अलख पुरुष तहां

पहुंचे आई ।

ज जयानत सोई ध्यानी । दास रविदास कहे
ब्रह्म ज्ञानी ।

ट टैका टेर का एक राखो । एक बिना दूजा
मत आखो ।

ठ ठाकुर शीला तर गए भाई । पंडित बैठे मन
मुरझाई ।

ड डर नहीं हरि संग प्रीत । भगत जन बैठे मन
को जीत ।

ढ ढा दीनी बुर्जीपापन । सिमरण कीना अजपा
जपन ।

ण णम की लाई डोरी । कहे रविदास लगी
लिव मोरी ।

त त्रिगुण माया रचदी भाई । ऋषि मुनि लीने

भरमाई ।

थ स्थिर नहीं यह संसारा । राव रंक सब काल
नगारा ।

द दो इक दिन यहां मन्दिर सारा, फिर ठाठ
छोड़ लद जाये बंजारा ।

ध धनी जिन ध्यान लगाइ । काल फांस के
बीच न आइ ।

न नाम की नाव बनाई । कहे रविदास चढ़ो रे
भाई ।

प पार ब्रह्म परमेश्वर स्वामी । सब घट-घट
के अन्तरयामि ।

फ फिकर कर छोड़ जगसंसा । जा मिल बैठे
अविनाशी पासा ।

ब ब्रह्म सो ब्रह्म का वेता । गगन मंडल में

राखो चेता ।

भ भ्रम मिटे जो पंचम सीजे, जाये त्रिवैणी
मजन कीजे ।

म मन को गगन समाओ । केह रविदास परम
पद पाओ ।

य याद करो, वाह के गुण गाओ । पार ब्रह्म
के दर्शन पाओ ।

र राम रमे सो राम प्यारा । फिर न देखया
जम का द्वारा ।

ल लिव लगा ले भाई । जम का त्रास निकट
न आई ।

व विधीवध सिमरन कीजै । सोंहग नाम अमी
रस पीजै ।

ड़ ड़ाड़ मिटि जब हुआ नबेड़ा, कहे रविदास
 किया अमर घर डेरा
 सोहंग शब्द मन किया बसेरा । मेट दिया
 चौरासी का फेरा ।

ओंकार बावन का पैंतीस में जपयो है सार ।
 सर्व देव संतन को करें हैं नमस्कार ।

पैंतीस मात्रा प्रेम से सिमरें हैं निज दास ।
 जिन सिमरियो सो मुक्त हैं कहे सद रविदास ।
 ओंकार पैंतीस मात्रा प्रेम से निसवासर कर
 जाप ।

रविदास कहे जो सिमरते, मिट गये तीनों
 ताप ।

ओंकार पैंती मात्रा प्रेम से सिमरण कीयो
 मन वैराग ।

रविदास कहे जो सिमरते, तिन के पूरण
भाग ।

पैंतीस मात्रा प्रेम से सिमरते रवि प्रकाश ।
रविदास कहे जो सिमरते, मिट गये जम के
त्रास ।

रविदास सिमरत रमते राम में, सत शब्द
प्रतीत ।

अमर लोक जाये वसियो, काल कष्ट को
जीत ।

ओंकार सप्त सलोकी मात्रा, सत कीयो
जगदीश ।

अमर लोक वासा कीया, काल नमावें शीश ।

॥श्री गुरु रविदास बाणी हफ़तावार ॥

सोहंग सतिनाम धियाओ ॥ ऐतवार
अमृत दा भरिआ बोले अमृत बैन ॥ गुरु का
शब्द जपो दिन राती ता आवे सुख चैन ॥ ऐतवार
वी सफल है हरि का सिमरन सार ॥ रविदास
जो नाम उचारिए पाया मुख दुआर ॥१॥ टेक ॥
सोमवार सभ ठोर में जले थले भगवान ॥ महिमा
प्रभु गाईए तब होवे कलियाण ॥ गोबिन्द गोबिन्द
जाप से आवै सदा अनंद ॥ सोमवार सुख दा
जपो जपो रविदास मुकंद ॥२॥ टेक ॥ मंगलवार
आवै सदा होवे मंगलचार ॥ रल मिल सखीआं
सिमरलो हरि हरि नाम अधार ॥ प्रीतम चरनी
लागिया कभी न आवै हार ॥ मंगलवार

सुलखणा कहि रविदास विचार ॥३॥ टेक ॥
 बुधवार बोध सदा होवै ज्ञान प्रकाश ॥ गुरु प्रेम
 पूरे जो मिलै टूटे जम की फास ॥ अंत सहाई
 प्रभू भये करम कमाए सोई ॥ बुधवार बुध
 सफल है रविदास जो भगत होय ॥४॥ टेक ॥
 वीरवार विदिया बडै पुन पुना अभियास ॥
 सतिगुरु पूरे मिलन से होवे आत्म प्रकाश ॥
 गुरु ज्ञान का मूल है धरम मूल का हितकार ॥
 वीरवार बिचारीए नसै पाप हजार ॥५॥ टेक ॥
 शुक्रवार सुहावना छिन छिन भजे करतार ॥
 विछै बाशना झूठीयां देवै नरकां डार ॥ गति
 करमां अनुसरा है जैसा जैसा होवै ॥ शुक्रवार
 सुहावणा रविदासी नाम जपेवै ॥६॥ टेक ॥
 शनीवार भजन श्रृष्ट सत सत सभ वार ॥ शुभ

करमां से सफल है आवण जाण संसार ॥ बिन
 भजन बिरथा सभ जानते जो जो आवतवार ॥
 बारम वार हरि सिमरीए कहि रविदास
 बिचार ॥७॥ टेक ॥

श्री गुरु रविदास बाणी पन्दरां तिथी

सोहंग सतिनाम धियाओ ॥ अमावस
जो है भाखिया जानो मीत ॥ श्रृष्ट मुनी सभ
गावदे गीत ॥ अमावस है छूत सदा बसै है जग
जीत ॥ बिरलै बिरलै पीवगे सोहंग रस
सुरजीत ॥१॥ भगता सेती गोष्टी जाए सभी
बिहाय ॥ आउना उसका सफल है जो जाते
लाभ उठाय ॥ अमावस है जो आंउदिआ आवन
जावन रीत ॥ कहि रविदास विचारके राखो
हरि से प्रीति ॥२॥१॥ टेक ॥ एकम एक
परमात्मा संसारै है प्रकाश ॥ सवास सवास तू
सिमरलै तोड़े जम की फास ॥१॥ दीन बंधू
दिआल जो सोय है सिमरन सार ॥ जगत सदा

जो सुख देवे अंतर होय आधार ॥२॥ हसती
 चीटी आदि लै जीवन हुकम अनुसार ॥ भजन
 करो जन पालका होना जेकर पार ॥३॥ एकम
 एक परमात्मा रखवणी उसकी आस ॥ सति
 सति प्रभू सिमरते सच कहै
 रविदास ॥४॥ २ ॥ टेक ॥ दूजी दुरमति दूर कर
 रखणा गुरु से नेऊ ॥ सफल करम तब होणगे
 गती पावै इह देहू ॥१॥ दूजी दुरमति दूर कर
 दया धरम किरपाल ॥ सति से कर गोष्ठी
 हिरदिया बसै गोपाल ॥२॥ सुभ करमा फल
 सुभ है करमां संदणा खेत ॥ पाप करम दे कीतिक
 सदा हार नहीं जीत ॥३॥ दूजी दुरमति त्याग
 कर लीला अजब पहिचान ॥ कहि रविदास
 बिचारके भगत भजन कलियाण ॥४॥ ३ ॥ टेक ॥

संसारी तृष्णा त्याग के तन मन धन गुरुदेव ॥
 मिथिया सभ को जानके रख नाम सनेह ॥१॥
 करमी भगती करन से होवै जगत अधार ॥
 वहि सोभा अति घनी अगे मिलै भंडार ॥२॥
 तीरथ फल ना बरत फल नहीं जग कोई पाया ॥
 मन महि हऊमै अहंकार जोय बिरथा सभही
 जाय ॥३॥ तृत्तीय त्यागीये मान को खोटे करम
 हंकार ॥ हरि हरि नाम उचारीए कहि रविदास
 पुकार ॥४॥४॥ टेक ॥ चौथ चारो तरफ महि
 दसों दिसा चोगिरद ॥ जलै थलै प्रभू आप है
 राखो नाम की विरद ॥१॥ चमन जो तुझै दिख
 रहा रहिना नहीं हमेश ॥ छण मंगूर शरीर है
 बदन रहित ना केस ॥२॥ सहायता कोई ना
 कर सके जिन सो लाया हेत ॥ अंत समें छड

जाइगे मुख सेवन प्रेत ॥३॥ चौथ चोरी ना करो
 त्यागो विषै बिकार ॥ गोबिन्द सिमरनि सार है
 कहि रविदास विचार ॥४॥५॥ टेक ॥ पंचमी
 प्रीतम जान लउ सभना है भगवंत ॥ ब्राह्मण
 आदिक सिमरते कोई ना पाया अंत ॥१॥ पंच
 ततव की रचना है जो दिखै आकार ॥ तिसमे
 होवै लीन सभ लीला प्रभ अपार ॥२॥ विषै
 वाशना झूठ है राह भला बीच नीत ॥ बिना
 भजन संगी नहीं सरब सुखा का मीत ॥३॥
 पंचमे पती परमात्मा सरब सृष्टि जान ॥ गुर
 की सरनी धियावते होवै रविदास ज्ञान ॥४॥६॥
 टेक ॥ शिष्टमी बित विखीयानीए षट रस भोजन
 आदि ॥ जिसने सभ पैदा कीए कर तूं उसकी
 याद ॥१॥ जो देखत सभ बिनसता बापर शाही

आदि ॥ सिमरन कर तूं प्रभू का जो है आदि
 जुगादि ॥२॥ उलटे निजमां कीतिया आवत
 तुझको हार ॥ सुभ करम के करन से पावै सति
 दरबार ॥३॥ शिष्टमी शुद करम करावै जोवै ॥
 गुरू मिल जीवन मुक्त है सखा रविदासी
 होवै ॥८॥१॥ टेक ॥ सतमी सारे रम रहा आप
 हरी सिरजनहार ॥ तूं ना भूले पराणीयां सिमरन
 बारमबार ॥१॥ हरि पूरन परमात्मा निरधन
 अधार ॥ सरब वियापी प्रभू है तूं ना कभी
 बिसार ॥२॥ दुखीयां के दुख दूर कर कष्ट निवारो
 आप ॥ सदा सहाई प्रभू है करै जो उसका
 जाप ॥३॥ निंद का हंकारी पाठ का भगत है
 तास ॥ हरि भजन संग मुकती पावै जन
 रविदास ॥४॥८॥ टेक ॥ अठमी आठो आम जो

सिमरन कर हरिनाम ॥ सुध तेरा प्रलोक जो
 होवै अंत कलियाण ॥१॥ होवै ज्ञान की रोशनी
 गुरु ज्ञान का मूल ॥ गुरु सेवा बहि संत की
 करम कमाय असलू ॥ भूलन अंदर सभ को
 अभुल्ल प्रभू है आप ॥ भुल्ला रहे जो पाप से
 मिटत सकल संताप ॥३॥ अठमी अटक ना
 होवसी जिस का रिदा सुफाय ॥ रविदास अटक
 है उसको पाप पोटरी उठाय ॥४॥ ८ ॥ टेक ॥
 नौमी नौध भगत जो है भगता मनजूर ॥ पुरश
 भला जो करेगे सभना पूरन पूर ॥१॥ पद सेवन
 कीरतन जस चोथै अरपण जान ॥ दास सखा ने
 अरपना आठो बंदना मान ॥२॥ नौमी डंडाउत
 कही जो कहे कराए जाय ॥ रविदास भजन
 अमोल है बिरला पाए कोय ॥३॥ १० ॥ टेक ॥

दसमी दरद निवार लै सचे सतिगुर संग ॥ समां
 विअरथ जाइगा हंकारी दुष्ट भुजंग ॥१॥ मैं मेरी
 नूं मार लै मन महि शांत होवै ॥ क्रोध बुरा है
 काल से इसको लेउ समावै ॥२॥ श्रृष्ट मुनी
 सभ समझते करदे नाम आधार ॥ सरब ठोर में
 बस रहा सच्चा सिरजणहार ॥३॥ दसमी दिशो
 दिश बस रहा सारे है करतार ॥ हरि हरि तुल ना
 प्रानीआं कहि रविदास बिचार ॥४॥११॥ टेक ॥
 एकादसी एक दा दास रहू फूरने तजो अनेक ॥
 भगत होत तर जावगे सदा मानीए टेक ॥१॥
 अंबा गुवाही निंदा बास ऐह जान ॥ ऐह सब
 जोहर सुमन है छाडो इनका ध्यान ॥२॥ जूआ
 मास मधर बेषिया हिंसा चोरी कार ॥ जिह खोटे
 करम है डोबन नरक मझार ॥३॥ मनुख जून

सुलकखणी गत करमां अनुसार ॥ बिना भजन
 बिरथा जनम जाय कहि रविदास
 बिचार ॥४॥१२॥ टेक ॥ दुरादसी दे दरबार डिठा
 अजब अंध ॥ बड़े क्रोध से पाप है बास खिमा
 मुकंद ॥१॥ सति संगति महि धरम है बड़े नाम
 का रंग ॥ बैकुंठ भी उसे आखदे जहा होते संत
 संग ॥२॥ धन के भागी चार है धरम चोर नरप
 आग ॥ धरम हेत जो लाएगा तिन कहे
 बडभाग ॥३॥ धरम हेत ना लामदे लैदे तीनो
 नाय ॥ चोर नरप ओर आग जो कहि रविदास
 बताय ॥४॥१३॥ टेक ॥ तरैदसी तारन हार है
 सदा सदा तूं ध्याय ॥ लख्ख चुरासी जून से
 उतम दीया बनाय ॥१॥ बंदे बुरज बना दीयां
 ऐसा अजब बनाय ॥ ऐसा बने ना ओर से मन

तन सीस लगाय ॥२॥ उस को ना तूं भूलणा
 पिआ पट के भाय ॥ तूझै अहार पहुँचावता
 उदर मात के जाय ॥३॥ तेरस तेरा कल्पना
 झूठा दिखता भास ॥ झूठा सच्चे पेट का सच
 कहे रविदास ॥४॥१४॥ टेक ॥ चांद चौदा भए
 जब दिखता सरब अकार ॥ सरब बियापी प्रभू
 है सूरज चंद अते तार ॥१॥ हरि से प्रीत करो
 मन मेरे जैसे चंद चकोर ॥ बालक प्रीति खीर
 से बादल घटा से मोर ॥२॥ छिछ बिन सूनी रैन
 जो हिरदै ज्ञान बिन मान ॥ गुरु ज्ञान अमुल है
 उत्तम भगत हरि जान ॥३॥ चौदा चौदा रतन
 सम इच्छा पूरन होवै ॥ रविदास संसै सभ मिटै
 प्रभू प्रेम बस होवै ॥४॥१४॥ टेक ॥ पुन्या पूरन
 चंदरमा सारे हा परकास ॥ लोचन ज्ञानी तरैगे

हिरदै नाम परकाश ॥१॥ गुरु सुख अमृत पीवगे
 मनमुख अंध गवार ॥ प्रेम लाई लड़ फड़ैगे
 मिलत पदारथ चार ॥२॥ रविदास जिह ग्रंथ है
 पड़ै सुणै मन लाय ॥ सभ ही पदारथ मिलेगे
 इससे सभ बर पाय ॥३॥ पंदरां तिथी संपूरन है
 पूरन पाठ कराय ॥ सरब इच्छिआ संपूरन है सभना
 रविदास सहाय ॥४॥१६॥ टेक ॥

साहिब सतिगुरू रविदास महाराज जी का 'बारह मास' उपदेश

“चेत”

चढ़या चेत सुलवखना, कर संतन संग
प्रीत ॥ गुर चरनन चित्त लाए कर, राम नाम
जप्प नीत ॥ गुर गोबिंद जहि गाईए, कर सरवण
नित्त नीत ॥ गुर के चरनन प्रेम कर, हिरदे धरो
गुर मीत ॥ बचन गुर के सुनत ही, मिटत भरम
सभ भीत ॥ मन मुख्व संग ना कीजीए, गुरमुख्व
संगत याहर ॥ मनमुख्व संगत बिघन है,
गुरमुख्व संगत सार ॥ मनमुख्व संगत डूबणो,
गुरमुख्व संगत पार ॥ गुरमुख्व रिदै प्रगास है,
मनमुख्व अंध गुवार ॥ गुर के अमृत वचन

सुण, शरधा हिरदे धार ॥ रविदास भगती एही
है, हिरदे खूब विचार ॥ चेत सुहाणां तिनां नूं,
जिनां सोहंग नाम प्यार ॥

“वैसाख”

वैसाख सुहावा सर्व सुख, गुर के वचन
विचार ॥ अंतर ध्यान लगाए कर, समझो सार
आसार ॥ गुरदेव को ग्रहन कर, तज सब झूठ
बिकार ॥ हिरदे हरि, हरि हरी को, सिमरो वारं
वार ॥ दुष्टा संग त्याग कर, संतां संग प्यार ॥ दृढ़
कर राम ध्याए तूं, भव निधि उतरे पार ॥ हरि,
हरि नाम जपंदिया, कदी ना आवे हार ॥ भगत
बिना गुरदेव की, होवत नहीं कल्याण ॥ गुरु
बिना जन्म विअर्थ ऐह, जावत साची मान ॥ गुर

हरि भगत कहंदिया, निहचल मिल है ज्ञान ॥
 कहे रविदास लग चरन गुर, मन का हर
 अभिमान ॥ वैसाख सुहावा तिनां है, हरि, हरि
 जपे सुजान ॥

“जेठ”

जेठ तपत बहु घाम कर, शांत ना होवत
 मीत ॥ क्रोध अगनि कर तपत, मन लोभी लोभ
 परीत ॥ सोहंग नाम मुख्व जपत, जन कीरत
 करैह नीत ॥ संतां संग निवास कर, शांत भयो
 तिन चीत ॥ उतपत करे आप सभि, करे पालणा
 नीत ॥ प्रभू बिन दूजा नांहि को, कर निहचे
 परतीत ॥ तिस प्रभू को तूं जप सदा, होकर मनो
 नाचीत ॥ प्रभू सिमरन गुर दया ते, नष्ट होत जम

भीत ॥ सतगुर के प्रताप ते, गावहु प्रभू गुण
 वाद ॥ सो किरण नेतर रसना नाम का, करण
 दीए सुण नाद ॥ सुंदर साजिया जाहि प्रभ, राख
 सदा तिस याद ॥ जो जन भगत बिहीन है,
 जनम जाए तिस बाद ॥ गुर चरनी लग भगत
 कर, मिटह पाप अगाद ॥ कीरतन भगती तीसरी,
 रक्खो इन को याद ॥ जन रविदास गुरू सिमरिया,
 जो जन सदा आनाद ॥ जेठ तापंदा ना लगगे,
 जिन चाखिया नाम सुआद ॥

“हाड़”

हाड़ अवध है घाम की, शांत अवध
 सुख जान ॥ लोभ अवध है पाप की, कर भगत
 मिले हरि धाम ॥ गुर के चरन सु कंवल की,

करहि सेव सुजान ॥ सगल सृष्टि जैसे मलत
 है, चरण कंवल भगवान ॥ आठ पहिर गुर चरन
 मल, दृढ़ कर निहचे ध्यान ॥ अन्तश करण कर
 शुद्ध, तब होत पाप की हान ॥ पाप नष्ट गुर
 भगत ते, दर्शन करहो नीत ॥ कारण भगत है
 मुक्त का, कर निहचे प्रतीत ॥ चरन भगत कर
 लछमी, शक्ति भई सु मीत ॥ जगत चरन की
 शक्त तिस, भई सु जानो मीत ॥ भगति सु गुर
 के चरन की, कर निहचे धर चीत ॥ गुर बिन
 और ना ध्यान धर, ऐह रविदास की रीत ॥ हाड़
 शान्त सुख तिन जनां, जिन गुर भगत प्रीत ॥

“सावन”

सावण शान्त भई जगत में, बारश होए

बशेस ॥ घर घर मंगलाचार है, नासे सभी
 कलेश ॥ अन्न धन बहुता उपजिआ, गऊआं
 घास हमेश ॥ सुहागणि सदा आनन्द है, दुहागणि
 मैला भेस ॥ कर पूजन गुर चरन की, शरधा
 साथ हमेश ॥ पान, सुपारी, पुष्पकर पूजन करो
 हमेश ॥ अर्चना भगती पंचमी, गुर पूजा में ध्यान ॥
 बिना इष्ट गुरदेव ते, पूजो देव ना आन ॥ गुरू
 हरि में ना भेद कुझ, कहयो आप सुजान ॥
 निहचे कर गुर चरन भज, होवत है कल्याण ॥
 गुर समान नहीं और जग, जानत संत सुजान ॥
 कहि रविदास गुर चरन को, करत सदा ही
 ध्यान ॥

“भादरोँ” (भादों)

भादरोँ भरम भुलाइया, माया संग प्यार ॥
 गुर बिन शांत ना पाए है, जनम मरन में बारंबार ॥
 जिन्हां विसारिया राम नाम, गुर चरनी नहीं
 प्यार ॥ धृग तिनां का जीवणा, कांहू आए
 संसार ॥ भवि जल मांहि भवंदियां, ना उरवार
 न पार ॥ गुर चरनन का आसरा, जिन मन
 लीना धार ॥ कर डंडोत गुर चरन में, भवनिध
 उतरे पार ॥ गुरुदेव गुरु समझ के, करीं शुकर
 विचार ॥ बन्दना भगती छठी ऐह, करे शिश
 वडभाग ॥ अवर करम सभ त्याग कर, गुर की
 चरनी लाग ॥ गुर के चरन बहु प्रेम कर, माया
 मोह त्याग ॥ बिन गुर भगत न थिर कछू, जगत
 पसारा बाग ॥ पूरन पुन प्रताप ते, जागियो इसो

बराग ॥ सोएयो मोह की नींद में, गुर किरपा
भयो सुजाग ॥ रविदास गुरु चरन को, तूं कभी
नहीं त्याग ॥

“अस्सू”

अस्सू आसां पूरीयां, जब गुर भये
दियाल ॥ चरनी लावो दास को, करो प्रभू
प्रतिपाल ॥ प्रेम तार गुरनाम मन, गल पावो
माल ॥ दर्शन कर गुर चरन को, तब ही भये
निहाल ॥ गुर चरनी लग भगत कर, त्याग मोह
का जाल ॥ गुर भगती तब पाईए, जो होवे
लिखिया भाग ॥ दासा भगती ऐही है, सपतम
जानो लाल ॥ करो अभी पछताओगे, फिर हाथ
ना आवै काल ॥ ऐह दासा भगती कीनी विरले
वीर ॥ सवास, सवास आज्ञा राखियो धीर ॥ रहे

सदा विच आज्ञा, एहो भगत महान ॥ दासा
 भगती ऐही है, दासन दास बिखान ॥ बुद्ध
 सुद्ध तब्ब होए है, पावै निरमल ज्ञान ॥ अस्सू
 पूरन आस सब, गुरूदेव विखियान ॥ रविदास
 गुरू चरनन का, सदा करत है ध्यान ॥

“कतक”

कतक कर्म त्याग कर, भगत करो
 गुरदेव ॥ सोहंग सोहंग जपंदिया, कर संतन
 की सेव ॥ मात, तात और भ्रात ते, प्रिय जान
 गुरदेव ॥ और सखा नहि जगत में, जैसे है
 गुरदेव ॥ सखा भगत ऐह अशटमी, कीती अर्जन
 देव ॥ सखा जान गुर भगत कर, त्याग करो
 अहंमेव ॥ काम क्रोध हंकार तज्ज, तब्ब कछू

पावै भेव ॥ सखा भगत सुभाव यह, जिम जल्ल,
 दूध्ध मलेव ॥ सरब करम को त्याग कर, हरि
 गुर जप दिन रैन ॥ बाझह नीर जिम मीन को,
 आवत नांही चैन ॥ चकवी करे विलाम जिम,
 कब ऐह जावे रैन ॥ चंद चकोर को प्रीत जिम,
 मोर मुगध घन बैन ॥ सवास, सवास नहीं बिसरे,
 जिऊं बच्छरे को थैन ॥ जिम कामणि प्रसन्न
 अति, पती को देखत नैन ॥ कतक सवेर काम
 सभ, जब गुर करना ऐन ॥ रविदास गुरुदेव
 चरन को, धोए धोए कर पैन ॥

“मध्यर”

चड़िया मध्यर हे सखी, गावो प्रभ के
 गीत ॥ संता संगत पाए कर, गुरुदेव सिमरो

नीत ॥ तन, मन, धन सभ अरप कर, ऐसी करो
 प्रीत ॥ त्याग लोभ मोह अहंकार सभ, गुरुदेव
 की करो प्रीत ॥ गौण वाक सभ त्याग कर, संत
 वचन धर चीत ॥ तन मन धन ऐह हंकार, आपणे
 कछहु ना मान ॥ गर्भ करत जो इनसे, सो नर है
 अनजाण ॥ आप कछहू ना होत है, देणहार हरि
 धाम ॥ मैं कीया मैं करत हूँ, कूड़ा करहि माण ॥
 हरि का दीया सो गुर दीया, तैं की दीया आन ॥
 तेरा इक हंकार है, अर्पण तिस को मान ॥ नव
 प्रकार दी भगत ऐह, सत गुरुदेव बिखान ॥ जन
 रविदास करे भगत जो, शुद्ध भयो तिस मान ॥

“पोह”

मध्यर पूरा भया जब, तब चड़िया पोह

मास ॥ सोहंग नाम तूं सिमर नित्त, जग्ग ते होए
 उदास ॥ अवर कामना सर्व तज्ज, सतगुर की
 कर आस ॥ सतगुर शरणी लग्गियां, पाप होत
 सब नास ॥ सरवण करत गुरां ते, साधन ज्ञान
 बिलास ॥ वचन धार गुरदेव उर, सभ संसे होवन
 नास ॥ सतनाम उपदेश गुर, कर तूं दृढ़ अभ्यास ॥
 वचन गुरू परकाश कर, होत भरम सभ नास ॥
 सरवण इस का नाम है, सुण सतनाम विचार ॥
 सत सरूप परमात्मा, मिथिया जगत आसार ॥
 तिस प्रभ को तूं सिमर मन, जो है सरब आधार ॥
 सतगुर शरणी लग कर, समझो सार आसार ॥
 प्रभ बिन अवर ना जाण कछहू, सब इक ब्रहंम
 पसार ॥ असथावर जंगम आदि सभ, जीया जंत
 निरधार ॥ जन रविदास पोह बीतिआ अब सुन

माघ विचार ॥ जन गुरुदेव हरि भेटिया, भवजल
उतरे पार ॥

“माघ”

माघ महीना धर्म का, दृढ़ कर तूं
सतसंग ॥ संतां संग प्रीत कर, कदी ना होवे
भंग ॥ धूड़ संत के चरन की, सोई श्रेष्ठ है
गंग ॥ पापां की मल्ल उतरे, चढ़े नाम का रंग ॥
मनमुख्व संग ना कीजीए, पडत भजन में
भंग ॥ दुःख बिनसे सुख लाभ होवे, गुरुमुख्व
जिन के संग ॥ नाम जपो मिल गुरुमुख्वां, जो
है सदा आसंग ॥ तूं वी प्रभ ते भिन्न नहीं, जिऊं
जल मांहि तारंग ॥ सोहंग नाम रग रग रचे, नाम
का चढ़े जब रंग ॥ पंचो वैरी त्याग कर, तब

होए निसंग ॥ गुरु प्रेमी गुर की शरण गहि,
 करत खूब विचार ॥ गुरुदेव के प्रताप बिन,
 समझे न सार असार ॥ करके दृढ़ उपदेश गुर,
 भवनिधि उतरे पार ॥ मन्द भाग बिन सतगुरां,
 दुब्बण भव निध धार ॥ सतगुर के प्रसादि हम,
 जानिया आत्म राम ॥ जानण जोग सु जानिया,
 जो आत्म निज धाम ॥ मिटिया गुमान गुर दया
 ते, पाया अब विसराम ॥ पुन्ने सगल मनोरथां,
 रहियो ना बाकी काम ॥ अनेक जन्म दुःख पाए
 कर, आए गुर की साम ॥ जिहड़े विछड़े तिह
 मिले, भये अभ आत्म राम ॥ सतगुर के भजन
 बिन, नही अवर कुछ काम ॥ इको सोहंग
 सतनाम जीयो, सिमरो आठो जाम ॥ सरवण

कर गुर वचन को, निसचे कर उपदेश ॥
 निसवासर अभ्यास कर, तज्ज कर सगल
 कलेश ॥ बुद्बुदा फेन तरंग का, जल्ल ते भिन्न
 ना लेस ॥ सब भूखण जिन कनक के, कंचन
 बिन ना शेष ॥ घटि मिट माटी रूप सब, और
 ना कछहु विशेष ॥ अनिक भांति पट जो भये,
 सूतर तिस का वेस ॥ रविदास गुरू चरन के,
 करहूं सदा आदेश ॥

“फगन”

चड़िया फागण मास जब, फूली सभ
 गुलजार ॥ धरती सब हरियावली, सुंदर बाग
 बहार ॥ बुल्लबुल्ल मसत बहार पर, भंवरा भई
 गुलजार ॥ निवण फल्ल बहु बाग में, गलगल,

आम, आनार ॥ गुरमुख्व गुर की शरण गहि,
 करते खूब विचार ॥ सतगुर के परताप कर,
 समजे सार आसार ॥ कर के दृढ़ उपदेश गुर,
 भव निध उतरे पार ॥ मंद भाग बिन सतगुरां,
 दुब्बण भव निध्ध धार ॥ सतगुर के प्रसादि
 हम, जानिया आतम राम ॥ जानण योग सो
 जानिया, जो आत्म निज धाम ॥ मिटिया गमन
 गुर दया ते, पाया अब बिसराम ॥ आनेक जनम
 दुःख पाए कर, आए गुर की शाम ॥ जिहड़े
 विच्छड़े तिह मिलो, भये सो आतम राम ॥ जन
 रविदास गुर भजन बिन, नहीं अवर कछहु काम ॥
 गुरू चरनों का ध्यान कर, रुण बारां मासक
 उपदेश ॥ पढ़े सुणे जो प्रेम कर, होवे कल्याण
 हमेश ॥

“दोहरा”

धरत अकाश को थापिया, रैन दिवस
नित्त पाल ॥ सर्व जीव के करम जो, साहिब करे
ख्याल ॥ आप अपना सभ पावते, किरत धुर
परवान ॥ पवन पानी सवंतर के, रखशक भये
भगवान ॥ रविदास कहे भज नाम को, निरभै
पावै वास ॥ तेरा फल तुझ को मिले, होवे बंद
खलास ॥

साहिब सतिगुरु रविदास महाराज
जी दी “सांद बाणी”

सोहंग सांद सोलकखिआ, सरब घटि ।
मिल गुर नाम लगाइयो रट्ट ॥ चौंक चतर जगग

जाण महान । पूरन हार जगत सो प्राण ॥ नानके,
 मापे, साक सोहेले । कर किरपा सतगुर प्रभ
 मेले ॥ हस्थ गाना, गणियो सो माल । किया पुत्र
 दान रचन आकाल ॥ कुंभ कमाल जनम, जन
 पाइयो । सुरत शब्द आनाज मिलाइयो ॥ भर
 जल, कुंभ कारज में धरियो । तिव कारज सोपूरण
 करियो ॥ दीपक दिल, हंग तेल बिठाई । सुरत
 मिला, उते जोत जगाई ॥ गुर भरवासे, सो संधूर ।
 नौं दर तों, नौं ग्रहि सभ दूर ॥ गुरमुख्व सांद,
 समझ सच सोई । सभ कारज, प्रभ ओट लै
 होई ॥ खोपा कारज, समगरी घिओ । इक दर
 खतम सोगंदी भयो ॥ अब अंब, पत जगन
 जग जाग । सुरत शब्द मिल मंगल राग ॥ सब
 मिल प्रण, प्राण बिठाओ । संग गुर सति विश्वास

जमाओ ॥ कहे रविदास भज हरि नाम । प्रभ सो
ध्यान, सफल सब काम ॥

“अनमोल वचन”

(मिलनी के समय)

मेल मिलाइया दाते, मिलिया मिलणे
के योग ॥ दिल जे मिलावे दाता, जांदे विछोड़े
वाले रोग ॥ खुशीयां सतगुर बख्शे, उमरां दे
जांदे ने वियोग ॥ तन, मन वारिया जावे, मिलणी
आदर संग होग ॥ किरपा पग मसतक राखो,
सतगुर सरब सिर योग ॥ प्रभ तों मिल के मांगो,
पवे ना विछोड़े वाला भोग ॥ कहि रविदास
पुकारै, जनमां दे जांदे सारे सोग ॥

साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज
के मुखार बिंद से उच्चारण की हुई
लावों की विधि:-

“शादी उपदेश”

॥एक ओंकार सोहंग सतनाम जीओ ॥

॥दवैइया छंद ॥

“पहिलड़ी लांव”

पहिलड़ी लांव हरि दर्शन गुरां दा, जावे
दूर बुलाई ॥ दीआ मेल हरि दया धार के, गुज्झी
रंमझ चलाई ॥ अनहद शब्द सुणे मन थिर कर,
मिट गए सरब अंधेसे ॥ किरपा सिंध गुर मिलिया
पूरा, लिव लागी हरि भेसे ॥ पूरे गुर ते शब्द
सच्च पाऐआ, रतन अमोलक मीता ॥ सुणदिआं

ही मन मसत दीवाना, शब्द गुरां ने कीता ॥
महांवाक सुण, सुण के गुरू दे, शरधा प्रीत मन
आवै ॥ कहि रविदास ऐह है लांव पहिलड़ी,
चौंसठु तीरथ नहावै ॥

“दूजड़ी लांव”

दूजड़ी लांव प्रेम परीती, सुरत शब्द
मिलाई ॥ सतगुर कीती परम परीती, दरगह में
सुख पाई ॥ सरब मनोरथ तिस दर ते पाउ,
शरण परै को तारै ॥ हुकम अन्दर है चार पदार्थ,
तन, मन जेकर वारे ॥ सतगुर शरण रहि बडभागी,
सहिंसे सगल गुआए ॥ सतगुर दाता प्रभ संग
राता, निस दिन हरि लिव लाए ॥ भरम भुलावा
मिटिया दावा, चाल गुरां दी चाली ॥ कहि
रविदास ऐह लांव दूजड़ी, बचन गुरां दे पाली ॥

“तीजड़ी लांव”

तीजड़ी लांव अवरन दोष ते, रहित
 भया मन मेरा ॥ हरि घटि दे विच ऐक समाना,
 सो घर पाया डेरा ॥ परम प्रभू परमेश्वर जाना,
 तां सुख मिले उपारै ॥ मन में सच्च मंगल
 सुख होए, जो लोचा मन धारै ॥ मंगल दे
 मंगल नित गावां, ऐहो अमृत धारा ॥ हरि, हरि
 संग लिव जुड़ी जुड़ंदी, साचा ऐह सहारा ॥
 सुंदर शब्द आमोलक दर्शन, जो सतगुर दर
 आवै ॥ कहि रविदास सो लांव तीसरी, सुरत
 गगन चड़ जावे ॥

“चौथड़ी लांव”

चौथड़ी लांव रतन हरि जाना, सुख
 संपति घर आए ॥ आसा, मनसा सतगुर पूरे, जै,

जै शब्द अलायि ॥ धीरे, धीरे गई पहुँच हुण, हो
 सतगुर दी दासी ॥ ना आवे, ना जावे कित वल,
 मिलिआ पुरख अविनाशी ॥ सति संतोख भया
 मन मेरे, सतगुर वचन सुनावै ॥ आया बेराग,
 मिलिया अविनाशी, जोड़ी जूड़ी सुहावै ॥ मन
 मंदर मांहै चों उपजिया, प्रीत प्रभू संग लाई ॥
 कहि रविदास सति लांव चौथड़ी, पुरखे पुरख
 मिलाई ॥

“सुहाग उसतत”

॥ एक ओंकार सोहंग सतनाम जीओ ॥

सुरत सुहागण गुरू देव प्यारी, सोहंग
 नाम संग खेली ॥ बहुत जनम दे विच्छड़िआं नूं,
 आण गुरां ने मेली ॥ झूठी खेड बिसर गई तन ते,
 बाजीगर सिऊं मेली ॥ सच्चा पुरख मिलाया

परमेश्वर, तिस संग लाड लडेली ॥ आप समान
 आपणे कीती, आज्ञान नींद ते जागी ॥ भुल्ली
 चुक्की रसते पै गई, आत्म सिऊं लिव लागी ॥
 सब विआपी सतगुर मेरा, सब दा करे सुधार ॥
 कहे रविदास मन भया दीवाना, मिलिया अमृत
 धार ॥

साहिब सतिगुरु रविदास जी महाराज के
मुखार बिंद से उच्चरित :-

“मंगलाचार”

“मंगलाचार पहिला”

हरि, हरि नाम धियाओ, सदा मन प्रेम
कर ॥ लोभ, मोह, हंकार, दूत, जंम दूर हरि ॥
सच, शील, संतोख, सदा दृढ़ कीजीए ॥ अमृत
हरि का नाम, प्रेम कर पीजीए ॥ संतां संग
निवास, सदा चित्त लोड़ीए ॥ मनमुख दुष्टा
संगत, तों मन मोड़ीए ॥ मनमुख चित्त कठोर,
पत्थर सम जानीए ॥ भीजत नाहन कभी, रहे
विच पानीए ॥ तजि कठोर का संग, सदा गुर

शरण गहु ॥ गुर चरनन में ध्यान, सदा मुख्ख
 राम कहु ॥ निज पती साथ प्रीत, सदा मन
 कीजीए ॥ तन, मन अरपे तांह, सदा सुख
 लीजीए ॥ निज पती साथ प्रीत, साई सोहागणी ॥
 पती बिन आन ना हेरे, सा बडिभागणी ॥ जिन
 धन पती परमेश्वर, जानयो, है सही ॥ सदा
 सुहागण नार, पाए दुःख ना कही ॥ कहि रविदास
 पुकारे, जपयो नाम दोए ॥ हरि कारज सो एक,
 सदा सुख माणो दोए ॥

“मंगलाचार दूसरा”

दूजा भाओ मिटाओ, मंगल दूसरा ॥
 बण, तृण परबत, पूर रहयो, प्रभ हूंसरा ॥ घटि,
 घटि ऐको, अलख, पसारा पसरिया ॥ गुरमुख
 जाने ज्ञान, ना जाने असरिया ॥ सभ घटि पूरण

ब्रह्म, जान गुर पाएके ॥ रहे सदा आनन्द, तास
 गुण गाए के ॥ जो हरि ते बे-मुख, सदा दुःख
 पायि है ॥ मानस जनम आमोल, बिअरथ
 गुआयि है ॥ गुर बिन लहे ना धीर, पीर बहु
 पायि है ॥ लहे अनादर सरब, ठऊर जहा जायि
 है ॥ जब गुर भये दियाल, सो चरनी लाया ॥
 सतगुर काटे बंधन, नाम जपाया ॥ साध संग
 प्रताप, सदा सुख पाइए ॥ संतन के प्रताप, नाम
 हरि ध्याइये ॥ संतन के प्रताप, पती प्रभ पाइए ॥
 मिलिया अटल सुहाग, वियोग गवाइए ॥ संगत
 तों आशीर्वाद, इस जोड़ीए ॥ कहि रविदास इन
 संग, सदा सुख लोड़ीए ॥

“मंगलाचार तीसरा”

रलि मिल सखीयां, मंगल गाया
 तीसरा ॥ सदा जपो हरि नाम, ना कबहू बीसरा ॥
 सतगुर के लग चरन, सदा हरि गाइए ॥ रिद्ध
 सिद्ध नौं निद्ध, सभी कछहू पाईए ॥ सतगुर के
 प्रसाद, अटल सुहाग है ॥ सतगुर भये दिआल,
 तां जागियो भाग है ॥ सतगुर दर्शन पायि, मिटे
 अघ सरब ही ॥ पाइयो शील निधान, मिटाए
 गरब ही ॥ रहिया ना संसा मूल, जिन्ही गुर
 पाया ॥ हिरदे भया प्रकाश, अज्ञान मिटाया ॥
 बिन हरि नाम ना सार, कछहू संसार है ॥ हरि
 का नाम ध्यावै, भवि निद्धि पार है ॥ मंगल महं
 सो मंगल, हरि हरि नाम है ॥ आठ पहिर मुख

जपो, ऐही शुभ काम है ॥ सच रविदास बतावे,
नाम ना छोड़ीए ॥ गुर चरनन में ध्यान, सदा मन
जोड़ीए ॥

“मंगलाचार चौथा”

मंगल चार आनन्द, सुखी मुख गाया ॥
कारज भया सुहेला, हरि हरि ध्याया ॥ धन और
पिर की, प्रीत बणी इक सार है ॥ घटा, छटा
सम मिली, मीन जिम वार है ॥ पिर संग पाए
आनन्द, ना दुःख की लेस है ॥ पती की आज्ञा
में, जो रहे हमेश है ॥ पती परमेश्वर करके,
जिन धन जाणिया ॥ सदा सुखी बहु नार, सरब
सुख माणिया ॥ जिन पर सतगुर दयाल, सुखी
बहु गाइए ॥ महिमा अपर अपार, ना कीमत

पाइए ॥ सतगुर के संग, तरे अवर वी केतड़े ॥
 कर के दृढ़ प्रीत, प्रेम करो जेतड़े ॥ कारज सब
 ही पूरे, सतगुर कर दीए ॥ पूरब पुन्र अनेक
 फल तिस अब लीए ॥ जन रविदास प्यास,
 सदा गुर नाम की ॥ हरि संग रहे प्रीत, ओट इक
 नाम की ॥

“अनमोल वचन”

(लड़की और लड़के के लिए)

प्रणवंते प्रण घड़ी, सोहाई जीओ ॥ प्रभ
 कृपा ते आण, मिलाई जीओ ॥ प्रण प्रणवंते
 प्रण, धारन की जीओ ॥ प्रण में एक नाम, सो
 ली जीओ ॥ पती घर पतनी, एक रसायण

जीओ ॥ मात बड़ी, छोटी सम, भैण जीओ ॥
 पती परमेश्वर, सम नहीं देव जीओ ॥ पूजन,
 सेवन सम, नहीं मेव जीओ ॥ पवन अगन,
 जल, जन हमराई जीओ ॥ सूरज, धरत, संगत,
 चंन अगवाई जीओ ॥ बहुत जनम विछड़त,
 वियोग जीओ ॥ सुरत शब्द वियोग, संजोग
 जीओ ॥ प्रण करते, प्रण तोड़, निभाओ
 जीओ ॥ लोक कुसंग फरक, नहीं पाओ
 जीओ ॥ जन रविदास निभउ संग, सोई
 जीओ ॥ गुर किरपा ते, प्राप्त होए जीओ ॥

आरती

धनासरी

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥

हरि के नाम बिनु झूठे सगल

पासारे ॥१॥ रहाउ ॥

नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा

नामु तेरा केसरो ले छिटकारे ॥

नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो

घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे ॥१॥

नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती ॥

नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ॥

नाम तेरे की जोति लगाई

भइओ उजिआरो भवन सगलारे ॥२॥

नामु तेरो तागा नामु फूल माला

भार अठारह सगल जूठारे ॥

तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ
 नामु तेरा तूही चवर ढोलारे ॥३॥
 दस अठा अठसठे चारे खाणी
 इहै बरतणि है सगल संसारे ॥
 कहै रविदास नामु तेरो आरती
 सतिनामु है हरि भोग तुहारे ॥४॥३॥

(पन्ना ६९४)

आरती

आरती कहाँ लैं कर जोवै ।
 सेवक दास अचंभो होवै ॥ टेक ॥
 बावन कंचन दीप धरावै ।
 जड़ बैराग रे दृष्टि न आवै ॥१॥
 कोटि भानु जा की सोभा रोमै ।
 कहा आरती अगनी होमै ॥२॥
 पाँच तत यह तिरगुनी माया ।

जो देखै सो सकल उपाया ॥३॥
 कहै रविदास देखा हम माहीं ।
 सकल जोति रोम सम नाहीं ॥४॥

आरती

संत उतारै आरती देव सिरोमनीये ॥
 उर अंतर तहाँ पैसि बिन रसना भणिये ॥ टेक ॥
 मनसा मंदिर माहिं धूप धुपइये ॥
 प्रेम प्रीति की माल राम चढ़इये ॥१॥
 चहु दिसि दिबला बालि जगमग है रहियो रे ॥
 जोति जोति सम जोति जोति मिल रहियो रे ॥२॥
 तन मन आतम बारि सदा हरि गइये ॥
 भनत जन रविदास तुम सरना आइये ॥३॥

आरती

गगन मंडल में आरती कीजै,
 नाद बिंद इके मेक करीजै ।

सुसमन इंदु अमृत कुंभ धरावै,
 मनसा माला फूल चढ़ावै ॥१॥
 घीव अखंडा सोहै बाती,
 त्रिकुटी जोत जलै दिन राती ।
 पवन साधना थाल सजीजै,
 तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥२॥
 रवि ससि हाथ गहौं तिंह माहीं,
 खिन दहिने खिन बामैं लाहीं ।
 सहस कंवल सिधासन राजै,
 अनहद झांजन नित ही बाजै ॥३॥
 इंह बिध आरती सांची सेवा,
 परम पुरिख अलख अभेवा ।
 कहै रविदास गुरदेव बतावै,
 ऐसी आरती पार लंघावै ॥४॥

आरती

आरती करत हरषै मन मेरो,
 आवत चित तुव रुप घनेरो ॥टेक॥
 अजर अमर अडोल अभेस,
 निरगुन रहित रुप नहिं रेखा ।
 चेतन सत चित घन आनन्दा,
 निरविकार तेज अमित अभेदा ॥१॥
 अनुभ अजन्मा सरबग्य अनन्ता,
 अभेद अदैश अबिगत सुछंदा ।
 नाम की बाती घीव अखंडा,
 इक ही जोत जलै ब्रहमंडा ॥२॥
 अनत बार तोहि धियान लगावा,
 मुनि जनि पै पार नहिं पावा ।
 मन बच क्रम रविदास धियावा,
 घंटा झालर मनहि बजावा ॥३॥

यावन असुत्तवाणी श्री गुरु रविदास जी



विद्यालय साहित्य
श्री गुरु रविदास जी

प्रकाशक :

श्री गुरु रविदास जी यावन असुत्तवाणी, श्री गुरु रविदास जी

१९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई. १९८० ई.

सिरीरागु बाणी रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा ॥

कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥१॥

जउपै हम न पाप करंता अहे अनंता ॥

पतित पावन नामु कैसे हुंता ॥१॥ रहाउ ॥

तुम जु नाइक आछहु अंतरजामी ॥

प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी ॥२॥

सरीरु आराधी मोकउ बीचारु देहु ॥

रविदास समदल समझावै कोऊ ॥३॥

(पन्ना ९३)

रागु गठड़ी रविदास जी के पदे गठड़ी गुआरेरी

१ओं सतिनामु करता पुरखु गुरप्रसादि ॥

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥

मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ॥१॥

राम गुसईआ जीअ के जीवना ॥

मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥१॥ रहाउ ॥

मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥

चरण न छाडउ सरीर कल जाई ॥२॥

कहु रविदास परउ तेरी सांभा ॥

वेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥३॥१॥

(पन्ना ३४५)

राग गडड़ी रविदास जी के पदे गडड़ी गुआरेरी

१ओं सतिनामु करता पुरखु गुरप्रसादि ॥

वेगमपुरा सहर को नाउ ॥ दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥

नां तसवीस खिराजु न मालु ॥ खडफु न खता न तरसु जवाल् ॥१॥

अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥ ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥ रहाउ ॥

काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥ दोम न सेम एक सो आही ॥

आबादानु सदा मसहूर ॥ ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२॥

तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥ महरम महल न को अटकावै ॥

कहि रविदास खलास चमारा ॥ जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३॥२॥

(पत्रा ३४५)

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

गडड़ी बेरागणि रविदास जीउ ॥

घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार ॥

रमईए सिउ एक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥१॥

को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१॥ रहाउ ॥

हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥

मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२॥

उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥

मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ॥३॥

जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु ॥

मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥४॥१॥

(पत्रा ३४५)

गडड़ी पूरबी रविदास जीउ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥
 अैसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरापारु न सुझ ॥१॥
 सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥१॥ रहाउ ॥
 मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥
 करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥२॥
 जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कश्नु अपार ॥
 प्रेम भगति कै कारणी कहु रविदास चमार ॥३॥१॥ (पत्रा ३४६)

गडड़ी वीरागणि रविदास जीउ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ।
 तीनी जुग तीनी दिडे कलि केवल नाम अधार ॥१॥
 पारु कैसे पाइबो रे ॥ मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥
 जा ते आवागवनु बिलाइ ॥१॥ रहाउ ॥
 बहु बिधि धरम निरूपीए करता दीसै सभ लोइ ॥
 कवन करम ते छूटीए जिह साथे सभ सिधि होइ ॥२॥
 करम अकरम बीचारीए संका सुनि बेद पुरान ॥
 संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ॥३॥
 बाहरु उदकि पखारीए घट भीतरि बिबिधि बिकार ।
 सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिठहार ॥४॥
 रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥
 पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार ॥५॥

परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट ।
 उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥६॥
 भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥
 सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक विचार ॥७॥
 अनिक जतन निग्रह कीऐ टारी न टरै भ्रम फास ॥
 प्रेम भगति नही ऊपजै ताते रविदास उदास ॥८॥१॥ (पन्ना ३४६)

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ॐ सतिगुर प्रसादि ॥

झिग मीन भिंग पतंग कुंचर एक दोख विनास ॥
 पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥१॥
 माधो अबिदिआ हित कीन ॥ विवेक दीप मलीन ॥१॥ रहाउ ॥
 त्रिगद जोनि अचेत संभव पुन पाप असोच ॥
 मानुखा अवतार दुलभ तिही संगति पोच ॥२॥
 जीअ जंत जहा जहा लगु करम के बसि जाइ ॥
 काल फास अबध लागे कछु न चलै उपाइ ॥३॥
 रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ॥
 भगत जन भै हरन परमानंद करहु निदान ॥४॥१॥ (पन्ना ४८६)

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ॐ सतिगुर प्रसादि ॥

संत तुझी तनु संगति प्रान ॥ सतिगुर गिआन जानै संत देवादेव ॥१॥
 संत ची संगति संत कथा रसु ॥ संत प्रेम माझी दीजै देवा देव ॥१॥ रहाउ ॥
 संत आचरण संत चो मारगु संत च ओल्हग ओल्हगणी ॥ २ ॥

अठर इक मागड भगति चिंतामणि ॥ जणी लखावहु असंत पापीसणि ॥३॥
रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु ॥ संत अनंतहि अंतरु नाही ॥४॥२॥

(पत्रा ४८६)

आसा बाणी श्री रविदास जीठ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा ॥

नीच रूख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा ॥१॥

माधउ सतिसंगति सरनि तुम्हारी ॥

हम अउगन तुम्ह उपकारी ॥१॥ रहाउ ॥

तुम मखतूल सुपेद सपीअल हम बापुरे जस कीरा ॥

सतसंगति मिलि रहीऐ माधउ जैसे मधुप मखीरा ॥२॥

जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा ॥

राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा ॥३॥ (पत्रा ४८६)

आसा बाणी श्री रविदास जीठ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु ॥

प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरो जनु ॥१॥

तुझहि चरन अरविंद भवन मनु ॥

पान करत पाइओ पाइओ रामईआ धनु ॥१॥ रहाउ ॥

संपति बिपति पटल माइआ धनु ॥

ता महि मगन होत न तेरो जनु ॥२॥

प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन ॥

कहि रविदास छूटिबो कवन गुन ॥३॥४॥

(पत्रा ४८६)

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ॥ हरि सिमस्त जन गए निसतरि तरे ॥१॥ रहाउ ॥

हरि के नाम कबीर उजागर ॥ जनम जनम के काटे कागर ॥१॥

निमत नामदेउ दूधु पीआइआ ॥ तउ जग जनम संकट नही आइआ ॥२॥

जन रविदास राम रंगि राता ॥ इउ गुर परसादि नरक नही जाता ॥३॥५॥

(पन्ना ४८७)

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

माटी को पुतरा कैसे नचतु है ॥

देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है ॥१॥ रहाउ ॥

जब कछु पावै तब गरबु करतु है ॥

माइआ गई तब रोवनु लगतु है ॥१॥

मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ॥

बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना ॥२॥

कहि रविदास बाजी जगु भाई ॥

बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई ॥३॥६॥

(पन्ना ४९७)

गूजरी श्री रविदास जी के पदे घरु ३ ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ ॥ फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ ॥१॥

माई गोबिंद पूजा कहा लै चरावउ ॥ अवरु न फूलु अनूपु न पावउ ॥१॥

रहाउ ॥

मैलागर बेहै है भुइअंगा ॥ बिखु अम्रितु बसहि इक संगा ॥२॥

धूप दीप नईबेदहि बासा ॥ कैसे पूज करहि तेरी दासा ॥३॥

तनु मनु अरपउ पूज चरावउ ॥ गुरपरसादि निरंजनु पावउ ॥४॥

पूजा अरचा आहि न तोरी ॥ कहि रविदास कवन गति मोरी ॥५॥१॥

(पन्ना ५२५)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मैं नाही ॥

अनल अगम जैसे लहरि मड़ओदधि जल केवल जल मांही ॥१॥

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ॥

जैसा मानीए होइ न तैसा ॥१॥ रहाउ ॥

नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी ॥

अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ॥ २ ॥

राज भुइअंग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ ॥

अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ ॥३॥

सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई ॥

कहि रविदास हाथ पै नैर सहजे होइ सु होई ॥४॥१॥ (पन्ना ६५७)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बांधे ॥

अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ॥१॥

माधवे जानत हहु जैसी तैसी ॥ अब कहा करहुगे ऐसी ॥१॥ रहाउ ॥

मीनु पकरि फांकिओ अरु काटिओ रांधि कीओ बहुबानी ॥

खंड खंड करि भोजनु कीनो तऊ न बिसरिओ पानी ॥२॥

आपन बापै नाही किसी को भावन को हरि राजा ॥
 मोह पटल सभु जगतु बिआपिओ भगत नही संतापा ॥३॥
 कहि रविदास भगति इक बाढी अब इह कासिउ कहीऐ ॥
 जा कारनि हम तुम आराधे सो दुखु अजहू सहीऐ ॥४॥२॥

(पत्रा ६५८)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

दुलभ जनमु पुन फल पाइओ विरथा जात अखिबेकै ॥
 राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखे ॥१॥
 न बीचारिओ राजा राम को रसु ॥
 जिह रस अनरस बीसरि जाही ॥१॥ रहाउ ॥
 जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ॥
 इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ॥२॥
 कहीअत आन अचरीअत अन कहु समझ न परे अपर माइआ ॥
 कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ ॥३॥३॥

(पत्रा ६५८)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके ॥
 चारि पदारथ असट दसा सिधि नवनिधि करतल ताके ॥१॥
 हरि हरि हरि न जपहि रसना ॥
 अवर सभ तिआगि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥
 नाना खिआन पुरान वेद बिधि चउतीस अखर मांही ॥
 बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥

सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बडै भागि लिव लागी ॥
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी ॥३॥४॥

(पन्ना ६५८)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥ जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥१॥
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि ॥
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ॥१॥ रहाउ ॥
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ॥ जउ तुम तीरथ तउ हम जाती ॥२॥
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ॥ तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ॥३॥
जह जह जाउ तहा तेरी सेवा ॥ तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा ॥४॥
तुमरे भजन कटहि जम फांसा ॥ भगति हेत गावै रविदासा ॥५॥५॥

(पन्ना ६५८)

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जल की भीति पवन का थंभा रक्त बुंद का गारा ॥
हाड मास नाड़ी को पिंजरु पंखी बसै बिचारा ॥१॥
प्रानी किआ मेरा किआ तेरा ॥ जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥
राखहु कंध उसारहु नीवां ॥ साढे तीन हाथ तेरी सीवां ॥२॥
बंके बाल पाग सिर डेरी ॥ इहु तनु होइगो भसम की ढेरी ॥३॥
ऊचे मंदर सुंदर नारी ॥ राम नाम विनु बाजी हारी ॥४॥
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा ॥
तुम सरनागति राजा रामचंद कहि रविदास चमारा ॥५॥६॥

(पन्ना ६५९)

राग सौराठी बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

चमरटा गांठि न जनई ॥ लोगु गठावै पनही ॥१॥ रहाउ ॥

आर नही जिह तोपउ ॥ नही रांबी ठाउ रोपउ ॥१॥

लोगु गंठि गंठि खरा बिगूचा ॥ हउ बिनु गांठे जाइ पहुचा ॥२॥

रविदास जपै राम नामा ॥ मोहि जम सिउ नाही कामा ॥३॥७॥

(पन्ना ६५९)

धनासरी भगत रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि अब पतीआरु किआ कीजै ॥

बचनी तोर मोर मनु मानै जन कउ पूरनु दीजै ॥१॥

हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने ॥ कारन कवन अबोल ॥ रहाउ ॥

बहुत जनम बिछुरे थे माधउ इहु जनमु तुम्हारे लेखे ।

कहि रविदास आस लगि जीवउ चिर भइओ दरसन देखे ॥२॥१॥

(पन्ना ६९४)

धनासरी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो स्त्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ ॥

मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ रसन अंगित राम नाम भाखउ ॥१॥

मेरी प्रीति गोविंद सिउ जिनि घटै ॥

मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै ॥२॥ रहाउ ॥

साध संगति बिना भाउ नही उपजै भाव बिनु भगति नही होई तेरी ॥

कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ पैज राखहु राजा राम मेरी ॥२॥२॥

(पन्ना ६९४)

धनारसी भगत रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥

हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे ॥१॥ रहाउ ॥

नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा नामु तेरा केसरो ले छिटकारे ॥

नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे ॥१॥

नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती ॥ नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ॥

नाम तेरे की जोति लगाई भइओ उजिआरो भवन सगलारे ॥२॥

नामु तेरो तागा नामु फूल माला भार अठारह सगल जूठारे ॥

तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोलारे ॥३॥

दस अठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे ॥

कहै रविदास नामु तेरो आरती सतिनामु है हरि भोग तुहारे ॥४॥३॥

(पत्रा ६१४)

जैतसरी घाणी भगता की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

नाथ कछूअ न जानउ ॥ मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ॥१॥ रहाउ ॥

तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी ॥ हम कहीअत कलिजुग के कामी ॥१॥

इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ ॥ पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥२॥

जत देखउ तत दुख की रासी ॥ अजौं न पत्याइ निगम भए साखी ॥३॥

गोतम नारि उमापति स्वामी ॥ सीसु धरनि सहस भग गांमी ॥४॥

इन दूतन खलु बधु करि मारिओ ॥ बडो निलाजु अजहू नही हारिओ ॥५॥

कहि रविदास कहा कैसे कीजै ॥ बिन रघुनाथ सरनि का की लीजै ॥६॥१॥

(पत्रा ७१०)

राग सुह्री बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सह की सार सुहागनि जानै ॥ तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै ॥
तनु मनु देइ न अंतरु राखै ॥ अवरा देखि न सुनै अभाखै ॥१॥
सो कत जानै पीर पराई ॥ जा कै अंतरि दरदु न पाई ॥१॥ रहाउ ॥
दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी ॥ जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी ॥
पुरसलात का पंथु दुहेला ॥ संगि न साथी गवनु इकेला ॥२॥
दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ ॥ बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ ॥
कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी ॥ जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी ॥३॥१॥
(पत्रा ७९३)

राग सुह्री बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जो दिन आवहि सो दिन जाही ॥ करना कूचु रहनु थिरु नाही ॥
संगु चलत है हम भी चलना ॥ दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना ॥१॥
किआ तू सोइआ जागु इआना ॥ तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥१॥ रहाउ ॥
जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै ॥ सभ घट भीतरि हाटु चलावै ॥
करि बंदिगी छाडि मै मेरा ॥ हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ॥२॥
जनमु सिरानो पंथु न सवारा ॥ सांझ परी दहदिस अंधिआरा ॥
कहि रविदास निदानि दिवाने ॥ चेतसि नाही दुनीआ फनखाने ॥३॥२॥
(पत्रा ७९३)

राग सुह्री बाणी श्री रविदास जीउ की ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

ऊचे मंदर साल रसोई ॥ एक घरी फुनि रहनु न होई ॥१॥
इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी ॥ जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी ॥१॥
रहाउ ॥

भाई बंध कुटंब सहेरा ॥ ओड़ भी लागे काहु सवेरा ॥२॥
 घर की नारि उरहि तन लागी ॥ उह तउ भूतु भूतु करि भागी ॥३॥
 कहि रविदास सभै जगु लूटिआ ॥ हम तउ एक रामु कहि छूटिआ ॥४॥३॥
 (पन्ना ७९४)

बिलावल बाणी रविदास भगत की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी ॥
 असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ॥१॥
 तू जानत मै किछु नही भवखंडन राम ॥
 सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥१॥ रहाउ ॥
 जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु ॥
 ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ॥२॥
 कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै ॥
 जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥३॥१॥
 (पन्ना ८५८)

बिलावल बाणी रविदास भगत की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

जिह कुल साधु बैसनी होइ ॥
 बरन अबरन रंकु नही ईसुरु बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ ॥१॥ रहाउ ॥
 ब्रह्मन बैस सूद अरु खत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
 होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥१॥
 धनि सु गाउ धनि सो ठाउ धनि पुनीत कुटंब सभ लोइ ॥
 जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ॥२॥
 पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबर अउरु न कोइ ॥
 जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥३॥२॥
 (पन्ना ८५८)

रागु गोंड बाणी रविदास जीठ की घरु २

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मुकंद मुकंद जपहु संसार ॥ बिनु मुकंद तनु होइ अउहार ॥
 सोई मुकंदु मुकति का दाता ॥ सोई मुकंदु हमरा पित माता ॥१॥
 जीवत मुकंदे मरत मुकंदे ॥ ता के सेवक कउ सदा अनंदे ॥१॥ रहाउ ॥
 मुकंद मुकंद हमारे प्रानं ॥ जपि मुकंद भसतकि नीसानं ॥
 सेव मुकंद करै बैरागी ॥ सोई मुकंदु दुरबल धनु लाधी ॥२॥
 एक मुकंदु करै उपकारु ॥ हमरा कहा करै संसारु ॥
 मेटी जाति हुए दरबारि ॥ तुही मुकंद जोग जुगतारि ॥३॥
 उपजिओ गिआनु हुआ परगास ॥ करि किरपा लीने कीट दास ॥
 कहु रविदास अब त्रिसना चूकी ॥ जपि मुकंद सेवा ताहु की ॥४॥१॥

(पत्रा ८७५)

रागु गोंड बाणी रविदास जीठ की घरु २

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जे ओहु अठसठि तीरथ न्हावै ॥ जे ओहु दुआदस सिला पूजावै ॥
 जे ओहु कूप तटा देवावै ॥ करै निंद सभ बिरथा जावै ॥१॥
 साध का निंदकु कैसे तैर ॥ सरपर जानहु नरक ही परै ॥१॥ रहाउ ॥
 जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति ॥ अरपै नारि सीगार समेति ॥
 सगली सिंप्रिति स्रवनी सुनै ॥ करै निंद कवनै नही गुनै ॥२॥
 जे ओहु अनिक प्रसाद करावै ॥ भूमि दान सोभा मंडपि पावै ॥
 अपना बिगारि बिरांना सांढे ॥ करै निंद बहु जोनी हांढे ॥३॥
 निंदा कहा करहु संसारा ॥ निंदक का परगटि पाहारा ॥
 निंदकु सोधि साधि बीचारिआ ॥ कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ ॥४॥२॥

(पत्रा ८७५)

रामकली बाणी रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ॥

लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥

देव संसै गांठि न छूटै ॥

काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटै ॥१॥ रहाउ ॥

हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥

गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥

कहु रविदास सभै नही समझसि भूल परे जैसे बडरे ॥

मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥

(पत्रा १७३)

रागु मारु बाणी रविदास जीउ की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

अंसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥

गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ॥१॥ रहाउ ॥

जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं डरै ॥

नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहु ते न डरै ॥१॥

नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥

कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥२॥१॥

(पत्रा ११०६)

रागु मारु बाणी रविदास जीउ की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

सुखसागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जाके रे ॥

चारि पदारथ असट महा सिधि नवनिधि करतल ता कै ॥१॥

हरि हरि हरि न जपसि रसना ॥ अवर सभ छाडि बचन रचना ॥१॥ रहाउ ॥
 नाना खिआन पुरान वेद विधि चउतीस अछर माही ॥
 बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥२॥
 सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी ।
 कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी ॥३॥२॥

(पत्रा ११०६)

राग केदारा खाणी रविदास जीउ की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरे नहि ॥
 चरनारविंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ॥१॥
 रे चित चेति चेत अचेत ॥ काहे न बालमीकहि देख ॥
 किसु जाति ते कहि पदहि अमरिओ राम भगति बिसेख ॥१॥ रहाउ ॥
 सुआन सत्रु अजातु सभ ते किस्न लावै हेतु ॥
 लोगु बपुरा किआ सराहै तीनि लोक प्रवेश ॥२॥
 अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु गए हरि कै पास ॥
 ऐसे दुर्मति निसतरे तू किउ न तरहि रविदास ॥३॥१॥

(पत्रा ११२४)

धरउ खाणी रविदास जीउ की घर २

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

बिनु देखे उपजै नही आसा ॥ जो दीसै सो होइ बिनासा ॥
 बरन सहित जो जायै नामु ॥ सो जोगी केवल निहकामु ॥१॥
 परचै रामु रवै जउ कोई ॥ पारसु परसै दुबिधा न होई ॥१॥ रहाउ ॥
 सो मुनि मन की दुबिधा खाइ ॥ बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ ॥

मन का सुभाउ सभु कोई करै ॥ करता होइ सु अनभै रहै ॥२॥
 फल कारन फूली बनराइ ॥ फलु लागा तब फूलु बिलाइ ॥
 गिआनै कारन करम अभिआसु ॥ गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥३॥
 धित कारन दधि मथै सइआन ॥ जीवत मुकत सदा निरबान ॥
 कहि रविदास परम बैराग ॥ रिदै रामु की न जपसि अभाग ॥४॥१॥

(पन्ना ११६७)

बसंतु बाणी रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

तुझहि सुझंता कछु नाहि ॥ पहिरावा देखे ऊंभि जाहि ॥
 गरबवती का नाही ठाउ ॥ तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥१॥
 तू कांइ गरबहि ब्यावली ॥
 जैसे भादउ खूंबराजु तू तिस ते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥
 जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु ॥ तनि सुगंध बूँढे प्रदेसु ॥
 अप तन का जो करे बीचारु ॥ तिसु नही जमकंकरु करे खुआरु ॥२॥
 पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु ॥ ठाकुरु लेखा मगनहारु ॥
 फेड़े का दुखु सहै जीउ ॥ पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥३॥
 साधू की जउ लेहि ओट ॥ तैरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥
 कहि रविदास जो जपै नामु ॥ तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥६॥

(पन्ना ११९६)

मलार बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥
 रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥१॥ रहाउ ॥

सुरसरी सलल कित वारुनी रे संत जन करत नहीं पानं ॥
 सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥१॥
 तर तारि अपवित्र कर मानीअँ रे जैसे कागरा करत बीचारं ॥
 भगति भागउतु लिखीअँ तिह ऊपरे पूजीअँ करि नमसकारं ॥२॥
 मेरी जाति कुटबांढला डोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पास ॥
 अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तैर नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥३॥१॥
 (पत्रा १२९३)

मलार बाणी भगत रविदास जी की ॥

१ओ सतिगुरु प्रसादि ॥

हरि जपत तेऊ जना पदम कबलासपति तास सम तुलि नही आन कोऊ ॥
 एक ही एक अनेक होइ विसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ ॥ रहाउ ॥
 जा कै भागवतु लेखीअँ अवरु नही पेखीअँ तास की जाति आछोष छीपा ॥
 बिआस महि लेखीऐ सनक महि पेखीऐ नाम की नामना सपत दीपा ॥१॥
 जा कै इंदि बकरीदि कुल गऊ रे बधु करहि मानीअहि सेख सहीद पीरा ॥
 जा कै बाप बैसी करी पूत असी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा ॥२॥
 जा के कुटंब के ढेढ सभ डोर ढोवंत फिरहि अजहु बानारसी आस पास ॥
 आचार सहित बिप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासान दासा ॥३॥१॥
 (पत्रा १२९३)

मलार बाणी रविदास जी की ॥

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते ॥
 साधसंगति पाई परम गते ॥ रहाउ ॥
 मैले कपरे कहा लउ धोवउ ॥
 आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ॥१॥

जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ ॥

झूठे बनजि उठि ही गई हाटिओ ॥२॥

कहु रविदास भइओ जब लेखो ॥

जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ ॥३॥१॥३॥

(पत्रा १२९३)

॥ सलोक ॥

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस ॥

ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास ॥

(पत्रा १३७७)

गुरु रविदास बाणी

(१) राग रामकली

परचै राम रमै जो कोई । पारस परसे दुबिधा न होइ ॥ टेक ॥
 जौ दीसै सो सकल बिनास । अनदीठे नाहीं बिसवास ॥१॥
 बरन सहित कहैं जो राम । सो भगता केवल निहकाम ॥२॥
 फल कारनि फूलै बनराइ । उपजै फल तब पुहुप बिलाइ ॥३॥
 ज्ञानहि कारन करम कराई । उपजै ज्ञान तब करम नसाई ॥४॥
 बट कै बीज जैसा आकार । पसरयौ तीनि लोक पासार ॥५॥
 जहां का उपज्या तहां बिलाइ । सहज सुनि मे रह्यो लुकाइ ॥६॥
 जो मन बिंदै सोई बिंद । अमावस में ज्यूं दीसै चंद ॥७॥
 जल में जैसे तूबा तिरै । परचै पिंड जीवै नहिं मरै ॥८॥
 सो मुनि कौन जो मन को खाइ । बिन द्वारि त्रिलोक समाइ ॥९॥
 मन की महिमा सब कोउ कहै । पंडित सो जो अनभै रहै ॥१०॥
 कहै रविदास यहु परम बैराग । राम नाम किन जपहु सभाग ॥११॥
 छित कारनि दधि मथै सयांन । जीवन मुकति सदा निरबान ॥१२॥

(२)

अब मैं हारयो रे भाई ।
 थकित भयों सब हाल चाल तैं, लोकन बेद बड़ाई ॥ टेक ॥
 थकित भयो गायन अरु नाचन, थाकी सेवा पूजा ॥
 काम क्रोध तै देह थकित भइ, कहीं कहां लीं दूजा ॥१॥
 राम जन होऊं न भगत कहाऊं, चरन पखालूं न देवा ॥
 जोई जोई करीं उलटि मोहिं बांधे ता तैं निकट न भेवा ॥२॥

पहले ग्यांन का किया चाँदना, पीछे दिया बुझाई ॥
 सुन सहज मैं दोऊ त्यागे राम कहूँ न खुदाई ॥३॥
 दूर बसे घट कर्म सकल अरु, दूरउ कीन्हे सेऊ ॥
 ग्यांन ध्यांन दोऊ दूर कीन्हे, दूरिउ छांडे तेऊ ॥४॥
 पन्चौ थकित भये जहँ तहँ, जहाँ तहाँ थिति पाई ॥
 जा कारनि मैं दौर्यो फिरतौ, सो अब घट में आई ॥५॥
 पन्चौ मेरी सखी सहेली, तिन निधि दई दिखाई ॥
 अब मन फूलि भयो जग महियां, उलटि आप में समाई ॥६॥
 चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो, अब मो पै चली न जाई ॥
 साँई सहज मिल्यौ सोई सनमुख, कहै 'रविदास' बड़ाई ॥७॥

(३)

गाइ गाइ अब का कहि गांऊ ।
 गावनहार को निकट बताऊं ॥ टेक ॥
 जब लगि है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा ।
 जब मन मिल्यौ आस नहिं तन की, तब को गावनहारा ॥१॥
 जब लगि नदी न समुंद समावै, तब लगि बड़े हंकारा ।
 जब मन मिल्यौ राम सागर सों, तब यहु मिटी पुकारा ॥२॥
 जब लग भगति मुकति की आसा, परम तत्त सुनि गावै ।
 जंह जंह आस धरत है यहु मन, तंह तंह कछु न पावै ॥३॥
 छाई आस निरास परम पद, तब सुख सति कर होई ।
 कह 'रविदास' जासों और कहत है, परम तत्त है सोई ॥४॥

(४)

राम जन होऊं न भगत कहाऊं, सेवा करूं न दासा ।
 गुनी जोग जग्य कछू न जानूं, तातैं रहूँ उदासा ॥ टेक ॥
 भगत हुआ तो चढ़े बड़ाई, जोग करूँ जग मानै ॥
 गुनी हुआ तो गुनी गुनी कहै, गुनी आप को तानै ॥१॥
 ना मैं ममता मोह मद महिया, ऐ सब जाहि बिलाई ॥
 दोजख भिस्त दोऊ सम कर जानुं-दोउ ते तरक है भाई ॥२॥
 मैं तैं तैं मैं देखि सकल जग, मैं तैं मूल गंवाई ।
 जब मन समिता एक एक मन, तबहीं एक है भाई ॥३॥
 क्रिस्न करीम राम हरि राघव, जब लग एक न पेखा ।
 वेद कतेब कुरान पुराननि, सहज एक नहीं देखा ॥४॥
 जोई जोई करि पूजिए सोई सोई कांची, सहज भाव सत होई ।
 कह 'रविदास' मैं ताहि को पूजूँ, जाके गांव ठांव नहिं कोई ॥५॥

(५)

अब मोरी बूझी रे भाई, तातैं चढ़ी लोक बड़ाई ॥ टेक ॥
 अति अहंकार उर में सत-रज, ता में रह्यो उरझाई ॥
 क्रम बसि परयी कछू न सूझी, स्वामी नाम भुलाई ॥१॥
 हम मानौ गुनी जोग सुनि जुगता, हम महापुरुष रे भाई ॥
 हम मानौ सूर सकल विध त्यागी, ये ममता नहीं मिटाई ॥२॥
 हम मानौ अखिल शुन्य मन सोध्यो, सब चेतन सुधि पाई ।
 ग्यांन ध्यांन सबही हम जान्यो, बूझी कोन सों जाई ॥३॥

हम मानीं परम प्रेम रस जानो, नीं विधि भगति कराई ॥
 स्वांग देखि सबही जग डहक्यो, फिरि आपन पौर बधाई ॥४॥
 सांग यहु सांच न जानू, लोगनि इहैं भरमाई ॥
 स्यंघ रुप मेघी जब पहरी, बोली तब सुधि पाई ॥५॥
 ऐसी भगति हमारी सन्तो, प्रभुता इहैं बड़ाई ॥
 आपन अनिन और नहिं मानत, तातैं मूल गंवाई ॥६॥
 भणी 'रविदास' उदास ताही तै, अब कछु मो पै करियो न जाई ॥
 आपा खोया भगति होत है, तब रहै अन्तरि उरझाई ॥७॥

(६)

भाई रे! भ्रम भगति सूं जानि ।
 जी लो साँच नही पहिचान ॥ टेक ॥
 भ्रम नाचण भ्रम गाइण, भ्रम जप तप दानि ।
 भ्रम सेवा भ्रम पूजा, भ्रम सो पहिचानि ॥१॥
 भ्रम घट कर्म सकल संहिता, भ्रम ग्रिह वन जानि ॥
 भ्रम करि करि करम कीये, भ्रम की यह बानि ॥२॥
 भ्रम इंद्री निग्रह कीया, भ्रम गुफा में बास ॥
 भ्रम ती लों जानिये, करि सुन्न की आस ॥३॥
 भ्रम सुध सरीर जीं लीं, भ्रम नांव बिनांव ॥
 भ्रम भणि 'रविदास' ती लीं, जीं लीं चाहि ठांव ॥४॥

(७)

ज्यों तुम कारन केसवे अंतर लिव लागी ।
 एक अनुपम अनभवै किमि होइ बिभागी ॥ टेक ॥

इक अभिमानी चात्रिगा, बिचरत जग माहीं ।
 जदपि जल पूरण मही, कहुं वा रुचि नाहीं ॥१॥
 जैसे कामी देखि कामिनी, हिरदै सूल उपजाई ॥
 कोटि बेद बिधि ऊचरै, वाकी बिधा न जाई ॥२॥
 जो जेहि चाहि सो मिलै, आरति गति होई ।
 कह 'रविदास' यह गोपि नाहीं, जानै सब कोई ॥३॥

(८)

आयीं हो आयीं देव तुम सरना ।
 जानि कृपा कीजे अपनी जाना ॥ टेक ॥
 त्रिविध जोनि बास, जम की अगम बास,
 तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिरयी ॥
 ममता अंह विषै मद मातौ,
 यह सुख कबहुं न दूतर तिरयो ॥१॥
 तुम्हारे नांव बिसास छाड़ी आन आस,
 संसार धरम मेरे मन न धीजै ॥
 रविदास दास की सेवा मानहु देवाधिदेव,
 पतित पावन नाम परगट कीजै ॥२॥

(९)

भाई रे राम कहां मोहि बतारो ॥
 सत राम ता के निकट न आवो ॥ टेक ॥
 राम कहत सब जगत भुलाना ॥ सो यहु राम न होई ॥
 करम अकरम करुनामैं केसी ॥ करता नांव जुं कोई ॥१॥
 जा रामहि सबै जग जानै ॥ भ्रम भूलो रे भाई ॥
 आप आप तैं कोई न जानै ॥ कहै कौन सो जाई ॥२॥

सतित न लोभ परसि जीय तनमन ॥ गुन परसत नहिं जाई ॥
 अलख नांव जाको ठीर न कतहूँ ॥ क्यूं न कह्यौ समुझाई ॥३॥
 भणी 'रविदास' उदास ताहि ते ॥ करता को हैं भाई ॥
 केवल करता एक सही करि ॥ सति राम तिहिं ठाई ॥४॥

(१०)

ऐसो कछु अनुभौ कहन न आवै ॥
 साहिव मिलै तो को बिलगावै ॥ टेक ॥
 सब में हरि है हरि में सब है, हरि अपनो जिन जाना ॥
 साखी नहीं और कोई दूसर, जाननहार सयाना ॥१॥
 बाजीगर सों राचि रहीऐ, बाजी का मरम न जाना ॥
 बाजी झूठ साँच बाजीगर, जाना मन पतियाना ॥२॥
 मन थिर होइ तो कोई न सृझै, जानै जाननहारा ॥
 कहै 'रविदास' विमल विवेक सुख, सहज सरूप संभारा ॥३॥

(११)

पंडित! अखिल खिलै नहीं, का कहि गाउँ, कोई न कहै समुझाई ॥
 अबरन वरन रूप नहीं जाकै, सो कहाँ ली जाई समाई ॥ टेक ॥
 चंद सूर नहीं, रात दिवस नहीं, धरनि अकास न भाई ॥
 करम अकरम नहीं, सुभ असुभ नहीं, का कहि देहु बड़ाई ॥१॥
 सीत न उस्न बाढ नहीं सरवत, काम कुटिल नहीं होई ॥
 जोग न भोग रोग नहीं जाकै, कहाँ नांव सत् सोई ॥२॥
 निरंजन निराकार निरलेपी, निरबिकार निरासी ॥
 काम कुटिल ताही कहि गावै, हर हर आवै हांसी ॥३॥

गगन धूर धूप नहिं जाकै, पवन पूर नहीं पानी ॥
 गुन बिगुन कहियत नहीं जाकै, कहीं तुम बात सयांनी ॥४॥
 याही सों तुम जोग कहत हौ, जब लग आस की पासि ॥
 छूटै तबही जब मिलै एक ही, भणै 'रविदास' उदासी ॥५॥

(१२)

नरहरि ! चंचल है मति मोरी, कैसे भगति करूँ मैं तोरी ॥ टेक ॥
 तूँ मोहि देखै मैं तोहि देखूँ, प्रीति परस्पर होई ॥१॥
 तूँ मोहि देखै मैं तोहि न देखूँ, इह मति सब बुधि खोई ॥२॥
 सब घट अंतर रमसि निरंतर, हों देखत हूँ नहीं जाना ॥
 गुन सब तोर मोर सब औगुन, कित उपकार न माना ॥३॥
 मैं तो तोरि मोरी असमझि सों, कैसे करि निस्तारा ॥
 कहै 'रविदास' क्रिस्न करुनामै, जै जै जगत अधारा ॥४॥

राग रामकली (१३)

देव, संसै गांठि न छूटै ।
 काम-क्रोध माया मद मतसर, इन पंचहु मिलि लूटै ॥ टेक ॥
 हम बड़ कबि कुलीन हम पंडित, हम जोगी सन्यासी ।
 ग्यांनी गुनी सूर हम दाते, इह बुधि कबहु न नासी ॥१॥
 पढै गुनै कछु समझि न परहीं, जौ ली अनभी भाउ न दरसै ॥
 लोहा कंचनु हिरनु होइ कैसे, जउ पारसहि न परसै ॥२॥
 कहु 'रविदास' सभै नहीं समझसि, भूल परे जैसे बउरे ।
 मोहि अधारु नाम नराइन, जीवन प्राण-धन मोरे ॥३॥

(१४)

जब राम नाम कहि गावैगा ॥

रंरकार रहत सबहिन में, अंतरि मेल मिलावैगा ॥ टेक ॥

लोहा कंचन समकर देखै, भेद अभेद समावैगा ॥

जे सुख होवै पारस के परसे, सो सुख वा को आवैगा ॥१॥

गुर परसाद भई अनभै मति, विष अम्रित सम ध्यावैगा ॥२॥

कहै 'रविदास' मेदि आपा पर, तब वा ठौरहि पावैगा ॥३॥

(१५)

संतो ! अनिन भगति यहु नाहीं ॥

जब लग सत-रज-तम तीनो गुन, व्यापत है या मांही ॥ टेक ॥

सोई आन अंतर करै हरि सों, अपमारग को आनै ।

काम क्रोध मद लोभ मोह की, पल पल पूजा ठानै ॥१॥

सक्ति सनेह इष्ट अंग लावै, अस्थलि अस्थलि खेलै ।

जे कछु मिलै आन अखर सों, सुत दारा सिर मेलै ॥२॥

हरिजन हरि विनु और न जानै, तजै आन तनु त्यागी ।

कहै 'रविदास' सोई जन निर्मल, निसिदिन निज अनुरागी ॥३॥

(१६)

भक्ति औसी सुनहु रे भाई !

आई भक्ति तउ गई बड़ाई ॥ टेक ॥

कहा भयी नाचै अरु गायै, कहा भयो तप कीन्है ।

कहा भयी जो चरन पखारे, जी लों परम तत्त न चीन्है ॥१॥

कहा भयो जे मूंड मूंडायौ, बहु तीरथ ब्रत कीन्है ।

स्वामी दास भक्त और सेवक, काहुं परम तत्व नही चीन्है ॥२॥

कहै 'रविदास' तेरी भक्ति दूरि है, भाग बड़ै सो पावै ।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपलक ह्वै चुणि खावै ॥३॥

(१७)

अब कछु मरम बिचारा, हो हरि ।
आदि अंत औसान राम बिन, कोई न करै निस्तारा हो हरि ॥ टेक ॥
जल तैं पंक, पंक तैं अमृत, जल जलहि सुध होइ जैसे ।
ऐसे भरम करम जीअ बंध्यो, छूटै तुम बिन कैसे हो हरि ॥१॥
जप तप बिधी निषेध करुनांमैं पाप पुन्य यहु माया ।
ऐसै मोहित मन गति बिमुख धन, जनम जनम डहकाया हो हरि ॥२॥
ताड़न छेदन त्राषन खेदन, बहु बिधि कर लैहि उपाई ।
लोनखड़ी संजोग बिना जैसे, कनक कलंक न जाई हो हरि ॥३॥
कहै 'रविदास' उदास ताही तैं, कहा उपाय जब कीजै ।
भौ बूझत भैभीत भगत जन, करि अवलंबन दीजै हो हरि ॥४॥

(१८)

नरहरि प्रगटसि ना हो प्रगटसि न हो, दीना नाथ दयाल ॥ टेक ॥
जनमत ही तैं ही बिगरान, हौं कुछ बूझत बहुरि सयांन ॥१॥
परिवार बिमुख मोहि लागि, कछु समुझि परत नहिं जानि ॥२॥
यह भौ बिदेस कलिकाल, हम आन परयो जमजाल ॥३॥
कबहुक तोर भरोस, जो मैं न कहूँ तो मोर दोस ॥४॥
अस कहियत हुं मैं अजान, अहो प्रभु तुम सरवग्य सयांन ॥५॥
सुत सेवक सदा असोच, ठाकुर पितहिं सब सोच ॥६॥

रविदास बिनवै कर जोरि । अहो स्वामी तुम मोहिं न छोरि ॥७॥
सुती पुरबला अकरम मोर । बलि जाऊँ करी जिन कोर ॥८॥

(१९)

ज्यों तुम कारन केसवै, लालच जिठ लागा ।
निकटि नाथ प्रापति नहीं, मति-मंद अभागा ॥ टेक ॥
सागर सलिल सरोदिका, जल थल अधिकाई ॥
स्वाति बून्द की आस है, पिठ प्यास न जाई ॥१॥
जो रे सनेही चाहिए, चितवत हों दूरी ।
पंगुल फल न पहुँचई, कछु साध न पूरी ॥२॥
कहै 'रविदास' अकथ कथा, उपनिषद सुनीजै ।
जस तूँ तस तूँ ही, कस उपमा दीजै ॥

(२०)

गोबिंदे भौजल व्याधि अपारा,
तार्ति कछु सृझत वार न पारा ॥ टेक ॥
अगम ग्रेह दूर दूरन्तर, बोलि भरोसौ दीजै ।
तेरी भगति परोहन सन्त अरोहन, मोहिं चढ़ाई किन लीजै ॥१॥
लोह की नाव पषानन बोझी, सुकिरित भगति बिहीना ।
लोभ तरंग मोह भयौ गाली, मन मीन भयो जन लीना ॥२॥
तुम दीनानाथ दयाल दमोदर, कौनैं हेत बिलम्ब कीजै ।
'रविदास' दास सन्त चरनन ही, मोहिं अवलंबन दीजै ॥३॥

(२१)

कहाँ सूते मुग्ध नर काल कै मँझि मुख,
तजि अब सत राम, च्यंतत अनेक सुख ॥ टेक ॥

अबिगत उधरंत कोप असहज धीरज लोप, मदन भुवंग नहिं मंत्र जंता ।
 बिषम पावक झार ताहि वार न पार, लोभ की तपनी ग्यांन हंता ॥१॥
 बिषम संसार भीलहर व्याकुल हवै, मोह गुन विषै सनबंध भूता ।
 टेरि गुर गारुड़ी मंत्र स्त्रवना दीयो, जागि रे राम कहि काइ सूता ॥२॥
 सकल सिम्रित जिती संत मति कही तिती, पाइ नहीं पत्रग मति परम बेता ।
 ब्रह्म रिषि नारद सिंभ सनकादिक, राम रमि रमत गये पार तेता ॥३॥
 जजनि जाजनि जाय अटनी तीरथ दान, ओषधी रसिक कंदमूल देता ।
 नागदबनि जलजरी राम सुमिरन बरी, भनत 'रविदास' चेतनि चेता ॥४॥

राग गौड़ी (२२)

राम गुसईयाँ जीअ के जीवना, मोहि न बिसारहु मैं जनु तेरा ॥ टेक ॥
 मेरी संगति सोच पोच दिनु राती, मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ।
 मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई, चरन न छांडउँ, सरीर कल जाई ।
 कहु 'रविदास' परउँ तेरी साभा, बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥३॥

(२३)

तेरा जन काहे को बोलै ।
 बोलि बोलि अपनी भगति क्यों खोलै ॥ टेक ॥
 बोलत बोलत बढ़े बियाधी बोल अबोलै जाई ।
 बोलै बोल अबोल को पकरै, बोल बोल को खाई ॥१॥
 बोलै ग्यांन अरु बोल ध्यांन, बोलै वेद बड़ाई ।
 उर में धरि धरि जब ही बोलै, तब ही मूल गंवाई ॥२॥
 बोलि बोलि औरहि समझावै, तब लगि समझि नहीं रे भाई ।
 बोलि बोलि समझि जब बूझी तब काल सहित सब खाई ॥३॥

बोलै गुरु अरु बोलै चैला बोल बोल परतिति जाई ।
कहै 'रविदास' थकित भयो जब, तब ही परम निधि पाई ॥४॥

(२४)

अैसी भगति न होई, रे भाई !
राम नाम बिन जो कछु करीऐ, सो सब भ्रम कहाई ॥ टेक ॥
भगति न रस दान, भगति न कथै ग्यांन,
भगति न बन में गुफा खुदाई ॥१॥
भगति न अैसी हाँसी, भगति न आसा पासी,
भगति न कुलकानि गंवाई ॥२॥
भगति न इन्द्री बांधै, भगति न जोग साधै ।
भगति न अहार घटाई, ऐ सब करम कहाई ॥३॥
भगति न निद्रा साधै, भगति न बैराग बांधै ।
भगति न ऐ सब बेद बड़ाई ॥४॥
भगति न मुंड मुड़ाये, भगति न माला दिखाये ।
भगति न चरन धोवाये, ये सब गुनी जन गाई ॥५॥
भगति न तौलीं जानी, जौ लीं आप को आप बखानी ।
जोई जोई करै, सोइ करम बड़ाई ॥६॥
आपा गयौ तब भगति पाई, ऐसी भगति हँ भाई ।
राम मिल्यो आपनो गुन खोयो, रिद्धि सिद्धि सबै जो गंवाई ॥७॥
कहै 'रविदास' छूटी सब आस, तब हरि ताही के पास ।
आत्मा थिर भई जबही, तबही निधि पाई ॥८॥

(२५)

है सब आतम स्वयं प्रकास साँचो ।
निरंतर निराहार कलपित ऐ पाँचौ ॥ टेक ॥

आदि मध्य औसान एक रस, तार तूब नहीं ताई ।
 थावर जंगम कीट पतंगा, पूरि रह्यो हरि राई ॥२॥
 सर्वेस्वर सरवंगी सरबगति, करता हरता सोई ।
 सिव न असिव साध अरु सेवग उभै भाव नहीं होई ॥२॥
 धरम अधरम मोछि नहिं बंधन, जरा मरन भव नासा ।
 त्रिस्टि अत्रिस्टि गेय अरु ग्याता, एक मेक है रविदासा ॥३॥

(२६)

कोऊ सुमरन देखौ, ऐ सब उपली चोभा ।
 जा कै जैसी सुमिरन, ताकौ तैसी सोभा ॥ टेक ॥
 हमरी ही सीष सुनै, सौं ही मांडे रे ।
 थोरे ही इतराई चलै, पतिसाहि छांडे रे ॥
 अति ही आतुर है, कांचा ही तोलै रे ।
 ऊंडे जल पैसे नहीं, पांड राघो रे ॥२॥
 थोरे ही थोरे मूसियत, परायो धना ।
 कहै रविदास, सुनहु सन्त जनां ॥३॥

(२७)

मरम कैसे पाइबो रे पंडित कौन कहै समुझाई ॥
 जाते मेरो आवा गमन बिलाई ॥ टेक ॥
 बहु बिधि धरम निरुपिये करता दीसै सब कोई ।
 जेहि धरम भ्रम छुटि है सो धरम न चीन्हें कोई ॥१॥
 करम अकरम बिचारिये सुनि सुनि बेद पुरान ।
 संसा सदा हिरदे बसै हरि बिन कौन हरे अभिमान ॥२॥

बाहरि ऊदक पखारिये घट भीतर बिबिध बिकार ।
 सुची कौन बिधि होइगे जैसे कुंजर बिधि ब्यौहार ॥३॥
 सतजुग सत त्रेता जगी द्वापर पूजा अचार ।
 तिहुं जुग तीनो दृष्टी कलि केवल नाम आधार ॥४॥
 रबि प्रकास रजनी जथा गत दीसै संसार ।
 पारस मलि ताँबौ छिपा कनक होत नहिं बार ॥५॥
 धन जोबन हरि न मिलै दुख दारुन अधिक अपार ।
 एकै एक बियोगिया ता कु जानै सब संसार ॥६॥
 अनेक जतन कर टरियो टारी न टरै भ्रम पास ।
 प्रेम भगति नहिं ऊपजै ताते जन रविदास उदास ॥७॥

(२८)

पहलै पहरै रैणि दै बणिजारिया, तैं जनम लीया संसार वे ।
 सेवा चूकौ राम की बणिजारिया, तेरी बालक बुद्धि गंवार वे ॥१॥
 बालक बुद्धि गंवार न चेत्यो, भूला माया जाल वे ।
 कहा होइ पीछे पछिताये, जल पहिले न बांधी पाल वे ॥२॥
 बीस बरस का भया अयाना, थामि न सक्या भार वे ।
 जन रविदास कहै बणिजारिया, जनम लिया संसार वे ॥३॥
 दूजे पहरे रैन दे बणिजारिया तूँ निरखत चाल्यो छांह वे ।
 हरि न दमोदर ध्याइया बणिजारिया, तै लेइ ना सक्या नांव वे ॥४॥
 नांव न लीया औगुन कीया, इस जोबन कै ताण वे ।
 अपनी पराई गिनी न काई, मंदे करम कमाण वे ॥५॥
 साहिब लेखा लेसी, तूँ भरि देसी, भीर परै तुझ तांह वे ।
 जन 'रविदास' कहै बणिजारिया, तूँ निरखत चाल्या छांह वे ॥६॥

तीजै पहरे रैन दे बणिजारिया, तेरे दिलैर पड़े परान वे ।
 काया रु वानी का करै बणिजारिया, घट भीतर बसै कुजाण वे ॥७॥
 एक बसै कुजाण काया गढ़ भीतरि, पहला जनम गंवाय वे ।
 अबकी बेर न सुकिरित कीयो, बहुरि न यह गढ़ पाय वे ॥८॥
 कंपी देह कायागढ़ छीना, फिरि लागा पछिताण वे ।
 जन रविदास कहै बणिजारिया, तेरे दिलरे पड़े परान वे ॥९॥
 चौथे पहरे रैण दे बणिजारिया, तेरी कंपन लागी देह वे ।
 साहिव लेखा मांगिया बणिजारिया, तूं छाड़ि पुरानी थेह वे ॥१०॥
 छाड़ि पुरानी जिह अयाना, बालदि लदि सबेरिया वे ।
 जम के आए बांधि चलाये, बारी पूगी तेरियां वे ॥११॥
 पंथि चले अकेला, होय दुहेला, कास्यीं करै सनेह वे ।
 जन 'रविदास' कहै बणिजारिया, तेरी कंपन लगी देह वे ॥१२॥

(२९)

देवा हम ना पाप करंता, अही अनंता,
 पतितपावन तेरो बिड़द क्युं हुंता ॥ टेक ॥
 तोहिं मोहिं मोहिं तोहिं अंतरु ऐसा ।
 कनक कटक जल तरंग जैसा ॥१॥
 तुम्ह जु नाइक अंतरजामी, ठाकुर थैं जन जाणीजै जन थैं स्वामी ॥२॥
 तुम सबहिन मंह सब तुम मांहि,
 'रविदास' दास असमझिसी कहै कहाँई ॥३॥

(३०)

या रामा एक तूं दाना, तेरा आदि भेष ना ।
 तूं सुलतान सुलताना, बंदा सकिसता अजाना ॥ टेक ॥
 मैं बेदियानत बदनजर, दरमंद बरखुरदार ।

बेअदब बदबख्त बीरां, बेअकल बदकार ॥१॥
 मैं गुनहगार गुमराह गाफिल, कमदिलां करतार ।
 तूं दरकदर दरियाव दिल, मैं हिरसिया हुसियार ॥२॥
 यह तन हस्त खस्त खराब, खातिर अंदेसा बिसियार ।
 'रविदास' दासहि बोलि साहिब, देहु अब दीदार ॥३॥

(३१)

अब हम खूब वतन घर पाया, ऊहां खैर सदा मेरे भाया ॥ टेक ॥
 बेगमपुरा सहर का नाउं, दुखु अंदौहु नहीं तिहि ठाऊं ।
 ना तसवीस खिराजु ना मालु, खौफु न खता न तरसु जवालु ॥१॥
 काइमु दाइमु सदा पातिसाही, दोम न सेम एक सो आही ।
 आवादानु सदा मसहूर, ऊहां गनी बसहिं मापूर ॥२॥
 तिउं तिउं सैल करहिं जिउ भावै, मरहम महिल न कौ अटकावै ।
 कहि 'रविदास' खलास चमारा, जो हम सहरी सो मीतु हमारा ॥३॥

राग आसावरी (३२)

केसवे, विकट माया तोर, तातै विकल गति मोर ॥ टेक ॥
 सुविष डंसन कराल अहि-मुख, ग्रसति सुद्रिढ़ सु मेष ।
 निरधि मापी भषत ब्याकुल, लोभ काल न देख ॥१॥
 इंद्रीयादिक दुख दारुन, असंख्यादिक पाप ।
 तोहि भजत रघुनाथ अंतरि, ताहि त्रास न ताप ॥२॥
 प्रतंग्या प्रतिपाल चहुं जुगी, भगति पुरवन काम ।
 आस मोहिं भरोस तोर, 'रविदास' जै जै राम ॥३॥

(३३)

रामहि पूजा कहा चढ़ाऊँ, फल अरु फूल अनुपम न पाऊँ ॥ टेक ॥
 धनहर दूध जो बच्छरू जुठारूओ । पुहुप भंवर जल मीन विगारेओ ॥१॥
 मलयागिर बेढ़ियो भुवंगा । विष अमृत दोऊ एकै संग ।
 धुप दीप नईवेदहि बासा, कइसै पूज करहि तेरी दासा ॥२॥
 मनही पूजा मन ही धूप । मन ही सेऊँ सहज सरूप ॥३॥
 पूजा अरचा न जानूँ तेरी । कहै 'रविदास' कवन गति मेरी ॥

(३४)

बरजि हो बरजि बीदुले, माया जग खाया ।
 महाप्रबल सब ही बस कीये,
 सुर नर मुनि भरमाया ॥ टेक ॥
 बालक बिरध तरुन अति सुन्दर, नाना भेष बनावै ।
 जोगी जती तपी सन्यासी, पंडित रहन न पावै ॥१॥
 बाजीगर की बाजी कारनि, सब को कौतिग आवै ।
 जो देखै सो भूलि रहै, वाका चेला मरम जो पावै ॥२॥
 खंड ब्रह्मण्ड लोक सब जीतै, इहि विधि तेज जनावै ।
 स्युंभू का चित चोर लियी है, वाकै पाछे लागा धावै ॥३॥
 इन बातन सुखचैन मरियत है, सब को रहै उझारी ।
 नेक दृष्टि किन राखो कैसो, मेटो बिपति हमारी ॥४॥
 कहै 'रविदास' उदास भयो मन, भाजि कहाँ अब जईऐ ।
 इत उत तुम गोविन्द गुसाई, तुमही मांहि समईऐ ॥५॥

(३५)

तुझहिं चरन अरबिंद भवन मनु, पांन करत पायों पायो रमइया धनु ॥ टेक ॥
 संपति विपति पटल माया धन, ता मंहि मगन न होत तेरो जन ॥१॥
 कहा भयो जे गत तन छिन छिन । प्रेम जाइ ती डरपै तेरो निज जन ॥२॥
 प्रेम रज लै राखो रिदै धरि, कहै रविदास छूटिबो कवन परि ॥३॥

(३६)

बंदे जानि साहिब गनी,
 समझि वेद कतेब बोलै, काबे में क्या मनी ॥ टेक ॥
 ज्वानी दुनी जमाल सूरति, देखिए थिरि नाहि वे ।
 दम छः सै सहस इक्कीस हरदिन, खजाने थैं जांहि वे ॥१॥
 मनी भारि गरब गाफिल, बेमिहिर बेपीर वे ।
 दरी खाने परत चोबा, होइ नहीं तकसीर वे ॥२॥
 स्याही सपेदी तुरंगी नाना रंग बिसाल वे ।
 नापैद तैं पैदा किया पैमाल करत न बार वे ॥३॥
 कछु गाँठि खरची मिहर तोसा, खैर खूबी हाथि वे ।
 धर्णी का फुरमान आया, तब कीया चालै साथ वे ॥४॥
 तजि बदिजवां बेनजरि कमदिलां, करि खसम की कानि वे ।
 'रविदास' की अरदास सुनि, कछु हक हलाल पिछान वे ॥५॥

(३७)

सु कछु बिचार्यी, तार्थें मेरो मन थिरु है रह्यो ॥
 हरि रंग लागी तार्थें, मेरो बरन पलटि भयो ॥ टेक ॥

धनि सो पंथी जिन पंथ चलावा, अगम गवन में गमि दिखलावा ॥१॥
 अवरन वरन कथैं जिनि कोई, घट घट व्यापि रह्यो हरि सोई ॥२॥
 जिहि पद सुरनर प्रेम पियासा। सो पद रम रह्यो 'रविदासा' ॥३॥

(३८)

माधो ! संगति सरनि तुमारी, जगजीवन किस्न मुरारी ॥ टेक ॥
 तुम मखतूल गुलाब चतुरभुज, मैं बपुरो जस कीरा ।
 पीवत डाल फूल रस अम्रित, सहज भई मति हीरा ॥१॥
 तुम्ह चंदन हौं एरंड बापुरी, निकटि तुम्हारी बासा ।
 नीच त्रिष तैं ऊंच भये हम, तेरी वास सुबासा ॥२॥
 जाति भी ओछी जनम भी ओछा, ओछा कसब हमारा ।
 हम सरनागति राम राई की, कहै 'रविदास' चमारा ॥३॥

(३९)

माधो अविद्या हित कीन्ह, ता थैं मैं तोर नाम न लीन्ह ॥ टेक ॥
 मृग मीन भिङ्ग पतंग कुंजर, एक दोष बिनास ।
 पंच व्याधि असाधि यह तन, कवन ता की आस ॥१॥
 जल थल जीव जंत जहाँ तहाँ लों, करम पासा जाई ।
 मोह पासि असाध बाधा, करिये कौन उपाई ॥२॥
 त्रिगद जोनि अचेत संभव, पुनि पुन पाप असोच ।
 मानुखा औतार दुरलभ तिहि संकट पोच ॥३॥
 'रविदास' दास उदास तजु भ्रमु, तपन तपु गुरु ग्यांन ।
 भगत जन भै-हरन, परमानन्द करहु ध्यांन ॥४॥

(४०)

भाई रे, सहज बन्दी सोई, बिन सहज सिध न होई ।
 ल्यौ लीन मन तब जानिये, जब कीट भूझी होई ॥ टेक ॥
 आपा पर चीन्हें नहीं रे, और को उपदेस ।
 कहां ते तुम आयो रे भाई, जाहूंगे कित देस ॥१॥
 कहीये तो कहीये का कहि कहीये, कहां न को पतियाइ ।
 'रविदास' दास अजान है करि, रह्यो सहज समाइ ॥२॥

(४१)

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अबधू होई मतिवाला ॥ टेक ॥
 कहै कलाली प्याला देऊं, पीवन हारे का सिर लेऊं ॥१॥
 ऐरी कलाली तैं क्या किया, सिर के साटै प्याला दिया ॥
 सिर के साटै महंगा भारी, पीवैगा अपना सिर डारी ॥२॥
 चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥
 सहज सुन में भाठी सरवै, पीवै रविदास गुरमुखि ब्रवै ॥३॥

(४२)

ऐसी मेरी जाति बिख्यात चमारें, हिरदै राम गोब्यंद गुण सारें ॥ टेक ॥
 सुरसरी जल लीया कित बारुनी रे, जिसै संत जन करत नहीं पानें ।
 सुरा अपवित्र निति गंगाजल मानीऐ, सुरसरी मिलत नहिं होत आनं ॥१॥
 तर तारि अपवित्र कर मानिये, जैसे कागरा करत विचारें ।
 भगत भगवंत जब ऊपर लेखिये, तब पूजीये करि नमस्कारें ॥२॥
 अनेक अधम जिव नाम सुनि ऊधरे, पतित पावन भये परसि सारें ।
 भणत रविदास रंरकार गुण गावंत, संत साधू भये सहजि पारें ॥३॥

(४३)

पार गया चाहि सब कोई, दुहुं उर वार पार नहि होई ॥ टेक ॥
 पार कहै उरवार सो पारा, बिन पद परचे भ्रमै गंवारा ॥१॥
 पार परमपद मांझि मुरारी, ता में आप रमै बनवारी ॥२॥
 पूरन ब्रह्म बसै सब ठाई । कह रविदास मिले सुख सांई ॥३॥

(४४)

सत गुर हमहु लखाई बाट ।
 जनम पाछले पाप नसाने, मिटिगौ सबु संताप ॥ टेक ॥
 बाहरि खोजत जनम गंवाए, उनमनि ध्यान रहे घट आप ।
 सबद अनाहद बाजत घट मंह, अगम ग्यांन भौ गुर परताप ॥१॥
 धन दारा मंह रहियो मगन नित, गुन्यौ न मिचु कौ चाप ॥
 कहि रविदास गुरु राह दिखावड़, त्रिषा बुझि मिटि मन संताप ॥२॥

(४५)

बापुरी सत रविदास कहै रे ।
 ग्यांन बिचार चरन चित लावै, हरि कै सरनि रहै रे ॥ टेक ॥
 पाती तोडै पूजि रचावै, तारन तिरन कहै रे ।
 मूरति माहिं बसै परमेसर, ती पानी माहिं तिरै रे ॥१॥
 त्रिविधि संसार कवन बिधि तिरवौ, जे दिढ़ नाव न गहै रे ।
 नाम छांड़िजे डांडे वैसे, ती दूना दुःख सहे रे ॥२॥
 गुरु को सबद अरु सुरति कुदाली, खोदत कोठ लहै रे ।
 राम काहु के बांटै न आयो, सो नेकु लबहै रे ॥३॥
 झूठी माया जग डहकाया, तौ तीनि ताप दहै रे ।
 कहै 'रविदास' राम जप रसना, माया काहु के संग न रहे रे ॥४॥

(४५)

इहै अंदेस रामराई रैन दिन मोरे, निस बासर गुन गाऊं तोरे ॥ टेक ॥
 तुम च्यंतत मेरी च्यंता ही ना जांही, तुम च्यंतामनि होहु कि नांही ॥
 भगति हेतु तुम कहा कहा नहीं कीन्हा, हमरी बेर भए बल हीना ॥
 कहै 'रविदास' दास अपराधी, जौ तुम द्रवी मैं भगति न साधी ॥

(४६)

बीरी करिलैं राम सनेहा ।
 संग सहेली ब्याह चली सब, छांडि मैहरि रा गोहा ॥ टेक ॥
 खेलि खिलार बइस सब बीती, मन चित भइ न पिउ परतीती ।
 मैं मैं जौ लौं गरब बीरानी, तौ लों पियरा मनु नहि आनी ॥१॥
 आपा मेटि मैं-मेरी खोही, गरब तियागी अरपिहि निज देही ।
 पिउ कौ नारी उहि मन आई, जिहि अभि अंतर अवरु नहि काई ॥२॥
 जौ लौं पिउरा मन नहि आई, का सोरह स्यंगार बनाई ।
 सोइ सती रविदास बखानी, तन मन स्युं पिउ रंग समानी ॥३॥

(४६)

राम राये का कहिये यह ऐसी । जन की जानत हो जैसी तैसी ॥ टेक ॥
 मीन फकरि काटयो अरु फाटियो बाँटि कियो बहु धानी ।
 खंड खंड करि भोजन कीन्हो तहऊं न बिसरयो पानी ॥१॥
 तै हमें बाँधे मोहि फाँसी से हम तो को प्रेम जेवरिया बाँधे ।
 अपने छुटन का जतन करत हौं हम छूटे तोको आराधे ॥२॥
 कह 'रविदास' भगति इक बाढ़ी अब का की डर डरिये ।
 जा डर को हम तुम को सेवों से दुख अजहूँ मरिये ॥३॥

(४७)

रे मन मांछला संसार समुदे, तूँ चित्र बिचित्र बिचारि रे ।
 जिहिं गाले गलियांहीं मरीये, सो संग दूरि निवारि रे ॥ टेक ॥
 जम है डिगणि डोरि है कंकण, पर तिय गालौ जाणि रे ।
 है रस लुबुध रमे यौं मूरिख, मन पछितावे न्यांणि रे ॥१॥
 पाप गुन्यौ छै धरम निबौली, तूँ देखि देखि फल चाखि रे ।
 परतिरिया संग भलौ जौं होवै, तो राणौ रावन देखि रे ॥२॥
 कहै 'रविदास' रतन फल कारनि, गोबिंद कै गुन गाइ रे ।
 कांचौ कुंभ भरयो जल जैसें, दिन दिन घटतौ जाइ रे ॥३॥

(४८)

रे चित ! चेति अचेति काहे, बाल्मीक को देख रे ।
 जाति थैं कोउ पार न पहुच्यां, राम भगति बिसेख रे ॥ टेक ॥
 खट क्रम सहित जु बिप्र होते, हरि भगति चित दिढ़ नाहि रे ।
 हरि कथा स्यौं हेत नाहीं, सुपच तूलै ताहि रे ॥१॥
 स्वान सत्रु अजाति सब थैं, अंतरि लावै हेतु रे ।
 लोक वाकी कहां जानै, तीनि लोक पवित्त रे ॥२॥
 अजामिल गज गनिका तारी, काटी कुंजर की पास रे ।
 ऐसे दुरमत मुक्ति कीऐ, तौ क्युं न तिरै 'रविदास' रे ॥३॥

(४९)

रथ कौ चतुर चलावण हारौ ।
 खिंण हांकै खिंण उभौ रांखै, नहीं आन कौ सारो ॥ टेक ॥
 जब रथू रहै सारथी थाकै, तब को रथहि चलावै ।
 नाद बिंद सबै ही थाकै, मन मंगल नहिं गावै ॥१॥

पांच तत्त कौ यहु रथ साज्यौ, अरधे-उरध निवासा ।
चरन कमल ल्यो लाइ रह्यो है, गुन गावै 'रविदासा' ॥२॥

(५०)

जी तुम तोरो राम मैं नहिं तोरीं ।
तुम सों तोरि कवनि सौ जोरीं ॥ टेक ॥
तीरथ बरत न करीं अंदेसा, तुम्हरे चरन कंवल का भरोसा ॥
जहां जहां जाऊं तुम्हरी पूजा, तुम सा देव अवर नहिं दूजा ॥१॥
मैं अपनी मन हरि सौ जोर्यौ, हरि सौं जोरि सबनि सौ तोर्यौ ॥
सब परहरि तुम्हरी ही आसा, मन क्रम बचन कहै 'रविदासा' ॥४॥

(५१)

किहि बिधि अब सुमिरी रे, अति दुलभ दीन दयाल ॥
मैं महा विषई अधिक आतुर, कामना की झाल ॥ टेक ॥
कहा डिब बाहर कीये, हरि कनक कसीटी हार ॥
बाहर भीतर साखि तूं, हौं कीयौ सु सौं अंधियार ॥१॥
कहा भयौ बहु पाखंड कीयै, हरि हिरदै सुपिने न जान ॥
ज्युं दारा बिभिचारिनी, मुखि पतिबरता जीय आन ॥२॥
मैं हिरदै हारि बैद्यो हरि, मोपै सरयौ न एका काज ॥
भाव भगति 'रविदास' दे, प्रतिपाल करि मोहिं आज ॥३॥

(५२)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी ॥ टेक ॥
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी, जाकी अंग अंग बास समानी ॥१॥
प्रभुजी तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती, जा की जोति जरै दिन राती ॥३॥

प्रभु जी तुम मोती हम धागा, जैसे सोनहि मिलत सुहागा ॥४॥

प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै 'रविदासा' ॥५॥

(५३)

जनम अमोल अकारथ जार रे ।

सुमरण करौ कभउं नरहरि कौ, ज्यौ ली नहि छुटत गात रे ॥टेक॥

ऐ सबु संगी दिवस चार के, धन दारा सुत पित मात रे ।

बिछुरे मिलन बहुरि नह द्वै हो, ज्यौ तरवर छिन पात रे ॥१॥

तौ कैसे हरि नाम लहुगे, गर अटकै कफ-पित घात रे ।

काल कराल भ्रमत फंदक ज्युं, करत अचानी घात रे ॥२॥

चेतै नहि अलपु मति मूरखि, छांडि अम्रित बिषु खात रे ।

कहि 'रविदास' आस तज औरि, गोपालह रंग राच रे ॥३॥

(५४)

माथी, का कहीऐ भ्रम ऐसा, तुम कहीयत होहु न जैसा ॥ टेक ॥

त्रिपति ऐक सेज सुख सूता, सुपिनै भया भिखारी ॥

अछित राज बहोत दुख पायी, सौ गति भई हमारी ॥१॥

जब हम हुते तब तुम नाहीं, अब तुम ही हम नाहीं ॥

सलिता गवन कीऔ महोदधि, जल केवल जल मांही ॥२॥

रजु भुवंग रजनी परगासा अस कछु भरम जनावा ।

समुझि परी मोहिं कनक अलंकित ज्युं, अब कछु कहत न आवा ॥३॥

करता ऐक भाई जग भुगता, सब घट सब विधि सोई ॥

कहै 'रविदास' भगति इक उपजी, सहजै होई सु होई ॥४॥

(५५)

माधी, भ्रम कैसें न बिलाई । तार्थे दुती दरसे आई ॥ टेक ॥
 कनक कुटक सुत पट जुदा, रजु भुअंग भ्रम जैसा ॥
 जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्युं, ब्रह्म जीव दुति अैसा ॥१॥
 बिमल ऐक रस उपजै न बिनसै, उदय अस्त दोऊ नांही ॥
 विगता विगत घटै नाहीं कबहुं, वसत बसै सब मांही ॥२॥
 निहचल निराकार अज अनूपम, निर्भे गति गोविन्दा ॥
 अगम अगोचर अछर अतरक, निरगुन अति आनंदा ॥३॥
 सदा अतीत ग्यांन घन बरजित, निरबीकार अविनासी ॥
 कहै 'रविदास' सहज सुनि सति, जीवन मुक्ति निधि कासी ॥४॥

(५६)

मन मोरे ! सति सरूप बिचारं ॥
 आदि अंति अनंत परमपद, संसा सकल निवारं ॥ टेक ॥
 जस हरि कहिये तस हरि नाहिं, है अस जस कछु तैसा ॥
 जानत जानत जानि रह्यो मन, मरम कहो निज कैसा ॥१॥
 कहियत आन अनुभवत आन, रस मिल्यी अवरु न होई ॥
 वाहर भीतरि प्रगट गुप्त, घट घट प्रति बिगर न कोई ॥२॥
 आदि हुं ऐक अंता फुनि सोई, मधि उपाधि सु कैसे ॥
 अहै येक पै भ्रम सुं दूजी, कनक अंलकित जैसे ॥३॥
 कहै 'रविदास' प्रकास परम पद, का जप तप ब्रत पूजा ॥
 एोक अनेक, अनेक येक हरि, कहीं कवन विधि दूजा ॥४॥

(५७)

थोथो जिनि सोई पछोरो रे कोई, पछोरे जा में निज कन होई ॥ टेक ॥
 थोथी काया थोथी माया, थोथा हरि बिन जनम गंवाया ॥
 थोथा पंडित थोथी बानी, थोथी हरि बिन सब कहानी ॥
 थोथा मंदिर भोग बिलासा, थोथी आन देव की आसा ॥
 साचा सुमिरन नांव बिसासा, मन बच कर्म कहै 'रविदासा' ॥

(५८)

माधौ ! मुहि इकु सहारौ तोरा ॥ टेक ॥
 तुम्हहि मात पिता प्रभ मेरो, हौं मसकीन अति भोरा ।
 तुम जउ तजौ कवन मोहि राखे, सहिहै कौनु निहोरा ॥१॥
 बाहाडंबर हौं कबहुं न जान्यौ, तुम चरनन चित मोरा ।
 अगुन स्वगुन दौ समकरि आन्यौ, चहुं दिस दरसन तोरा ॥२॥
 पारस मनि मुहि रतु नहिं, जग जंजार न थोरा ।
 कहि 'रविदास' तजि सभ त्रिस्ना, इकु राम चरन चित मोरा ॥३॥

राग सोरठि (५९)

रे मन ! चेत मीचु दिन आया, तौ जग जाल न भया पराया ॥ टेक ॥
 कानि सुनै न नजरि दीसै, जीहा थिरु न रहाई ।
 मुण्ड रु तन थर थर कम्पई, अंतहु बिरियां पहुंती आई ॥१॥
 केसी सेतह पिकु भये सबु, तन मनु बल बिलमाया ।
 मध्यांन गयी तुरा चलि आई, अजहुं जग रह्यौ भरमाया ॥२॥
 पानी गयो पलु छीजै काया, यहु तन जरा जराना ।
 पांची थाके जरा जरु सानै, तौ रामह मरमु न जाना ॥३॥

हंस पंखेरु चंचलु भाई, समुझि पेखि मन मांहि ।

प्रति पलु मीचु गरासै देही, फुनि रविदास चेतहु नांहि ॥४॥

(६०) राग भैरो

ऐसा ध्यांन धरीं बनवारी, मन पवन दिढ़ि सुखमन नारी ॥ टेक ॥

सोइ जप जपीं जु बहुरि न जपना, सोइ तप तपीं जो बहुरि न तपना ।

सोइ गुर करीं जो बहुरि न करना, ऐसी मरीं जो बहुरि न मरना ॥१॥

उलटी गंग जमुनि महिं ल्यावीं, धिन ही जल भग्जन हैं आवीं ।

लोचन भरि भरि ब्यंब निहारीं, जोति बिचारि न अवर बिचारीं ॥२॥

प्यंड पर जीव जिस घरि जाता, सबद अतीत अनाहद राता ।

जा परि क्रिपा सोइ भल जानै, गुंगी साकर कहा बखानै ॥३॥

सुन मण्डल मैं तेरा बासा, तार्थ जाव मैं रही उदासा ।

कहै 'रविदास' निरंजन ध्याओं, जिस घरि जायीं हों बहुरि न आओं ॥४॥

(६१)

अविगति नाथ निरंजन देवा, मैं का जानू तुम्हरी सेवा ॥टेक॥

बांधूं न बंधन छाकं न छाया, तुम्ह ही सेकं निरंजन राया ।

चरन पताल सीस असमाना, सो ठाकुर कैसे संपुटि समांनां ॥१॥

सिव सनकादिक अंत न पाया, खोजत ब्रह्म जनम गंवाया ॥३॥

तोरीं न पाती पूजीं न देवा, सहज समाधि करीं हरि सेवा ॥४॥

नख प्रसेद जाके सुरसरी धारा, रोमावली अठारह भारा ॥५॥

चारो वेद जाके सुम्रित स्वांसा, भगति हेत गावै 'रविदासा' ॥६॥

(६२)

भेष लीयौ पै भेद न जान्यो, अमृत लेइ विषै सो मान्यो ॥ टेक ॥
 काम क्रोध मैं जनम गंवायो, साधु संगति मिलि राम न गायो ॥१॥
 तिलक दियो पै तपनि न जाई, माला पहिर घनेरी लाई ॥२॥
 कहै 'रविदास' मरम जो पाऊँ । देव निरंजन सत करि ध्याऊँ ॥३॥

(६३)

गुरु सभु रहसि अगमहि जानै ।
 ढूँढै कोउ षट सारत्रन मंह, किधुं कोउ वेद वषानै ॥ टेक ॥
 सांस उसांस चढ़ावै बहु विध, बैठहिं सुनि समाधी ।
 फांद्यौ कानु भभूत तनु लाई, अनिक भरमत वैरागी ॥१॥
 तीरथ बरत करई बहुतेरे, कथा बस्त बहु सानै ।
 कहि 'रविदास' मिल्यौ गुर पूरौ, जिहि अंतर हरि मिलानै ॥२॥

रागु बिलावल (६४)

का तूं सोवै जागि दिवाना, झूठा जीवन सांचि करि जाना ॥ टेक ॥
 जो दिन आवै सो दुख मैं जाहीं, कीजै कूच रह्यो सचु नाहीं ॥
 संगी चल्यौ है हम भी चलना, दूर गवन सिर ऊपर मरना ॥२॥
 जो कछु बोया लुनिये सोई, ता में फेर फार नहि होई ॥
 छाड़िअ कूर भजौ हरि चरना, ताको मिटै जनम अरु मरना ॥३॥
 जिनि जीव दिया सो रिजक उमगावै घट घट भीतरि रहट चलावै ।
 करि बंदिगी छांड़ि मैं मेरा, हिरदै करीम संभारि सबेरा ॥
 आगे पंथ खरा है झीना, खांडै धार जैसा है पैना ॥
 तिस उपरि मारग है तेरा, पंथी पंथ संवार सबेरा ॥४॥

क्या तैं खरचा क्या तैं खाया, चलि दरिहाल दिवान बुलाया ॥
 साहिब तो पै लेखा लेसी, भीरि पर्यां भरि भरि देसी ॥५॥
 जनम सिराना किया पसारा, सांझि परी चहुं दिसि अंधियारा ॥
 कहै 'रविदास' नादानि दिवाना, अजहूँ न चेतै दुनी फंद खाना ॥६॥

(६५)

खालिक सिकस्ता मैं तेरा, दे दीदार उमेदगार बेकरार, जीउ मेरा ।।टेक॥
 अबलि आखिर इलह आदिम, मौज फरिस्ता बन्दा ।
 जिसकी पनह पीर पैगम्बर, मैं गरीब क्या गंदा ॥१॥
 तू हाजरा हजूरि जोग इक, अवर नहीं दूजा ।
 जिसके इसक आसरा नाहीं, क्या निमाज क्या पूजा ॥२॥
 नालीदोज हनोज बेबखत, कमि खिदमतिगार तुम्हारा ।
 दरमाँदा दरि ज्वाब न पावै, कहै 'रविदास' बिचारा ॥३॥

(६६)

जो मोहिं बेदनि कासनि आखीं, हरि बिन जीवन कैसे करि राखीं ।।टेक॥
 जिव तरसै इक दंग बसेरा, करहु संभाल तुम सिरजन मेरा ॥
 बिरह तपै तन अधिक जरावै, नींद न आवै भोज न भावै ॥१॥
 सखी सहेली गरब गहेली, पीउ की बात न सुनहु सहेली ॥
 मैं रे दुहागनि अधिकर जानी, गयीं सो जोबन साध न मानी ॥२॥
 तू दाना सांई साहिब मेरा, खिजमतिगार बंदा मैं तेरा ॥
 कहै 'रविदास' अंदेसा येही, बिनु दरसन क्यों जिवहि सनेही ॥३॥

(६७)

ता थैं पतित नहीं कौ पावन, हरि तज आन न ध्याया रे ॥
 हम अपूजि पूजि भयैं हरि थैं, नाम अनूपम गाया रे ॥ टेक ॥

अस्तादस व्याकरन बखानैं, तीन काल षट जीता रे ॥
 प्रेम भगति अंतर गति नाहीं, तार्थें धांनुक नींका रे ॥१॥
 तार्थें भलो स्वान को सत्रु, हरि चरना चित लाया रे ॥
 मुआ मुक्त बैकुंठह बासा, जीवत इहां जस पाया रे ॥२॥
 हम अपराधी नीच घर जनमे, कुटुम्ब लोक करै हाँसी रे ॥
 कह 'रविदास' राम जपु रसना, काटै जनम की पासि रे ॥३॥

(६८)

सो कहा जानै राम पीर पराई, जाकी दिल मंह दरद न आई ॥ टेक ॥
 दुखी दुहागिनी दोई पख हीनी, नेह निरति करि सेव न कीनी ॥
 स्याम प्रेम का पंथ दुहेला, चलन अकेला ता कोई संग न हैला ॥१॥
 सुख की सार सुहागिनि जानै, तन मन देइ अंतर नहिं आनै ॥
 आन सु नांव और नहिं भाखै, राम रसायन रसना चाखै ॥२॥
 खालिक ती दरमंद जु आया, बहोत उमेद जबाब न पाया ॥
 कहै 'रविदास' कवन गति मेरी, सेवा बन्दगी न जानीं राम तेरी ॥३॥

राग टोड़ी (६९)

पावन जस माधो तोरा, तुम्ह दारन अधमोचन मोरा ॥ टेक ॥
 कीरति तेरी पाप बिनासे, लोक वेद यों गावै ।
 जीं हम पाप करत नहिं भूधर, ती तूँ कहा नसावै ॥१॥
 जब लगि अंगि पंक नहिं परसै, ती जल कहा पखालै ।
 मन मलीन विषया रस लंपट, ती हरि नाम संभालै ॥२॥
 जो हम विमल हृदय चित अंतरि, दोष कवन परधरि ही ।
 कहै 'रविदास' प्रभु तुम्ह दयाल ही, अबंध मुक्ति का करिही ॥३॥

राग गौड़-गोंड (७०)

आज दिवस लेकं बलिहारा,
मेरे ग्रिह आया राजा राम जी का प्यारा ॥ टेक ॥
आंगन बगड़ भुवन भयो पावन, हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥१॥
करौ डंडौत अरु चरन पखारौं, तन मन धन संतन परि वारौं ॥२॥
कथा कहैं अरु अरथ बिचारैं, आप तैं औरनि को तारैं ॥३॥
कहै 'रदिवास' मिलैं निज दास, जनम जनम कै काटै पास ॥४॥

(७१)

अैसे जानि जपौं रे जीव, जपिल्यौ राम न भरमौ जीव ॥ टेक ॥
गनिका थी किस करमा जोग, पर पुरसन सो रमती भोग ॥१॥
निसि बासर दुस्करम कमाई, राम कहत बैकुंठे जाई ॥२॥
नामदेव किह जाति कै ओछ, जाको जस गाईऐ त्रिलोक ॥३॥
भगति हेत भगता के चले, अंकमाल ले बीठल मिले ॥४॥
कोटि जग्य जो कोउ करै, राम नाम बिन तऊ न निसतारै ॥५॥
निरगुन की गुन देखी आई, देही सहित कवीर सिधाई ॥६॥
मोरी कुचिल जाति कुचिलां में बास, भगत हेत हरिचरन निवास ॥७॥
चारिठ बेद किया खंडौति, जन रविदास करै दंडौति ॥८॥

राग सारंग (७२)

जग में वेद वैद मानीजै,
इन मंहि अवरु अगम कछु औरि, कहौ कवन परि कीजै ॥ टेक ॥
भौजल व्याधि असाधि प्रबल अति, परम पंथ न गहीजै ॥१॥
पढ़ै सुनै कछु समुझि न परई, अनभै पदु न लहीजै ॥२॥

चखि बिहुन कतार चलतु है, तिनहूं अंश भुज दीजै ॥३॥

कहै 'रविदास' बमेक तत्त बिनु, सब मिलि गरत परीजै ॥४॥

(७३)

तुम्ह करहु क्रिपा मुहि साई ॥ टेक ॥

स्वांस-स्वांस तुझ नाम संभारउ, तुम्हहि भेंटि ममु मन हरसाई ।

तुम्हु दयाल क्रिपाल करुणानिध तुम्हहि दीनबंध रघुराई ॥१॥

तुम्हारी सरन रहौ निसवासर, भरमत फिरीं न हौं हरि राई ।

तुम्हरी अनुकम्प मान मदु छूटै, राम रसाइन अम्रितु पाई ॥२॥

ऐसो बधु जाचिहुं करुनामैं, तुझ चरन तजि कितहु न जाई ।

चरण-सरण 'रविदास' रावरी, अपनो जान लेहु उर लाई ॥३॥

(७४)

चल मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ ॥ टेक ॥

गुरु की साटि ज्ञान का अच्छर, बिसरै तो सहज समाधि लगाऊँ ॥१॥

प्रेम पाटी सुरति लेखनि करिहौं, ररा ममा लिखि आंक दिखाऊँ ॥२॥

येहि विधि मुक्त भये सनकादिक, रिदै बिदारि प्रकास दिखाऊँ ॥३॥

कागद कंवल मति मसि करि निर्मल, बिन रसना निसदिन गुन गाऊँ ॥४॥

कहै 'रविदास' राम जपि भाई, संत साखि दे बहुरि न आऊँ ॥५॥

राग केदारा (७५)

रे मन राम नाम संभारि ।

माया कै भ्रमि कहां भूल्यौ, जाहिगी कर झारि ॥ टेक ॥

देखि धौं इहां कौन तेरो, सगा सुत नहि सारि ।

तोरि तंग सब दूरि करि हूँ, दैहिंगे तनु जारि ॥१॥

प्रान गये कहौ कौन तेरा, देखि सोचि बिचारि ।
 बहुरि येहि कलि काल माहीं, जीति भावै हारि ॥२॥
 यहु माया सब थोथरी रे, भगति को प्रतिपारि ।
 कहै 'रविदास' सत बचन गुरु कै, सो न जीअ तैं बिसारि ॥३॥

(७६)

हौं बनजारौ राम कौ, हरि जू कौ टांडौ लादौ जाव रे ।
 राम नाम धन पायौ, तातैं सहज करौ व्यापार रे ॥ टेक ॥
 औघट घाट घणौं घणा रे, निरगुन बैल हमार रे ।
 राम नाम हम लादयौ, तार्थैं बिष लाद्यो संसार रे ॥१॥
 अनतहिं धन धर्यो रे, अनतहिं बूढ़ण जाइ रे ।
 अनत कौ धरयौ न पाइयै, तार्थैं चाल्यो मूल गमाई रे ॥२॥
 रैण गँवाई सोइ करि, द्यौस गँवायो खाइ रे ।
 हीरा यह तन पाइ करि, कौड़ी बदले जाइ रे ॥३॥
 साधसंगति पूंजी भई रे, बस्तु लई निर्मोल रे ।
 सहजै बलदिया लादि करि, चहुं दिसि टाँडो मेलि रे ॥४॥
 जैसा रंग कसुंभ का, तैसा यहु संसार रे ।
 रमइया रंग मजीठ का, भणै 'रविदास' बिचार रे ॥५॥

राग केदारा (७७)

परीति सुधामनि आव ।
 तेज सरूपी सकल सिरोमनि, अलख निरंजन राव ॥ टेक ॥
 पीव संगि प्रेम कबहुं नहीं पायौ, कारनि कवन बिसारी ।
 चक कौ ध्यानं दधि सुत सौ होत है, यों तुम तैं मैं न्यारी ॥१॥

भोर भयी मोहिं इक टक जोवत, तलफत रजनी जाई ।

पीव विन सेजहिं का सुख सोऊँ, विरह बिधा तन खाई ॥२॥

मेदि दुहाग सुहागनि कीजै, अपने अंगि लगाई ।

कहै 'रविदास' प्रभु तुम्हरे बिछोहे, ऐकु पलक जुग जाई ॥३॥

रागु जैश्री (७८)

सब कुछ करत न कही कछु कैसें, गुन निधि बहीत रहत सम जैसें ॥ टेक ॥

द्रपन गगन अनील अलेप जस, गंध जलध प्रति ब्यंब देखि तस ।

सब आरंभ अकांम अनेहा, बिधि निषेध कीर्यो अनकेहा ॥

इहिं पद कहत सुनत नहीं आवै, कहै 'रविदास' सुकित की पावै ॥१॥

रागु गौड़ी (७९)

साधी ! का सास्वन सुनि कीनी.

अनपावनी भगति नहीं साधी, भुखै अन न दीनी ॥ टेक ॥

काम न विसर्यो डयंभ न त्यागौ, लीभु न विसर्यो देवा ।

पर निंदा मुख तै नहिं छांडि, निफल भइ सबु सेवा ॥१॥

वाट पाड़ि घर मुसि परायौ, उदरि भर्यौ, अपराधी ।

हैं अपराधी केसी न सिमर्यौ, अहु अविद्या साधी ॥२॥

हरि अरपन करि भोज न कीनी, कथा कीरत नहीं जानी ।

राम भगति विन मुक्ति न पावै, अमर जीव गरावै प्रांनी ॥३॥

चरन कंवल अनराग न उपज्यौ, भूत दया नहीं पाली ।

'रविदास' पलु साध संगति मिलि, पूर्न ब्रह्म सदा प्रति पाली ॥४॥

(८०) राग धना श्री

तुझ देव कंवलापति जन सरनि आया ॥

मंझा जनम संदेह भ्रम छेदि माया ॥ टेक ॥

अतिर संसार अपार भौ सागर, तां में जांमण मरण संदेह भारी ।

काम भ्रम, क्रोध भ्रम, लोभ भ्रम, मोह भ्रम, अनंत भ्रम छेदि मो करसि पारी ॥१॥

पंच संगी मिलि पीड़िऔ प्राणियां, जाइ न सकौ बैराग भागा ॥

पुत्र बरग कुल बंध ते भारज्या, भखै दसौ दिसा सिर काल लागा ॥२॥

भगित च्यंती ती मोह दुख व्यापै, मोह च्यंती तों तब भगति जाई ॥

उभै संदेह मोहि दिन रेणि व्यापै, दीन दाता करूँ कौन उपाई ॥३॥

चपल चेत्यौ नहीं बहोत दुख देखियौ, काम बसि मोहिऔ क्रम फंदा ॥

सक्ति सनबध कीऔ ग्यांन पद, हरिलीऔ, हिरदै विस्वरूप तजि भयौ अंधा ॥४॥

परम प्रकास अविनाश अघमोचनं, निरखि निजरूप बिसराम पाया ॥

बदंत 'रविदास' बैराग पद च्यंतत, जयौ जगदीस गोविंद राया ॥५॥

(८१)

मेरी प्रीत गोपाल सौ जिनि घटै हो ।

मैं मोलि महिगै लई तन सटै हो ॥ टेक ॥

रिदै सिमरन करौ नैन अवलोकनो, स्त्रवनां हरिकथा पूरि राखी ।

मन मधुकर करौ चरनां चित धरीं, राम रसाइन रसना चाखूं ॥

साधु संगति बिना भाव नहीं उपजै, भाव बिन भगति क्यों होइ तेरी ।

कहि 'रविदास' राजाराम सुनि वीनती, गुर प्रसादि कृपा करौ न देरी ॥२॥

मंगलाचरण

सत्पुरुष स्वामी हे ! नाथ ।
कृपा करो माथे धरो हाथ ॥
अमृतवाणी गुरु रविदास ।
संग्रह करों कार्य है खास ॥
करि कृपा बलबुद्धि मोहि दीजै ।
बिनय सुनीजै बिलम्ब न कीजै ।
सब सिद्धियां है तुमरे पास ।
करो मम अंतह्करण प्रकाश ॥
सब संगत के हित यह काज ।
दास जान राखो मोहि लाज ॥
तुम हो गहर गंभीर अनन्त ।
कोई नहीं पावै तोहि अंत ।

श्री गुरु रविदास जी
एवं
डेरा सच्चखण्ड बल्लां के महापुरुषों के चरणों में
निवेदन

संतोख दास जी जिसके तात ।
कलशी देवी जी है मात ॥
संवत् चौदह सी तैतीस ।
प्रकट हुए जगत के ईश ॥
माघ महीना पूर्णमाशी ।
गुरु रविदास औतरे काशी ॥
धन्य धन्य सत्गुरु रविदास ।
दलितों का किया बंदखलास ॥
मानवता का दिया उपदेश ।
जिनकी पूजा करत् नरेश ॥
तुम हो सत्गुरु परम कृपालु ।
करो काम पूरा हे दयालु ॥
काम यह सागर तरने जैसा ।
मैं हूँ निदान जैसा तैसा ॥
तुम्हीं पर यह मेरी आशा ।
कर दो जी सब दूर निराशा ॥

धन्य गुरु पिपलदास प्यारे ।
 जाइये आप जी के बलिहारे ॥
 आये बल्ल्नां गांव मझारी ।
 बड़दानी बड़ परोपकारी ॥
 दुखीयों के सेवा प्रथाये ।
 तन मन धन सब दियो लुटाये ॥
 कोई कोई ऐसे संत सुजान ।
 सेवा हित लगाये प्रान ॥
 रामानन्द पर कृपा कीजै ।
 सफल काम यह सद्गुरु कीजै ।

बाबा पिपलदास के राज दुलारे ।
 माँ शोभा देवी आंख के तारे ॥
 गिलपट्टी है जन्म स्थान ।
 जिला बठिंडा शहर महान् ॥
 पिता संग बल्ल्नां में आये ।
 बन्दगी में सब जन्म लगाये ॥
 स्वास स्वास से किया उपकार ।
 सभी लोग करते सत्कार ॥
 मंदिर गुरु रविदास बनाये ।
 यह विचार शुभ मन में आये ॥

काशी भेजे संत हरीदास ॥
नींव रखी करके अरदास ॥
दासन दास संत गरीब दास ।
गुरु चरणों में किया निवास ॥
सीरगोवर्धनपुर जो ग्राम ।
करो वहां मंदिर का काम ॥
सरवन दास गुरु हुक्म लगाये ।
गरीब दास गुरु वचन निभाये ॥
स्वर्ण कलश मंदिर पर सजाये ।
जिन की शोभा कही न जाये ॥
देश विदेश गये चल आप ।
संगत से जा किया मिलाप ॥
गुरु का नाम जपो सतनाम ।
गुरु चरणों में करो सलाम ॥
जीवन भर किया यह काम ॥
गरीब दास गुरु को प्रणाम ॥
सरवन दास गुरु का ही रूप ।
संत निरंजन दास अनूप ॥
छिन-छिन गुरु सेवा में लगाये ।
गुरु कृपा यह गद्दी पाये ॥
सब संगत के जो हैं दास ।
सिमरन सेवा स्वास ग्रास ॥

विख्यात किया बल्लां का डेरा ।
कहें! गुरु जी, सब कुछ तेरा ॥
हे सतगुरु जी प्राण प्यारे ।
शरण आया हूँ दास तुम्हारे ॥
करो कृपा पूर्ण होये काम ।
करुं वन्दना होये निष्काम ॥
नहीं इस में कोई स्वार्थ मेरा ।
हे सतगुरु मैं सेवक तेरा ।
गुरु जी हस्तकमल धरो माथ ।
दया करो हे दीना नाथ ।
रामानन्द पर कृपा कीजै ।
सतगुरु चरण कमल रज दीजै ॥

इहु रस पीब राम रस बूझौ, अप्पु मगन रहि है दिन रैना ॥१॥
 लोक रस लागि विषै विष देही, भणोंराम भौजल नही बहना ।
 अभि अंतर भजी निज अविगत, इह उपाइ अतिरं भौ तरना ॥२॥
 चिन्तामणि लाल हाथै जै चढ़ियौ, हुवौ उजाम तिमिर नहीं रहना ।
 भजै 'रविदास' राम नित रसना, दुलभ जनम बिरथ नहीं गवना ॥३॥

(९७)

जा कौ हरि जू आपु निबाजत, तिहि त्रिविध ताप नहीं बाधै ।
 जम की दूत छांडि करि भाजै, सांचा हरि किंधु न अराधै ॥ टेक ॥
 निसचर जात रिप बंधु बभीषण, अभै देहि सरन मंह राखै ।
 कनक कसिपह कुबुध पेखि प्रभ, खम्भ फारि प्रह्लादहु, राखै ॥१॥
 ध्रुव कूं अटलु पद हरि दीन्हौ, भगत सिरोमणि नांम धरावै ।
 षट रस भोज सुयोधन त्यागी, दास विदुर कूं मानु बढावै ॥२॥
 गज कूं फंद छुड़ावौ छिन महं, राम नामु इकु वार उचारै ।
 जन 'रविदास' प्रभ सरनाई, उनमनि रह राम उर धारै ॥३॥

(९८)

देखि मूरिखता यहु मन की ।
 राम नांम कूं छांडि अधारी, गहि ओट छुद त्रिन की ॥ टेक ॥
 अभि अंतर रामु नहि जान्यौ, छानहु धूरि बन बन की ।
 जा दिन इह हंसा उरि जइ है, छोरि ठठरिया तन की ।
 धनु दारा मंह रहहु लपटानो, आपहु नहि सुधि वा छन की ॥१॥
 जन 'रविदास' तियागी जग आसा, लहहु ओट हरि चरनन की ॥२॥

राग मारू (चउपदा) (९९)

पीआ राम रसु पीआ रे ॥ टेक ॥

भरि भरि देवै सुरति कलाली, दरिआ दरिआ पीना रे ।

पीवत पीवतु आपा जग भुला, हरि रस मांहि वीराना रे ।

दर घरि विसरि गयी 'रविदासा', उनमनि सद मतवारी रे ।

पलु पलु प्रेम पियाला चालै, छूटे नांहि खुमारी रे ॥१॥

(१००)

मन मोरा माया मंह लपटानो ॥ टेक ॥

विसासवत रहियो निसवासर, अज हूं नहिं अघानो ।

कामी कुटिल लबार कुचाली, समझइ नहीं समझानो ॥१॥

सति संगत पलु नहीं कीन्ही, मन मूरिख बहु गरवानो ।

सोत खात दिन रैन बिताइ, ताहि में रसना सुख मानो ॥२॥

माया मंहि हिल मिलि रहियौ, फोकट साटे जनम गंवानो ।

कहि 'रविदास' कछु चेत बाबरे, राम नाम विन नहि उबरानो ॥३॥

(१०१)

किहि मन टेढ़ो टेढ़ो जात ॥ टेक ॥

जाकूं पेधि बहुगरिवानो, हाड मांस कौ गात ।

थूक लार विस्टा कौ बेढ़ी, अन्त छार है जात ॥१॥

राम नाम इक छिनु न सुमरियौ, विषियन सैं बहु घात ।

ज्युं खग पेधि दरपन मंह तन कूं, बेरि बेरि चूंझियात ॥२॥

अजहूं चेति गहु सिष मूरिख, जनम अकारथ जात ।

जल-थल, वाड-अगन कौ, पुतरा, छिन मंहि होहि भसमात ॥३॥

कोटि जतन करि जोगि तपि हरि, निहचय हंसा उड़ि जात ॥

कहि 'रविदास' राम भजि बाबरे, वय बीते पछितात ॥४॥

(१०२)

बीति आयु भजनु नहीं कीन्हा ॥ टेक ॥

सेत भयउ तन धर धर कंपहि, हरि सिमरनु नहीं कीन्हा ।

सत संगत नहिं गुर पद सेओ, प्रभ कीरति नहिं गाई ।

नहि मनु रमयो प्रभ चरनन महि, तन स्यों पीरीत बिढ़ाई ।

कहि 'रविदास' चलन की बिरियां, कोउ न होहु सहाई ॥१॥

राग बिलावलु (१०३)

ऐसाई हरि क्यूं पड़वो, मन चंचलु रे भाई ।

चपल भयो चहुंदिस धावइ, राख्यों न रहाई ॥ टेक ॥

मैं मेरी छूटइ नहिं कबहुं, मैं मंमता महु बींध्यौ ।

लोभ मोह मंह रह्यौ रूझानी, नित विषया रस रीझ्यौ ॥१॥

डयंम कोह मोह माया बसु, कपट कूड़ हूं बंधायौ ॥

काम लुबधु कौ बसि पर्यौ, कुलकांनि छांड़ि बिकायो ॥२॥

छापा तिलक छपौ नहीं सोभइ, जी लौं कैसी नहिं गायो ।

संजमि रह्यौ न हरि हूं सिमरियौ, बिरथा भ्रम्यौ रू भ्रमायौ ॥३॥

अनिक कौतग कला काछे कछे, बहुरि सांग दिखावौ ।

मूरिख आपन आपु समुझि नंह, औरनि का समुझावौ ॥४॥

आस करै वैकुण्ठ गवन कउ, चल मन कभउ न धिरायौ ।

जी लौं मन बसि नंह हूँती, तौं लगि सभु जुठरायौ ॥५॥

कपट कीयां रीझइ नहिं कैसी, जगु करता नहिं कांचा ।

कहि 'रविदास' भजौ हरि माधी, सेवग ह्वै मन सांचा ॥६॥

(१०४)

प्रभु जी तुम औगन बकसन हार ।

हऊं बहु नीच उधरौ पातकी, मूरखि निपट गंवार ॥ टेक ॥

मो सम पतित अधम नहीं कोउ, खीन दुखी विसयार ।

नाम सुनहि नरकु भजै ह्वै, तुम्ह विन कवन हमार ॥१॥

पतित पावन बिड़द तिहारौ, आइ परीं तोहि दुबार ।

कहि 'रविदास' इहु मन आसा, निज कर लेहू उबार ॥२॥

(१०५)

अमर भये हम काहे कूं मरि हैं ॥ टेक ॥

मिथ्या जग माया तजि जीनी, सत्त रूप मनु धरि हैं ।

जौ दीसै सभु माया फंदा, ताकि जेवरि कतरि कतरि हैं ॥१॥

अनिक बारु जन्में अरु मरिये, फुनि हों भमरि न परि हैं ।

पतरि नाव खेवटिया राम, नाम लेत ही तरि हैं ॥२॥

पर जनम मंह पातक बहुले, हीं पाछे ही बिछुरि हैं ॥

कहि 'रविदास' अब बनी कछु ऐसी, पुनि औसर किहिं परि है ॥३॥

(१०६)

लग्या मोरि राखो श्याम हरि ।

हरि हरि कृपा द्रोपति उचरै, बिलमु न करौ हरि ॥ टेक ॥

कीनी करनु दुसासन मोसों, गहि केसन पकरि ।

पापी सभा दुस्ट दुरजोधन, चाहत नगन करि ॥१॥

ना सुत भ्राति न मीत कुटंबहि, एको ओट तुमरि ।

अरजन भीम महाबलि जोधे, तिनसों किछु न सरि ॥२॥

बसन प्रवाहित किओ करुनानिधि, तबहिं धीर धरि ।
कहि 'रविदास' सिंह सरनागति, स्याल की कहा डरि ॥३॥

(१०७)

का गाऊं कछु गाई न होई, गाऊं रूप सहजै सोई ॥ टेक ॥
नहिं अकास नहिं धर धरणी, पवन पुर घट चंदा ।
नहिं अब राम क्रिस्न गुण भाई, बोलत है सुछं छंदा ॥१॥
नहिं अब बेद कतेब पुराननि, सुनि सहज रे भाई ।
नहिं अब मैं तैं, तैं मैं नांही, का स्यों कहौं बताई ॥२॥
भणै 'रविदास' का कहि गाऊं, गाइन गाइ हरांणा ।
समुझि बिचारि बोलि कहां घौं, आपहि आप समांणा ॥३॥

(१०८)

अब का कहि कौन बताऊं ।
अब का कहि देबलि देव समाऊं ॥ टेक ॥
का स्यों राम कहौं सुनि भाई, का स्यों क्रिस्न करीमां ।
का स्यों बेद कतेब कहूं अब, का स्यों कहूं ल्यौ लीना ।
का स्यों तप तीरथ ब्रत पूजा, का स्यों नाउं कहाऊं ॥१॥
का स्यों भिस्ति दोजिगु ना सति करि, का स्यों कहूं कहाई ॥२॥
का स्यों जीव सीव कहौं माधौ, सुनि सहजि घरि भाई ।
का स्यों गुंणी न गुंण कहूं माधो, का स्यों कहूं बताई ॥३॥
जल के तरंग जल मांहि समाई, कहि का कौ नांव धरियै ।
ऐसे येक रूप हैं माधौ, आपण ही निरवरियै ॥४॥
भणै 'रविदास' अब का कहि गाऊं, जउ कोई औरहि होई ।
जा स्यों गाइह गाइ कहत हैं, परम रूप हम सोई ॥५॥

(१०९)

संतो भगति न होइ रे, भगति न होइ ।

जब लग तन मन सुध न होइ ॥ टेक ॥

भगति न होइ नाचैं अरु गावैं, भगति न होइ बहु गुण कीन्हैं ।

भगति नहिं स्वामी अरु सेवग, परम तत नहिं चीन्हैं ॥१॥

भगति न सुनि मण्डल घर सोधैं, भगति न कछु दिखाएँ ॥२॥

जहां जहां जीव आप बंधावैं, तार्थ कछु कहयां न जाई ।

कहै 'रविदास' तवै सचु पावै, आपा उलाटि समाई ॥३॥

(११०)

खोजत किंधु फिरै, तेरे घट मंह सिरजन हार ॥ टेक ॥

कस्तूरी म्रिग पास है रे, दृढत घास फिरै ।

पाछै लागो काल पारधी, छिन मंह प्रांन हरै ॥१॥

इला पिंगला सुषमण नारी, जा मैं चित न धरै ।

सहस्त्रार मंह भंवर गुफा है, भंवरा गुंज करै ॥२॥

दिल दरियाव हीरा लाल है, गुरमुख समझ परै ।

मरजीवा की सैन विचारै, तउ हीरा हाथ परै ॥३॥

कहि 'रविदास' समुझि रे संतो, इहु पद है निरवान ।

इहु रहसि कोउ खोजै बूझी साउ है संत सुजांन ॥४॥

(१११)

संतो कुल पखी भगति ह्वैसी कलिजुग में, निपख बिरला निवहैसी ।

जांणि पिछांणि हरिष मन हुलस्यौ, बिन पिछांणि मिलता मुरझासी ॥१॥

अपस्वारथ परमाधि, दध्यादे, परमारथ न दिढ़ासी ।
 बिन बिसबास बांझ सति जइसै, हरि कारनि क्यों रासी ॥२॥
 भाव भगति हिरदै नंहि आसी, विषय लागी सुख पासी ।
 कहि 'रविदास' पूरा गुर पावै, स्वांग कौ स्वांग दुखासी ॥३॥

(११२)

पांडे ! हरि विचि अंतर डाढ़ा, मुंड मुडावै सेवा पूजा,
 भ्रम का बंधण गाढ़ा ॥ टेक ॥
 माला तिलक मनोहर बानो, लागो जम की पासी ।
 जौ हरि सेती जोडया चाहौ, तौ जग सों रहौ उदासी ॥१॥
 भूख न भाजै त्रिस्ना न जाई, कहो कवन गुण होई ।
 जौ दधि में कांजी को जांवण, तौ घित न काढै कोई ॥२॥
 कहणी कथनी ग्यांन अचारा, भगति इनहूं सौ न्यारी ।
 दोइ घोड़ा चढि कौउ न पहंचौ, सतगुर कहै पुकारी ॥३॥
 जौ दासातण कीयां चाहौ, आस भगति की होई ।
 तौ निरमल सांग मगन ह्वै नाचौ, लाज सरम सब खोई ॥४॥
 कोई दाधौ कोई सीधौ, सांचौ कूड़ निति मारया ।
 कहै 'रविदास' हौं न कहत हौं, योकादसह पुकारया ॥५॥

(११३)

सोइ उबरो जिहि आपु निवाजत ॥ टेक ॥
 बारक ध्रुव कूं अंक राखि हरि, खंभ फारि प्रह्लाद उबारत ॥१॥
 त्रास दई लंकेश अनुज कहं, सरनि राखि प्रभ अभय उचारत ।
 शब्द रस तजिअ सुजोधन के हरि, दास विदुर कौ मान बढ़ावत ॥२॥

सबरी गीध अजामिल सदना, राम क्रिपा गनका तरि जावत ।
कवन कवन पापी जन तरिओ, कहि 'रविदास' गनइ नहि आवत ॥३॥

(११४)

मनु मेरो थिरु न रहाई,
कोटि कीतिग करि दिखगवै, इत उत जग मंहि धाई ॥ टेक ॥
माया ममिता मोह लपटानो, दिन दिन उरझत जाई ।
सुआन पुच्छ कभु होइ न सूधो, कीजहु लाख उपाई ॥
गुरु कौ ग्यांन प्रेम कौ सांटी, कुबुध कुकरम छुड़ाई ।
कहि 'रविदास' मन थिरु हँसी, चलि सब छांडी गुस्सरणाई ॥१॥

(११५)

ताकौ जनम अकारथ कहिए ॥ टेक ॥
विषयन रतु संसा भ्रमु अटक्यौ, भंवर फंद मंहु रहिए ।
जग मंह रहहु कंवल जल जइसे, गुर चरनां चित रहिए ॥१॥
आसनु छांडि द्रिहु आसन बैइठि, राम नांव लिव लाइए ।
पूजा भजनु कीरतन सब कछु, दसधा हू मंहि समइए ॥२॥
नेत नेत जिहिं वेद वधानिहं, राम रूब तेहि कहिए ।
कहि 'रविदास' जउ व्यापहि घट घटु, तिहि कांई विसरिए ॥३॥

(११६)

सत रज तम माया धनी, चेतन कौ प्रतिभास ।
करता हरता जगत कौ, भजी ताहि रविदास ॥१॥
तत पदु दीन दयाल हू, कहियतु विसव निवासु ।
जासों आतम प्रगास है, भजै ताहि रविदास ॥२॥

नेति नेति नित्त कहत हैं, स्मृति सुमरिती तासु ।
 संसा सिगरेउ छांडि कहि भजै ताहि रविदास ॥३॥
 जगु आपा समुझइ नहि, मिथ्या मंहे निदिधियास ।
 जह किरपा आपा मिटयौ, भजै ताहि रविदास ॥४॥

(११७)

गिरि बन काहे खोजन जाई, घट अभिअन्तर खोजहु भाई ॥ टेक ॥
 पुहुप मधे ज्युं वास बसत है, त्युं सब घट रमहि रघुराई ।
 बाहरि खोजत जनम सिरानों, प्रिग त्रिस्ना रह्यो उरझाई ॥
 राम चरन मंह धिर मन राखहु, रिदै कंवल वसै रघुराई ।
 कहि 'रविदास' सुनहु रे संतो, राम भजन विनु किन गति पाई ॥१॥

(११८)

हम घर आयहु राम भतार, गावहु सखि मिल मंगलाचार ।
 तन मन रत करहि आपुनो, तौ कहुं पाइहि पिव पिआर ॥१॥
 पीतम कूं जी दरसन पाए, मन मन्दर मंह भयो उजियार ।
 हौं मड़इ तैं नौ निधि पाई, क्रिपा कीन्हौं राम करतार ॥२॥
 बहुत जनम बिछुरे पिव पायो, जनम जनम तैं बिलइ रार ।
 कहि 'रविदास' हौं कह्यु नहि जानौं, चरण कंवल मंह तुव मुरार ॥३॥

(११९)

कालहु नाइ ताहि पद सीसा, नहि बिसरऊं खिन एकहु ईसा ॥ टेक ॥
 जनम मरुन अरु जग जाला, नाम परताप न बिआपहि ब्याला ।
 अगत विगत अनादि अनूपा, विस्व विआपक ब्रह्म अरूपा ॥
 घट घट तिह पेखियत अइसे, जल मंह लहिर, लहिर जल जइसे ।
 कहि 'रविदास' हरि सरब विआपक, सरब च्यंतामणि सरब प्रतिपालक ॥१॥

राग सूही चौपदा (१२०)

दुखियारी दुखियारा जग मंह, मन जप लै राम पियारा रे ॥ टेक ॥
 गढ़ कांचा तस्कर तिह लागा, तूं काहे न जाग अभागा रे ॥
 नैन उधारि न पेखियो तूने, मानुष जनम किह लेखा रे ॥
 पांउ पसार किमि सोई परयी, तैं जनम अकारथ खोया रे ।
 जन 'रविदास' राम नित भेंटहि, रहि संजम जागित पहरा रे ॥१॥

राग बिलावल दुपदा (१२१)

जौ सुख होत साध कूं भेंटै, गावत स्याम सकल दुख मेटे ॥ टेक ॥
 ते किम जानहि संतन महमा, जौ माया जंजाल लपेटै ।
 अटक् पहरि तिन्हि कछु नहिं उचरै, ज्युं तेली कूं त्रिषभ संकेटे ॥१॥
 जौ जन राम नाम नाहिं उचरै, उदर भरइ ज्युं गरदभ लेटे ।
 जन 'रविदास' रामु बल गरजति, मनहुं च्यारि पदारथ भेंटै ।

राग रामकली, चउपदा (१२२)

धिग धिग जीवणु राजे राम बिना ॥ टेक ॥
 देहि नैन बिनु, चंद रैन बिनु, ज्युं मीना गहरु जले बिना ।
 हसती सुंड बिनु, पंखी पंख बिनु, जइसोइ मन्दिर दीप बिना ॥१॥
 जइसे ब्राह्मन वेद विहूणा, तैसोइ प्राणी तुझ नाम बिना ॥
 बेसबा, कूं सुत काकौ कहिए, तैसोइ भगत जन राम बिना ॥२॥
 मंत्र सुरति बिनु, नारी कंत बिनु, जइसोइ धरती इन्द्र बिना ।
 ज्युं बिच्छा फलहिं विहूणा, त्यों प्राणी तुझ प्रेम बिना ॥३॥
 काम क्रोध हंकार निवारउ, त्रिस्ना त्यागहु संत जना ।
 कहि 'रविदास' भइ सीतल काया, ज्यों हों लागो गुरु चरना ॥४॥

राग केदरा (१२३)

समुझि मन नित निरमल जस गाई ।

रघुपति प्रभ के चरण सरण तजि, अनक किहुं जिनि जाई ॥ टेक ॥

यहु संसार सघन बन विष कौ, ता मैं बहु दुख दन्द ब्यालाई ।

रूप वरण के उनमुखि मानुषा, पतंग पड़े जिमि आई ॥१॥

काम कलेस प्रथमि जग पासि, कोउ न गयौ सचु पाई ।

ता मैं चैन किमि तू हुलसै, सुणि मूरखि सति भाई ॥२॥

सदा संताप, नहि नर निहचल, किमि छूटिहि इहु काई ।

कहै 'रविदास' भजौ हरि चरणा, तज जग फंद अमी रस पाई ॥३॥

राग सोरठि (१२४)

मन रे हरि भज साम सवेरे ।

जौ जिहि करै वैसै ही पावे, करम फल तति काल निबैरे ॥ टेक ॥

बहुले जगि करै नहू राजा, मन मंह भई बड़ाई ।

करि हंकार सत्त रिषि रथ जोये, जोनि सरपहु पाई ॥१॥

मन मंह दरप कियौ थौ रावणि, निज बल देख धिकाई ।

दसरथ नंदन सर संहारयौ, लंक बभीषण पाई ॥२॥

कियौ ठिठौली जादव दुर्वा सौं, मन मंह कपट रचाया ।

करि न्यंदा साधु हरि जन की, अप्पहुं बंस नसाया ॥३॥

यहु संसार कजलि कूं कोठरी, अरु विष-हऊं रा कूबा ।

कहि 'रविदास' हौमैं जग खाया, ज्यों नलिनी भू सूबा ॥४॥

राग सारंग (१२५)

हरि सुमिरे सोई संत बिचारी ।

अवरु जनम बेकाम राम बिन, कोटि जनम सीं उपरि बारी ॥ टेक ॥

हरि पद विमुख कुटिल मायारत, राम चरण चितहु न सानै ।

जिन मन मानु हठमें बसहि, तिह जन संत कहाँ किम मानै ॥१॥

कपट इयंभ पर निंदा बूझी, संत जनम भौ किलविष कारी ।

ज्यौं बरिया रुत बूंद उदधि मंह, आई, मिलै सोई जल खारी ॥२॥

ता परसंगि सीप स्वाति नछत्र, मोती निपजत नीर तै न्यारी ।

कहि 'रविदास' मोह मद त्यागै, राम चरण मन संत बिचारी ॥२॥

(१२६)

गगन मंडल में आरती कीजै, नाद बिंद इक मेक करीजै ।

सुसमन इंदु अमृत कुंभ घराभै, मनसा माला फूल चढ़ावै ॥१॥

घोव अखंडा सोहै बाती, त्रिकुटी जोत जलै दिन राती ।

पवन साधना थाल सजीजै, तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥२॥

रवि ससि हाथ गही तिह माहीं, खिन दहिने खिन बामें लार्हीं ।

सहस्र कंवल सिंघासन राजै, अनहद झांजन नित ही बाजै ॥३॥

इंह विध आरती सांची, सेवा, परम पुरिष अलख अभेबा ।

कहै 'रविदास' गुरदेव बतावै, ऐसी आरती पार लंघावै ॥४॥

आरती (१२७)

आरती करत हरष मन मेरो, आवत चित तुव रूप घनेरो ॥ टेक ॥

अजर अमर अडोल अभेख, निरगुण रहित रूप नहिं रेख ।

चेतन सत चित घन आनन्दा, निरविकार तेज अमित अभेदा ॥१॥

अनुभ अजन्मा सरवग्य अनन्ता, अभेद अदेष अविगत सुछंदा ।

नाम की बाती घीव अखंडा, इक हीं जोत जलै ब्रह्मंडा ॥२॥
 अनक बार तोहि धिआन लगावा, मुनि जन पै पार नहिं पावा ।
 मन बच करम 'रविदास' धिआवा, घंटा झालर मनहिं बजावा ॥३॥

साखी-भाग (१२८)

रविदास संसा जीव मंह, साखी सौं बिलगाय ।
 जीवन मरन रहस कूं, साखी कहै समुझाय ॥१॥
 हरि सा साहिब छांडि करि, करे आन की आस ।
 ते नर जमपुर जांइहिं, सत भाषै रविदास ॥२॥
 अन्तर गगति रांचै, बाहरि कथै उजास ।
 ते नरकहि जांहिगे, सति भाषै रविदास ॥३॥
 रविदास कहै जा के रिदे, रहै रैन दिन राम ।
 सोइ भगता भगवंत सम, क्रोध न व्यापै काम ॥४॥
 जा देख्यां धिन ऊपजै, नरक कुंड मंह बास ।
 प्रेम भगति सौं ऊधरै, प्रगटत जन रविदास ॥५॥
 रविदास तूं कांबचि फली, तुझ तूं न छीवै कोइ ।
 तैं निज नांव न जांणिया, भला कहा ते होइ ॥६॥
 रविदास राति न सोविये, दिवस न करिये सुआद ।
 अहि निसि हरि जी सिमरिए, छांडि सकल प्रतिवाद ॥७॥
 साध संगति पूंजी भइ, हीं वस्त लई निरमोल ।
 सहज बलदिया लादि करि, चल्या लहन पिव मोल ॥८॥
 जैसा रंग सैंबल करि, है तैसा यहु संसार ।
 हीं रंग रंगी राम मंह, भणी रविदास बिचार ॥९॥

भी सागर रा तरन कूं, एकी नाम अधार ।
 रविदास कभठे नहि छांडिये, राम नाम पतवार ॥१०॥
 सुमिरन कोटि अघन को, हैहि समन रविदास ।
 ज्युं कि अघ निरमूलिये, परम जोत परगास ॥११॥
 राम नाम जिह तन रम्यौ, सोइ तनु आपु उजास ।
 अन्त छार है जाइहि, वेगि चेतु रविदास ॥१२॥
 गुरु ग्यांन दीपक दिया, बाती दइ जलाय ।
 रविदास हरि भगति कारनै, जनम मरन बिलमाय ॥१३॥
 अंधला जी गुरु पाइहि, तौ सिष भयौ निरंध ।
 रविदास ग्यांन चाषु बिना, किमि मिटइ भ्रम फंद ॥१४॥
 माइआ दीपकु पेखि करि, नर पतंग अंधियाय ।
 रविदास गुरु रा ग्यांन बिनु, बिरला कौ बचि जाय ॥१५॥
 निहचल आनन्द निध मिलि, बिलगौ आधि अपार ।
 रविदास सुमिरण सार सौं पायौ दरस मुरार ॥१६॥
 पलु पलु छिनु छिनु सिमरिये, जी लोरि, जी लोरि हरि दुआर ।
 हरि मजनु विन सिख नहीं, भणै रविदास चमार ॥१७॥
 भी सागर दुतर अति, किधुं मुरिख यहु जान ।
 रविदास गुरु पतवार है, नाम नाव करि जान ॥१८॥
 रविदास तनु पियरी पातरा, झरत न लागइ बार ।
 जरा मीचु ज्यौं आवई, जात न लागहि वार ॥१९॥
 सोइ तन कंचन जानइ, जिह तन नाम परगास ।
 रविदास राम च्यंतामणि, चहुं दिस ओज उजास ॥२०॥

निस दिन हरि जु सिमरिये, त्यागि जगत करि धंद ।
 रविदास संत सहेलड़ा, विचरत है निरदंद ॥२१॥
 जो लोहा पारस मणि, हिरन किरन दमकाय ।
 रविदास राम पारस मणि, उहु दरस मंह बीराय ॥२२॥
 समाधि थिति हवै संत जन, अपनहु अप्य मिटांहि ।
 जिमि गंग समुंद मिलि, रविदास समुंदहि बिलांहि ॥२३॥
 अन भावत नियरा बसै, मन भावतां परदेस ।
 अन देखे उन दरस बिन, है दुख बढ़त घनेस ॥२४॥
 ज्यूं सुधि आवत पीव की, बिरह उठत तन आगि ।
 ज्यूं चूने की कांकरी, ज्यूं छिरके त्यों आगि ॥२५॥
 जिह नित देखन चाहि हौं, तें नैनन ते दूरि ।
 रविदास कहि अनभावते, रहहि निकट भर पूरि ॥२६॥
 कामधेनि पारस पोलि, कलप रूप रा बाड़ि ।
 रविदास हरि रा भगति बिन, ग्रिह तें भलि उजाड़ि ॥२७॥
 तुहि मुहि हमु एक हैं, तुझ लौं मोरि दीर ।
 रविदास पंखी जिहाज कौ, नहि आनत कोठ ठीर ॥२८॥
 रविदास पीतम इक तुहि, तुमरे मित अनेक ।
 ससि कौ कमोद हैं बहु, कुमोद कौ ससि एक ॥२९॥
 कोटि कलप जीवन अलप, बिच हरि भगति बिलास ।
 हरि सिमरण सफल जनम, दुह फल लहि रविदास ॥३०॥
 अनन्द मूरति मित की, रहइ सदा सदा चित पूरी ।
 नैनन ही समुहे रहत, रविदास नियरे का दूरि ॥३१॥

कोइल तरसै अंब कूं चातिग तरसत नीर ।
 रविदास लीचै दरस कूं, प्राण परत नहीं धीर ॥३२॥
 ससि चकोर सूरज कंवल, चात्रिग घन की रीति ।
 रविदास इंवि मुहि राखिओ, हित चित पूरण परीति ॥३३॥
 चलत हलत बैठत उठत, धरि हूं तुमरो ध्यान ।
 रविदास तू मुहि मन बसइ, चरण कंवल की आन ॥३४॥
 मूरिख मुख कमान है, कटुक बचन भयो तीर ।
 सांचरी मारे कान मंहि, साले सगल सरीर ॥३५॥
 रविदास मूरिख समुझइ नहि बिना बिचार ।
 हने पराइ आतमा, जीभ लियां तरवार ॥३६॥
 राम प्रेम हौं बरजि किमि, अब बरजत नहि काज ।
 रोम राम अमी रमि गयी, ताहि म होत इलाज ॥३७॥
 नाम मूल है ग्यान कौ, नाम मुक्ति कौ द्वार ।
 जा हिरदै हरि बसै, परहिं न जग बाँपार ॥३८॥
 इहु जग दुख की खेतरी, इहु जानत सब कोय ।
 ग्यानी काटहि हरि नाम सों, मूरिख काटहि रोय ॥३९॥
 कटुक बचन नहि बोलिए, सब घट हरि कौ बास ।
 इहु ग्यान कौ द्वार है, कहै रविदास विचार ॥४०॥

रविदास दर्शन

१. सर्वव्यापक राम

'रविदास' हमारे राम जी दसरथ करि सुत नांहि ॥
 राम हंमि मंहि रमि रह्यो बिसब कुटंबह मांहि ॥१॥
 'रविदास' हमारो राम तो सकल रह्यो भरपूरि ।
 रोम रोम मंहि रमि रह्यो राम मसूक न दूरि ॥२॥
 सर्व बिआपक राम हइ नांह कोउ इक ठांम ।
 सतगुरु साहिब सखा भयो 'रविदास' हमारो राम ॥३॥
 सर्व निवासी राम जू सब घट रह्यो समाइ ।
 'रविदास' नाम चकमक बिना हक नूर अद्रिस्टाइ ॥४॥
 सब घट मेरा सांइयां जलवा रह्यो दिखाइ ॥
 'रविदास' नगर मंहि रम रह्यो कबहु न इत उत जाइ ॥५॥
 सब घट मांहि रमि रह्यो 'रविदास' हमारो राम ।
 सोइ बूझै राम कूं जो होइ राम गुलाम ॥६॥
 घट घट बिआपक राम है रामहि बूझै कोय ।
 'रविदास' बूझै सोइ राम कूं जउ राम सनेही होय ॥७॥
 'रविदास' हीं खालिक देखिआ सकल रह्या भरपूर ।
 सब दिसि देखहुं बिआपिआ खालिक का ही नूर ॥८॥
 मुकुर मांह परछांइ ज्युं पुहुप मधे ज्यों बास ।
 तैसउ ही श्रीहरि बसै हिरदै मधे 'रविदास' ॥९॥
 'रविदास' पीव इक सकल घट बाहर भीतर सोइ ।
 सब दिस देखऊ पीव पीव दूसर नांहि कोइ ॥१०॥

एकै ब्रह्म है सकल मंहि अर सकल ब्रह्मह मांहि ।
 'रविदास' ब्रह्म सब बेष मंहि ब्रह्म बिना कछु नांहि ॥११॥
 गगन मंडल पिअ रूप सों कोट भान उजियार ।
 'रविदास' मगन मनुआ भया पिआ निहार निहार ॥१२॥
 'रविदास' पिअ बिनु जगत मंह सूनी सेज न कोइ ।
 जिन देखूं तित पिअ कर प्रगट मोजरा होइ ॥१३॥
 सभ नूरन कर नूर जउ सब तेजन मंह तेज ।
 'रविदास' हमारे पीव करि सब सों अदभुत सेज ॥१४॥
 'रविदास' जगत मंह राम सम कोउ नांहि उदार ।
 गनी गरीब नवाज प्रभु दीनन के रखवार ॥१५॥

२. मन मन्दिर में पी बसै

काबे अरु कैलास मंहि जिह कूं दूढण जांह ।
 'रविदास' पिआरा राम तउ बैठ रहा मन मांह ॥१६॥
 बाहर खोजत का फिरइ घट भीतर ही खोज ।
 'रविदास' उनमनि साधिकर देखहु पिआ कूं ओज ॥१७॥
 बन खोजइ पिअ न मिलहिं बन मंह प्रीतम नांह ।
 'रविदास' पिअ है बसि रह्यो मानव प्रेमंहि मांह ॥१८॥
 बन खोजन का जाइ रे राम अलोपा नांह ।
 सर्व बिआपी राम ती 'रविदास' सभन कै मांह ॥१९॥
 राघो क्रिस्त्र करीम हरि राम रहीम खुदाय ।
 'रविदास' मेरे मन बसहिं का खोजहुं बन जाय ॥२०॥

३. ओंकार सत्तनाम

ओंकार है सत्त नाम आदि जुगादि सभ सति ।

'रविदास' सत्त कहि सामुंहे टिकवै नांहि असति ॥२१॥

जौ लौ घट मंहि परान हैं तौ लों जपउ सत्तनाम ।

'रविदास' परम पद पाइहिं जिन्ह घटि बसियो राम ॥२२॥

सति ईश कहुं रूप है ता सकति अत अपार ।

'रविदास' सत्त कूं धारणा देइहिं पाप निवार ॥२३॥

सत्त सक्ति सों होत है सभ पापन का नास ।

बधिरा सत्त सों बोध लेइ सत्त भाषै 'रविदास' ॥२४॥

'रविदास' सत्त इक नाम है आदि अंत सचु नाम ।

हनन करेइ सब पाप ताप सत्त सुखन करि खान ॥२५॥

जिन्ह नर सत्त तिआगिया तिन्ह जीवन मिरत समान ।

'रविदास' सोई जीवन भला जहं सभ सत्त परधान ॥२६॥

'रविदास' सत्त मति तिआगिए जौ लौं घट मंहि प्रान ।

सत्त भ्रिस्ट करि जगत मंहि सदा होत अपमान ॥२७॥

कायम दायम राम इक दोयम सत्त इमान ।

'रविदास' राम अरु सत्त बिन बिरथा सभ कछु जान ॥२८॥

'रविदास' सत्त करि आसरे सदा सत्त सुख पाय ।

सत्त इमान नहिं छांडिए जग जाय तउ जाय ॥२९॥

'रविदास' सत्त मत छाडिए जौ लौं घट में प्रान ।

दूसर कोउ धरम नांहि जग मंहि सत्त समान ॥३०॥

अंतकरन अनभउ करहि तउ मानहु सब सत्त ।

रविदास निज अनुभउ मंहि सत्त मंहि जानिहं सत्त ॥३१॥

जहं अंध विश्वास है सत् परख तंह नाहिं ।

'रविदास' सत् सोई जानिहै जौ अनभउ होइ मन मांहि ॥३२॥

जो नर सत्य न भाषहिं करहिं बिश्वासघात ।

तिन्हहुं सो कबहुं भुलिहि 'रविदास' न कीजहि ब्यात ॥३३॥

जउ नाहीं था सरिस्टि मांहि सोउ होइहि नांह ।

'रविदास' इस्ट सर्वत्त है रहइ सरिस्टिहिं मांह ॥३४॥

'रविदास' मदुरा का पीजियै, जौ चढ़ै चढ़ै उतराय ।

नांम महारस पीजियै, जौ चढ़ै नांहि उतराय ॥३५॥

अंतमुंखी भइ जउ करहिं सत्तनाम करि जाप ।

'रविदास' तिन्ह सौं भजहुहिं भागहि तीन्हहु ताप ॥३६॥

इड़ा पिंगला सुखम्या विध चक्र प्राणायाम ।

'रविदास' हीं सबहि छांड़ियों जबहि पाइहु सत्तनाम ॥३७॥

इक चिंता सत्त नाम की दरसाइहु परम तत्त ।

सहज परम भगति भई 'रविदास' पाइहि ब्रह्म सत्त ॥३८॥

'रविदास' अराधहु देवकूं इकमन हुइ धरि ध्यान ।

आजपा जाप जपत रहहु सत्तनाम सत्तनाम ॥३९॥

जा देख्या घिन ऊपजै नरक कुंड मंहि बास ।

प्रभु भगति सों ऊधरै प्रगटत जन 'रविदास' ॥४०॥

हरि सो हीरा छांड़ि कै करै आन की आस ।

ते नर जमपुर जांहिगे सत भाषै 'रविदास' ॥४१॥

'रविदास' मानुष जन्म मंह हीं चितंत गुरु एक ।

आदि अंत जो सतगुरु राखै सभन की टेक ॥४२॥

४. ब्रह्म बूंद

'रविदास' लोरि जिस बूंद कूं, सो बूंद समुंद समान ।
 अंतर खोजी कूं मिलइ, ब्रह्म बूंद कौ ग्यान ॥४३॥
 इक बूंद सौं बुझ गई, जनम जनम की प्यास ।
 जनम मरन बंधन टूटई, बये 'रविदास' खलास ॥४४॥
 अमरित रस इक बूंद कूं, तलफत हौं दिन रैन ।
 'रविदास' अमीरस बिन पियै, जियरा न पावै चैन ॥४५॥

५. एकै माटी के सब भांडे

एकै माटी के सभ भांडे, एकौ सरजनहारा ।
 'रविदास' व्यापै एकौ घट भीतर एकै घड़ै कुम्हारा ॥४६॥
 'रविदास' उपिजेइ इक बूंद ते, का ब्राह्मन का सूद ।
 मूरिख जन न जानइ, सभ मंहि राम मजूद ॥४७॥
 'रविदास' इक ही बूंद सों, सब ही भयो वित्थार ।
 मूरिख है जो करत हैं, बरन अबरन बिचार ॥४८॥
 इक जोति से जउसभ उपजैं, तउ ऊंच नीच किस मान ।
 'रविदास' नाम कत धरि कहुं को, नाद बिंद है समान ॥४९॥
 'रविदास' एकै ब्रह्म का, होइ रहो सगल पसार ।
 एकै माटी सब घट सृजै, एकै सभ कूं सरजनहार ॥५०॥
 'रविदास' एक ही नूर ते, जिमि उपज्यो संसार ।
 ऊंच नीच किह बिध भये, ब्राह्मन अरु चमार ॥५१॥
 'रविदास' एकै ब्रह्म बूंद सों, सगल पसारा जान ।
 सभ उपज्यो इक बूंद सों, सब ही एक समान ॥५२॥

ब्राह्मन अरु चंडाल मंहि, 'रविदास' न अंतर जान ।
 सभ मेहि एक ही जोति है, सभ घट एक भगवान ॥५३॥
 इक नजिर सों सभकुं देखे, सरिस्टि का सिरजनहारा ।
 सब घट व्यापक अलख निरंजन, कहि 'रविदास' चमारा ॥५४॥

६. सब में नूर है एक प्रभु का

सभ मंहि एकु रामह जोति, एकहि सिरजनहारा ॥
 'रविदास' राम रमंहि सभन मंहि, बाह्यन हुई क चमारा ॥५५॥
 'रविदास' जो करता सरिस्टि का, वह तो करता एक ।
 सभ मंहि जोति सरुष इक, काहे कहूं अनेक ॥५६॥
 'रविदास' हीं देख्या सोधि कर, साहिब भेष अनंत ।
 एकै आत्म घट घट रमै, सब दिसि एकउ भगवंत ॥५७॥

७. एक प्रभु के नाम अनेक

आद अंत जिह कर नहीं, जिह कर नाम अनंत ।
 सभ करि पालन हार है, 'रविदास' अविगत भगवंत ॥५८॥
 'रविदास' एक जगदीस कर, धरै अनंतह नाम ।
 मोरे मन में बसि रह्यो, अधिमन पावन राम ॥५९॥
 'रविदास' हमारो सांझ्यां, राघव राम रहीम ।
 सभ ही राम को रुप हैं, केसो क्रिस्न करीम ॥६०॥
 'रविदास' कोउ अल्लह कहइ, कोउ पुकारइ राम ।
 केसउ क्रिस्न करीम सभ, माधउ मुकंदहु नाम ॥६१॥
 सामी सिरजन हार है, राम रहीम खुदाय ।
 'रविदास' हमारो मोहना पावन केसो राय ॥६२॥

अलख अलह खालिक खुदा, क्रिस्न करीम करतार ।
रामह नांउ अनेक हैं, कहै 'रविदास' बिचार ॥६३॥

८. संकट में सहारा प्रभु

जब जब फैलेइ जगत संहि, कुड़ पाप अंधिकार ।
तब तब राखै हत्थ देई, 'रविदास' इक राम हमार ॥६४॥
'रविदास' आस इक राम की, अरु न करहु कोउ आस ।
राम छांड़ि औरन रमिहँइ, रहँइ सदा निरास ॥६५॥

१. प्रभु मिलन की जुगती

माथै तिलक हाथ जप माला, जग ठकने कूं स्वांग बनाया ।
मारग छांड़ि कुमारग डहिकै, सांची प्रीत बिन राम न पाया ॥६६॥
देहरा अरु मसीत मंहि, 'रविदास' न सीस निवाय ।
जिह लीं सीस निवावना, सो ठाकुर सभ थाय ॥६७॥
'रविदास' न पूजइ देहरा, और न मसजिद जाय ।
जंह तंह इस का बास है, तंह तंह सीस निवाय ॥६८॥
हिंदू पूजइ देहरा, मुसलमान मसीति ।
'रविदास' पूजइ राम कूं, जिह निरंतर प्रीति ॥६९॥
प्रेम पंथ की पालकी, 'रविदास' बैठियो आय ।
सांचे सामी मिलन कूं, आनंद कह्यो न जाय ॥७०॥
'रविदास' मेरो मन लागियो, राम प्रेम को तीर ।
राम रसायन जउ मिलहि, तउ हरै हमारी पीर ॥७१॥
का मथुरा का द्वारिका, का कासी हरिद्वार ।
'रविदास' खोजा दिल आपना, तउ मिलिया दिलदार ॥७२॥

तुरुक मसीति अल्लह बूँढइ, हिंदु देहरे गुसाईं ।

'रविदास' बूँढिया राम कूं, जंह मसीत देहरा नांही ॥७३॥

देता रहे हज्जार बरस, मुल्ला चाहे अजान ।

'रविदास' खुदा नंह मिल सकइ, जौ लीं मन शैतान ॥७४॥

जउ अल्लाह बसहिं मसीत मंह, मंदिर मंह भगवान ।

'रविदास' खोजियो दिल आपनो, तिन्ह पायो रहमान ॥७५॥

जौ खुदा पच्छिम बसै, तो पूरब बसत है राम ।

'रविदास' सेवीं जिह ठाकुरो, तिह का ठांव न नाम ॥७६॥

१०. शब्द-सुरत जब मिल गये

सुरत शब्द जउ एक हों, तउ पाइहिं परमानंद ।

'रविदास' अंतर दीपक जरई, घट उपजई ब्रह्मानंद ॥७७॥

'रविदास' सब्दह सह जबहि, सुखिह इकमिक होई ।

अनुभूति सत्तनाम, स्वयं देतहिं लोई ॥७८॥

ओंकार को ध्यान मंहि, जौ लीं सुरति न होय ।

तौ लीं सांचे ब्रह्म कूं, 'रविदास' न बूझइ कोय ॥७९॥

'रविदास' दिआ जगमग जरई बिन बाती बिन तेल ।

सुरत साधि कर हिय मंहि देख पिया के खेल ॥८०॥

'रविदास' सुरत कूं साधि कर मोहन सों कर पिआर ।

भौ जल कर संकट कटंहि छुटंहि बिघन बिकार ॥८१॥

११. जीवन-मरन

जीवन जोति कैसे जगि, कैसे होइ अंत ।

'रविदास' मनुष न जानंहि, जानत हैं भगवंत ॥८२॥

'रविदास' जन्मे कउ हरस का, मरने कउ का सोक ।
बाजीगर के खेल कुं, समझत नाहीं लोक ॥८३॥

१२. सोइ साधु भलो

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ जग मंहि लिपत न होय ।
गोविंद सों रांचा रहइ, अरु जानहि नहि कोय ॥८४॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ मन अभिमान न लाय ।
औगुन छांडहि गुन गहइ सिमरइ गोविंद राय ॥८५॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ रहइ सदा निरबैर ।
सुखदाई समता गहइ, सभनह मांगहि खैर ॥८६॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ अपन न जताय ।
सत्तवादी सांचा रहइ, मन हरि चरनन मंह लाय ॥८७॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जिह मन निर्मल होय ।
राम भजहि विषया तजहि, मिथ भाषी न होय ॥८८॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ जानहि पर पीर ।
पर पीरा कहुं पेखि के, रहवे सदहि अधीर ॥८९॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जो पर उपकार कमाय ।
जइसोइ कहहि वइसोइ करहि, आपा नाहि जताय ॥९०॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जो निहकपट निरपच्छ ।
छमासील अरु सरल मनह, बाहर भीतर स्वच्छ ॥९१॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, निर्मल जाके बैन ।
जिह करि दरस औ परस सों, मन उपजहि सुख चैन ॥९२॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जउ हंसा गति होय ।
काम करम सभ छांडि कर, राम भजन में खोय ॥९३॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जिह मन बसइ जगदीस ।

रहइ ओट ओंकार की, बुरो भलो सहइ सीस ॥९४॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जौ मनह दोष मिटाय ।

उर मंह आप न थापइ, तृस्ना आस जलाय ॥९५॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जौ साहिब हाथ विकाय ।

साहिब भेंट चढ़ान कउ, अपनह सीस कटाय ॥९६॥

'रविदास' सोइ साधु भलो, जिह मन नांहि अभिमान ।

हरस सोक जानइ नहिं, सुख दुख एक समान ॥९७॥

'रविदास' कहै जाके रिदै, रहै रैन दिन राम ।

सो भगता भगवंत सम, क्रोध न ब्यापै काम ॥९८॥

१३. हाथ रहें कार में दिल रहे यार में

जिहवा सों ओंकार जप, हृत्थन सों कर कार

राम मिलंहि घर आइ कर, कहि 'रविदास' बिचार ॥९९॥

नेक कमाइ जउ करहि, ग्रह तजि बन नंहि जाय ।

'रविदास' हमारो राम राय, ग्रह महि मिलिह आय ॥१००॥

ग्रहहिं रहहु सति करम करहु, हरदम चिंतहु ओंकार ।

'रविदास' हमारो बांधला, हइ केवल नाम आधार ॥१०१॥

एक भरोसो राम को, अरु भरोसो सत्त कार ।

सफल होइहु जीवना, कहि 'रविदास' बिचार ॥१०२॥

१४. निष्काम कर्म भावना

करम बंधन मंह रमि रह्यो, फल कौ तज्यो आस ।

करम मनुष कौ धरम है, सत भाषै 'रविदास' ॥१०३॥

सौ बरस लीं जगत मंहि, जीवत रहि करु काम ।

'रविदास' करम ही धरम है, करम करी निहकाम ॥१०४॥

धरम हेतहि कीजिये, सौ बरस लीं कार ।

'रविदास' करमहि धरम है, फल मंहि नंहि अधिकार ॥१०५॥

धरम समुझि जो कार होइ, उह कर फल होइ इस्ट ।

'रविदास' कोउ भी करम फल, होहि नांहि अनिस्ट ॥१०६॥

'रविदास' मनुष कर धरम है, करम करहि दिन रात ।

करमनहि फल पावना, नहीं काहु के हाथ ॥१०७॥

परकिरती परभाउ बस, मानुष करत है कार ।

मानुष तउ है निमित रूप, कहि 'रविदास' बिचार ॥१०८॥

करमन ही परभाउ तजि, निहकरमी होइ कर काम ।

'रविदास' निहकरमी करम ही, मेल कराए राम ॥१०९॥

सुख दुख हानि लाभ कउ, जउ समझहि इक समान ।

'रविदास' तिन्हहि जानिए, जोगी पुरुष सुजान ॥११०॥

करम जोग की साध सों, आतम राम सुध होय ।

'रविदास' बिजेता सो भया, करम करै जउ कोय ॥१११॥

साधक भांति जोग जुगत, करम करहु 'रविदास' ।

धरम बोधि कीजहु करम, फल की त्यागहु आस ॥११२॥

राग द्वेष कूं छांड़ि कर, निहकरम करहु रे मीत ।

सुख दुख सभ मंहि थिर रहि, 'रविदास' सदा मन मीत ॥११३॥

जिहवा भजै हरि नाम नित, हत्थ करंहि नित काम ।

'रविदास' भए निहचिंत हम, मम चिंत करैंगे राम ॥११४॥

१५. श्रम साधना

'रविदास' श्रम करि खाइहि, जौ लौं पार बसाय ।
 नेक कमाई जउ करइ, कबहुं न निहफल जाय ॥११५॥
 श्रम कउ ईसर जानि कै, जउ पूजहि दिन रैन ।
 'रविदास' तिन्हहि संसार मंह, सदा मिलहि सुख चैन ॥११६॥
 रविदास हौं निज हत्थहिं, राखौं रांबी आर ।
 सुकिरित ही मम धरम है, तारैगा भव पार ॥११७॥
 प्रभ भगति स्वम साधना, जग मंह जिन्हहि पास ।
 तिन्हहिं जीवन सफल भयो, सत्त भाषै 'रविदास' ॥११८॥
 धरम करम दुइ एक हैं, समुझि लेहु मन मांहि ।
 धरम बिना जौ करम है, 'रविदास' न सुख तिस मांहि ॥११९॥

१६. जात-पाति मत पूछिए

जन्म जात मत पूछिए, का जात अरु पात ।
 'रविदास' पूत सभ प्रभ के, कोउ नहिं जात कुजात ॥१२०॥
 जात पात के फेर मंहि, उरझि रहइ सब लोग ।
 मानुषता कूं खात हइ, 'रविदास' जात कर रोग ॥१२१॥
 जनम जात कूं छाडि करि, करनी जात प्रधान ।
 इहयौ साचा धर्म है, कहै 'रविदास' बखान ॥१२२॥
 ब्राह्मन खत्तरी बैस सूद, 'रविदास' जनम ते नांहि ।
 जौ चाहइ सुबरन कउ, पावई करमन मांहि ॥१२३॥
 वेद पढ़ई पंडित बन्यो, गांठ पन्ही तउ चमार ।
 'रविदास' मानुष इक हइ, नाम धरै हइं चार ॥१२४॥

नीच नीच कर मारहिं, जानत नहीं नदान ।

सभ का सिरजनहार है, 'रविदास' ऐंके भगवान ॥१२५॥

'रविदास' जनम के कारनै, होत न कोठ नीच ।

नर कूं नीच करि डारि है, ओछे करम की कीच ॥१२६॥

'रविदास' जाति मत पूछइ, का जात का पात ।

ब्राह्मन खत्री बैसे सूद सभन की इक जात ॥१२७॥

जात जात में जात है, ज्यों केलन में पात ।

'रविदास' न मानुष जुड़ सकैं, जौं लीं जात न जात ॥१२८॥

'रविदास' ब्राह्मन मति पूजिये, जउ होवै गुनहीन ।

पूजिहि चरन चंडाल के, जउ होवै गुन परवीन ॥१२९॥

१७. ऊँच और नीच कौन?

'रविदास' सुकरमन करन सों, नीच ऊँच हो जाय ।

करइ कुकरम जी ऊँच भी, ती महा नीच कहलाय ॥१३०॥

दया धर्म जिन्ह में नहिं, हिरदै पाप को कीच ।

'रविदास' तिन्हहिं जानि हो, महा पातकी नीच ॥१३१॥

जिन्ह करिहिरदै सत बसई, पंच दोष बसि नाहि ।

'रविदास' ती नर ऊँच भये, समुझि लेहु मन मांहि ॥१३२॥

पंच दोष तजि जो रहई, संत चरन लव लीन ।

'रविदास' ते नर जानई, ऊँचह अरु कुलीन ॥१३३॥

१८. ब्राह्मण कौन ?

ऊँचे कुल के कारणै, ब्राह्मन कोय न होय ।

जउ जानहि ब्रह्म आत्मा, 'रविदास' ब्राह्मन सोय ॥१३४॥

काम क्रोध मद लोभ तजि, जउ करइ धरम कर कार ।
 सोई ब्राह्मन जानिहि, कहि 'रविदास' बिचार ॥१३५॥
 'रविदास' जी वेत्ता ब्रह्म का, सोइ ब्राह्मन जान ।
 ब्रह्म न जउ जानिहि, तउ न ब्राह्मन मान ॥१३६॥
 धरम करम जानै नहीं, मन मंह जाति अभिमान ।
 ऐसउ ब्राह्मन सों भलो, 'रविदास' श्रमुक हुं जान ॥१३७॥

२१. क्षत्रिय कौन ?

दीन दुखी के हेत जउ, बारि अपने प्रान ।
 'रविदास' उह नरसूर कीं, सांचा छत्री जान ॥१३८॥
 अंग अंग कटवाहि, जउ दीनन करि हेत ।
 'रविदास' छत्री सोइ जानिए, जी छाड़ै नाहि खेत ॥१३९॥

२२. वैश्य कौन ?

'रविदास' वैस सोइ जानिये, जउ सत्त कार कमाय ।
 पुन कमाई सदा लहै, लोरि सर्वत्त सुखाय ॥१४०॥
 सांची हाटी बैठि कर, सौदा सांचा देइ ।
 तकड़ी तोलै सांच की, 'रविदास' वैस है सोइ ॥१४१॥

२३. शूद्र कौन ?

'रविदास' जउ अति पवित्त है, सोई सूदर जान ।
 जउ कुकरमी असुध जन, जिन्हें न सूदर मान ॥१४२॥
 हरिजनन करि सेवा लागे, मन अहंकार न राखै ।
 'रविदास' सूद सोइ धन है, जउ असत्त बचन न भाखै ॥१४३॥

२२. मन्दिर-मस्जिद एक

मंदिर मसजिद दोउ एक हैं, इन मंह अंतर नाहि ।

'रविदास' राम रहमान का, झगड़ा कोउ नाहि ॥१४४॥

'रविदास' हमारे राम जोई, सोई है रहमान ।

काबा काशी जानीयहि, दोउ एक समान ॥१४५॥

मसजिद सों कछु धिन नहीं, मंदिर सो नहीं पिआर ।

दोउ मंह अल्लह राम नहीं, कह 'रविदास' चमार ॥१४६॥

२३. हिन्दू मुसलमान एक

मुसलमान सों दोसती, हिंदुअन सों कर प्रीत ।

'रविदास' जोति सभ राम की, सभ हैं अपने मीत ॥१४७॥

जब सभ करि दोउ हाथ पग, दोउ नैन दोउ कान ।

'रविदास' पृथक कैसे भये, हिंदू मुसलमान ॥१४८॥

'रविदास' पेखिया सोध करि, आदम सभी समान ।

हिंदु मुसलमान कउ, सिष्टा एक भगवान ॥१४९॥

कहन सुनन कूं दुइ करि, खालिक कीयों तमासा ।

हिंदु तुरक दोउ एक है, सत्त भाषे 'रविदास' ॥१५०॥

'रविदास' कंगन कनक मंहि, जिमि अंतर कछु नाहि ।

तैसउ ही अंतर नहीं, हिंदुअन तुरकन मांहि ॥१५१॥

हिंदु तुरक मंहि भेद नाहीं, सभ में रक्त अरु मास ।

दोउ एकह दूजा को नाहीं, पेख्यो सोध 'रविदास' ॥१५२॥

हिंदु तुरक मंहि नहीं भेद, दुइ आयहु इक द्वार ।

प्राण पिंड लोहु मांस एकइ, कहि 'रविदास' बिचार ॥१५३॥

‘रविदास’ उपजइ इक नूर तें, ब्राह्मन मुल्ला सेख ।
सभ को करता एक है, सभ कुं एक ही पेख ॥१५४॥

२४. सच्चे शूरवीर की पहचान

‘रविदास’ सोइ सूरु भला, जउ लरै धरम के हेत ।
अंग अंग कटि भुइं गिरै, तउ न छाड़ै खेत ॥१५५॥
धरम हेत संग्राम महं, जौ कटाए काटे सीस ।
सो जीवन सफला भया ‘रविदास’ मिलहि जगदीस ॥१५६॥

२५. प्राण जाएं पर वचन न जाई

बचन गयो नंह आत है, सीस कटा फिर आय ।
‘रविदास’ बचन कुं राखिए, सिर जाइहि तउ जाय ॥२५७॥
‘रविदास’ बचन जौ दे दियौ, वह न जाने पाय ।
बचन हरै को जगत मंहि, कछु न सेस रहाय ॥१५८॥

२६. वासनाओं का त्याग

सत्त संतोष अरु सदाचार, जीवन को आधार ।
‘रविदास’ भये नर देवते, जिन तिआगो पंच बिकार ॥१५९॥
जो बस राखे इंद्रियां, सुख दुख समझि समान ।
सोउ अमरित पद पाइगो, कहि ‘रविदास’ बखान ॥१६०॥
बुद्धि अरु बिबेकहिं, जउ राखन चाहौ पास ।
इंदरियां संग निरत कौ, तजि देहु ‘रविदास’ ॥१६१॥
‘रविदास’ इच्छाएं आपुनी, भोगन से रख दूर ।
मन बुद्धि रहंहि सांत नित, घट मंहि रहिवै नूर ॥१६२॥

कुरमे भांति जउ रहहिं, मन इंदिरिया 'रविदास' ।

सांत रहइ नित आतमा, बढ़हि आत्म विसास ॥१६३॥

२७. संतोष और त्याग में ही संतोष

जो कोउ लोर परम सुख, तउ राखै मन संतोष ।

'रविदास' जहां संतोष है, तहां न लागै दोष ॥१६४॥

धन संचय दुख देत है, धन त्यागे सुख होय ।

'रविदास' सीख गुरुदेव की, धन मति जोरे कोय ॥१६५॥

सच्चा सुख सत धरम मंहि धन संचय सुख नांहि ।

धन संचय दुख खान है, 'रविदास' समुझि मन मांहि ॥१६६॥

२८. सुख-दुख

सुख सरिता मंह बूड़ि करि, सूझ बूझ मति खोय ।

दुख की बदरी पेखि कै, 'रविदास' नंह दीजिये रोय ॥१६७॥

सुख दुख सम करि जानहु, तउ दुखह सुख होय ।

'रविदास' जो सुखहि दुख कहै, तउ सुख भी दुख होय ॥१६८॥

२९. प्रेम छिपाये न छिपे

'रविदास' प्रेम नहि छिप सकई, लाख छिपाए कोय ।

प्रेम न मुख खोलै कभउं, नैन देत हैं रोय ॥१६९॥

३०. राखो नहीं कुपंथ पग

'रविदास' सदा ही राखिए, मन मंहि सहज सभाओ ।

राखे नहीं कुपंथ पग, जाँ लोरीं सुख चाओ ॥१७०॥

जो जन दुष्ट कुमारगी, बइठहि नंहि तिंह पास ।

जो जन संत सुमारगी, तिन पाय लागो 'रविदास' ॥१७१॥

३१. सुख धाम

'रविदास' जु है बेगमपुरा, उह पूरन सुख धाम ।

दुख अंदोह अरु द्वेष भाव, नाहि बसहिं तिहिं ठाम ॥१७२॥

'रविदास' मनुष करि बसन कूं, सुख कर हैं दुइ ठांव ।

इक सुख है स्वराज मंहि, दूसर मरघट गांव ॥१७३॥

३२. सेवा में मेवा मिले

मन मंहि सत्त संतोष रखहु, सभ करि सेवा लाग ।

सेवा सब कछु देत है 'रविदास' सेवहिं मति त्याग ॥१७४॥

दीन दुखी करि सेव मंहि, लागि रह्यो रविदास ।

निसि बासर की सेव सौं प्रभु मिलन की आस ॥१७५॥

धुआं तपन मंहि का धरा, धूम तपन ही त्याग ।

'रविदास' मिलि है मोघ धाम, सेवा ही तप आग ॥१७६॥

३३. सच्चा उपदेश

'रविदास' रात न सोइये, दिवस न करिये स्वाद ।

अह निसि हरि जी सुमिरिये, छांडि सकल प्रतिवाद ॥१७७॥

'रविदास' तूं कावच फली, तुझे न छीवै कोय ।

मैं निज नाम न जानियां, भल अकहां ते होय ॥१७८॥

अंतर गति रांचै नहीं, बाहर करै उजास ।

ते नर जमपुर जांहिगे सत भाषै 'रविदास' ॥१७९॥

सब सुख पावै जासु तें, सो हरि जू को दास ।

कोउ दुख पावै जासु तें, सो न दास 'रविदास' ॥१८०॥

हरि गुर साध समान चित, नित आगम तत मूल ।

इन बिच अंतर जिन परी, करवत सहन कबूल ॥१८१॥

३४. जीव हत्या से खुदा नहीं मिलता

'रविदास' जीव कूं मारि कर, कैसो मिलहि खुदाय ।
 पीर पैगंबर औलिया, कोउ न कहइ समुझाय ॥१८२॥
 'रविदास' जो पोषण हेत, गउ बकरी नित खाय ।
 पढ़ई नमाजें रात दिन, तबहुं भिस्त न पाय ॥१८३॥
 'रविदास' मूंडह काटि करि, मूरख कहत हलाल ॥
 गला कटावहु आपना, तउ का होइहि हाल ॥१८४॥
 'रविदास' जो आपन हेत ही, पर कूं मारन जाई ।
 मालिक के दर जाइ करि, भोगहि कड़ी सजाई ॥१८५॥
 प्राणी बध नहिं कीजियहि, जीवह ब्रह्म समान ।
 'रविदास' पाप नंह छूटइ, करोर गउन करि दान ॥१८६॥
 'रविदास' जिभ्या स्वाद बस, जउ मांस मछरिया खाय ।
 नाहक जीव मारन बदल, आपन सीस कटाय ॥१८७॥
 'रविदास' जीव मत मारहिं, इक साहिव सभ मांहि ।
 सभ मांहि एकउ आतमा, दूसरह कोउ नांहि ॥१८८॥

३५. मांसाहारी -नरक अधिकारी

अपनह जीव कटाइहिं, जी मांस पराया खांय ।
 'रविदास' मांस जी खात हैं, ते नर नरकहिं जांय ॥१८९॥
 दया भाव हिरदै नहीं, भखहिं पराया मांस ।
 ते नर नरक मंह जाइहि, सत्त भाषै 'रविदास' ॥१९०॥
 जीवत कूं मुरदा करहिं अरु खाइहिं मुरदार ।
 मुरदा सम सभ होइहिं, कहि 'रविदास' बिचार ॥१९१॥

३६. पराधीनता पाप

पराधीनता पाप है, जान लेहु रे मीत ।

'रविदास' दास प्राधीन सों, कौन करै है प्रीत ॥१९२॥

पराधीन कौ दीन क्या, पराधीन बेदीन ।

'रविदास' दास प्राधीन कौ, सबही समझै हीन ॥१९३॥

३६. गुरु रविदास राज्य

ऐसा चाहौं राज मैं , जहां मिले सबन कौ अनन ।

छोट बड़ो सभ सम बसैं, 'रविदास' रहैं प्रसन्न ॥१९४॥